इस्लाम के इल्मे अख़लाक

हकीकत किताबेवी इशाअत न० : 17

इस्लाम के इल्मे अख़लाक

अली बिन एमरूल्लाह **मौहम्मद हादिमी**

नवां शुमारा

हकीकत किताबेवी

दारूश्शफेका जद्दे **53** पी.के: **35 34083**

फोन: **90.212.523 4556-532 5843** फैक्स: **90.212.523 3693**

http://www.hakikatkitabevi.com
e-mail: info@hakikatkitabevi.com

फातिह-इस्तानबुल/तुर्की

पब्लिशर के लिए नोटः

कोई भी शख़्स जो इस किताब को इसकी असल शकल में छापना चाहता है या किसी दूसरी ज़ुबान में तर्जुमा करना चाहता है उसे पहले से हमारी इजाज़त है के वो ऐसा कर सके; और लोग जो ऐसा फाएदेमंद कदम उठाना चाहते हैं उन्हें हम पहले से उनके नाम में सलामती देते है नेक दुआएँ देते हैं और उनका शुक्रिया अदा करते हैं। बेरहाल, इजाज़त इस शर्त पर है के जो काग़ज़ इसकी छपाई में इस्तेमाल हो वो अच्छी कुवालिटी का हो और मिसाक मतन का डिज़ाईन और साख्त सही और साफ हो बग़ैर किसी गलती के।

एक तंबीहः पादरी इसाई मज़हब को फ़ैलाने की कोशिश कर रहे है, यहूदी अपने यहूदी पीरौं की घड़ी हुई बातों को फ़ैलाने का काम कर रहे है, और पादरी मज़हब को नेस्तोनाबूद करने में लगे हुए है। हकीकत कितावेवी जो इस्तानबुल में इस्लाम को आम करने की जद्दोजहद कर रही है,। एक शख़्स अक्ल, इल्म और ज़मीर के साथ इन सबके बीच में से सही मुतावादिन को चुनता है और सारी इन्सानियत की निजात फलाह फ़ैलाने के लिए इनको फ़ैलाने में मदद करता है। इससे बेहतर या कीमती तरीका कुछ नही है, इन्सानियत की ख़िदमत करने के मकसद के अलावा कुछ नहीं है।

इस्लाम के इल्मे अख़्लाक

दिबाचा

अल्लाह के नाम के साथ इस किताब को शुरू करें !
अल्लाह का नाम सबसे बेहतर पनाह है,
उसकी बरकतें कभी नांपी नहीं जा सकती न ही गिनी जा सकती,
वो खालिक है सबसे ज़्यादा रहम और माफ़ करने वाला।

अल्लाह तआला दुनिया में सारी इंसानी मखलूक पर रहम फरमाता है।वो तखलीक करता है और सबको वो बरकतें भेजता है जो वो चाहते हैं।वो उनको ये भी सीखाता है के किस तरह इन बरकतों को इस्तेमाल करो इस दुनिया में और आने वाली दुनिया में खुशियाँ हासिल करने के लिये।इमाम अर रब्बानी रहीमाहुल्लाहु तआला ने अपने 259 वें खत में हमें आगाह किया के वो काफ़िर जिन्होने कभी इस्लाम के बारे में नहीं सुना वो दोज़ख में सज़ा नहीं पाएंगे उन्हें उनके इंसाफ़ के बाद जानवरों के साथ मिटा दिया जाएगा।लोग जिन्होने इस्लाम के बारे में सुना और उसके बारे में सोचा और उसे कुबूल किया तो उन्हें जन्नत की नेमत से नवाज़ा जाएगा।वो सोचने के लिए ज़िन्दगी का इतना लम्बा अरसा देता है।वो उन लोगों को माफ़ कर देता है जो कुफ़्र में गिरने के बाद और रास्ते से भटकने के बाद ईमान वाला बन जाता है, जो के ज़्यादातर खुदफरेबी का नतीजा था, जो के बुरी सोहबत, बग़ावत आमीज़ किताबें और पामाल रेडियो (और टेलीविज़न) की नशर के ज़रिए और ख़राब होता था वो उनकी अबदी तबाही से बचाता है।वो ज़ालिमों, गुनहगारों और बुरे लोगों को निजात का रास्ता नहीं दिखाता वो उन्हे नामंज़ूरी के गढ़े में ही रहने देता है जिसमे वो गिरते है और जिसको उन्होने पसंद किया और इच्छा की।दूसरी दुनिया में, वो जिसे चाहता है माफ़ कर देता है ईमान वालों के बीच में जिन्हे दोज़ख़ में भेजा जाना चाहिए और उन्हे दोज़ख़ में उनके गुनाहों की सज़ा देने के बाद जन्नत में भेज दिया जाता है।वो अकेला वाहिद है जो सारी मख़लूक की तख़लीक करता है, हर लम्हा उन्हे वुजूद में रखता है,

और डर और ख़ौफ के खिलाफ़ उनकी हिफ़ाज़त करता है अगर कोई किसी भी वक्त और किसी भी जगह किसी की भी तारीफ करता है और शुक्रिया अदा करता है किसी भी वजह से, तो ये शुक्रिए और तारीफ़ें जो अदा की गई वो अल्लाह तआला के हुकूक है, क्योंकि वो अकेला वाहिद है जो हर तरह की रहमतें और अच्छाईया बनाता है और भेजता है। अगर वो याद न दिलाए, तकलीफ़ न करे, और ताकत न दे, तो कोई कभी अच्छाई या किसी को कोई नुकसान ना पहुँचाएँ। सिर्फ वो जो चाहता है, वुजूद में आता है। कोई भी उसकी इच्छा के ख़िलाफ़ कुछ नहीं कर सकता।

हमारी दुआएँ उसके लिए और अदब उसके मुबारक पैग़म्बर मौहम्मद 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' पर, जो सबसे ज़्यादा ख़ूबसूरत और अफ़ज़ल है हर लिहाज़ से सारी इन्सानी मख़लूक पर, उनकी सारी नसल पर, रिश्तेदारों पर, और साथियों रिज़वानउल्लाही तआला अलैहिम अजमईन पर, जो अच्छे अख़लाक और तालीम की चमक दिखाते हैं।

मुसलमानों को चाहिए के "इस्लामी तालीम" को सीखे। इसको दो शाखाओं में बाँटा गया हैं, "मज़हबी इल्म" और "साइन्सी इल्म"। साइन्सी इल्म को "अक्लमंदी" **(हिक्मत)** कहते हैं। हमारे पैग़म्बर 'सल्ललाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमाया, "**हिक्मत एक मुसलमान की खोई हुई जाएदाद है। जहाँ कहीं भी उसे वो मिले उसको उसे उठा लेना चाहिए।** " ये हदीस हमे साइन्सी इल्म सीखने का हुकूम देती है। मज़हबी इल्म "बीस मातहत शाखाओं से बनता है, जिनमें से आठ ऊँचे दरजे की तालीमात रखती हैं और बाकी बारह इज़ाफ़ी खासियत रखती हैं। आला दरजे की तालीमात में से एक अख़लाक के साथ लेन देन करती है।

[एक मुसलमान जिसका अच्छा अख़लाक हो और जो साइन्सी इल्म में तरक्कीयाफ़्ता हो तो उसे अपने वक्त का एक मोहज़्ज़ब या एक बड़ा हुआ मुसलमान कहलाया जाएगा। इसके बरअक्स, एक शख़्स जो साइन्सी इल्म में तरक्कीयाफ़्ता हो और बुनयादी कारखाने उसने लगाए हुए हों, और ताहम उसका अख़लाक बुरा हो उसे एक ज़ालिम, एक अफ़सोसज़दा शख़्स एक डाकू, या एक डिक्टेटर कहलाएगा। वो जो साइन्सी इल्म में और फन में पीछे रह जाते

हैं और ख़राब अख़लाक वाले होते हैं वो जंगली या गवांर लोग कहलाए जाते हैं। तहज़ीब का मतलब है शहरों की तामीर करना और इन्सानी मख़लूक की ख़िदमत करना। यह सब साइन्सी इल्म, फन और ख़ूबसूरत अख़लाक के ज़रिए पूरा किया जा सकता है। मुख़्तासिर ये, के जब साइन्सी इल्म और आर्टस ख़ूबसूरत अख़लाक के साथ पूरा किए जाते हैं तो ये एक तहज़ीब कहलाते हैं। एक तहज़ीब याफ़्ता शख़्स साइन्सी इल्म और आर्टस को इन्सानियत की ख़िदमत करने के लिए इस्तेमाल करता है। इसके बरअक्स, ज़ालिम इनका इस्तेमाल तकलीफ़ देने के लिए करते हैं। हम देख सकते है के एक सच्चा मुसलमान ही तरक्कीयाफ़्ता शख़्स है। काफिर पिछड़े हुए, और ख़स्ताहाल लोग हैं। ये ज़ाहिर है के तहज़ीब का मतलब है इमारतों बनाना और शहरों को बसाना। ये सिर्फ साइन्स और टेकनोलोजी से मुमकिन है। टेकनोलोजी में तरक्की पुरानी नसल की राय में नई राये के इज़ाफे की वजह से है। लोग की अमन और आरामदह ज़िन्दगी सिर्फ इस्लाम के अख़लाक के ज़रिए मुमकिन है]

इस्लामी इल्म को इतना सीखना जितना ज़रूरी है वो हर मुसलमान के लिए ज़रूरी काम **(फर्ज़)** है। इस्लामी आलिमों ने इस मज़मून पर बहुत सारी किताबें लिखी हैं। मंदरजाज़ेल किताबें अख़लाक के मज़मून पर बहुत मशहूर है **अख़लाक-ए-नासिरी** नसीरूद्दीन ए मौहम्मद तूसी के ज़रिए, **अख़लाक-ए-जलाली** जलालअद्दीन-ए-मौहम्मद दवानी के ज़रिए, और **अख़लाक-ए-मोहसीनी** हुसैन वाईज़-ए-काशिफ़ी हिरात के ज़रिए। हमने इस (आख़िरी) किताब के पहले सबक को **बरीका** किताब में से तर्जुमा किया है जो के अबू सेद मोहम्मद हादिमी रहीमा हुल्लाहु तआला के ज़रिए लिखी गई है। इस किताब के पहले सबक में हमने नाकाबिलेकुबूल ख़राब अख़लाक इस्लाम के ज़रिए नामंज़ूर किए गए और उनके बताए हुए तज़वीज़ों के साथ सुलूक किया है। ख़राब अखलाक रूहानी दिल की बीमारियों की वजह से हैं। वो दिल **(कलब)** और आत्मा **(रूह)** की तबाही और लातादाद मौत का सबब हैं। इस किताब के दूसरे सबक में हमने, उसूले अख़लाक **(अख़लाक)** और उसकी किसमों के मआनी को वाजह किया, जो के हमने **अख़लाक-ए-अलाई** किताब के शुरू के असबाक में से लिया जिसे तुर्की में अली बिन अमरूल्लाह रहीमाहुल्लाहु तआला ने लिखा, जो **979** हिजरी, **1572** ए.डी.में एदरीन/तुर्की में रहलत फरमा गए।

ईमानदार नौजवान जो इस किताब को पढ़ते हैं वो समझते हैं और मानते हैं के उनके दादा परदादा अच्छे मोहज़्ज़ब वाले सेहतमंद लोग थे। वो भी संतकार, तेहज़ीबयाफ़्ता और तरक्कीयाफ़्ता लोग थे। अपने बुजुर्गों की सच्चाई सीखकर वो अपने दुश्मनों के झुठों और तोहमतों से भटके नहीं।

अख़लाकउन-नासिरी किताब के लेखक नसीरूद्दीन मौहम्मद तूसी थे। वो तुस (मशहाद) शहर में **597** हिजरी में पैदा हुए और **672** (**1273** ए.डी.) बग़दाद में वफ़ात पाई। वो मुसलमानों के शित्ते तबके से ताअलुक रखते थे। वो उन लोगों में एक से थे जो बग़दाद के हुलागू की तबाही और हज़ारों मुसलमानों के इजतामाई कतल के आलाकार थे। वो हुलागू का वज़ीरे-आज़म बना। उसने एक नई लाएब्रेरी **400,000** किताबों की गुंजाईश के साथ और एक पलैनिटेरीयम और एक अकेडमी कायम की। उसने बहुत सारी किताबें लिखीं।

जलालअद्दीन-ए-मौहम्मद दवानी रहीमाहुल्लाहू तआला **829** हिजरी में पैदा हुए और **908** हिजरी (**1503** ए.डी.) शीराज़ में वफ़ात हुई। वो इस्लामी आलिमों में सबसे ज़्यादा फ़ाज़िलों में से एक थे। उन्होने बहुत सारी किताबें लिखी। उनकी किताब अख़लाक-ए-जलाली फारसी में है। उसकी आठंवी इशाअत **1304** हिजरी, **1882** ए.डी. में इंडिया में मुकम्मल हुई। उसको अंग्रेज़ी में तर्जुमा किया गया।

हुसैन वाईज़-ए-काशिफी रहीमाहुल्लाहू तआला हिरात के शहर में मुअल्लिम थे वो **910** हिजरी **1505** ए.डी. में हिरात में वफात पाई।

ऐ तुम, सालिह नौजवानों! ऐ तुम, शरीफ और प्यारे बच्चों उन शहीदों के जिन्होने अपनी ज़िंदगियाँ इस्लाम की ख़ूबसूरत मोहज़्ज़ब तालीमात को सीखने और फैलाने में लगा दी और अपनी ज़िंदगियाँ भी कुर्बान कर दीं अल्लाह के मज़हब इन्सानी मख़लूक तक फैलाने में।

इस्लामी मज़हब और उसके ख़ूबसूरत अख़लाकियात को ज़रूरी सीखो, जो के हमारे काबिले एहतराम बुजुर्ग लेकर आए और इसके असली

मुकम्मल और सही भरोसे में तुम्हारी हिफ़ाज़त में दिया। इस पाक चीज़ की परवाह (**अमानत**) की हिफ़ाज़त करो हमारे दुश्मनों के हमलों के ख़िलाफ़ अपनी पूरी हिम्मत और ताकत के साथ, वो ये के, वो जो हमारी ज़िन्दगियों, जाएदातों, मज़हब और अख़लाकियात पर हमला कर रहे हैं, और वो हमारे ख़ूबसूरत मुल्क पर गारत करने वाली आँख रखे हुए हैं। इस सही मज़हब को चारों तरफ फैलाने के लिए हर मुमकिन कोशिश करो और इस तरह इंसानी मख़लूक को वेइंतेहा तवाहियों से बचाया जाए। ये सबको पता लग जाए के हमारे मज़हब ने हमे ख़ूबसूरत मोहज़्ज़ब, आपसी मोहव्वत एक दूसरे के लिए। बड़ों के लिए इज़्ज़त और जवान लोगों के लिए हमदर्दी, और हर एक के साथ नरमाई से चाहे उसकी मज़हबी राए कुछ भी हो हमे नरमी करने का हुकूम दिया गया है। सबके बचे हुए हुकूक और आमदनियाँ अदा की जाएँ। ज़मीन के कानून की ख़िलाफ वरज़ी मत करो न ही हुकूमत के और आमदनियाँ अदा की जाएँ। ज़मीन के कानून की ख़िलाफ़ वरज़ी मत करो। और न ही हुकूमत के एहकाम की मुखालफ़त करो। अपने टेक्स उसके सही वक्त पर अदा करो। कभी मत भूलो के अल्लाह तआला सीधे लोगों का मददगार है। एक दूसरे से प्यार करो और मदद करो ताकि बदले में अल्लाह तआला हमारी मदद करे।

इस्लामी आलिमों ने कहा: "अल्लाह तआला ने इंसानों में तीन चीज़ों की तख़लीक की है: हिक्मत (**अक्ल**), रूहानी दिल (**कल्ब**), और नफ़स [एक जहर आलूद इंसानी फितरत में तख़लीक की गई। उसकी सारी इच्छाएँ अल्लाह तआला के एहकाम के मुख़ालिफ है। ये वाहिद मिलकीयत है जिसकी इच्छाएँ और हरकात ख़ुद के लिए और उसके मालिक के लिए नुकसानदह हैं।] हमें उनमें से कोई भी नज़र नहीं आती। हम उनकी मौजूदगी उनके असरात या चीज़ें जो वो करते हैं उनसे देख सकते हैं, या हम उन्हें जानते हैं क्योंकि हमारे मज़हब ने हमें उनके बारे में सीखाया है। अक्ल और नफ़स हमारे दिमाग़ में वाकेअ है और रूहानी दिल हयाती दिल के ऊपर पाया जाता है, जो के हमारे सीने के उल्टी तरफ़ है। ये सब माद्दों से नहीं बने है और न ही जगह लेते है। उनकी इस जगह पर मौजूदगी बिल्कुल उसी तरह है जिस तरह बिजली का वुजूद एक रोशनी के बल्ब में या फिर एक induction babbin में मकनातिसी ताकत की तरह। अक्ल इस्लामी इल्म को और उसके अच्छे और फ़ाएदेमंद साथ

के साथ बुरे और नुकसानदायक तबदिलियों या तकसीम को भी समझता है। अच्छा और बुरा पाक कानून के मुताबिक तफ़रीक किया जाता है। अक्ल, जो पाक कानून (**शरीयत**) को पहचानती है और उसकी फरमावरदारी करनी चाहती है, उसे "सही सोचती हुई अक्ल," (**अकल-ए-सलीम**) कहा जाता है। लोग जिनके पास अक्ल की कमी है और हमेशा गलतियाँ करते रहते हैं उन्हे कुन ज़हन या बेवाकूफ कहा जाता है। लोग जिनके पास बिल्कुल अकल नहीं है उन्हे पागल कहा जाता है। सही सोचने वाले अकल रूहानी दिल को शरीयत के ज़रिए बताई गई अच्छी चीज़ें बताती है। रूहानी दिल इन सब अच्छी चीज़ों को करने के बारे में फैसला करता है। वो हरकाती असाब को इस्तेमाल करता है, जो के दिमाग़ से आता है और अज़ा तक जाता है, अज़ू को हुकूम देने के लिए ताकि इन अच्छी चीज़ों को ले जाया जाए। रूहानी दिल में अच्छी या बुरी चीज़ों को करने के लिए इच्छाओं को ज़हन नशीन करना उसूले अख़लाक या मोहज़्ज़ब (**अख़लाक**) कहलाता है। नफ्स दुनियावी आज़ाईशों की बहुत ज़्यादा दिलदावा होती है। वो बिल्कुल नहीं सोचती के यह अच्छा है या बुरा, फायदेमंद है या नुकसानदायक। इसकी इच्छाएँ शरीअत के ममनुअ करार दी है वो नफ्स को मज़बूत करती हैं। ये रूहानी दिल को सबसे बुरी चीज़ें करने के लिए कायल करने की कोशिश करती है। यह रूहानी दिल को बुरी और नुकसान वाली चीज़ें अच्छी चीज़ें बता कर दिखा कर धोखा देती है। ये रूहानी दिल को कायल करके अपनी इच्छाओं की तसकीन करती है और अपनी आज़ाईशें हासिल करने की कोशिश करती है। रूहानी दिल को मज़बूत करना और नफ्स को कमज़ोर करना ज़रूरी है ताकि नफ्स रूहानी दिल को धोखा न दे सके और यह के रूहानी दिल बुरी फितरत पैदा न कर सके। जैसा के अक्ल को इस्लामी इल्म पढ़कर और याद करके मज़बूत किया जा सकता है, उसी तरह दिल को मज़बूत किया जा सकता है, या पाक किया जा सकता है, शरीयत की फरमावरदारी करके। दिल में इख़लास का बनना उसी सूरत पूरा हो सकता है जब रूहानी दिल अल्लाह तआला का नाम लगातार ले (कल्ब के ज़रिए अल्लाह तआला का ज़िकर करना) "कलब का ज़िकर" का पूरा होना सिर्फ़ कामिल सूफ़ी मास्टर (मुर्शीद अल कामिल मुकम्मल रहनुमा) के ज़रिए सीखकर मुमकिन है। ये भी ज़रूरी है के रूहानी दिल को तमाम दुनियावी सोचों से आज़ाद किया

जाए जो दिमाग़ में बनती हैं उन हस्सासी इतलाअत के ज़रिए जो अज़ू के ज़रिए आती हैं। एक बार दिल हर तरह के दुनियावी सोचों से आज़ाद हो जाए, तो ये खुदबखुद "अल्लाह तआला का ज़िकर" करना शुरू कर देगा। ये बिल्कुल उसी तरह है जैसे एक बोतल से पानी खाली करना जब तुम पानी को बाहर निकालोगे, तो हवा अपने आप बोतल के अंदर घुस जाएगी। रूहानी दिल की दुनियावी सोचों से हिफ़ाज़त रूहानी दिल को (**फ़ैज़**) हासिल करके (नूर [रोशनी]) मुकम्मल सुफ़ी मास्टर के रूहानी दिल से फायदा हासिल करके पूरा हो सकता है। रूहानी नूर (फ़ैज़) एक रूहानी दिल से दूसरे तक प्यार के तरीके के ज़रिए पहुँचता है। मुकम्मल रूहानी रहनुमा की मौत या उसका वुजूद एक दूर मुल्क में इस रूहानी नूर (फ़ैज़) को बढ़ने से नहीं रोक सकता। मुकम्मल रूहानी रहनुमा (मुर्शीद अल-कामिल) एक "अहल अस- सुन्नत" का मुअल्लिम (**आलिम**) होता है जो गहराई में इस्लामी इल्म को जानता है और अपनी सारी हरकात (इख़्लास के साथ) ईमानदारी से करता है इस इल्म के मुताबिक। शरीअत को मानना और रूहानी नूर (फ़ैज़) को हासिल करना मुकम्मल रहनुमा (मुर्शिद अल कामिल) से वो रूहानी दिल मज़बूत करता है जबकि इसके बरअकस नफ़स को कमज़ोर करता है। इस वजह से नफ़स पाक कानून (शरीअत) को मानना नहीं चाहता या मुकम्मल रूहानी रहनुमा (मुर्शिद अल-कामिल) से गफ़्तो शुनीद (**सोहबत**) करना नहीं चाहता या मुकम्मल रूहानी रहनुमा के ज़रिए लिखी गई किताबों को पढ़ना नहीं चाहता। ये रूहानी दिल को ग़ैर मज़हबी और बेयकीन चाहता है। इसलिए, जो उनकी हिम्मत को नहीं मानते और बजाए इसके उनके बेयकीन नफ़स को मानते हैं,तो वो गैरमज़हबी बन जाते हैं। नफ़स मर नहीं सकती लेकिन जब ये कमज़ोर हो जाती है, तो ये रूहानी दिल को धोखा नहीं दे सकती।

मीलादी	**हिजरी शम्सी**	**हिजरी कमरी**
2001	**1380**	**1422**

दिल को जन्नत के एक बाग़ की तरह बनालो तौहीद के फव्वारे के साथ,
(अल्लाह तआला की वहदानियत।उसकी वहदानियत पर यकीन और बयान पर।
और रूह का बाग़, गुलाब का हार हवाले कर रहा है तौहीद की कली के साथ!

दोनों बग़ैर जगह और बग़ैर वक्त के दिल के माहिर हैं,
आढ़े तिरछे नाखत्म होने वाले फ़ासले तौहीद की ताकत के साथ।

अपनी गलतियों को करने पर,जितना ज़्यादा तुम शर्मिन्दा हो,
खात्मा अच्छा ही होगा तौहीद के जज़्बे के साथ।

ए तुम अर्ज करने वाले!आरिफ़-ए-बिलाह दिल को सत्तर हज़ार परदों से आज़ाद कर देगा तौहीद की एक चमक के साथ।

[एक मुबारक शख़्स जो ऐसी हालत को हासिल करले जहाँ वो अल्लाह तआला को जान जाता है (यहाँ तक के गुलाम भी अपने खालिक को जान जाता है)]।

हुसैन हिलमी इशिक

रहमतुल्लाही अलैहि

हुसैन हिलमी इशिक रहमत-अल्लाही अलैहि हकीकत किताबवी इशाअत के नाशिर हैं, जो अय्यूब सुलतान, इस्तानबुल में **1329** (**1911** ए.डी.) में पैदा हुए।

जो एक सौ चौवालिस किताबें उन्होने नशर कीं उनमें से साठ अरबी में,पच्चीस फ़ारसी में, चौदह तुर्की में,और बाकी की किताबें फ्रेंच, जर्मन, अग्रेज़ी, रूसी और दूसरी ज़ुबानों में हैं।

हुसैन हिल्मी इशिक रहमत अल्लाही अलैह की (सय्यद अब्दुलहकीम अरवासी रहमत अल्लाही अलैह ने रहनुमाई की जो मज़हब के आला/फाज़िल आलिम थे और तसव्वुफ़ के मुकम्मल सालिह और शार्गिदों को पूरे तौर पर समझदारी के तरीके से रहनुमाई करने के काबिल; इज़्ज़त और हिक्कम के रखने वाले) एक काबिल, आला इस्लामी रहनुमा थे जो ख़ुशियों की तरफ़ रहनुमाई करने के काबिल थे,वो **25** अक्तूबर, **2001** (**8** शाबान **1422**) और **26** अक्तूबर, **2001** (**9** शाबान **1422**) की रात के बीच के दौरान इंतेकाल फरमा गए।उन्हें अय्यूब सुलतान में दफ़नाया गया,जहाँ वो पैदा हुए थे।

इस्लामी अखलाकियात

पहला सबक

किताब का पहला सबक सबसे ज़्यादा अहम बुराइयों और उसके इलाज में से चालीस को वाज़ेह करेगा।मंदरजाज़ेल सारी जानकारी मशहूर इस्लामी किताब **बेरीका** से तर्जुमा लिया गया है जोकि अबू सेद मौहम्मद हादिमी रहीमाहुल्लाहू तआला के ज़रिए लिखी गई है।ये किताब, इबतिदाई तौर पर अरबी में दो जिल्दों में लिखी गई, जोकि **1284** हिजरी [**1868** ए.डी.] में इस्तानबुल में छपी और दोबारा से **1411** हिजरी [**1991** ए.डी.] में हकीकत बूकस्टोर के ज़रिए मौहम्मद हादिमी रहीमाहुल्लाहू तआला **1176** हिजरी कमरी [**1762** ए.डी.] में अपनी पैदाइश हादिम गाँव कोनया के शहर, तुर्की में इंतेकाल फरमा गए।

बुराइयाँ और उनसे खुद को साफ़ करने के तरीके

जो चीज़ें आदमियों को इस दुनिया में और दूसरी में नुकसान पहुँचाती हैं वो बुराइयों की वजह से हैं।आदमी की रूहानी माहियत इसी बुराई की वजह से खोती है।आदमी का इन बुराइयों को छोड़ना/नज़रअंदाज़ करना **तकवा**

कहलाता है। तकवा सब इबादतों से आला है। किसी चीज़ को सजाने के लिए ज़रूरी है के पहले उस चीज़ को सारी धूल और धब्बों से साफ़ किया जाए। इसी तरह, कोई भी ईनाम **(सवाब)** नहीं दिया जा सकता न ही कोई फ़ाएदा पहुँच सकता है इबादतों का जब तक के वो आदमी जो वो इबादतें कर रहा है अपने आपको गुनाह से पाक न करले। सब बुराइयों में सबसे खराब बेयकीन **(कुफ़्र)** है। एक शख़्स के अच्छे काम लेकिन ईमान नहीं रखता उसे आखिरत में कोई फल नहीं दिला सकते। [एक काफ़िर जो बेइंसाफ़ी तौर पर कत्ल किया जाए वो शहीद नहीं बनेगा और जन्नत में भी नहीं जाएगा।] सब नेकियों की बुनियाद तकवा है। एक शख्स को चाहिए के तकवा हासिल करने के लिए सख्त कोशिश करे और दूसरों को ऐसा करने की तलकीन करे। इस दुनिया में दूसरों के साथ अमन से रहना और सबसे अच्छी अवदी रहमतें हासिल करना सिर्फ़ तकवा को अपना कर पूरा हो सकता है।

बुराइयाँ दिल या रूह में बीमारियों का सबब बनती हैं। इस बीमारी में कोई भी इज़ाफ़ा रूह की मौत का सबब बनती है यानी कुफ़्र का सबब। कुफ़्र **(शिर्क)**, जो सब बुराइयों में सबसे खराब है, ये रूह का मोहलिक ज़हर है। कुछ लोग जो ईमान नहीं रखते दावा करते हैं: "मेरा दिल (रूहानी) साफ़ है। तुम मेरे दिल को देखो।" उनका दावा सिर्फ़ खाली अल्फ़ाज़ के अलावा कुछ नहीं। एक मरा हुआ दिल कभी साफ़ नहीं हो सकता।

यहाँ पर कई किस्म में कुफ़र हैं। इनमें सबसे खराब बुत परस्ती है। एक खास बुराई की किस्म उसकी सबसे नुमायाँ खुसूसियत से वाज़ेह की जाती है। इस मसले में,शिर्क का लफ़्ज़ आयत-ए-करीमा [(कुरआन-अल-करीम की कतअ) इस्तेमाल हुआ है और (हमारे मुबारक पैगम्बर की बातें) हदीस-ए-शरीफ़ में हर तरह के कुफ़र (शिर्क) को बयान किया गया है। अल्लाह तआला ने कुरआन की सुरह निसा की **48**वीं और **116**वीं में बयान किया के वो बुत परस्तों **(मुश्रिकों)** को माफ़ नहीं करेगा। ये आयात इस बात की निशानदही करती हैं के मुश्रिक हमेशा के लिए दोज़ख की आग में जलेंगे।

["शिर्क" का मतलब है अल्लाह तआला के साथ साथियों को मंसूब करना। एक शख़्स जो मंसूब करता है वो मुश्रिक कहलाता है और जो चीज़

उससे मंसूब की जाती है वो साथी (**शरीक**) कहलाता हे। ये मानना के कोई खुदाई सिफ़ात में से एक का मालिक है तो इसका मतलब है के वो साथी (शरीक) बना रहा है। सो सिफ़ात खासतौर से अल्लाह तआला की मिलकियत हैं उन्हें "**अल्लाह तआला की सिफ़ात**" कहते हैं। कुछ खुदाई सिफ़ात मंदरजाज़ेल हैं: अबदी तौर पर मौजूदगी, तखलीक करना, सब जानने वाला, और बीमरों की शिफ़ा करना। इस बात पर ईमान रखना के इंसानी मखलूक या सूरज या एक गाय या दूसरी और कोई मखलूक एक खुदाई सिफ़त रखती है और इसलिए उस मखलूक की इज़्ज़त करे या उससे मांगे, इसको कहा जाएगा उसकी इबादत करना। वो चीज़ें बुत बन जाती हैं। कुछ कहना इसका मतलब है ऐसे लोगों की पूजा करना या मुर्तियों के तस्वीरों, या काफ़िरों की कबरों के आगे अदब से बोलना ये मानते हुए के वो खुदाई सिफ़ात रखती हैं उनकी इबादत करना और इसलिए ये बुतपरस्ती कहलाती है। अगर एक शख़्स ये यकीन रखता है के एक शख़्स खुदाई सिफ़त नहीं रखता लेकिन इसके बजाए ये मानता है के यह एक शख़्स है जिसे अल्लाह तआला चाहता है या इसके बरअक्स अगर एक शख़्स ये मानता है के फलाँ शख़्स अपनी कौम की बहुत ज़्यादा खिदमत कर रहा है और इसलिए इज़्ज़त का मुसतहिक है, उसके बुत को इज़्ज़द देना या तस्वीरों की तआज़ीम करना कोई कुफर या बुतपरस्ती नहीं है। ताहम, चूंकि किसी शख़्स की तस्वीर को इज़्ज़त/तआज़ीम करना ममनुअ (**हराम**) है, कोई भी ऐसा करता है तो गुनहगार (**फ़ासिक**) बन जाता है। अगर वो इस हकीकत से ग़फ़लत बरतता है के ये ममनुअ है, तो वो एक इलहादी (**मुरतद**) बन जाता है,और इसी तरह वो भी जो ममनुअ काम (हराम) की हँसी उड़ाए। चूँकि वो यहूदी और ईसाई जो "मुशारिक" नहीं हैं वो मौहम्मद अलैहिस सलाम की नब्बुवत पर यकीन नहीं रखते, वो काफ़िर हैं। उन्हें "आसमानी किताब के साथ काफ़िर" कहा जाता है। आज ज़्यादातर इसाई मुशरिक हैं क्योंकि वो पैग़म्बर "ईसा", यानी जिस्स अलैहिस सलाम के साथ खुदाई सिफ़त मंसूब करते हैं। बरनावस और एरियस (एरियनस) फ़िरके से जुड़े हुए इसाई एहले किताब थे। हँालाकि, वो मौजूदा वक्त में मौजूद नहीं हैं।

शिर्क के बाद रूह की दूसरी खराब बीमारी **बिदअत** (इलहादी ईमान का रखना जिसे कहते हैं) है, जोकि अपने आपको गुनाह से बचाने में ढीले

पड़ना है, बुराई के मामले में। एक शख़्स अपने काबिले माफ़ी गुनाह या बड़े गुनाह के लिए तौबा (नदामत, तौबा करने का मतलब है अपने गुनाह (गुनाहों) पर पछताना, अल्लाह तआला से माफ़ी माँगना, और ये तज़वीज़ करना के दोबारा वही गुनाह नहीं करेगा।) किए बगैर मर जाता है कुफ़्र के अलावा तो अल्लाह तआला उसे या तो सिफ़ारिश (**शफ़ाअत**) के ज़रिए या सीधे अपनी शफ़कत के ज़रिए इसे माफ़ कर देता है। अगर काबिले माफ़ी गुनाह माफ़ नहीं होता तब दोज़ख में उसकी सज़ा है। दूसरे इंसानों के हुकूक के खिलाफ़ शामिल गुनाहों को आसानी से माफ़ नहीं किया जा सकता। ज़्यादातर, लोग जो उन्हें करते हैं उन्हें सख्त सज़ा दी जाती है। मिसाल के तौर पर, बीवी का बकाया पैसा हके (**महर**) शादी का मुहाहिदा के तौर पर या इसानों को उनके सही मज़हब को सीखने से रोकना,जोकि उनका वाजिब (**हक़**) है वो इंसानी हुकूक की पामाली का सबसे बड़ा गुनाह है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मंदरजाज़ेल फरमाया: "**एक वक्त ऐसा आएगा जब लोग ये नहीं देखेंगे कि वो जाइज़ (हलाल) तरीके से कमा रहे हैं या नहीं,**" और "**एक वक्त ऐसा आएगा जब इस्लाम की इबादत करना इतना मुश्किल हो जाएगा जैसे के नंगे हाथों से आग की बॉल/गेंद को पकड़ना।**" इसलिए, सारे ममनुअ काम (हराम) और वो सारे काम जिन्हें मकरूह तहरीमी (क्योंकि वो हराम के बहुत नज़दीक हैं) कहते है उन्हें छोड़ना (**तकवा**) कहलाता है। ज़रूरी काम (**फराईज़**) को ना करना और कामों (**वाजिबों**) को करने की पुरज़ोर हिमायत करना ममनुअ (हराम) है। कुछ इतलाआत के मुताबिक, "मुअक्किद सुन्नत" को अदा ना करना, यानी वो इबादत के काम जिन्हें हमारे प्यारे नबी ने हमेशा अदा किया हो, उन्हें बग़ैर किसी वजह के छोड़ना सख्त नापसंद है (**मकरूह तहरीमी**)। लोग जो ईमान (**इतिकाद**) उसूले अखलाक (**अखलाक**) और कामों (**अमल**) की रोशनी में इस्लाम के एहकाम नहीं मानते वो सज़ा पाते हैं। मंतकी तौर पर, एक शख़्स को ऐसे काम करने से परहेज़ करना चाहिए जो सज़ा का बाईस बनें। मिसाल के तौर पर, रोज़ाना की पाँच वक्त की "सलात" अदा ना करना और औरतों और लड़कियों का अपने आपको ना ढाकना एक बड़ा गुनाह है। एक शख़्स के लिए ये बहुत ज़रूरी है के अपने आपको बड़े गुनाह से परे रखने के लिए रोज़ाना पाँचों "सलात" अदा करे। इसपर भी, इस किताब में, हम उन मज़मून से सुलूक

नहीं कर रहे उन चीज़ों से जो छोड़नी नहीं चााहिए; बल्कि, हम उन चीज़ों से राबता रखते हैं जिन्हें नज़रअंदाज़ करना चाहिए, यानी,ममनुअ काम और बुराइयाँ।

जो चीज़ें हमें नहीं करनी चाहिए (ममनुअ काम) वो या तो एक खास अजू के ज़रिए या पूरे जिस्म के ज़रिए अदा किए जाते हैं।मंदरजाज़ेल आठ अज़ा बहुत मशहूर है गुनाह का इरतिकाब करने के लिए: रूहानी दिल, कान, आँखे, जुबान, हाथ, पेट, जिन्सी अज़ा, और पैर।रूहानी दिल (**कल्ब**) एक रूहानी कशिश है जो इंसानी मखलूक के माद्दी दिल पर बह जाती है।ये गैर जिस्मानी है, जो रूह की तरह किसी राए से बनी हुई नहीं है।ये अज़ा खुद कोई गुनाह नहीं करते।इन अज़ा की हिस की ताकत गुनाह करने की मरतकिब होती हैं।कोई भी जो इस दुनिया में और आने वाली में खुशियाँ हासिल करना चाहता है उसे इन अज़ा को गुनाह करने से बचाना होगा।रूहानी दिल को इस हालत में परवान चढ़ाना होगा जहाँ गुनाह ना करना इसकी कुदरती आदत (मलका) हो।कोई भी जो इस हालत को पा लेता है उसे अल्लाह से डरने वाला (**मुत्तकी**) या पाक (**सालिह**) शख्स कहा जाता है।अब उसे अल्लाह तआला का प्यार और मंज़ूरी हासिल हो गई और वो उसका वली [वली (जमा. औलिया) का मतलब है अल्लाह तआला के नज़दीक और प्यारा शख़्स।] बन जाता है।ये भी परहेज़गारी (तकवा) है के गुनाह को छोड़ना अपनी कोशिशों के ज़रिए बगैर इसके दिल की कुदरती आदत बने हुए।ताहम एक वली होने के लिए चाहिए के गुनाह का मरतकिब ना होना एक कुदरती अमर होना, जोकि बदले में दिल को साफ़ रखना चाहता है।और दिल को साफ़ रखने के लिए चाहिए के इस्लाम के उसूलों की फरमाबरदारी करे।इस्लाम तीन हिस्सों पर मुशतमिल है:जानकारी (**इल्म**), अभ्यास (**अमल**), और सदाकत (**इखलास**)।(**1**) इल्म सीखने के लिए एहकाम को पढ़ाइए,यानी, फराईज़, वाजिबात,सुन्नतें और ममनुअ काम (**हराम और मकरूहात**), (**2**) इस इल्म के मुताबिक इस पर अमल करें, और (**3**) इनको सिर्फ़ अल्लाह तआला की रज़ा के लिए करें।कुरआन अल करीम इन तीनों हिस्सों की तारीफ़ करता है और हुकूम देता है।इस किताब में, सिर्फ़ उन गुनाहों की बातचीत करेंगे जिनका दिल को पाक/साफ़ रखने के लिए ग़ैर अखलाकी बरताव, या गैर मोहज़्ज़ब काम कहा जाता है।

ग़ैर अख़लाकी बरताव या बदअख़लाकी और उसके इलाज

एक मुसलमान को पहली फ़ौकियत के तोर पर अपने (रूहानी) दिल को साफ़ करने की कोशिश करनी चाहिए क्योंकि दिल जिस्म का रहनुमा होता है और सारे अज़ा उसके हुकूम के अंदर होते हैं। हमारे पैग़म्बर मौहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने एक बार फरमाया: "**इंसान के जिस्म के अंदर एक गोश्त का टुकड़ा होता है। अगर ये अच्छा होता है, तो सारे अज़ा अच्छे होते हैं। अगर ये बुरा होता है, तो सारे अज़ा बुरे होते हैं। ये गोश्त का टुकड़ा दिल होता है।**" इस हदीस शरीफ में जो बयान किया गया है वो जिस्मानी दिल नहीं है बल्कि रूहानी दिल है जो जिस्मानी दिल के अंदर पाया जाता है। गोश्त की अच्छाई, जैसे के ऊपर बताई गई है,इसका मतलब है के ये बुराइयों से और उसके अच्छे अख़लाक (नेकियों) से पाक किया गया है। इंसानी मखलूक की जिस्मानी ज़ाहिरदारी को (**खलक**) कहा जाता है। जो ताकत या हालत दिल में मौजूद होती है उसे आदात (**खुल्क**) कहते हैं। दिल में बुराइयों को "दिल की बीमारियाँ" या नाकाबिले कुबूल अखलाक (**अखलाक अल-ज़मीमा**) कहा जाता है। उनका इलाज बहुत मुश्किल काम है। सही इलाज के लिए इंतेहाई जटिल ईल्म की ज़रूरत होती है इन बीमारियों के बारे में और इस ईल्म को लागू करने के लिए सही असलूब की आदात दिल में महकमें (**मलकास**) या हालात या खवाहिशें हैं। ये यही ताकत होती है रूहानी दिल में जो आदमी के ईमान, लफ़ज़ों, हरकात को पैदा करती है। उसका इखतियारी बरताव भी इसी (ये ताकत जो उसकी कहलाती है) खुल्क का काम है।

दिल की हालत को अनचाहे, नागवार, नाकुबूल अखलाक या आदात से मन चाहे, अच्छी आदात में बदलना या तबदील करना मुमकिन है। हमारे पैग़म्बर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने एक बार फरमाया, "**अपने अखलाक (अदात या शख्सियत) को सुधारो।**" इस्लाम ऐसे एहकाम नहीं रखता जो पूरे ना हो सकें। तजुरबों ने भी दिखाया है के यही मामला है। [तीन असली इल्म

हासिल करने के तरीकों में से तजुरबा सिर्फ़ एक है। दूसरे दो असली इल्म हासिल करने के तरीके गिंती और इतलाआत के ज़रिए समझदारी है जो हमारे पैग़म्बर के ज़रिए नाफ़िज़ हुई।] इंसानी मखलूक अपने नाकाबिले कुबूल, नाकिस अखलाक को सही करने के लिए बराबरी की काबिलियत को बांट नहीं सकते।

अखलाक का आग़ाज़ या ज़रिया या चश्मा वो इंसानी रूह के अंदर तीन ताकतें हैं। सबसे पहले रूह को समझने (फहम) की ताकत है। इसको "**नुत्क**" या समझ (**अकल**) भी कहते हैं। पहली और दूसरी "नुत्क" की ताकतें नज़रयाती इल्म (**हिक्मत अलनज़री**) और अमली इल्म (**हिक्मत अल अमली**) हैं। नज़रयाती इल्म जो औस्त तनासुब में मौजूद होता है उसे सबब (**हिक्मत**) कहते हैं। सबब एक ताकत है जो नेकी और बुराई; सही और ग़लत: और अच्छाई और बुराई के बीच फ़र्क करता है। इस ताकत में ज़्यादती की हालत को **जरबज़ा** (एक शख़्स का अकल की हालत में होना) कहते हैं। एक शख़्स जो इस ज़्यादती में मुबतला होता है वो चीज़ों को फहम से परे समझने की कोशिश करता है। मिसाल के तौर पर, वो कुरआन की आयात को छुपी हुई या एक जैसे मआनी (**मुतशाबीह आयात**) के साथ बताने की कोशिश करे या किस्मत और कुदरत के बारे में बात करे या अपने आपको नाकारा खोज जैसे के धोका, चालबाज़ी, और जादूगरी में लगाले। इसके बरअक्स, इस ताकत की कमी कमफ़हली (**बदलादत**) कहलाती है। एक शख़्स जो इस कमी को बरदाशत कर रहा हो वो नेकि और बुराई में के बीच फ़र्क नहीं कर सकता। जब नुत्क (अकल) की अमली ताकत औस्तन तेज़ हो,इस हालत को इंसाफ़ (**अदालत**) कहते हैं। वहाँ पर इंसाफ़ में कोई कोताही या ज़्यादती नहीं हो सकती।

अखलाक के ज़राए की दूसरी ताकत गुस्सा (**ग़ज़ब**) है। ये रूह की वहशी खासियत है। चीज़ें जो ये नापसंद और नाराज़गी को हरकत देती हैं वो है इसका खुन जब ये ताकत एक इंसानी रूह की खासियत के ज़रिए तेज़ी से माआकूल तौर पर ज़ेर करली जाती है, तो ये बहादुरी (**शुजाअत**) में बदल जाती है, जो आदमी अमली और फ़ायदेमंद कारोबार में लगाती हैं। इसकी मिसाले हैं मुसलमान जो काफ़िरों के खिलाफ़ लड़ रहे हैं जिनकी तआदाद उनसे दुगनी है

और उनका मज़लूमों को ज़ालिमों से बचाना। इस ताकत में ज़यादती **तहव्वुर** है, जो तकलीफ़ों का सबब बनती है। इस मिज़ाज का शख़्स बहुत जल्दी गुस्से में आता है। अगर ये ताकत औस्त तनासुब से कम में है,तो इसे बुज़दिली **(जुबन)** कहेंगे। एक शख़्स इस शखसियत के साथ कोई भी ज़रूरी काम करने के काबिल नहीं रहता।

इंसानी रूह की तीसरी ताकत भूख **(शहवत)** है। ये वहशी रूह की चीज़ों की इच्छाएँ कराना है जिन्हें वो चाहती है। इंसान की रूह की खासियत है उस इच्छा को मुलायम करना उसमें जिसे हम पाकिज़गी **(इफ़्फ़त)**, या इज़्ज़त कहते हैं एक शख़्स जो पाकिज़गी रखता है वो अपनी फ़ितरत की ज़रूरतों को इस्लाम के ज़रिए बताए गए और इंसानियत के मुकाबले खुश कर लेता है। इसमें ज़्यादती को लालच या अय्याशी **(शरह)**। एक शख़्स जो इस शखसियत का है वो अपनी सारी इच्छाओं और खवाहिशों को बग़ैर कानून या दूसरों के हुकूक का पास किए हुए हासिल करने की कोशिश करते हैं। अगर एक शख़्स की फ़ितरत में भूख औस्त तनासुब से कम हो, तो ये एक काहिल शखसियत **(हुमूद)** का सबब बनता है। एक शख़्स इस शखसियत के साथ अपने लिए ज़रूरी चीज़ें भी लेने के काबिल नहीं होता या तो अपने शदीद शर्म, खौफ़ या घमंड की वजह से, या अपनी (नफ़सियाती) बीमारी की वजह से। ऊपर कही गई चार मयानारवी की ताकतें, यानी हिकमत (सबव), अदालत (इंसाफ़), इफ़्फ़त (पाकिज़गी) और शुजाअत (बहादुरी), नेकियों की असल शक्ल हैं। जब एक शख़्स अपने आपको हिक्मत में ढाल लेता है, जोकि रूह की तीन ताकतों में से एक है, तो वो वहशी रूह की बाकी की दो ताकतों यानी, गज़ब और शहवत पर काबू पा लेता है, और इन दो ज़्यादतियों को इफ़फ़त (पाकिज़गी) और शुजाअत (बहादुरी) में तकमील करके खुशियाँ हासिल करता है। अगर अकल की नज़रयाती ताकत हिक्मत को मानने में नाकाम हो जाए, जोकि उसकी मयानारवी की सनद है, और जो बहता रहता है जबतक के इंतेहाई बुराई, बदकारियाँ में से कोई एक ज़ाहिर ना हो जाए। सारी छः आखिरी हदें हमेशा बुरी होती हैं। असल में, चारों मयानारवी कीताकतें भी बुरी सकती हैं जब उनको बुरे मकासिद के लिए इस्तेमाल किया जाए। हिकमत को बुरे मकासिद के लिए इस्तेमाल करने की मिसाले हैं; मज़हबी तरज़े ज़िन्दगी को अपनाना एक

आसान मुकाबले या एक ऊँची मरतबा हासिल करने के लिए, और (रोज़ाना की इबादतें जिन्हें कहते हैं) नमाज़ अदा करने के लिए या (इस्लाम को बढ़ाने और मशहूर करने के लिए जदोजहद करना, जोकि सिर्फ़ अल्लाह तआला को राज़ी करने के लिए किया जाए और जिसे कहते हैं) घमंड के लिए जिहाद करना। दूसरी तरफ़, एक खास किस्म के आराम से ग़ैर हाज़िर होना अपनी इच्छा को खुश करने के लिए दूसरी किस्म के आराम का मज़ा लेने के लिए वो इफ़फ़त के गलत इस्तेमाल का अच्छी मिसाल है।

चार खास नेकियों में से हर एक अपनी सिफ़ात से पहचानी जाती हैं। मिसाल के तौर पर, अकल की सात सिफ़ात हैं। शुजाअत और पाकिज़गी हर एक की ग्यारह सिफ़ात हैं।

बुराइयों के लिए इलाज! एक दवाई जो सारी बुराइयों का आम इलाज है वो है बीमारी और चीज़ों की पहचान जोकि उसके लिए उसके सबब के लिए, उसके उल्टे मामले, यहाँ तक के दवाई के असरात के लिए नुकसानदह हैं। अगला कदम बीमारी की छान बीन करना होगा, जोकि या तो खुद की तहकीकात के ज़रिए या एक रहनुमा की तकलीद में, यानी एक आलिम (एक आला इस्लामी आलिम/मुफ़किर) के ज़रिए किया जाए। एक ईमान वाला दूसरे ई मान वाले का शीशा होता है। अपनी गलतियों की खुद तहकीकात करना एक मुश्किल काम है। एक सिफ़ारिश किया गया तरीका अपनी गलतियों को जानने का, वो ये है, के एक भरोसेमंद दोस्त से सलाह करना। एक वफ़ादार दोस्त वो है जो तुम्हें खतरनाक और खौफ़नाक हालात से बचाए। ऐसा दोस्त बहुत मुश्किल से आता है। ये इस असर की वजह से है के इमाम शाफ़ई रहमातुल्लाही अलैह ने बयान किया:

एक पक्का दोस्त और सही दवाई,
मिलना बहुत मुश्किल है, अपना वक्त बरबाद मत करो।

और हज़रत उमर रज़ी अल्लाहु अन्ह ने बयान किया:

मेरे दोस्त मुझे मेरी गलती के लिए तनबीह करते हैं,
यही सच्ची भाईचारे की असल शक्ल है।

क्योंकि तुम्हारे दुश्मन हमेशा तरीके ढूँढते हैं तुम पर नुक्ताचीनी करने के लिए,वो तुम पर तुम्हारी कमियाँ उछालेगें, जब एक बार वो उन्हें ढूँढ लेंगे।इस तरह तुम्हारी गलतियों को जानने के लिए ऐसे मुखालिफ़ राए को मुकम्मल हवालों के तौर पर इस्तेहसाल किया जाता है।अच्छे दोस्त, इसके बरअकस, ज़्यादातर तुम्हारी गलतियों को नज़रअंदाज़ कर देते हैं।एक दिन, किसी ने हज़रत इब्राहिम अद-हम, (एक आला इस्लामी आलिम और वली,) से उसकी गलतियों और कमियों के बारे में बताने के लिए इलतिजा की। "मेने तुम्हारा एक दोस्त बनाया है।इसलिए, तुम्हारे सारे ढंग और तरीके मुझे अच्छे ज़ाहिर हुए।किसी और से अपनी गलतियों के बारे में पूछो," ये उस आला आलिम का जवाब था।दूसरा तरीका अपनी कमियों को जानने का वो है दूसरों की गलतियों को ध्यान से देखना।जब तुम दूसरों की गलतियों को देखो, तो तुम्हें कोशिश करनी चाहिए और देखना चाहिए अगर तुम्हारी वही गलतियाँ हैं, और तुम देखो के तुम ऐसा करते हो, तो तुम्हें कोशिश करनी चाहिए के उससे पीछा छुड़ाओ।इस तरीके से बुराइयों को पहचानना एक दूसरा तरीका है बीमारियों को सही करने का और यही मंदरजाज़ेल हदीस का मतलब है, "**एक ईमान वाला (मोमिन) एक दूसरे ईमान वाले का आईना है।**" दूसरे लफ़्ज़ों में, तुम अपनी गलतियों को दूसरों की गलतियों में पहचानो।जब जिसस (ईसा अलैहि-सलाम) से किसी ने पूछा कि आपने किससे अपनी नेकियाँ सीखी, आपने जवाब दिया: "मेने उन्हें किसी से नहीं सीखा।मैं दूसरों को देखता था, उन चीज़ों का ध्यान रखता था जो मुझे पसंद नहीं थी और मैं वो करने को नज़रअंदाज़ करता था, उन चीज़ों की नकल करता था और तकलीद करता था जिन्हें मैं पसंद करता था।" जब मश्हूर डॉक्टर लुकमान से पूछा गया के उन्होने अखलाक कहा से सीखे, उन्होने जवाब दिया, "बग़ैर अखलाक वाले लोगों से!" इस्लामी आलिमों, जैसे के (मुबारक लोग जिन्हें कहते हैं) सलाफ़ अस सालिहीन, सहाबा, और दूसरे औलिया रहमतुल्लाही अलैहिम अजमईन की सवानेह हयात और दास्तान पढ़ना, एक दूसरा तरीका है अच्छी आदात को बनाने का।[वली, औलिया (वली की जमा), सहाबा, सलाफ़ अस-सालिहीन जैसे नामों के लिए,

हमारी दूसरी इशाअत, **मिसाल के तौर पर सहाबा 'द ब्लैस्ड'/मुबारक सहाबा** हकीकत किताबवी, फातिह, इस्तानबुल तुर्की से दस्तयाब है।)

एक शख़्स जो एक बुराई रखता है उसे इस बुराई को अपनाने की वजह (सबब) ढूँढना चाहिए। उसे इस सबब को खत्म करना चाहिए और फिर उसके उलटा करके उससे पींछा छुड़ाने की कोशिश करनी चाहिए। उसे इस बुराई के उलटा करने के लिए बहुत ज़्यादा कोशिश करनी चाहिए ताकि इससे पीछा छुड़ा सके। क्योंकि,बुराई से पीछा छुड़ाना बहुत मुश्किल है। नफ़स को बुरी और गंदी चीज़ों से प्यार है।

दूसरी फायदेमंद दवा बुराइयों से छुटकारा पाने के लिए वो है सज़ा का तरीका कायम करना। मिसाल के तौर पर, जब कोई एक बुराई करे, तो फ़ौरन उसके बाद, उसे ऐसे काम करने चाहिए जो उसका नफ़स पसंद ना करे। एक अच्छा तरीका इसे पूरा करने के लिए वो है हलफ़ लेना। नाम के तौर पर, एक शख़्स ऐसा हलफ़ लेना चाहिए के अगर एक शख़्स एक बुराई करता है, तो उसे ज़ाएद अच्छाई जैसे के ज़कात देना, रोज़ा रखना या नमाज़ अदा करना। क्योंकि एक शख़्स की नफ़स कभी भी ज़ाइद इबादत नहीं करनी चाहेगी, तो वो बुराइयाँ करनी छोड़ देगा। एक और दूसरी फाएदेमंद दवाई दूसरे से पढ़ना या सुनना है उन बुराईयों के बारे में जिनके नुकसानदह नतीजे हैं। कई हदीसों ने हमें बुराइयों के नुकसान के बारे में बताया उनमें से कुछ हैं:

1- "**अल्लाह तआला की निशाह में, वहाँ कोई गुनाह इतना बड़ा नहीं है जितना के बुराइयाँ।**" क्योंकि,उनके लिए जो बुराइयाँ करते हैं उन्हें ये नहीं मालूम के वो गुनाह का जुर्म कर रहे हैं। इसलिए, वो अपने गुनाहों पर पछताते नहीं इस तरह उनके गुनाहों का ढेर हो जाता है और वो कई मोड़ों में बड़ जाते हैं।

2- "**एक गुनाह जो इंसानी मखलूक बग़ैर किसी हिचकिचाहट या मखसूस किए हुए करता है वो है उसका बुराइयों वाला शख़्स होना।**"

3- "वहाँ पर हर किस्म के गुनाह के लिए पश्च्यताप है लेकिन बुराइयों के लिए कोई नहीं है। बजाए एक खास बुराई के लिए पछताना, एक गुनाह करने वाला कुछ ज़्यादा खराब जुर्म कर देता है।"

4- "जैसे के गरम पानी बर्फ़ की क्यूबको पिघलाती है, इसी तरह नेकियाँ गलतियों और खामियों को खत्म कर देती हैं। जिस तरह सिरका शहद को तबाह कर देता है, उसी तरह बुराइयाँ ईनामों (सवाबों) को अच्छे कामों के लिए खराब कर देती हैं।"

इंसाफ **(अदालत)**, पाकिज़गी **(इफ़फ़त)**, बहादुरी **(शुजाअत)** और अकल **(हिकमत)**, जब इन्हें बुरी नियत से इस्तेमाल नहीं किया जाता तो सारी नेकियों का ज़रिया होती हैं। एक शख़्स को पाक **(सालिह)** और अच्छी खसलत वाले लोगों के साथ हिस्सेदार होना चाहिए अपने आपको अच्छी खसलत वाला शख़्स बनाने के लिए या अपनी नेकियों को बचाने के लिए। एक शख़्स का अखलाक उसके साथी की आदात की तरह होती है। अखलाक एक छुत वाली बीमारी की तरह होता है एक शख़्स को गंदे-मज़ाक वाले लोगों को दोस्त नहीं बनाना चाहिए। ये इस तरह मंदरजाज़ेल हदीस शरीफ़ में बयान है: **"एक शख़्स का ईमान उसके साथी के जैसा होता है।"** एक शख़्स को अपने आपको बेकार कामों और खेलों, नुकसानदह मज़ाकों, और लड़ाइयों से परहेज़ करना चाहिए। एक शख़्स को ऐसी किताबें नहीं पढ़नी चाहिएँ जो उसके अखलाक की जड़े खोददे या जो जिनस को बढ़ावा दे और ऐसे टेलिविज़न के प्रोग्राम ना देखें या रेडियो के प्रोग्राम सुने जो अखलाकी कदरों को नुकसान पहुँचाए या जो जिनसी इच्छाओं को जगाएं। एक शख़्स को लगातार अपने आपको नेकियों के फ़ाएदे और इस्लाम की ममनुआत के नुकसानदह असरात और जो सज़ाएँ उनको दोज़ख में मिलेंगी उन्हें याद दिलाते रहना चाहिए। कोई भी दौलत का और रूतबे का पीछा करने वाला अपनी इच्छा को हासिल नहीं कर सकता। ताहम, जो, दुनियावी कबज़े और रूतबे चाहते हैं उनके साथ अच्छे काम करने चाहिए वो आराम और खुशी से रहते हैं। दुनियावी रूतबे और कबज़े एक शख़्स के मंज़िले मकसूद नहीं होने चाहिए लेकिन इसके बजाए वो दूसरों को फ़ायदा पहुँचाने का ज़रिए बन सकते हैं। दुनियावी रूतबे और कबज़े

एक बड़े समुंद्र में डूब जाते हैं। अल्लाह तआला का डर एक जहाज़ है जो एक शख़्स को उस बड़े समुंद्र में बचने के लिए चाहिए होता है। हमारे पैग़म्बर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने एक बार कहा, **"एक शख़्स को दुनिया में एक मुसतकिल रहने वाले की तरह नहीं रहना चाहिए बल्कि एक मुसाफ़िर की तरह रहना चाहिए, और ये नहीं भूलना चाहिए के उसे मर जाना है!"** इंसानी मखलूक इस दुनिया में हमेशा नहीं रहेगी। जब एक शख़्स दुनियावी आरामों में खो जाते हैं, तो उसकी मुसिबतें, परेशानियाँ और तकलीफ़े बढ़ जाती हैं। मंदरजाज़ेल हदीसों को कभी नहीं भूलना चाहिए:

1- "अल्लाह तआला का एक गुलाम/बंदा जिसने बहुत सारे इबादत के काम नहीं किए उसे आखिरत में ऊँचा मकाम मिलेगा अगर जो उसका अच्छा अखलाक था।"

2- "सबसे आसान और सबसे ज़्यादा फ़ाएदेमंद इबादत कम बोलना है और एक अच्छी खसलत का शख़्स होना है।"

3- "अल्लाह तआला का एक बंदा हो सकता है बहुत सारी इबादतें करता हो लेकिन, उसका बुरा मज़ाक उसे दोज़ख की गहराई में डाल सकता है। ये कभी उसे कुफ़्र की तरफ़ भी ले जा सकती है।"

4- ऐसा बताया गया है के एक बार सहाबा रज़ी अल्लाहू अन्हुमा ने एक बहुत ज़्यादा पारसा इबादतगुज़ार के बारे में अल्लाह तआला के पैग़म्बर को बताया। वो शख़्स अपने दिन रोज़े रखकर और रातें इबादत करते हुए गुज़ारता था, फिर भी वो गुस्से वाला था। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने जवाब दिया, **"ये अच्छी हालत नहीं है। उसकी मंज़िल दोज़ख की आग है।"**

5- "मैं नेकियों की मुबारकबाद और लोगों की मदद करने के लिए भेजा गया ताकि वो इन नेकियों को ज़हन नशीन करलें।" पिछले भेजे गए एक खुदा को मानने वाले मज़ाहिब में भी नेकियाँ मौजूद थीं। उन नेकियों की ताज़ीम के लिए इस्लाम को भेजा गया था। क्योंकि ये मज़हब अच्छे अहकाम और आदात के साथ वुजूद में आया, तो नेकियों के बारे में हमें बताने के लिए

किसी और ज़रिए की ज़रूरत नहीं है। इसलिए, पैग़म्बर मौहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के बाद कोई पैग़म्बर नहीं आया।

6- "**एक अच्छी फ़ितरत का शख़्स दुनियावी और आखिरी दुनिया दोनों की खुशियाँ हासिल करता है।**" नेकियों के साथ एक शख़्स अल्लाह तआला और उसकी मखलूक की तरफ़ फ़र्ज़ निभाता है।

7- "**दोज़ख की आग उस शख़्स को नहीं जलाती जो अच्छी फितरत और एक खुबसूरत जिस्मानी जाहिरदारी रखता है।**"

8- "**अच्छी फ़ितरत का होने का मतलब है उनके करीब होना** (और साथ में अच्छे ताअल्लुक रखना) **जो तुमसे दूर रहते हैं, उनको माफ़ कर देना जो तुम्हें दुख पहुँचाते हैं, और उनके साथ फ़य्याज़ी रखो जो तुम्हारी तरफ़ बखील हों।**" एक अच्छी फ़ितरत वाला शख़्स उनके साथ अच्छाई करता है जो उसके साथ लड़ाई रखते हों या वो उनको माफ़ कर देता है जो उसकी इज़्ज़त को नुकसान पहुँचाते हैं या उसे जिस्मानी या माली नुकसान पहुँचाते हैं।

9- "**अल्लाह तआला एक शख़्स का दिल ईमान और सच्चाई से भर देता है अगर वो दूसरों के साथ नरम बरताव रखता है चाहे वो कितना ही गुस्सा हो।**" उसे कोई खौफ़ या परेशानियाँ नहीं होतीं। सारी नेकियों में सबसे अच्छी वो है के जो लोग तुम्हारे साथ गलत बरताव करें और तुम उनके साथ अच्छाई करो। इस तरह का बरताव बुरदबारी की निशानी है और ये तुम्हारे दुश्मनों को दोस्तों में तबदील कर देते हैं। इमाम गज़ाली रहमतुल्लाही अलैह ने कहा के वो **इंज़ील** (बाएबल) में से मंदरजाज़ेल बयान पढ़ रहे थे, जो ईसा (जिस्स) अलैहि सलाम पर नाज़िल हुए: "लेकिन मेने तुमसे कहा, के तुम बुराई से टक्कर मत लो, लेकिन जो कोई भी तुम्हारे सीधे गल पर मारे, उसकी तरफ़ तुम दूसरा भी कर दो।" "और अगर कोई आदमी तुम पर अदालत में नालिश करे, और तुम्हारा कोट ले ले, तो उसे अपना चौग़ा भी दे दो।" (Matt: 5-39,40) [बराएमहरबानी बाएबल में शामिल की गई नकलों की तफ़सीली जानकारी के लिए हमारी किताब **कूड नोट आनसर**/Could Not Answer को देखिए जो इसाई पढ़ते हैं।] स्पेन में स्पेनी जाँचों के दौरान, भारत में,

बोसनिया-हरज़ीगोवीना और जेरूसलेम यहाँ तक के एक दूसरे के खिलाफ़ जाँच करती हुई अदालतों के ज़रिए जो बेरहमी, जुल्म और ज़दकोब मुसलमानों और यहूदियों पर किया गया ईसाइयों के ज़रिए उसके बारे में हमें किताबे जानकारी देती हैं। उनका ग़ैर मोहज़्ज़ब बरताव से साबित करता है के वो इंजील की सही तालीमात को नहीं मानते।

हम मुसलमानो को अपने दिलो में बसी बुराइयों से पीछा छुड़ाना होगा और उन्हें नेकीयों से बदलना होगा। एक शख़्स एक अच्छी फ़ितरत वाला शख़्स नहीं बन सकता कुछ बुराइयों को कुछ अच्छाइयों से तबदील करने से। एक सूफ़ी हुकूम वो रास्ता है जो एक शख़्स को बुरदबारी हासिल कराता है, यानी, हर नेकी में महारत। [एकरास्ता जो इस बुरदबारी को नहीं दिला सकता वो एक सूफ़ी रास्ता नहीं है। जैसा के ये हमेशा होता है,के कोशिश करने के हर रास्ते में झूठे पैशावर बेठे हुए हैं। इसी तरह, वहाँ पर कुछ इल्म की राह और सूफ़ी राह (**तरीकत**) में हैं जो अपने आपको शैख (रूहानी रहनुमा) ज़ाहिर करते हैं। असलियत में, वो असली इस्लाम के बारे में और इस्लाम की खुबसूरत अखलाकी तालीमात के बारे में कुछ भी नहीं जानते। हमें इस किस्म के और उनके जालों से बचना चाहिए।]

साठ बुराइयाँ काफ़ी मशहूर हैं। हमने उनमें से चालीस का तरजुमा किया और उन्हें चालीस सब-चेपटरस में शामिल किया। एक शख़्स जो इन बुराइयों को छोड़ेगा और उसके उलटा करेगा वो एक नेक या अच्छी फ़ितरत वाला शख़्स होगा।

1- बेयकीनी कुफ़्र

सारी बुराइयों में सबसे खराब है अल्लाह तआला (की मौजूदगी) से इंकार करना, यानी एक इलहादी होना। मौहम्मद अलैहि सलाम की नब्बूव्वत से इंकार कुफ़्र (बेयकीनी) है। फरिश्ते, इंसानी मखलूक और जिन (जिन्नात) सब ई मान के उसूलों पर यकीन रखने की तजवीज़ करते हैं। यकीन का मतलब है दिल से सारे एहकामात को मानना जो मौहम्मद अलैहि सलाम पर अल्लाह

तआला के ज़रिए ज़ाहिर हुए और उनके ज़रिए हम तक पहुँचाए गए, और इस हालत को ज़ुबान से मानना। यकीन करने की जगह रूहानी दिल (**कल्ब**) है। रूहानी दिल एक ताकत है जो ज़िन्दा दिल में मौजूद होती है। एक शख़्स के काबू से बाहर हालात, जैसे के लाचारी, बीमारी, गूंगापन, और अचानक मौत, जबकि वहाँ कोई वक्त नहीं है, आज़ाद होते हैं हर ज़बरदस्ती से अपने ईमान को अपनी ज़ुबान से बयान करने के लिए। नकल किए हुए यकीन, जोकि एक शख़्स बग़ैर समझे अपना लेता है, वो कुबूल किए जाते हैं। अल्लाह तआला के वुजूद को ना समझना, और ना उसके बारे में सोचना एक गुनाह है। ईमान के उसूलों में से किसी एक को भी इंकार करने का मतलब है सबसे इंकार करना। ताहम, इसे ईमान माना जाएगा के उनमें अपना ईमान ज़ाहिर करना सब हिस्सों में बग़ैर सारे उसूलों को मुनफ़रिद जाने हुए। ईमान का एक ज़रूरी जुज़्व है के उन चीज़ों को नज़रअंदाज़ करना जो इस्लाम ने कुफ़्र की अलामतें बताई हैं। कुफ़्र की कुछ अलामतें हैं: इस्लाम के किसी भी एक उसूल का मज़ाक उड़ाना, यानी, एहकामात और ममनुआत, और कुरआन अल करीम का या किसी फरिश्ते या पैग़म्बर अलैहि सलाम का मज़ाक उड़ाना। उन चीज़ों के बारे में शक करना जिनपर यकीन करना ज़रूरी है इसका मतलब भी कुफ़्र है।

यहाँ तीन किस्म के कुफ़्र हैं: **1)** लाइल्मी की वजह से कुफ़्र (**जाहिलियत**), **2)** सरकशी (**जुहूदी**) की वजह से कुफ़्र, और **3)** अदालत (**हुकमी**) के ज़रिए कुफ़्र।

1- लाइल्मी वजह से कुफ़्र (**कुफ़्र-ए-जाहली**): ये उनका कुफ़्र है जिन्होने (एक खास इस्लामी उसूल) इसके बारे में सुना नहीं और ना ही सोचा है। **"जहल"** का मतलब है लाइल्मी। वहाँ दो तरह की लाइल्मी है।

a) सादी लाइल्मी। इस तरह की लाइल्मी के साथ लोगों को पता होता है के वो जाहिल/लाइल्म हैं। वो गलत यकीन नहीं रखते। वो जानवरों की तरह होते हैं क्योंकि इंसानों को जानवरों से जो चीज़ मुखतल्लिफ़ करती है वो है इल्म और समझदारी। ये लोग जानवरों से भी नीचे हैं क्योंकि हर जानवर एक खास मैदान में जिसके लिए उसे तखलीक किया गया उसमें महारत रखता है और वो ये समझ रखता है के उसके लिए क्या फ़ाएदेमंद है और उसकी तरफ़

झुकाव रखता है। वो ये भी समझ रखता है के उसके लिए क्या नुकसानदह है और उससे दूर रहता है। दूसरी तरफ़, ये जाहिल लोग जानते हैं के वो नहीं जानते लेकिन वो कोई कदम नहीं उठाते लाइल्मी से परे होने के लिए और इल्म की तरफ़ बढ़ने के लिए।

[इमाम अर-रब्बानी रहीमाहुल्लाहु तआला ने अपनी किताब **मकतूबात** की पहली जिल्द के **259**वें खत में मंदरजाज़ेल कहा: "जैसा के मैं इसे समझा हूँ, लोग जो पहाड़ो में पले बढ़े और कभी किसी मज़हब के बारे में नहीं सुना और बुत को पूजने वाले हैं वो ना तो जन्नत में जाएंगे और ना ही दोज़ख में। मौत से उठने के बाद, उनसे सवाल किया जाएगा उनके कामों के बारे में और उनके गलत कामों की जज़ा और सज़ा अदा करने के बाद, उन्हें जानवरों के साथ मिटा दिया जाएगा। उन्हें किसी भी मकाम पर हमेशा के लिए नहीं रखा जाएगा। मेरे लिए ये कहना बहुत मुश्किल है के अल्लाह तआला उन लोगों को अबदी तौर पर दोज़ख की आग में जलाएगा क्योंकि उन्होने सही रास्ता नहीं ढूँढा या सच्चा मज़हब अपने दिमाग़ के साथ या अकल के साथ जबकि हम रोज़ाना देखते हैं के ज़्यादातर लोग अपने दुनियावी मामलों में भी गलतियाँ करते हैं। इसके अलावा, काफ़िरों के वो बच्चे जो बालिग़ होने से पहले मर गए उनको भी इसी तरह मिटाया जाएगा।

दूसरा ग्रुप जो ना तो दोज़ख में जाएगा और ना ही जन्नत में ये वो लोग हैं जो उन जगहों में रहते थे और वक्त में जब कोई मज़हबी रहनुमाई नहीं थी। ये हाल तब का है जब एक पैग़म्बर की ज़िन्दगी के बाद एक लम्बा अरसा बीत गया और उनका लाया हुआ मज़हब भूला दिया गया या ज़ालिम लोगों के ज़रिए बदल दिया गया हो इस तरह वो लोग पैग़म्बरों या सच्चे मज़ाहिब के बारे में नहीं जान पाए। आखिर में, लोग जो काफ़िरों के मुल्कों में रहते हैं और जिन्होने इस्लाम के बारे में नहीं सुना वो दोज़ख में या जन्नत में नहीं जाएंगे; उनको मिटा दिया जाएगा।"]

ये फ़र्ज़ [फ़र्ज़ या फर्द) का मतलब है (कोई भी बरताव या सोच या यकीन जो के है) ज़रूरी। इस्लाम के खुले एहकामात को फर्ज़ (जमा. फ़राईज़) कहते हैं।] है के ईमान के उसूलों और इस्लाम की उन तालिमात को जानना जो

फ़राईज़ (एहकामात) और हराम (ममनुआत) से तआल्लुक रखती हैं, जो आमतौर पर जानी जाती हैं और ज़रूरी हैं। इनको याद ना करना हराम (ममनुअ) है। असल में, उनके बारे में सुनने के बाद उनको नाचीज़ समझना कुफ़्र है। लाईल्मी को खत्म करने वाली दवा इसको पढ़ना और याद करना है।

b) दूसरी किस्म की जहालत बहुत सी चीज़ों से बनी हुई जहालत है (**जहल अल मुरक्कब**), जिसका मतलब है गलत और खराब ईमान रखना। कदीमी ग्रीक फ़लसफ़ियों का ईमान और मुसलमानों के बहत्तर बिदअती फ़िरकों के बीच में जो अपना ईमान खो चूके थे इस तरह की जहालत की मिसाल मिलती है। इस किस्म की जहालत पहली किस्म से ज़्यादा खराब है। ये एक बीमारी है जिसका कोई इलाज नहीं है। (ईसा अलैहि सलाम) ने कहा, "**मैं बहरे और गूंगे लोगों का इलाज करता हूँ और मरे हुओं को जिला बख्शता हूँ। फिर भी मेने अभी तक जहल अल मुरककब की कोई दवाई नहीं ढूँढी।**" इस ग्रुप के लोग अपने आपको जहल नहीं मानते। बल्कि, वो अपने आपको और अपनी जानकारी को दूसरो से अफ़ज़ल समझते हैं। वो अपनी बीमारी के बारे में नहीं जानते, इसलिए वो कोई इलाज भी हासिल नहीं करते। सिर्फ़ उनको जिन्हें रूहानी मदद मिली हो वो अपनी हिस में आते हैं ताकि वो अपनी बीमारी को समझें और उसका इलाज हासिल करें।

2- सरकशी की वजह से जहालत (**कुफ़्र-ए-जुहूदी**): लोग जो इस ग्रुप में आते हैं वो जानबुझकर कुफ़्र को चुनते हैं या तो इसलिए क्योंकि दुनियावी रूतबों से बहुत प्यार रखते हैं या वो घमंडी हैं या वो डरते हैं के लोग उन्हें हकीर समझेंगे जब वो एक नया मज़हब तबदील कर लेंगे। मिसाल के तौर पर, फिरओन और उसके साथियों को इस किस्म का कुफ़्र था। हाँलाकि उन्होने मोसिस (मूसा अलैहि सलाम) के मोअज्ज़े अपनी आँखो से देखे थे फिर भी वो अपने आपको कुफ़्र में रखना पसंद करते थे और कहते थे के वो किसी में यकीन नहीं रखेंगे जोकि उनके जैसा एक आदमी है। उन्होने ये कुबूल नहीं किया के उनके जैसा एक शख़्स पैग़म्बर भी हो सकता है। वो मानते थे के पैग़म्बरों को फरिश्तों के बीच में से होना चाहिए। ग़ैर अकली तौर पर, ताहम, वो फिरओन की पूजा करते थे, जो उनकी तरह ही एक आदमी था। और

बाएज़ेनटिन का बादशाह हिराकलेस जानबुझकर इस कुफ़्र में रहना चाहता था क्योंकि वो अपने तख्त से बहुत प्यार करता था और सोचता था के अगर उसने अपना मज़हब तबदील किया, तो उसका ताज छीन जाएगा। बाएज़ेनटिन के राजाओं को शहनशाह या कैसर कहा जाता था। फारसी बादशाहों को चोसरोएस कहा जाता था। इथोपिया के बादशाहों को नेगूस कहा जाता था। तुर्की बादशाहों को खान कहा जाता था। कोपटीक या जीपसी बादशाहों को फिरओन कहा जाता था। मिसर के बादशाहों को "अज़ीज़" कहा जाता था। हिमयाराईट बादशाहों को तूब्बा कहा जाता था। हमारे पैग़म्बर के सहाबाओं में से एक ज़िया रज़ी अल्लाहू तआला अन्ह ने हमारे पैग़म्बर मौहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की तरफ़ से दमीकश में बाइज़ेनटिन शहनशाह हिराकलेस को एक खत पहुँचाया। वो उस खत के ज़रिए इस्लाम की तरफ़ बुलाए गए थे। पिछली शाम को मक्का के काफ़िरों का एक तिजारती काफ़िला दमीकश में आया था। हिराकलेस ने उनके सरबराह अबू सुफ़यान को अपने महल में बुलाया और उससे पूछा: मेने सुना है के मदीना में किसी ने नब्बुव्वत का एलान कर दिया। वो अमीरज़ादों में से एक है या एक निचली जमाअत से है? क्या उससे पहले भी किसी ने नब्बुव्वत का दावा किया है? क्या उसके आबाओ अजदाद में से कोई अमीर या मालिक था? [इकतेदार वाले शख़्स को ये खिताब दिया जाता है।] क्या जो लोग उसके मरतबे से जुड़ रहे हैं वो दौलतमंद कुंबों से हैं या क्या वो गरीब और नाकाबिल लोग हैं? क्या इस नए मज़हब के लिए उनकी दावत को तरक्की मिली? क्या उनके मज़हब से जुड़ने वालों में से किसी ने बाद में उसे छोड़ा? क्या वो कभी झूठ बोलते हुए या अपना वादा तोड़ते हुए देखे गए? क्या वो अपनी जंगे जीत रहे हैं या हार रहे हैं? जब अबू सुफ़यान ने इन सब सवालों के जवाब दे दिए। हिराकलेस ने कहा के ये सब जवाबों से ज़ाहिर होता है के वो एक सच्चा पैग़म्बर है। दोग़ला और हासिद, अबू सुफ़यान उसूल के खिलाफ़ बोला: "अलबत्ता, वो कुछ झूठ भी बोलता है। मिसाल के तौर पर, उन्होने कहा के एक रात में वो मक्का से **अल-अकसा** जेरूसलेम में सफर कर आए।" ये सुनने पर, लोगों में से एक ने हिराकलेस की मौजूदगी में इस बातचीत में शामिल हो गया और कहा के उस रात वो जेरूसलेम में अल-अकसा में था और जो कुछ उसने उस रात वहाँ देखा था वो सब कह सुनाया। दूसरे

दिन, हराक्लेस ने सहावी ज़िया रज़ी अल्लाहू अन्ह का खैरमकदम किया, उसक लिए जो खत था उसे पढ़ा, और अपने ईमान को (असलियत उसमें लिखी थी) उस खत में इकरार किया, और ज़िया से कहा के वो मानता है कि मौहम्मद अलैहि सलाम पैग़म्बर थे। ताहम, वो खौफ़ज़दा था अपने लोगों को ये बताने के लिए की वो इस्लाम अपना चूका है। उसने ज़िया से कहा के ये खत फलाँ पादरए के पास ले जाओ और कहा के वो बहुत इल्म वाला शख़्स है और वो यकीन करेगा। जैसे ही पादरए ने खत पढ़ा उसने वो पैगाम कुबूल कर लिया और नए ईमान की दावत भी और अपने आस पास के दूसरे लोगों को भी इस नए ईमान की दावत दी। फिर भी, इसके बजाए लोगों ने उसको कत्ल कर दिया। ज़िया वापिस हिराकलेस के पास आए और बताया के किया हुआ। हिराकलेस ने जवाब दिया के वो जानता था के किया होने वाला है इसलिए उसने अपने नए ईमान की कुबूलियत को किसी को नहीं बताया। उसने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को एक खत लिखा और अपने यकीन के बारे में बताया। बाद में, वो हमस शहर में गया और, जहाँ उसे एक खत मिला अपने नोकरों में से एक के ज़रिए जिसमें मौहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की नब्बुव्वत और उनकी तकमीलात के बारे में इतलाआत थीं। उसने अपनी कौम की बड़ी हस्तीयों को इकट्ठा किया और उनके लिए वो खत पढ़ा, और तब उसने उन्हें बताया के वो आपकी नब्बुव्वत में ईमान रखता है। सारे लोग जो उसके आस पास जमा थे उस खबर की बड़ी सख्त मज़म्मत और नुकताचीनी करने लगे। हालात की संगीनी को देखते हुए वो समझ गया के वो लोग यकीन नहीं करेंगे, इसलिए, उसने उन सब से माफ़ी मांगी और कहा के वो बस उनकी अपने मज़हब की तरफ़ लगाव और मज़बूती देख रहा था। लोग जो उसकी मुखालफ़त कर रहे थे चुप हो गए उसके जवाबों के साथ और उसके सामने अपनी वाबस्तगी ज़ाहिर करने के लिए ताअज़ीम में लेट गए। इस तरह उसने अपनी गददी को खोने के डर से ईमान पर कुफ़्र को सवक़त दी। बाद में, उसने एक फौज मुता के मकाम पर भेजी मुसलमानों के साथ लड़ाई करने के लिए। उस जंग में बहुत सारे मुसलमान शहीद हो गए। दरहकीकत, जब हिराकलेस का राज़ीनामा आया और अल्लाह के पैग़म्बर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के लिए पढ़ा गया, तो आपने कहा, **"ये झूठ बोल रहा है। उसने**

अपनी ईसाईयत के ईमान को नहीं बदला।" पैग़म्बरी खत की एक कॉपी जो हिराकलेस को भेजी गई थी वो हदीस-ए-शरीफ़ की किताब जिसका नाम **सही अल-बुखारी** है, साथ में **मवाहिब** और **बरीका** किताबों में भी मौजूद है।

3- ईन्साफ़ के ज़रिए कुफ़्र (**कुफ़्र-ए-हुकमी**)।एक शख़्स जो ऐसा कुछ कहे या करे जो इस्लाम ने कुफ़्र की अलामत बताया है तो वो काफ़िर बन जाता है चाहे वो दिल से असल में ईमान रखता हो और एक मुसलमान होने का इकरार करता हो।इस्लाम मे किसी भी चीज़ को जिसे उसने कीमती या खूबी वाला बताया हो उसका मज़ाक उड़ाना, या बेइज़्ज़ती करना या हकीर समझना कुफ़्र है।कोई भी जो कुछ ऐसा कहे जो अल्लाह तआला के लायक नहीं है वो एक काफ़िर बन जाता है।जो काम कुफ़्र का सबब बनते हैं उनकी मिसाले हैं: मिसाल के तौर पर, ऐसा कहना, "अल्लाह तआला हमें अर्श से या जन्नत से देख रहा है," या "अल्लाह तआला तुम्हें गलत करेंगे क्योंकि तुमने मुझे गलत किया," या किसी एक खास मुसलमान का नाम रखे और कहे, "ये मुझे एक यहूदी की तरह लगता है," या एक झूठ बोलना और बाद में इज़ाफ़ा करना, "अल्लाह जानता है के ये सच्च है," या कुछ ऐसा कहना जो कुरआन अल-करीम की हत्क करना हो या चाहे उसके हुरूफ़ में किसी एक की, या फरिश्तों पर ज़लील फ़िकरे कसना, या चाहे कुरआन अल करीम के किसी एक भी हुरूफ़ से इंकार करना, या कुरआन अल करीम को संगीत के साज़ो के साथ में पढ़ना, या तोराह और बाएबल के असली बयानों को रूसवा करना या उनसे इंकार करना, या कुरआन अल-करीम के हुरूफ़ को शाज़ [बराए महरबानी इस लफ़ज़ के लिए और दूसरे इस्लामी अल्फ़ाज़ के लिए जो इस मतन में इस्तेमाल हुए हैं हमारी दूसरी इशाअत को देखिए।] के साथ पढ़ना और असली कुरआन अल करीम को पढ़ने का दावा करना, या नबियों के बारे में हत्क वाले अलफ़ाज़ बोलना, या कुरआन अल करीम में ज़िकर किए गए पच्चीस नबियों अलैहिम अस सलावात ऊ-व-तसलीमात के नामों में से किसी एक से भी इंकार करना, या आमतौर पर जानी जाने वाली सुन्नतों में से किसी एक को भी हकीर जानना, या ये कहना, उस शख़्स के बारे में जो अपने ख़ैरात के कामों के लिए मशहूर हो, मिसाल के तौर पर, "ये पैग़म्बर से अच्छा है" ये कुफ़्र का काम है कहना के पैग़म्बर अलैहिम अस सलावात ओ व-तसलीमात ज़रूरतमंद लोग थे,

क्योंकि पैग़म्बर के लिए गरीबी उनकी अपनी मरज़ी थी। अगर एक शख़्स पैग़म्बर होने का दावा करता है, वो और जो उसके मामने वाले हैं वो काफ़िर बन जाएंगे। अगर एक हदीस-ए-शरीफ़ सुनता है, "**मेरी कबर और मेरे मिंबर के बीच में जन्नत के बाग़ों में से एक बाग है।**" और कहा, "मैं कुछ नहीं देखता लेकिन एक कबर, एक चटाई, और एक मिंबर देखता हूँ," वो एक काफ़िर बन जाता है। ये कुफ़्र है के आखिरत में जो होना है उन बातों का मज़ाक बनाना। ये कुफ़्र का काम है के कबर में या आखिरत में जो अज़ाब नाज़िल होगा उससे इंकार करना, [या ये कहना के ये माअकूल नहीं है,] इस बात से इंकार करना के ईमान वाले अल्लाह तआला को जन्नत में देखेंगे या ये कहना, मिसाल के तौर पर, "मुझे जन्नत नहीं चाहिए। मैं अल्लाह को देखना चाहता हूँ।" अल्फ़ाज़ जो इस्लाम से इंकार करने की अलामत हैं वो है ये कहना, मिसाल के तौर पर, साईन्सी इल्म इस्लामी इल्म से बेहतर है," या कहना, "इससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता चाहे मैं (रोज़ाना इबादत) नमाज़ पढ़ूँ", या ये कहना, "मैं (इस्लाम की ज़रूरत खैरात) ज़कात नहीं दूँगा," या ये कहना, "मैं चाहता हूँ रिबा (सूद) हलाल होती।" ये कुफ़्र का काम है के सवाब की उम्मीद रखना (आखिरत में सवाब/ईनाम) उस खैरात के काम से जो ऐसी मिलकियत से हासिल हुआ हो जो इस्लाम की ममनुअ तरीकों जिसे हराम कहते हैं से हासिल की गई हो, या एक गरीब शख़्स से कहना के इस खैरात करने वाले को दुआ दो हाँलाकि वो खैरात जो उसे दी गई है वो ऐसी मिलकियत से आई है जो नाजाईज़ तरीकों से हासिल की गई है और वो जानता है, या ये दावा करना के इमाम-ए-आज़म अबू हनीफ़ा रहीमाहुल्लाहू तआला ने जो कियास अदा किया वो सही नहीं था। सुरह एराफ़ की सत्तावनवीं आयत-ए-करीमा का मआनी है: "**ये वो है (अल्लाह तआला) जो हवाओं को भेजता है खुशी की नवेद की एलान की तरह, उसकी रहमत में जाने से पहले: जब वो भारी मरे हुए बादलों को लेकर चलती हैं, हम उन्हें उस ज़मीन पर भेजते हैं जो मरी हुई है, वहाँ बारिशों को उतारो, और हर तरह की फसल की पैदावार कराई: इस तरह हम मुरदे को उठाते हैं: शायद तुम ये याद रखो।**" **(7-57)** ये आयत-ए-करीमा साबित करती है के कियास सही (हक़) है। इस आयत-ए-करीमा में एक मज़मून बहस तलब एक इतेफ़ाक राए से जाना जाने वाले मज़मून से मिलाया गया। क्योंकि

सब जानते हैं के अल्लाह तआला बारिश बनाता है और घास को बढ़ाता है मिट्टी में से, इस आयत-ए-करीमा ने गैर जानिबदाराना तौर पर साबित किया के हशर में मुरदों को जिला बखशना वो बिल्कुल उससे मिलता हुआ है के मरी हुई मिटटी से हरी घास को उगाना।

ये कुफ़र-ए-जुहूदी (ज़िद की वजह से कुफ़्र) है के इस्लाम की तालीमात से इंकार करना या इन तालीमात को या इस्लामी आलिमों को हकीर जानना।

जो कोई भी ये इच्छा रखता है के वो एक काफ़िर बन जाए वो जैसे ही ये इरादा करता है वो काफिर बन जाता है। कोई भी जो दूसरों को चाहता है के वो काफिर बन जाएँ वो खुद एक काफ़िर बन जाता है अगर वो इसलिए उन्हें काफिर बनाना चाहता हैं क्योंकि वो खुद कुफ़्र चाहता है। वो काफ़िर नहीं बन सकता अगर वो उन्हें इसलिए काफ़िर बनाना चाहता हैं क्योंकि वो बुरे हैं, ज़ालिम लोग हैं और वो चाहते हैं के उन्हें दोज़ख की आग में सज़ा दी जाए उनके ज़ालिमाना बरताव की वजह से। एक शख़्स एक काफिर बन जाता है अगर वो ऐसे लफ़्ज़ कहे जो इरादतन और ज़िद से कुफ़्र का सबब बने। अगर वो ये अल्फ़ाज़ गलती से कहदे, जैसे, क्योंकि वो नहीं जानता के ऐसा कहने से कुफ़्र का सबब बनता है इसके बावजूद वो काफ़िर बन जाता है। अगर एक शख़्स एक लफ़्ज़ बहुत ज़्यादा कहता है जो कुफ़्र की वजह बने, गलती से, अगरचे वो ऐसा नहीं करना चाहता, तो वो एक काफ़िर नहीं बन जाता।

एक सोच समझकर किया गया कोई भी काम जो के एक कुफ़्र की वजह है, उसका नतीजा भी कुफ़्र है। वहाँ पर बहुत सारे आलिम हैं जो कहते हैं के चाहे जब एक शख़्स ये नहीं जानता के फलाँ काम करने से कुफ़्र होगा तो ये भी कुफ़्र की वजह बन सकता है। एक रस्सी बैल्ट की तरह (**ज़ुन्नार**) कमर के इरद गिरद बाँधना या ऐसी कोई भी चीज़ पहनना जो के कुफ़्र की अलामत हो तो वो एक शख़्स के काफ़िर बनने का सबब बन सकती है। [ज़ुन्नार एक रस्सी कमरबंद है जो ईसाई पादरियों के ज़रिए पहना जाता है।] इसी तरह का मामला उन इस्तेमाल करने वाली या पहनने वाली चीज़ों के साथ जो कुफ़्र की निशानियाँ हैं। ये कुफ़्र नहीं है, बहरहाल, ऐसी चीज़ों को इस्तेमाल करना या

पहनना जंग में दुश्मन को धोखा देने के लिए या अमन के वक्त में अपने आपको छुपाने की गरज़ से ज़ालिम इंतेज़ामिया के मुमकिना नुकसानात से अपने आपको बचाने के लिए। लेकिन, अगर एक कारोबारी इनका इस्तेमाल अपने आपको काफ़िरों के मुल्क में छुपाने के लिए करता है, तो वो एक काफ़िर बन जाता है। इन सब चीज़ों को मज़ाक करने के लिए या दूसरों को हँसाने के लिए इस्तेमाल करना, एक शख़्स को काफ़िर बनाता है, चाहे अगरचे एक शख़्स सही ईमान क्यों ना रखता हो। जब काफ़िर अपने मुकददस दिनों को जश्न मनाते हैं मज़हबी चीज़ों को करते हुए जो उनके ज़रिए इस खास दिन में अदा किए जाते हैं वो कुफ़्र का सबब बनते हैं। इसी तरह, इन चीज़ों को देना, जो मज़हबी पाक दिन के लिए खास है, उनको तौहफ़े के तौर पर देना भी कुफ़्र है। [मिसाल के तौर पर, ईसाइयों के ईस्टर के पाक दिन, अंडो पर कलाकारी और उन्हें तोहफ़े के तौर पर ईसाई बच्चों को देना भी, कुफ़्र की वजह है।] ये नफ़स की ज़रूरत नहीं है के इस बात पर ईमान रखना एक मुसलमान बनने के सिलसिले में। एक मुसलमान अपने दिल में ऐसी चीज़ों का तजुरबा करता है जो कुफ़्र का सबब बन सकती हैं। ये चीज़ें उसके दिल में उसकी नफ़स से आती हैं। अगर वो उन चीज़ों को अपनी ज़ुबान से नहीं कहता, तो ये उसके ईमान की मज़बूती को दिखाते हैं। हमें उन लोगों को काफ़िर नहीं कहना चाहिए जो उन चीज़ों को इस्तेमाल करते हैं जिससे कुफ़्र होता है। अगर एक खास मुसलमान के ज़रिए कोई चीज़ करी जाए या कही जाए जोकि निन्यानवें फीसद कुफ़्र (बेयकीनी) की निशानियाँ रखती हैं और सिर्फ़ एक फीसद ईमान (यकीन) की अलामत रखती है, तो ये शख़्स काफ़िर नहीं कहा जाएगा। हमें दूसरे मुसलमानों के बारे में अच्छी राए (**हुस्न-ए-ज़न**) रखते हुए सोचना चाहिए।

बयानात जो एक शख़्स के लिए दिए जाएँ ये ज़ाहिर करने के लिए के वो अदबी आदमी है या जानकारी वाला है और अकलमंद शख़्स है, या दूसरों को हैरत में डालने के लिए या दूसरों को हँसाने के लिए या दूसरों को खुश करने के लिए, ये इंसाफ़ के ज़रिए कुफ़्र का सबब बनता है (**कुफ़्र अल हुकमी**)। खास चीज़ों को कहना जबकि एक शख़्स गुस्से में हो तो ये कुफ़्र-ए-हुक्मी का सबब बनता है। इस सबब के लिए, हर मुसलमान को अपना मुँह खोलने से पहले या कोई हरकत करने से पहले उसके अंजाम के बारे में सोच

लेना चाहिए। किसी चीज़ में जो वो करता है, उसके ईमान को दूसरी सोचो पर फौकियत होनी चाहिए। उसे कोई भी गुनाह हलका नहीं लेना चाहिए। मिसाल के तौर पर, एक काबिले माफ़ी गुनाह करने पर, अगर उसे दूसरों के ज़रिए याद कराया जाए उस काबिले माफ़ी गुनाह के लिए उसे नदामत होनी चाहिए और अगर वो जवाब दे के उसने ऐसा कुछ नहीं किया है जिसके लिए पश्च्यताप करूँ, या अगर वो कहे, मिसाल के तौर पर, "मैं क्यों तौबा करूँ?" या दूसरे इसी तरह के तुरकी ब तुरकी जवाब दे, तो उसका जवाब कुफ़्र का सबब बनेगा। अगर एक लड़की, जिसकी शादी (उसके वालदेन के ज़रिए) एक मुसलमान के साथ (इस्लामी शादी का समझौता) निकाह [बराए महरबानी **सआदत-ए-अबदिया** के पाँचवे हिस्से के बारहवें सबक को देखिए।] के ज़रिए हुई जबकि वो एक बच्ची थी, ना तो वो इस्लाम को जानती थी और ना ही उसके मज़हबी अकीदों को, या उन पर पूछे गए सवालों को भी नहीं जानती थी, बालिग और शऊर की उमर को जब पहुँची, तो उसका निकाह (शादी का इकरारनामा जैसे के इस्लाम ने पहचाना) बातिल और बेकार हो जाता है। क्योंकि, निकाह की दुरूस्ती और पाएदारी रखने के लिए इस्लाम के ज़रिए बताए गए ईमान को रखना ज़रूरी है, (जो के बदले में इस्लाम के ईमान के अकीदे [ईमान, एतीकाद] को शामिल करना है)। एक मुसलमान बच्चा नज़रयाती तौर पर एक मुसलमान है, क्योंकि उसका ईमान उसके वालदेन के ईमान पर मुनहसिर करता है। एक बार, वो बालिग़ हो जाता है, तो उसके भरोसे का दरजा उसके वालदेन पर मुनहसिर नहीं करता। यही उसूल एक लड़के बच्चे पर भी है। जब एक शख़्स एक मुसलमान का कत्ल करता है या कोई किसी और को एक मुसलमान को मारने का हुकूम देता है, अगर एक शख़्स जो ये सब देख रहा है और बहुत ज़्यादा मंज़ूरी के लफ़्ज़ बोलता है, जैसे के, "बहुत अच्छे! तो वो एक काफ़िर बन जाता है। इस तरह कहना के फलाँ फलाँ को मर जाना चाहिए तो ये कुफ़्र का सबब बनता है अगर इस्लाम के पैनल कोड के मुताबिक वो शख़्स कत्ल ना किया गया हो। अगर एक शख़्स दूसरे को बेईसाफ़ी से मरता है या कत्ल करता है, तो ये कुफ़्र (बेएतमादी) है उसके ज़ालिम काम को ये कहकर मंज़ूरी देना, मिसाल के तौर पर, "तुमने बहुत अच्छा काम किया। वो इसी लायक था!" अल्लाह के नाम पर झूठ बोलना इस तरह कहकर,

मिसाल के तौर पर, “जैसा के अल्लाह जानता है, मैं तुम्हें अपने बच्चों से ज़्यादा प्यार करता हूँ,” ये कुफ़्र है। अगर एक शख़्स जो ऊँचा मरतबा रखता है वो छींक दे और कोई उसकी मौजूदगी उससे कहदे, “**यरहमूकल्लाह**”, ये कुफ़्र है उस शख़्स के साथ बेरहम होना ये कहकर, मिसाल के तौर पर, “तुम एक मरतबे वाले के साथ इस तरह नहीं बोल सकते!” [जब एक मुसलमान छींकता है, उसके लिए ये काम सुन्नत का है ये कहना, “अल्हम्दुलिल्लाह”। और ये एक फ़र्ज़ का काम है (किसी एक के लिए) उनके लिए जो उसे ये कहते हुए सुनें, “यरहमूकल्लाह”। ये भी कुफ़्र है के एहकामात को संजीदगी से ना लेना। मिसाल के तौर पर, इबादत ना करना, ज़रूरी खैरात (ज़कात) ना अदा करना क्योंकि एक शख़्स उनको अहमियत नहीं देता ये चीज़ें कुफ़्र का सबब बनती हैं। अल्लाह तआला के रहम से नाउम्मीद होना भी कुफ़्र का सबब बनता है।

पैसा, जाएदाद या मिलकियत जो के आम तौर पर ममनुअ (**हराम**) नहीं हैं लेकिन बाद में किसी बाहरी सबब या वजह से ये ममनुअ बन जाती है जिसे “**हराम ली-गौरिही**” कहते हैं जैसे, चोरी की चीज़ें या चीज़ें जिन्हें ममनुअ किए गए ज़राए से हासिल किया गया हो। उनको जाईज़ (**हलाल**) कहना कुफ़्र का सबब नहीं है। चीज़ें जैसे के लाश, खिंज़िर, और शराब, जिन्हें असल माहियत में भी ममनुअ करार दिया गया है उन्हें “**हराम-ली-एनिहि**” कहते हैं। उनको जाईज़ करार देना कुफ़्र का बाईस है। खास तौर पर जाने हुए गुनाहों को जाईज़ बताना कुफ़्र का बाईस है। इस्लाम के ज़रिए बताई गई इज़्ज़त वाली चीज़ों को छोटा करना या मज़ाक उड़ाना, जैसे के, “अज़ान”, मस्जिद, फ़िक्ह की किताबें, भी कुफ़्र का सबब बनती हैं। [इबादत के लिए (**अज़ान**) पुकारना जोकि रेडियो या लाऊड स्पीकर से सुनी जाए वो असली “अज़ान” नहीं होती। ये असली अज़ान की कॉपी है। किसी चीज़ की कॉपी असली वाली से मुखतलिफ़ होती है।] मंदरजाज़ेल हालात में इबादत अदा करना कुफ़्र का बाई स है: जबकि एक शख़्स जानता है के एक शख़्स की तहारत (**वुज़ू**) नहीं है या एक शख़्स जानता है के “सलात” का वक्त नहीं आया है अभी या जबकि एक शख़्स को पता है के वो मक्का (**किब्ला**) की सिमत के बजाए दूसरी तरफ़ इबादत कर रहा है। एक मुसलमान को काफ़िर बुलाना उसकी बुरी शख़सियत को दिखाने के लिए तो इससे कुफ़्र नहीं होता। जैसे के ऊपर लिखा गया है, के

उसको इस तरह बुलाना कुफ़्र का सबब बन सकता है अगर एक शख़्स ये इरादा ज़ाहिर करे के फलाँ मुसलमान काफ़िर है। गुनाह का इरतकाब करने से कुफ़्र का सबब नहीं होता; ताहम ये कुफ़्र का बाईस हो सकता है अगर उसे हकीर समझा जाए या इस तरफ़ ध्यान ना देना के क्या ये एक गुनाह है या नहीं, इससे कुफ़्र हो सकता है। इस बात को ना मानना के इबादत ज़रूरी है या गुनाह करने से परे रहना ज़रूरी है, कुफ़्र का बाईस हो सकता है। ये बात मानना के लोगो से जमा किया हुआ टैक्स हाकिम (सुल्तान) की मिलकियत बन जाएगा, कुफ़्र का बाईस है। "सदर अल-इस्लाम" के मुताबिक इस बात की इजाज़त (**जाईज़**) है ये कहना के अल्लाह तआला के वली भी उस दिन नज़र आएंगे और उसी वक्त/घंटे ज़मीन के मुख्तलिफ़ हिस्सों पर एक ही वक्त पर। "फ़िकह" की किताबों ने इतलाह दी के एक आदमी और एक औरत जोकि अलग रहते हैं, जैसे आदमी मग़रिब में, (मिसाल के तौर पर स्पेन में) और औरत मश्रिक (भारत में) उनके बच्चे हो सकते हैं। फ़ाज़िल आलिम उमर नसाफ़ी रहीमहुल्लाहू तआला के मुताबिक, इस बात की इजाज़त है [ऐसा होता है] के अल्लाह तआला ने अजूबे (**करामात**) दिए अपने प्यारे औलिया को देने के लिए अपने सबब के कानून को मोकूफ़ करके, और ये बयान सही है। इस तरह के सवालात जैसे, "इस्लाम क्या है" या "ईमान क्या है" ये जाहिल लोगों की हिदायत के लिए नहीं है। इसके बजाए, इन सवालों के जवाब पहले वाज़ेह करने चाहिए और बाद में इन्हें पूछना चाहिए अगर ऐसा हो। ये कारवाई उस जोड़े पर आईद होती है जिसकी शादी होने वाली हो एक दूसरे के साथ, निकाह (शादी का समझौता जिसे कहते हैं) से पहले, ये देखने के लिए के उनके पास ईमान (यकीन) है के नहीं। जब हम देखें एक शख़्स कुफ़्र की अलामत के तौर पर कुछ कर रहा है या कह रहा है, तो हमें उसे एक काफ़िर नहीं कहना चाहिए; हमें सु-ए-ज़न (एक बुरी राए) नहीं रखना चाहिए उसके बारे में जब तक के हमे यकीन ना हो जाए के उसने कुफ़्र चुना है और वो शरीअत का मज़ाक उड़ा रहा है।

अगर एक मुसलमान अपनी इच्छा से कुछ ऐसा काम करता है या कुछ कहता है जोकि इतेफ़ाक राए कुफ़्र का बाईस जानी जाए, तो वो एक काफ़िर बन जाता है, यानी, वो एक मुश्रिक (**मुरतद**) बन जाता है। उसकी पिछली सारी इबादतें, अच्छे काम और हासिल किए हुए ईनाम (**सवाब**) सब गायब हो जाते

हैं। अगर वो फिर दोबारा मुसलमान बन जाता है, अगर वो अमीर है, तो उसे ज़ियारत (**हज**) दोबारा करना होगा। लेकिन उसे अपने पिछले इबादत के काम जैसे के नमाज़, रोज़ा और ज़कात (अगर वो अपने मुश्रिक होने से पहले उन्हें अदा कर चुका है) दोबारा अदा नहीं करने पड़ेंगे। अगरचे, वो वाली इबादतें जो उसने मुरतद होने से पहले छोड़ीं उन्हें अदा करना होगा। एक शख़्स की मुरतदी उसे उस गुनाह से नहीं अज़ाद कर सकती जो उसने मुरतद होने से पहले किया, ताहम, ये उसका निकाह खत्म कर सकता है। जो बच्चे उसके मुरतद होने और वापिस अपने ईमान और निकाह की तरफ़ लोटने के वक्त के बीच में हुए वो नाजाईज़ होंगे। अगर वो एक जानवर को मारता है (बिदअत के दौरान) तो वो जानवर सिर्फ़ एक लाश बन जाता है और खाया नहीं जा सकता। एक शख़्स जो बिदअती हो जाता है वो दोबारा मुसलमान नहीं बन सकता सिर्फ़ (खास बयान के ज़रिए) कलिमा-ए-शहादत पढ़कर या नमाज़ अदा करके, जब तक के वो तौबा ना करले और उन कामों को छोड़ ना दे जो उसकी बिदअत का बाईस बने थे। उसके कामों से इंकार जिससे बिदअत का सबब बना था उसे पछतातप के मआनी की तरह लेना चाहिए। अगर वो तौबा करने से पहले मर गया, तो वो हमेशा के लिए दोज़ख की आग में जलेगा। इन सब वजूहात की बिना पर, हमें कुफ़्र से बहुत ज़्यादा डरना चाहिए और इसलिए बहुत कम बोलना चाहिए। ये हदीस शरीफ़ में बयान है; "**हमेशा फायदेमंद चीज़ें कहनी चाहिए या फ़िर खामोश रहो!**" एक शख़्स को संजीदा शखसियत रखनी चाहिए और ऐसाा शख़्स नहीं होना चाहिए जो हर वक्त खेलता रहे या मज़ाक करता रहे। एक शख़्स को ऐसी चीज़ें नहीं करनी चाहिए जो मज़हब, वजह या इंसानियत के मुताबिक ना हो। एक शख़्स को बहुत ज़्यादा इबादत करनी चाहिए और अल्लाह तआला में पनाह ढूँढनी चाहिए ताकि वो अपने आपको कुफ़्र से बचा सके। ये इस तरह मंदरजाज़ेल हदीस-ए-शरीफ़ में बयान है: "**समझदार बनो और 'शिर्क' को छोड़ो। 'शिर्क' उस आवाज़ से भी ज़्यादा खुफिया है जोकि एक चलती हुई चींटी पैदा करती है।**" "शिर्क" का इस हदीस-ए-शरीफ़ में मतलब है कुफ़्र। जब उन्होने पूछा के किस तरह एक शख़्स इस खुफ़िया राज़ से बच सकता है तो आलमियत में सबसे अफ़ज़ल ने फरमाया: "**मंदरजाज़ेल दुआ पढ़ा करो: अल्लाहुम्मा-इन्ना नअऊज़ु बिका अन नूश्रिका-बिका शैएअन्नां लमुहू व**

नस्तखफिरूका लिमा लाना' लमुहू।" एक शख़्स को बारहा मरताबा सुबह और शाम में इसको दोहराना चाहिए। ये खबर है इतफ़ाकराए से के काफ़िर कभी भी जन्नत में नहीं जाएंगे और हमेशा दोज़ख की आग में सज़ा पाएंगे। अगर एक काफ़िर दुनिया में हमेशा रह जाए, तो वो हमेशा के लिए एक काफ़िर की ज़िन्दगी जिएगा। इसलिए, उसे हमेशा के लिए सज़ा मिलनी चाहिए। अल्लाह तआला हर चीज़ का खालिक और मालिक है। उसके पास हक है के वो जो चाहता है वो कर सकता है। किसी को उससे सवाल करने का हक नहीं है के उसने ऐसा या वैसा क्यों किया। किसी भी चीज़ का मालिक खैर उस चीज़ को जिस तरह चाहे इस्तेमाल कर सकता है और उस चीज़ को इस्तेमाल करने का तरीका ज़ुल्म नहीं कहला सकता। अल्लाह तआला ने क़ुरआन अल करीम में एलान किया के वो एक ज़ालिम नहीं है और वो अपनी किसी तखलीक पर ज़ुल्म नहीं कर सकता।

[अल्लाह तआला के नाम हैं **(असमा अल-हुसना)**, जो उसकी तरह अबदी हैं। उन निन्यानवें नामों से एक "**मुन्तकिम**" है और दूसरा "**शदीद उल-इकाब**" और इन दोनों नामों की वजह से उसने दोज़ख के सात गढ़े बनाए। उसके नाम ये भी हैं जैसे "**रहमान**", "**रहीम**", "**ग़फ़फ़ार**", "**लतीफ़**", और "**रऊफ़**"। उसने इन नामों की वजह से जन्नत के आठ बाग़ तखलीक किए। वो उन चीज़ों में तफ़रीक करता है जो अबद में जन्नत या दोज़ख का सबब बनेंगी। अपनी लाज़वाल रहम की वजह से, वो ये सब अपने बंदों को बताता है। वो बार बार उन्हें तनबीह करता है ये कहकर, "**ऐसे काम मत करो जो तुम्हें दोज़ख में ले जाएँ! उसकी आग बहुत शदीद है। तुम उस आग को झेल नहीं पाओगे!**" वो लोगों को दावत देता है ऐसे काम करने के लिए जो उन्हें इस दुनिया में और दूसरी में अमन और खुशी में रहने का सबब बनें और जो जन्नत के लाज़वाल फलों की तरफ़ रहनुमाई करें। उसने अपनी इंसानी मखलूक को समझ दी चुनने की आज़ादी दी और सहन शक्ति दी ताकि वो इन्हें उसकी दावत कुबूल करने या इंकार करने के लिए इस्तेमाल कर सके। अल्लाह तआला अबदी माज़ी में ये हुकूम नहीं दिया के कोई भी दोज़ख में जा सकता है या कोई भी जो फलाँ फलाँ काम करेगा जो उन्हें दोज़ख में ले जाएगा। लेकिन, वो अबदी तौर पर जानता है के कौन अपनी ज़मीनी ज़िन्दगियों ऐसा जीने का

तरीका ढूँढेगा जो उन्हें जन्नत में ले जाएगा और कौन ऐसा रास्ता अपनाएगा जो उनकी रहनुमाई दोज़ख तक करेगा। उसकी किस्मत ("**कदा**" और "**कदर**") यहाँ तक के उसकी जानकारी **(ईल्म)** अमर है। कुरआन अल-करीम में, उसने बताया के अबू लहब दोज़ख में जाएगा। ये मवासलात उसके अबदी माज़ी के हुकूम की वजह से नहीं है बल्कि ये इस वजह से है क्योंकि वो अबदी तौर पर जानता है के वो दोज़ख का रास्ता चुनेगा।]

ईमान रखना बहुत आसान है। ये ज़रूरी **(वाजिब)** है हर एक के लिए सोचना, ग़ोर करना और मोजूदा हालात के बारे में फ़िकर करना, हमवारी और आपस में तखलीक की गई चीज़ों और मखलूक के बीच में हमआंहगी। जो एक एटम में या शमज़ी निज़ाम में या हर चीज़ में बीच में और उनके एक दूसरे के रिश्तों में मोजूदगी साफ़ बताती है के ये सब चीज़ें मोके के ज़रिए वुजूद में नहीं आईं। ये सब उसके ज़रिए तखलीक किए गए हैं जो सब कुछ जानता है, सबसे ज़्यादा अकल वाला है सबसे ज़्यादा ताकतवर है। एक शख़्स जो साफ़ सोचने की काबिलियत रखता है वो देख सकता है, जब वो ऐसे मज़ामीन पढ़ेगा जैसे के फलकियात, साईन्स, हयातियात और तिब जो स्कूलों और युनिवर्सिटियों में पढ़ाए गए, के सारी तखलीकी चीज़ों का एक खालिक है। ऐसे खालिक के लिए किसी भी किस्म की खामी होना नामुमकिन है। पैग़म्बर मौहम्मद 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' उसके नबी हैं। जो भी मवासलात वो करते थे वो खालिक के ज़रिए आप पर ज़ाहिर होते थे। ये वजह उसमें ईमान को पैदा करती है। जब एक शख़्स बहुत ज़्यादा आलिम ये जान ले के काफ़िर या लोग जो काफ़िरों की तरह ही मर जाते हैं वो हमेशा दोज़ख में रहते हैं और ईमान वाले जन्नत की रहमत में रहेंगे हमेशा, तो वो इच्छा से और प्यार से एक मुसलमान बन जाता है। [इब्राहिम हक्की, रहीमाहुल्लाहू तआला के (**1195** ए.डी., **1781** हिजरी सी रीद/ईज़ुरमु/तुर्की, में वफ़ात पाई) अपनी किताब **मा'रिफतनामा** के नवें सबक में मंदरजाज़ेल बयान किया: "साईन्स और फलकियात और मशीनरी और कारखानों का इल्म तजुरबों और अकली हरकत पर मुबनी है। इसलिए, वक्त के साथ नई इतलाआत ने ये साबित कर दिया के पुरानी इतलाआत गलत थीं। पुरानी या नई, गलत या सही सारे साईन्सी इल्म ने ये निशानदही की के काएनात किसी भी चीज़ से तखलीक नहीं की गई और ये के खालिक में ईमान

रखना ज़रूरी है जो लाज़वाल इल्म और ताकत रखता है।" जो कोई भी मौहम्मद अलैहिसलाम के खुबसूरत अखलाकी बरताव और मौअजज़ों को पड़ता है वो समझ जाता है के आप पैग़म्बर हैं।]

2- लाइल्मी/जहालत

दिल की दूसरी बीमारी लाइल्मी है।कई किस्म की लाइल्मी और उसके नुकसानात पहले हिस्से में पहले से ही वाज़ेह किए जा चुके हैं।

3- दौलत, ताकत, मरतबों या दर्जों के लिए लालच

दिल की तीसरी बीमारी दौलत, जाएदाद या मुआशरे में एक आला मरतबे का लालच है।मंदरजाज़ेल हदीस-ए-शरीफ़ हमें इस बीमारी के बारे में अकल, जिसे "हुर्ब्बुरियासत", कहते हैं, उसकी पहचान, और उसका इलाज बताएगी:

1- "**एक शख़्स की रूहानी हालत को जाएदाद या ताकत के लालच के ज़रिए नुकसान पहुँचता है वो उस नुकसान से बहुत ज़्यादा बड़ा है जो दो भूखे भेड़ियों के ज़रिए पहुँचता है जब वो एक भेड़ के बच्चों के झूण्ड पर हमला करते हैं।**"

2- "**एक शख़्स अपनी दुनियावी या मज़हबी रूतबे की वजह से अकेला रह जाए ये उसके लिए एक नुकसान से काफ़ी है।**" दूसरे लफ़्ज़ों में, मज़हबी या दुनियावी अमूर में सरफ़राज़ी का ऐसा मरतबा हासिल करले जोकि बहुत नुकसानदह हो सकता है एक आदमी के लिए उसके दुनियावी और दूसरे दुनियावी मामलात के लिए।

3- "एक शख़्स को उसकी तारीफ़ किए जाने का शौक अंधा और बहरा बना देता है।वो अपनी खुद की कमियों और खामियों को भी देखने के लायक नहीं होता।वो दोस्ती वाली तंकीद पर बहरे हो जाते हैं और किसी भी मश्वरे को नहीं सुनते।"

तीन मंदरजाज़ेल वजूहात के क्यों एक शख़्स जाएदाद या एक अफ़ज़ल मरतबा या दर्जा हासिल करना चाहता है समाजी ज़िन्दगी में: पहली वजह: एक शख़्स अपनी ही नफ़स की इच्छाओं को मुतमईन करना चाहता है।नफ़स चाहती है के उसकी इच्छाएँ ममनुअ (**हराम**) ज़रियों से पूरी करदी जाएँ।दूसरी वजह: एक शख़्स अपने को और दूसरों को ज़ालिमों के ज़ुल्मों से बचाना चाहता है।एक शख़्स चाहता है के जाईज़ करार (मुस्तहब) दिए गए कामों की अदाएगी करे यानी खैरात या अच्छे काम करे।एक शख़्स चाहता है के जाईज़ की गई (**मुबाह**) चीज़ों की अदाएगी की जाए यानी अच्छे खाने और लिबास की खरीदारी की इच्छा करना।एक शख़्स चाहता है के एक कुंवा हो और एक अच्छे घर में अच्छे पड़ोस में रहे।मुखतसिर ये के, एक शख़्स चाहता है के ज़िन्दगी में खुशियों को हासिल करे या उन चीज़ों को नज़रअंदाज़ करे जो इबादत करने या मुसलमानों और इस्लाम की खिदमत करने से रोके।ऊपर बताए गए इच्छाओं के दूसरे ग्रुप की इजाज़त (जाईज़) है के वो दरजे या मरतबे हासिल करे, और बल्कि मंदरजाज़ेल दो शराईत के साथ "मुस्तहब" है।पहली शर्त ये है कि एक शख़्स को ऐसे काम नहीं करने चाहिए जो इस्लाम के ज़रिए ममनुअ करार दिए गए जैसे सच्चाई को झूठ के साथ मिलाना या धोखेबाज़ी के साथ।दूसरी शर्त ये है के एक शख़्स को मज़हब के ज़रिए हुकूम दिए गए **वाजिबात** और **सुन्नतों** को अदा करना ना छोड़ना।इस मामले में एक शख़्स ऊपर बताई गई दोनो शराईत को पूरा करता है, तो उसके लिए इस बात की इजाज़त (जाईज़) और बल्कि मुस्तहब (बहुत ज़्यादा मुबारक) है एक ऊँचा मरतबा हासिल करना।इसलिए, इसकी सिर्फ़ इजाज़त ही नहीं बल्कि ये ज़रूरी भी है के जो ज़राए और गाड़ियाँ हैं उन्हें अपनाया जाए जोकि तुम्हें जाईज़ और ज़रूरी सुहूलतें हासिल करने के लायक बनाए।अल्लाह तआला ने कुरआन अल करीम में अच्छी इंसानी मखलूक की सिफ़ात वाज़ेह की हैं, और फरमाया है के वो मुसलमानों के रहनुमा बनना चाहते हैं।सुलैमान (सोलोमन) अलैहि सलाम ने

अल्लाह तआला से मंदरजाज़ेल मिनत की: या रब्बी (ए अल्लाह)! मुझे ऐसी जाएदाद दे जो तुने किसी और शख़्स का ना दी हो!" यही है, के वो एक वक्त में एक रहनुमा एक मालिक भी बनना चाहते थे। जो इतलाआत हम तक पहुँची पिछले मज़ाहिव के ज़रिए और जिसे इस्लामी आलिमों ने मना नहीं किया वो भी कीमती इतलाआत हैं हमारे मज़हब में। ये एक हदीस में बयान है के हमारे पैग़म्बर ने फरमाया, "**मैं एक ऐसा जज होना पसंद करूँगा और प्यार करूँगा जो ईमानदारी की हदों में रहकर एक दिन के लिए इंसाफ़ की अदाएगी करे निसबत इसके के पूरे साल इस्लाम के लिए पाक जंग लड़ता रहूँ।**" और एक दूसरी हदीस में आपने फरमाया, "**एक घंटे के लिए लोगों के मामलात का ई मानदार इंतेज़ामिया साठ साल की अपनी इच्छा से (नाफ़िला) इबादतों से बेहतर है।**" इस बात की समाज में एक रहनुमाई इंतेज़ामी मरतवा हासिल करना धोखे से या सही और गलत को मिलाकर इसकी इजाज़त नहीं है। इस बात की तब भी इजाज़त नहीं है के अगर इसे अच्छी या पाक नियत से किया जाए क्योंकि ममनुअ कामों को या नापसंदीदा कामों (**मकरूहात**) को अच्छी नियत से किया जाए इसकी भी इजाज़त नहीं है। दरहकीकत, ममनुअ चीज़ों (हराम) को करना अच्छी नियत के साथ गुनाह की हालत को बदतर कर देती है। अच्छी नियत रखना जाईज़ और फाएदेमंद है जब इबादत अदा की जाए। दरहकीकत असल में, कुछ जाईज़ काम और बल्कि कुछ इबादत के काम गुनाह को पैदा करने का सबब बनते हैं जब नियत सही ना हो। इसलिए, साफ़ वजह है, "तुम मेरे दिल को देखो। ये पाक है। अल्लाह दिल के ज़रिए आमतौर पर आवाज़ उठाया जाता है, वो गलत और नुकसानदह है।

तीसरी वजह के क्यों एक शख़्स समाज में एक मरतवे वाला रूतबा चाहता है वो है उसके नफ़स इच्छाएँ और खुशियाँ। नफ़स दौलत, जाएदाद यहाँ तक के रूतवे या एक रहनुमाई मरतवे से भी खुशी हासिल कर सकता है। अगरचे अपने नफ़स की इच्छाओं को मुतमईन करना ममनुअ नहीं है जिसमें इस्लाम के मुखालिफ़ चीज़ें शामिल ना हों, फिर भी ये परहेज़गारी और जोश को कम दरजे पर दिखाती है। वहाँ पर खतरा होता है के एक शख़्स जो रूतबा हासिल करता है वो अपने नफ़स की इच्छा को मुतमईन करने के लिए हो सकता है धोखेबाज़ी करे या अपने मज़हब के साथ सुलह करे (**मुदाहना**) या

अपने हलके वालों के दिलों को जीतने के लिए शैखी बाज़ी के काम करे। वहाँ पर और ज़्यादा खतरा है जैसे के धोखेबाज़ी करना और सच्चाई के साथ गलत बातों को, झूठ और फरैब को मिलाना। एक शख़्स को ऐसे काम नहीं करने चाहिए जो ममनुअ और जाईज़ चीज़ों को मिलाकर शामिल किए जाएं। ये तीसरी वजह ऊँचा मरतबा या रूतबा हासिल करने की इच्छा रखने का समाज में, अगरचे ये ममनुअ नहीं है, फिर भी ये पाक नहीं है। इसलिए, एक शख़्स को इसका इलाज जानना चाहिए और इसे अपनाना चाहिए। पहले, एक शख़्स को सोचना चाहिए के मरतबा आरज़ी होता है और बहुत सारे खतरे और नुकसान इसके अंदर होते हैं। अपने आपको नाम से बचाने के लिए और घमंडी होने से और नफ़रत करने से बचाने के लिए एक शख़्स को चाहिए लोगों की इज़्ज़त हासिल करे, उसे वो काम करने चाहिए जो इजाज़त **(मुबाह, जाईज़)** दिए गए हैं इस्लाम में और जिन्हें लोग आमतौर पर ज़्यादा नहीं सोचते। माज़ी में, एक रहनुमा **(अमीर)** एक शख़्स के पास गया जो दुनियावी अमूर से परे था **(ज़ाहिद)**। जब "ज़ाहिद" ने महसूस किया के मिलने आने वाला रहनुमा और उसके साथी उसकी हिमायत चाहते हैं, उसने उनके लिए खाना रखा। खाने के दौरान वो खाना बहुत जल्दी और लालची तरीके से खाने लगा उनको गलत एहसास कराने के लिए वो ये के, वो असली "ज़ाहिद" नहीं है। मिलने आने वाले रहनुमा को "ज़ाहिद" का बरताव पसंद नहीं आया और चला गया। "ज़ाहिद" अपनी चाल कामयाब होने पर बोला, "अलहम्दु लिल्लाहि! मेरे रब ने मुझे बचा लिया।" सबसे अच्छी दवा एक रूतबे वाले मरतबे की इच्छा ज़ाहिर करने की इलाज के लिए वो है ग़ैरजानिबदारी **(उज़लत)**। एक शख़्स को किसी भी ग़ैर ज़रूरी हरकत में शामिल नहीं होना चाहिए लोगों के बीच में मज़हबी और दुनियावी फराईज़ और कामों के अलावा। ये मरहम हदीस-ए-शरीफ़ में बताया गया है। इस इलाज का हदीस में हुकूम दिया गया है।

4- गलतियों की वजह से मुजरिम करारी का डर होना

दिल की बीमारियों में चौथी है परेशान होना और उदास होना, दूसरे लोगों के बुरे सुलूक की वजह से, जैसे के उनकी नाईन्साफ़ तनकीद या गपवाज़ी। तीसरी वजह जो "**कुफ़्र-अल-जुहुदी**" का बाइस बनती हे वो दूसरे लोगों से शर्मिन्दा होना और दूसरे लोगों से डर भी होना ये सोचते हुए के कहीं वो तुमको गलती पर ना पकड़ लें और तुम्हारे बारे में फ़ुज़ूल गोई ना करें। यही असल वजह थी के अबू तालिब एक काफ़िर रहे। अबू तालिब हज़रत अली रज़ी अल्लाहु अन्ह के वालिद थे और रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' के चाचा थे। अबू तालिब जानते थे के रसूलुल्लाह पैग़म्बर हैं। वो मुसलमानों केदरजों में शामिल नहीं हुए क्योंकि वो सोचते थे के लोग उन्हें इल्ज़ाम देंगे और उनके बारे में बुरा बोलेंगे। जबकि अबू तालिब मरने वाले थे, रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' उनसे मिलने आए और उनसे फरमाया, "**ए मेरे चचा! बराएमहरबानी लाइला-ह-इल्लल्लाह कहो ताकि मैं तुम्हारे लिए बीच में पड़ सकूँ।**" उन्होने जवाब दिया, "ए मेरे भाई के बेटे! मैं जानता हूँ तुम सच केह रहे हो। लेकिन मैं नहीं चाहता के लोग ये कहें के मैं मौत के डर से एक मुसलमान बन गया।" तफ़सीर बएदावी में लिखा है के सुरह कसस की छप्पनवीं आयत जिसका मतलब है, "**ये सही है के तुम हर एक की रहनुमाई नहीं कर सकते, जिसको तुम सबसे ज़्यादा चाहते हो; ...,**" (28-56) ये इस मौके पर ज़ाहिर हुई थी। एक बयान के मुताबिक, मंदरजाज़ेल वाक्या वहाँ पर पेश आया कुरैश, कबिले के काफ़िरों के सरदार अबू तालिब के पास आए और उनसे कहा, "आप हमारे सरदार हैं। हम आपके हुकूम मानते हैं। लेकिन, हमें डर है के आपके गुज़रने के बाद, मौहम्मद और हमारे बीच नापसंदिदगी इसी तरह कायम रहेगी। उनसे कहो हमारे मज़हब की तनकीद ना करें।" अबू तालिब ने रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' को बुलाया और वो बताया जो उन्होने उनसे कहा था और ये समझने के बाद के रसूलुल्लाह उनके साथ अमन कायम नहीं करेंगे, उन्होने कुछ लफ़्ज़ कहे। जिनको इस तरह बताया गया के वो

इस्लाम कुबूल करने के लिए राज़ी थे, इस वजह से रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उनसे फरमाया के उन्हें अपने ईमान का एलान कर देना चाहिए। अबू तालिब ने जवाब दिया, "मुझे बहुत अच्छा लगता के अपने ईमान का एलान करके मैं तुम्हें खुश कर सकता अगर में लोगों को फ़ुज़ूलगोई और बुरी बातों से ना डर रहा होता।" जैसे के वो अपनी आखरी सांस ले रहे थे, उन्होने कुछ लफ़्ज़ कहे जिन्हें सुनना बहुत मुश्किल था। उनकी बातों को सुनने के लिए, के वो क्या कह रहे हैं, अबदुल्लाह इबन अब्बास उनके नज़दीक गए और कहा के वो अपने ईमान का एलान कर रहे हैं। उनके ईमान का मसला शुकूक वाले मामलों में है। अहल-अस-सुन्नत के आलिमों के मुताबिक उन्होने ईमान नहीं अपनाया। इमाम आज़म अबू हनीफा रहीमा हुल्लाहु तआला ने कहा के अबू तालिब एक काफ़िर की तरह मरे। हज़रत अली रज़ी अल्लाहु तआला अन्ह रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' के पास आए और आप से कहा, "आपके चचा जो गलत रास्ते पर थे चल बसे।" रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने जवाब दिया, "**उनको धोओ, खास कपड़े 'कफ़न' में लपेटो और उसके बाद इन्हें दफना दो। हमें उनके लिए दुआ करनी चाहिए जब तक के हमें ऐसा करने से मना ना कर दिया जाए।**" कुछ दिनों के लिए वो अपने घर से बाहर नहीं निकले और उनके लिए बहुत ज़्यादा दुआ की। जब कुछ सहाबा ने इसके बारे में सुना तो उन्होने भी अपने रिश्तेदारों के लिए दुआ करनी शुरू करदी जो काफ़िरों की तरह मर चुके थे। इस पर सुरह तौबा की एक सो तेरहवीं आयत-ए-करीमा उतारी गई, जिसने एलान किया, "**पैग़म्बर और ईमान वाले काफ़िरों के लिए माफ़ी की दुआ ना करें चाहे अगरचे वो उनके रिश्तेदारा ही क्यों ना हों।**" रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस-ए-शरीफ़ में बयान किया: "**अदल वाले दिन, अबू तालिब एक काफ़िर होंगे जिनकी सज़ा सबसे हल्की होगी। वो आग से बनी हुई जुतियाँ पहनेंगे और उसकी गरमी से, उनका दिमाग़ खोलेगा।**"

मंदरजाज़ेल असबाब दवा के तौर पर तजवीज़ किए गए इलज़ाम लगाए जाने और मज़ाक उड़ाए जाने के खौफ़ के खिलाफ़। अगर उनके इल्ज़ाम सच्चाई को ज़ाहिर करेंगे, तो वो मेरी खामियाँ मुझे दिखा रहे हैं। मैने अपने आपको तजवीज़ किया के ये हरकात नहीं करूँगा। इस असली तसल्ली के

अलावा जोकि इस वजह में जाती है, तो एक शख़्स को अपने तंकीद करने वाला का शुक्रगुज़ार होना चाहिए। उन्होने हसन अल-बसरी रहीमाहुल्लाहु तआला को इतलाअ दी के कोई उनकी चुग़ली कर रहा था। उन्होने मिठाई से भरी एक पलेट/तशतरी अपनी चुगली करने वाले को इस पैग़ाम के साथ भेजी: "मेने सुना है के तुमने अपने सवाब मुझे दे दिए। इसलिए मैं तुम्हें ये मिठाई भेज रहा हूँ तुम्हारा शुक्रिया अदा करने के लिए।" उन्होने इमाम आज़म अबू हनीफ़ा रहीमाहुल्लाहु के कोई उनकी चुग़ली कर रहा था, इमाम आज़म ने चुग़ली करने वाले को सोने के सिक्कों का एक थैला भेजा और कहा, "अगर वो सवाब को बढ़ा रहा है जो उसने हमें दिया है, तो उसी तरह हमें अपने सोने के तोहफ़े बढ़ा देने चाहिए!" अगर बुरी बात एक झूठ हो और तोहमत हो, तो वो उस शख़्स के लिए नुकसानदह है जो उस जुर्म का इरतिकाब करे। एक शख़्स जिस पर तोहमत लगाई गई हो उसे सोचना चाहिए अपने आपको आराम पहुँचाना चाहिए खुद से ये कहते हुए, "उसके सवाब मुझे दे दिए जाएंगे और मेरे गुनाह उसे दे दिए जाएंगे।" तोहमतें और बातों को मुसलमानों के बीच में चलना चुग़लखोरी से ज़्यादा खराब है। [बराएमहरबानी मकतूबात-ए-मासूमिया की दूसरी जिल्द के **123**वें खत को पढ़िए।].

5- तारीफ़ किए जाने का शाईक होना

दिल की बीमारियों में से पाँचवी है के तारीफ़ किए जाने और सताईश किए जाने का शौक होना। तारीफ़ किए जाने की इच्छा की नफ़सियात एक शख़्स की खुद से प्यार और अपने बारे में सोचना सबसे अच्छा और आला इस पर मुबनी होता है। इस तरह के शख़्स के लिए इस तरह की तारीफ़ बहुत मज़े का ज़ाएका देती है। एक शख़्स इस बीमारी के साथ ये सोचता है के एक असली अफ़ज़लियत और अच्छाई या चाहे अगर एक शख़्स इसको अच्छाई की तरह मान ले, तो एक शख़्स इसको आरज़ी समझे। इस मज़मून का कुशादा कवरेज बाद में दिया जाएगा जबकि मज़मून का मसूदा गुरूर (**किबर**) (सबक **12** देखिए) पर वाज़ेह है।

6- मज़हबी उसूलों के खिलाफ़ ईमान

दिल की बीमारियों में से छठी है बिदअत रखना, जिसका मतलब है मज़हब से इंहेराफ़, गलत या भड़काने वाले ईमान को रखना। ज़्यादातर मुसलमान इस तबाहकुन बीमारी को सहते हैं। इस बीमारी में पड़ने की वजह एक शख़्स की इस समझदारी में पड़ने की कोशिश करना या उन मसूदों में वजह ढूँढना जो हिसासियात के ज़रिए महसूस ना किए जाए और जो आदादो शुमार के ज़रिए अकलो फहम तक ना पहुँच पाए और ईमान ना रख पाए ऐसे मामलों में जबकि असबाब गलती वाले हों और कोई खता ना करे। हर मुसलमान को दो मसलकों में से एक को ईमान के मामले में, यानी, "मातुरीदी" या "अशारी" की तालीमात की तकलीद करनी होगी। इनमें से किसी एक की तालीमात की तकलीद करना एक शख़्स को बिदअत की बीमारी से बचाता है या हिफ़ाज़त करता है। इसलिए, दिमाग से परे मामलों के लिए, अहल अस-सुन्नत के (बीच का और इसलिए सिर्फ़ एक सही रास्ता) आलिमों ने सिर्फ़ कुरआन अल-करीम और हदीस-ए-शरीफ़ की तकलीद की, इस तरह अपनी दिमाग़ी गुंजाईश को इन दो ज़राए को खोदने में इस्तेमाल करना और उसके मआनी को समझने की कोशिश करना। उन्होने अपनी किताबों में लिखा, जो उन्होने असहाब-ए-किराम से सीखा, जिन्होने बदले में अपनी मज़हबी तालीमात अल्लाह के पैग़म्बर से हासिल करीं।

[एक शख़्स एक काफ़िर बन जाता है अगर वो किसी चीज़ के बारे में शक करता है या इंकार करता है जिस चीज़ को कुरआन-अल-करीम या हदीस-ए-शरीफ़ में साफ़ तौर पर पढ़ाया गया है। एहकामात को गलत मआनी देना जोकि साफ़ नहीं पढ़ाए गए और इसलिए वो शकूक वाले हैं तो वो "**बिदअत**" है। एक शख़्स अहल अल बिदअत बन जाता है अगर वो अपनी गलत वज़ाहत या समझ में ईमान रखता है। ताहम, अगर एक शख़्स एहकामात को नामंज़ूर करदे ये कहकर, मिसाल के तौर पर, "ये किस तरह हुआ! ऐसा नहीं हुआ! मेरा दिमाग़ इस पर राज़ी नहीं हो रहा!", वो एक काफ़िर बन जाता है। अगर एक शख़्स दावे से कहे के ये एक ममनुअ (हराम) चीज़ है जो जाईज़ (हलाल)

है और अगर उसका ये बयान कुरआन की एक आयत या एक हदीस पर मुबनी है, तो वो एक काफ़िर नहीं बन जाता बल्कि वो एक "अहल अल-बिदअत" बन जाता है। हज़रत अबू बकर और हज़रत उमर के खलीफ़ा बनने के इंतिखाब बिदअत को कायम करने के लिए सही बयान नहीं है। दूसरी तरफ़, आगे बढ़ना और बयान देना के खलीफ़ा के ओहदों को कायम करने के लिए वो सही नहीं हैं ये बेयकीनी (कुफ़्र) है।

मौहम्मद शिहरिस्तानी 'रहीमाहुल्लाहु तआला' ने अपनी किताब **मिलाल वा निहाल** में कहा के हन्फ़ी मसलक के आलिम इमाम अबू मंसूर अल-मअतुरीदी तआला की तालीमात की तकलीद करते थे यकीन (एतिकाद) के मामले में। इसलिए, अबू मंसूर अल मअतुरीदी इमाम आज़म अबू हनीफ़ी रहीमाहुल्लाहु तआला के असलूब ("उसूल" और "फुरू") को इस्तेमाल करते थे, जोकि हन्फ़ी मसलक के बानी थे। "उसूल" का मतलब "एतिकाद" यकीन था। "फुरू" का मतलब "एहकाम-ए-शरिया" या इस्लामी कानून पर मुबनी कवाईद थे। "मालिकी", "शाफ़ई" और हंबली मसलकों के आलिम इमाम अबू हसन अल अशारी रहीमाहुल्लाहु तआला की तालीमात की तकलीद करते थे यकीन (एतिकाद) के मामले में। अबू हसन अल अशारी "शाफ़ई" मसलक को मानते थे। इमाम अल-सुबकी रहीमाहुल्लाहु तआला जोकि शाफ़ई आलिमों में से एक थे ने कहा के उन्होने अबू जाफ़र तहावी रहीमाहुल्लाहु तआला की किताब पढ़ी है, जोकि हन्फ़ी मसलक के आलिमों में से एक थे, और गौर किया के ये बिल्कुल अशारी मसलक के एतिकाद की तालिमात की तरह हैं। वो एक दूसरे से सिर्फ़ तीन नुकतों/सिरों पर अलग हैं। अबदुलवहाब ताजउददीन अल सुबकी, जोकि इमाम अबू हसन अली सुबकी रहीमाहुल्लाहु तआला के बेटे थे, कहा के उन्होने यकीन (**एतिकाद**) में "हन्फ़ी" मसलक के आलिमों की किताबें पढ़ी हैं और गौर किया है के वो एतिकाद में "शाफ़ई" मसलक के साथ तेरह सिरों पर गैररज़ामंद थे। लेकिन उन्होने कहा के उनकी ग़ैररज़ामंदी बहुत मामूली मामलों पर थी और उन इखतलाफ़ का मतलब ये नहीं है के वो अपने सही रास्ते थे हट गए हों। वो ज़रूरी मामलात में मुखतलीफ़ नहीं हैं। वो दोनों ही सही (हक़) रास्ते पर हैं। मौहम्मद हादिमी रहीमाहुल्लाहु तआला ने अपनी किताब **बेरीका** के तीस सो सतरवें सफ़े बयान किया है के उन्होने तअतुरीदी और अशारी मसलक दोनों की

तालीमात को पढ़ा है भरोसे के मामलों में और अंदाज़ा लगाया के दोनो मसलकों के बीच में जो कमियाँ हैं, मामूली फर्क को मिलाकर, वो तेहत्तर तक जुड़ गई हैं।]

7- नफ़स की इच्छाओं की तकलीद करना

सातवीं दिल बीमारी भूख (**शहवत**) या इच्छा या नफ़स के मज़ें में खुश होना है। नफ़स की इस तरह की हरकात को बहुत साफ़ तरीके से कुरआन की आयात में वाज़ेह किया गया है। नेज़, कुरआन में ये भी वाज़ेह किया गया है के अपने नफ़स की इच्छाओं की तकलीद करना एक शख़्स को अल्लाह तआला के रास्ते से हटाने का वाइस बनता है। क्योंकि, नफ़स हमेशा अल्लाह तआला की मोजूदगी को नामंसूर करते हैं और उसके खिलाफ़ ज़िदी या बाग़ी हो जाते हैं। हर मामले में नफ़स की इच्छाओं की तकलीद करना नफ़स की इबादत को कमाले उरूज पर पहुँचाना है। कोई भी जो अपने नफ़स की तकलीद करता है वो या तो कुफ़्र में घिर जाता है या बिदअत की तरफ़ चला जाता है या हराम काम (इस्लाम के ज़रिए ममनुअ काम) करने में डूब जाता है। अबू बकर तमिसतानी रहीमाहुल्लाहु तआला ने कहा, “नफ़स की इच्छाओं की तकलीद ना करना इस दुनिया की किस्मत का सबसे बड़ा खज़ाना है। इस वास्ते, नफ़स सब परदों में सबसे बड़ा है अल्लाह तआला और उसके गुलाम के बीच में।” सहल बिन अबदुल्लाह तुसतरी [डी. 283 हिजरी में बसरा में] रहीमाहुल्लाहु तआला ने कहा, “सब इबादतों में सबसे बेहतर है के अपने नफ़स की इच्छाओं की तकलीद ना करना।” इस्लाम बिन यूसुस बलही रहीमाहुल्लाहु तआला ने एक बार हातम-उल-इसाम रहीमाहुल्लाहु तआला को एक तोहफ़ा दिया जब हातम ने तोहफ़ा कुबूल कर लिया तो उनके आस पास के लोगों ने उनसे पूछा क्या उनका तोहफ़ा कुबूल कर लेने का मतलब ये नहीं है के उन्होने अपने नफ़स की इच्छाओं को माना। जवाब में, हातम ने उनसे कहा के उनका तोहफ़ा कुबूल करके उन्होने अपने आपको हकीर बनाया है और उन्हें आला,

और उन्होने आगे कहा, "अगर मैं उनका तोहफ़ा कुबूल नहीं करता तो वो मुझे आला और उन्हें हकीर बना देता। और, मेरा नफ़स ये चीज़ पसंद करता!" रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम एक बड़ी हदीस के आखिर में बोले, "**तीन वजूहात एक शख़्स को तबाही की तरफ़ ले जाती हैं: कंजूस होना, नफ़स की इच्छाओं को मानना, और एक किब्र वाला शख़्स होना!**" इमाम अल ग़ज़ाली रहीमाहुल्लाहु तआला ने कहा के एक परदा जो तुम्हें अल्लाह तआला की मदद लेने से रोकता है वो है खुद से प्यार (**उजब**)। दूसरे लफ़्ज़ों में ये एक शख़्स है जो अपने खुद के नाकुस नहीं देखता और एक शख़्स की इबादतों को लायक देखता है। (जिसस) ईसा अलैहि सलाम ने अपने उत्साही मानने वालों से कहा, "ए मेरे उत्साही हिमायतियों! हवा बहुत सारी रोशनियाँ गुल कर देती है! इसीतरह, उजब (खुद-से-प्यार) बहुत सारे इबादत के काम तबाह कर और उसके सवाबों को खत्म कर देता है।"

ये बताया जाता है के एक बार रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमाया, "**मैं बहुत ज़्यादा खौफ़ज़दा हूँ के मेरी उम्मत (मुसलमान) दो बुराईयों में घिर जाएगी। वो हैं: नफ़स की खव्वाहिशों की तकलीद करना और मौत के बारे में भूल जाना और दुनिया के पीछे भागना।**" नफ़स की खव्वाहिशों को मानना एक शख़्स को इस्लाम के एहकाम को मानने से बाज़ रखता है। मौत को भूल जाना एक शख़्स को उसके नफ़स की तकलीद करने का सबब बनता है।

एक दूसरी हदीस में, रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमाया, "**एक शख़्स के अंदर समझदारी की मौजूदगी उसके नफ़स के ऊपर काबू से अपने आप ज़ाहिर करती है और उसकी उन चीज़ों की तैयारी से जो मरने के बाद फ़ाएदेमंद हों। कम फहमी का सुबूत है के एक शख़्स अपने नफ़स की तकलीद करे और तब अल्लाह तआला से माफ़ी और रहम की उम्मीद रखे।**" इस हदीस के मुताबिक, अपने नफ़स की खव्वाहिशों की तकलीद करना और बाद में माफ़ी चाहना और जन्नत में दाखिले की उम्मीद रखना बग़ैर नदामत/तौबा के तो ये कम फहमी की अलामत है। किसी चीज़ की उम्मीद रखना बगैर किसी हरकात के किए हुए जिससे वो उम्मीद किया गया नतीजा

हासिल हो जिसे खव्वाहिशों से भरी सोच (**तमन्नी**) कहते हैं। दूसरी तरफ़, किसी चीज़ की उम्मीद रखना उस हरकत को करते हुए जिससे नतीजा निकले उसे कहते हैं आस या तवक्को (**रज़ा**)। खव्वाहिशों से भरी सोच एक शख़्स को आलसीपने पर ले जाती है। दूसरी तरफ़ उम्मीद का काम और पैदावार का सबब है। नफ़स की खव्वाहिश वहम (**हवा**) कहलाती है। नफ़स हमेशा नुकसानदह चीज़ों से प्यार करता है और खव्वाहिश रखता है; ये बुरी खसलत उसकी फिरत में दाखिल होती है। मंदरजाज़ेल बंद से ये सच्चाई साफ़ हो जाएगी:

अपने नफ़स के खिलाफ़ हमेशा महाज़ पर रहो।
अपने नफ़स पर कभी भरोसा मत करो।
ये तुम्हारा एक दुश्मन है,
सत्तर शैतानों से भी खराब।

नफ़स की खव्वाहिशों की तकलीद करके जो नुकसान होते है ममनुअ कामों और नापसंदीदा हरकात (**मकरूहात**) के जुर्म का इरतिकाब करना इससे साफ़ ज़ाहिर है। नफ़स की खवाहिशें सब वहशी खव्वाहिशें हैं। और ये वहशी खव्वाहिशें सारी दुनियावी ज़रूरयात से वाबस्ता हैं। जब तक के एक शख़्स इस ज़रूरयात को मुतमईन करने की कोशिश करता है, वो आखिरत के लिए ज़रूरी चीज़ें तैयार करने में देरी कर देता है। एक अहम नुकता जो सबने महसूस किया वो है के नफ़स कभी भी अपने आप मुवाह (खुशी जिसकी इस्लाम ने इजाज़त दी है) के साथ राज़ी नहीं होता। जब तक के एक शख़्स अपनी सारी जाईज़ खव्वाहिशों को मतमईन करता है, तो नफ़स और की तमन्ना करने लगता है। अगर एक शख़्स बढ़े हुए खाके पर अपनी खव्वाहिशों को पूरा करता रहेगा, उसका नफ़स ज़्यादा की तलब करता रहेगा! ये कभी भी मुतमईन नहीं हो सकता और आखिर में ये आदमी को फुसला कर ममनुअ चीज़ों में लगा लेती है। मज़ीद वरआं, जाईज़ चीज़ों को ज़्यादती में इस्तेमाल उदासी, तकलीफ़ों और बीमारियों का बाईस बनती हैं। एक शख़्स जो इजाज़त दी गई चीज़ों को ज़्यादती में इस्तेमाल करता है वो एक खुदगर्ज़ और नीच शख़्स वन जाता है जो हमेशा अपने वहशी जज़बों और खुशियों के बारे में सोचता है।

[इमाम अर-रब्बानी रहीमाहुल्लाहु तआला एक बड़े वली, ने मोजूदा मज़मून पर मंदरजाज़ेल बयान दिया: "सब मौजूद मखलूक में से इबतिदाई आदम हैं। आदम का मतलब है अदम-मौजूद है। दूसरे लफ़्ज़ों में, चीज़ें उसके इल्म में मौजूद हैं। अल्लाह तआला ने अपनी सिफ़ात इन आदम में ज़ाहिर की अपने इल्म में और इस तरह इस मौजूदा मखलूक की इबतिदा को एक असलियत बनाया। बाद में उसने इन इबतिदाओं को जोकि उसके इल्म में थी, बहारी दाएरे में डाला। इस तरह मौजूदगी क्याम पज़ीर हुई। आज की मौजूदगी अदम मौजूदगी से निकली है उसकी सिफ़ात की साफ़ ज़ाहिर होने से। ये उसी तरह मिलता हुआ है के एक सेब का बीज एक सेब की इबतिदा है। इंसानी फितरत को समझने के लिए, एक चीज़ की तसवीर को एक शीशे में ग़ौर से देखना चाहिए। वो अकस जो शीशे में ज़ाहिर हो रहा है वो उस रोशनी का है जिसका साया उसमें से निकल कर आ रहा है। शीशा आदम की तरह है आदम मौजूद। रूह और कल्ब एक इंसानी मखलूक के एक रोशनी की तरह हैं। शीशा इंसानी मखलूक के जिस्म की तरह है और शीशे की चमक नफ़स की तरह है। नफ़स की इबतिदा अदम-मौजूद या आदम है, और इसका रूह और कल्ब से कोई रिश्ता नहीं है। एक शख़्स जो अपनी नफ़स की खव्वाहिशों में डूब जाता है वो हमेशा इस्लाम की हद से बाहर होता है। क्योंकि जानवरों को समझ और नफ़स नहीं होती, वो हमेशा उन चीज़ों को इस्तेमाल करते हैं जो उन्हें चाहिए होती हैं जब वो उन्हें तलाश कर लेते हैं। वो सिर्फ़ उन चीज़ों से दूर भागते हैं जो उन्हें जिस्मानी तौर पर नुकसान पहुँचाती हैं। इस्लाम ने कभी गाड़ियों के इस्तेमाल जो आरामदह और अमन पसंद ज़िन्दगी को मना किया, ना ही फाएदेमंद दुनियावी खुशियों को मज़े करने से मना किया। इस्लाम ने मुसलमानों को उन हिदायात को मानने का हुकूम दिया जो मज़हब और समझ के ज़रिए कायम किया गया उन चीज़ों को हासिल करने और इस्तेमाल करने के लिए। इस्लाम का मकसद है इंसानी मखलूक को इस दुनिया में और दूसरी में भी आरामदह और अमनपसंद ज़िन्दगी मुहय्या कराना। इस मकसद को पूरा करना समझ की तकलीद करना और नफ़स की खव्वाहिशों से बचना पर मुबनी है। अगर हिकमत की तखलीक ना की जाती, तो इंसानी मखलूक हमेशा नफ़स की खव्वाहिशों को मानती और तबाहियों में गिर जाती। अगर नफ़स वुजूद में

नहीं आती, तो इंसानी मखलूक बढ़ती नहीं और एक मोहज़्ज़ब ज़िन्दगी ना जीती। इसी तरह, नफ़स के बग़ैर इंसानी मखलूक अपनी नफ़स के खिलाफ़ जंग में सवाब हासिल करने की कोशिश नहीं करती। इसके अलावा, नफ़स के बग़ैर इंसानी मखलूक फरिशतों के दरजे से बुलंद नहीं हो पाते। हमारे पैग़म्बर 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमाया, "**अगर जानवर उस इल्म को जान जाते जो तुम जानते हो उन चीज़ों के बारे में जो मरने के बाद की ज़िन्दगी में होंगी, तो तुम खाने के लिए कोई भी गोश्त ढूँढ नहीं पाते!**" आखिरत में सज़ाओं के अपने खौफ़ की वजह से जानवर खाने या पीने के लायक नहीं रहते, जिसकी वजह से वो अपने वज़न घटा लेते और खत्म हो जाते। अगर इंसानी मखलूक नफ़स नहीं रखती जानवरों की तरह, तो वो भी, सज़ा के खौफ़ से खाने या पीने के लायक नहीं रहते, और इस तरह ज़िन्दा रहने में नाकाम रहते। इंसानी मखलूक की रोज़ाना की ज़िन्दगी जारी रहती है उसके नफ़स की भूलने वाली फ़ितरत (ग़फ़लत) के ऊपर मुनहसिर करती है और उसके दुनियावी ज़ाएकों के मज़े के लिए। नफ़स एक दो धारी तलवार की तरह होती है, या एक दवाई की तरह जो तेज़ ज़हरीली खासियत रखती है। जो कोई भी इस दवा का इस्तेमाल डॉक्टर के बताए गए नुस्खे के मुताबिक करेगा वो दवाई की फ़ाएदेमंद खासियतों से फ़ायदा उठाएगा। इसके उलट, कोई भी जो इस दवाई को इतिहाई फ़ैश्न में इस्तेमाल करेगा वो इस दवाई की ज़हीरी सिफ़ात की वजह से तबाह हो जाएगा। इस्लाम नफ़स की तबाही की तजवीज़ नहीं देता। इसके मुखतलिफ़ ये हिदायत देता है के नफ़स को इस तरह सधाए ताकि वो अच्छे काम करने के लिए इस्तेमाल किया जा सके।]

नफ़स के खिलाफ़ दो किस्म की लड़ाई (जिहाद) इस्तेमाल की जाती है नफ़स को इस्लाम के ज़रिए बनाई गई हिदायती हुदूद की खिलाफ़ वरज़ी करने से बाज़ रखने के लिए। पहली वाली को "रियाज़द" कहा जाता है। "**रियाज़त**" एक शख़्स का अपने नफ़स की लालच के खिलाफ़ खड़े होना है। ये दो ज़रियों को इस्तेमाल करके पूरा किया जाता है: वरा और तकवा के ज़रिए। "तकवा" का मतलब है ममनुअ कामों को ना करना, या दूसरे लफ़्ज़ों में, ये एक तरह का रहने का तरीका है जहाँ पर एक शख़्स अपने रोज़ाना के मामलात में कोई ममनुअ काम ना करें। वरा का मतलब है ना सिर्फ़ हराम (ममनुअ काम)

से अपने आपको बचाना बल्कि मुबाह (काम, मज़े और ज़ाएके जो इस्लाम ने इजाज़त किए हुए हैं) में ज़्यादती से भी बचना चाहिए। दूसरी किस्म की जदोजदह (**जिहाद**) नफ़्स के खिलाफ़ ज़रूरी है ऐसे काम करना जो नफ़्स को नापसंद हों। इसको **मुजाहदन** कहते हैं। सारे इबादत के काम मुजाहदा हैं क्योंकि नफ़्स को इबादत करना बिल्कुल पसंद नहीं है। ये दो तरह के जिहाद नफ़्स को काबू में करते हैं और इंसानी मखलूक को बुरदबार बनाते हैं और उनकी रूहों को मज़बूत करते हैं और उन्हें **सिददीक** (लोग जो परहेज़गारी की आला मरतबे को हासिल करते हैं), वीरगती वाला (**शहीद**) और पाक (**सालिह**) मुसलमानों के रास्तों पर रहनुमाई करते हैं। उसकी तखलीक की खिलाफ़ वरज़ी किसी भी तरह उसे नुकसान नहीं पहुँचा सकती। वो इन सब चीज़ों का एहकाम इसलिए देता है ताकि नफ़्स को मानूस किया जाए ताकि नफ़्स के खिलाफ़ लड़ाई की जा सके।

अगर इंसानी मखलूक नफ़्स नहीं रखती, तो वो इंसान नहीं होते और वो फरिश्तों वाली खुसूसियात के हामिल होते। दरअसल, इंसानी जिस्म बहुत सारी ज़रूरयात रखता है। मिसाल के तौर पर, खाना, पीना, सोना, और आराम करना ज़रूरी है। इसमें कोई शक नहीं के एक घोड़ेवाला बग़ैर घोड़े के अपना वुजूद कायम नहीं रख सकता। इसलिए, वो अपने घोड़े की अच्छी देखभाल करता है। इसी तरह, एक इंसानी मखलूक एक जिस्म के बग़ैर काम नहीं कर सकता। इसलिए, उसे अपने जिस्म की अच्छी देखभाल करनी चाहिए। इबादत के काम जिस्म के साथ अदा किए जाते हैं। एक बार, उन्होने हमारे पैग़म्बर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को खबर दी के एक फलाँ शख़्स बग़ैर रात भर सोए लगातार इबादत अदा कर रहा था। आपने जवाब दिया, "**ज़्यादा कीमती इबादतें वो हैं जो लगातार जारी रहती हैं चाहे अगर वो गिनती में ज़्यादा ना हों।**" इबादतें जो लगातार बुनियाद पर अदा की जाती है एक शख़्स को एक पक्का इबादत वाला बनाती हैं।

इबादत अदा करने का मतलब है के अल्लाह तआला के एहकामात का इरादा रखना और मानना। एहकामात और ममनुआत जो अल्लाह तआला ने हुकूम किए गए वो "शरिअत" या "एहकाम अल-इलाहिया" या पाक उसूल

कहलाए जाते है। एहकामात “फ़र्ज़” कहलाते जाते हैं और ममनुआत “हराम” कहलाए जाते हैं। ये हवाला दिया जाता है के हमारे पैग़म्बर ने फरमाया, “**इबादत उतनी करो जितनी तुम कायम कर सको। इबादतें जो मज़े और सुकून के साथ अदा की जाएँ तो सबसे ज़्यादा कीमती होती हैं।**” एक आराम वाला शख़्स राहत और मज़े से इबादतें अदा करता है। दूसरी तरफ़, जब तुम जिस्मानी और रूहानी थके हुए हो उस वक्त किए गए इबादत के काम सुस्ती का सबब बनते हैं। एक शख़्स को इजाज़त दी गई चीज़ों को एक बार ही करना चाहिए ताकि एक सुकून बख्श और आरामदह बरताव चलता रहे और कमज़ोरी सुस्ती से छुटकारा मिल जाए। इमाम अल-गज़ाली रहीमाहुल्लाहु तआला ने कहा, “जिस्म सुस्त हो जाता है और हरकत नहीं करना चाहता जब एक शख़्स बहुत ज़्यादा इबादत अदा करले। ऐसी मिसालों में एक शख़्स को या तो सोकर या पाक मुसलमानों की ज़िन्दगी की कहानियाँ पढ़कर या इजाज़त दिए गए तफ़रीह करके अपने जिस्म को आराम दे सकता है। इन हरकात को करना ज़्यादा बेहतर है बनिस्बत इसके इबादत करना बग़ैर असली ख्वाहिश के।” इबादत करने का मतलब है अपने नफ़स को मुजाहदा के ज़रिए काबू में करना एक तरफ़, और दूसरी तरफ़, अपने दिल को खुशी के साथ अल्लाह तआला की तरफ़ मायल करना। रसूलुल्लाह ‘सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम’ ने एक हदीस शरीफ़ में मंदरजाज़ेल तरह से फरमाया: “**सलात/नमाज़ एक शख़्स को हकीर और बुरे काम करने से बचाती है।**” ये हिफ़ाज़त एक शख़्स सिर्फ़ सलात को मज़बूत ख्वाहिश और मज़े के साथ अदा करते हुए हासिल कर सकता है। इस मज़बूत ख्वाहिश को उतना ही मुतमईन करना ज़रूरी है जितने की इजाज़त दी गई है। इन रहनुमाई को मानने का मतलब है इस्लाम की फरमाबरदारी करना। जाईज़ चीज़ें जो इबादत की अदाएगी को बड़ा देती हैं वो अपने आप में इबादत के काम हैं। एक हदीस-ए-शरीफ़ जो इस तरह पढ़ी जाएगी, “**एक आलिम का सोना एक लाइल्म की इबादत से बेहतर है,**” वो हमारी बहस की तसदीक करती है। मिसाल के तौर पर, ये मकरूह है, तरावीह की सलात को उँगते हुए पढ़ना। नींद को भगाते हुए इसे खुशी से अदा करना चाहिए। एक सलाअत जो बीच में छोटी नींद/उँग के साथ अदा की जाए वो ग़फ़लत और भूल का सबब बनती है।

[एक शख़्स को ऊपर लिखी हुई बातों से गुमराह नहीं होना चाहिए और ये नहीं समझ लेना चाहिए के एक शख़्स को इबादत करने से रोक दिया गया है क्योंकि उन्हें अदा करते हुए वो थक गया है।थकन और सुस्ती के मामले में, इबादत के कामों को मुल्तवी कर देना चाहिए, [ये मुल्तवी करने का वक्त उस इबादत के बताए गए वक्त से बढ़ना नहीं चाहिए।] उनको छोड़ना नहीं चाहिए।ये बहुत बड़ा गुनाह है के इबादत के काम जो फर्ज़ बताए गए हैं उन्हें बग़ैर (माफ़ी किए गए जिन्हें इस्लाम ने बताया है और जिन्हें कहते हैं) उज़र के छोड़ना।(अगर इन्हें छोड़ा जाए, चाहे इस्लाम के ज़रिए सही बताए गए असबाब के लिए,) तो भी ये फ़र्ज़ है (ज़रूरी) के उनकी कज़ा अदा की जाए, (यानी उनको बाद में अदा किया जाए।) और ये वाजिब है के उन इबादत के कामों की कज़ा अदा करना जोकि वाजिब हैं।[एक इबादत का काम जोकि वाजिब है वो है जोकि सख्ती से ज़रूरी है, अगरचे ये कुरआन-अल-करीम में साफ़ हुकूम नहीं किया गया।] अगर एक शख़्स उन इबादत के कामों को छोड़ेगा जो सुन्नत हैं, तो उसे उनके सवाबों से महरूम कर दिया जाएगा।अगर वो बग़ैर किसी उज़र के आदतन उन्हें छोड़ेगा तो उसे (आखिरत में) शफ़ाअत से महरूम कर दिया जाएगा, (यानी रसूलुल्लाह की सिफ़ारिश से) जो उन सुन्नत के कामों के लिए मुकरर थीं।थकना या कमज़ोरी या ना रज़ामंद फर्ज़ कामों को मुल्तवी करने के लिए कोई उज़र (बहाना) नहीं हैं, जब तक के उसका बताया गया वक्त इबादत अदा करने का खत्म ना हो जाए।ना ही ये एक शख़्स को उस गुनाह के लिए अज़ाब से आज़ाद करती है।ये उन किताबों में लिखा हुआ है जो इस्लाम के एतेकाद के उसूलों की तालिमात देती हैं के ये कुफ़्र (बेएतमादी) की हालत का सबब बनती है अगर (इस्लाम की हिदायत जिन्हें कहते हैं) फर्ज़ और हराम को नज़रअंदाज़ करेंगी।इस्लाम के दुश्मन नौजवान नस्ल को इस अहम नुक्ते पर गुमराह करते हैं और इसतरह अंदर से इस्लाम को खत्म करने की कोशिश करते हैं।सिर्फ एक वाहिद तरीका उनकी गुमराही से आज़ादी का वो है अहल अस सुन्नत के आलिमों के ज़रिए लिखी गई **फ़िकह** और **इल्म अल-हाल** की किताबों को पढ़कर और इसतरह फराईज़ (फ़र्ज़ की जमा) और हराम के बारे में असरदार इतलाआत हासिल करके।]

8- नकली यकीन (तक़लीद)

दिल की आँठवी बीमारी ऐसे लोगों की नकल उतारना है जिन्हें तुम नहीं जानते। इस बात की इजाज़त नहीं है के किसी की तालिमात की तकलीद करना सिर्फ़ इस बुनियाद पर के वो मश्हूर है और नामवर है या शदीद नशरो इशाअत के ज़रिए जो उसकी किताबों या तकरीरों को बढ़ावा देती हैं बगैर ये जाने हुए के आया वो "अहले-अस-सुन्नत" का एक आलिम है के नहीं। एक शख़्स बरबाद हो सकता है और रूहानी तबाही की तरफ़ जा सकता है अगर एक शख़्स किसी की तकलीद ईमान और इबादत के लिहाज़ से करे बग़ैर किसी "अहल-अस-सुन्नत" के मातहत से छानबीन किए हुए। एक शख़्स को किसी की तकलीद करने की ज़रूरत नहीं है एक मुसलमान होने के लिए या फिर अल्लाह तआला की मौजूदगी को, उसकी वहदानियत को, उसकी ताकत को और उसकी दूसरी सिफ़ात को समझने के लिए। कोई भी जो अपना दिमाग़ साईन्स के इल्म को समझने में लगा दे वो आसानी से उसके वुजूद को समझ लेता है और इस तरह सिर्फ़ सोच के ज़रिए अपना ईमान हासिल कर सकता है। ये बेवकूफ़ी है के खालिक के वुजूद को ना समझा जाए जबकि एक शख़्स उसकी तखलीक देख रहा है। इस्लाम हर किसी को इस दस्तूर पर गौर करने का हुकूम देता है और इस तरह ईमान हासिल करने का हुकूम देता है। पाक लोग (सलाफ़ अस सालीहीन) जो पहले की कुछ सदियों में रहते थे वो हमारे पैग़म्बर के वक्त को मानते हुए वो हमें इतेफ़ाक राए से पैग़ाम देते थे के हम सोचते हुए उस पर यकीन करें। कुछ भटके हुए लोग जो बहत्तर गुमराह ग्रुपों में से एक में शामिल थे जो इस्लामी कैलैण्डर की चौथी सदी के बाद ज़ाहिर हुए थे उनका कहना था के एक शख़्स को उसके और उसकी तख़लीक के बारे में ध्यान करने और सोचने की ज़रूरत नहीं है। उनके गुमराह ख्याल कोई वज़न नहीं रखते क्योंकि मंफ़ी सोचें जो बाद की नसलों ने पहुँचाई वो पिछले पाक मुसलमानों और आलिमों की इतफ़ाक राए की तालीमात को बातिल करार नहीं करते। एक सही यकीन जो सिर्फ़ माँ बाप या उस्तादों को तकलीद करके हासिल हो सकती है वो बातिल मानी गई है। ताहम एक शख़्स जो इस ढंग से अपना यकीन हासिल करता है वो एक गुनहगार माना जाता है अपनी ज़रूरी पढ़ाई को छोड़ कर

यानी, साईन्सी इल्म को ना पढ़कर और सीखकर और ना ही अपने दिमाग़ को अल्लाह तआला की मौजूदगी को समझने और सोचने की तरफ़ लगाकर। वहाँ पर दूसरे आलिम भी हैं। बहरहाल, जो कहते हैं के एक शख़्स की साईन्सी इल्म की कमी एक गुनाह का सबब नहीं है अगर वो इस काबिल है के अपने माँ बाप या किताबों को पढ़कर या सोचकर वो यकीन हासिल करले।

हर एक उन आलिमों में से एक को मुंतखिब कर लेता है, जो उसूलों को बनाने के मिआर पर हैं यानी **इजतिहाद** करना, मज़हबी मआमलात में, और अपने सारे मामलों में उसकी तकलीद करना। इजतिहाद का मतलब है ग़ैर वाज़ेह बताई गई जानकारी के मतलब को समझना और इस नतीजे पर पहुँचना इन हालात में जिनके बारे में कुरआन अल करीम (**नास**) में या हदीस शरीफ़ में कोई वाज़ेह समझने वाले एहकाम नहीं हैं। कुरआन की और हदीस की आयात को "नास" कहते हैं। आलिम जो इजतिहाद अदा करने की काबलियत रखते हैं उन्हें "**मुजतहिद**" कहा जाता हे। हमारे पाक पैग़म्बर के नकल मकानी (हिजरत) मक्का से मदीना की तरफ़ जाने के बाद चार सौ साल किसी मुजतहिद ने ऊँचाई हासिल नहीं की। ना ही ये अल्लाह तआला और उसके पैग़म्बर नबी मौहम्मद अलैहि सलाम के लिए कभी ज़रूरी था इन उसूलों (**अहकाम**) को या जानकारी को वाज़ेह करने के लिए जो के हर तरह की ज़िन्दगी के ढंग और सारे साईन्सी और फनी तबदिलियों और हालात के मुताबिक हैं जो इस दुनिया के खत्म होने तक कायम रहेगा। मुजतहिद ने इन तालिमात को समझा और दूसरों को इन्हें वाज़ेह किया। आलिम जो बाद में आए उन्होने इन तालिमात को सीखा के किस तरह वो नए हालात में इस्तेमाल करें और अपनी तफ़सीर की किताबों में (कुरआन अल करीम की तशरीह) और फिकह (इस्लामी इल्म की शाखा इस्लामी उसूलों की तालीमात पर अमल) में लिखा। ये आलिम **मुजदद** (पुराने को नया करने वाले) कहलाते हैं। वो दुनिया के खत्म होने तक मौजूद रहेंगे। इसलिए, वो जो मज़हब को दुरूस्त करना ज़रूरी समझते हैं "नास" में नए चीज़ें शामिल करके वो इस्लाम के दुश्मन हैं। वो इस तरह के बयान बनाते हैं जैसे, "साईन्सी माध्यम बदल गया है। हम नए वाक्यात झेल रहे हैं। मज़हबी आदमी इकट्ठे होते हैं और नए तरजुमें लिखते हैं। नए इजतिहाद अदा करने चाहिए।" वो इस्लाम के दुश्मन हैं। वो काफ़िर (**ज़िंदीक**) हैं। सबसे ज़्यादा

इस्लाम के नुकसानदह दुश्मन अंग्रेज़ी नस्ल के हैं। बराएमहरबानी **एक अंग्रेज़ी जासूस का इकबाल नामा** किताब को पढ़िए जिसे हकीकत किताबवी ने छापा है। जबकि एक शख़्स चारों सच्चे मसलकों में से एक को मानते हैं जब तक के दूसरे मसलक को मानने की ज़रूरत महसूस ना हो, तो एक शख़्स को उसी मसलक को मानते रहना चाहिए। लेकिन, अगर उस खास मामले को अदा करने में कोई मुश्किल आए या अगर एक शख़्स एक खास काम को अदा ना कर पाए अपने मस्लक के मुताबिक क्योंकि उसके अपने हालात के मुताबिक उस सिलसिले में, एक शख़्स दूसरे मसलक को मान सकता है जिसमें उस खास काम को करने की इजाज़त होती है। लेकिन इसमें एक चेतावनी है एक शख़्स को चारों मसलकों की सबसे आसान इजतिहाद जमा करने की इजाज़त नहीं है एक खास काम या इबादत को अदा करने के लिए। [चार मसलकों का सबसे आसान खासियत का नतीजा **तलफ़ीक** कहलाता है। तलफ़ीक का लुग़त का मतलब है हर ज़रिए से मुंतखिब करना।] इस तरह के काम या इबादत इस तरह से कुबूल (बातिल) करने वाली इबादत नहीं होती। इस्लाम कैलेण्डर की चौथी सदी के बाद कोई आलिम बग़ैर मुजतहिद मुल्लक, यानी एक शख़्स जो कियास के ज़रिए (मुशाबहत, मवाज़ना) इजतिहाद करे ऐसा कोई उभर कर नहीं आया। इसलिए, इस बात की इजाज़त नहीं है के इस्लामी कैलेण्डर की चौथी सदी के बाद रहने वाले आलिमों की तकलीद की जाए या चारों "मसलकों" के कायम होने के बाद किसी भी मसलक को माना जाए। इस्लामी इल्म को चारो जाने हुए मसलकों में से एक के आलिमों के मुताबिक जो चौथी सदी से पहले रहते थे सीखना एक शख़्स को फ़िकह की किताबों को पढ़ना चाहिए जो उस मसलक के आलिमों के ज़रिए इतेफ़ाक राए से मशवरा दी गई। एक शख़्स को मज़हबी इल्म को उन किताबों या तकरीरों से सीखने की कोशिश नहीं करनी चाहिए जिनकी सच्चे "अहले अस सुन्नत के आलिमों" के ज़रिए इखतियार नहीं दिया गया। इस्लाम ऐसे इबादत के काम कुबूल नहीं करता जो इस्लामी किताबों से बग़ैर सिलसिले के हिदायत किए गए हों। एक शख़्स को अपने आपको, मिसाल के तौर पर, मज़हब के ग़ैर सुन्नी आदमियों की किताबों और तकरीरों के मुताबिक नहीं ढालना चाहिए। मंदरजाज़ेल मज़हबी किताबें **(फतवा)** "हंफ़ी मसलक" की बहुत ज़्यादा मानी जाती हैं और भरोसे वाली हैं: **कादिहान,**

हानिया, हुलासा, बेज़ज़िया, ज़ाहीरिया और [**इबन अल-अबिदीन।**] **मोहतसर अल खलील** किताब "मालिकी मसलक" के मुताबिक लिखी गई, **अल अनवार लि-अमालि अबरार** किताब और **तोहफ़ा त उल-मोहताज** "शाफ़ई मसलक" के मुताबिक लिखी गई। **अल फ़िकह-उ अलल-मज़ाहिब-इल-अरबा** चारों मसलकों के मुताबिक लिखी गई। ये सारी किताबें सही और भरोसे वाली हैं। हदीस की किताबे कोई आसान ज़रिया नहीं हैं इबादत के काम या 'अहकाम' की तालिमात को सीखने के लिए जिसका मतलब होता है हलाल और हराम पर मुबनी तालिमात। सबसे ज़्यादा भरोसे वाली किताबें हदीस की वो हैं **सही अल बुखारी, सही अल मुस्लिम** और दूसरी चार किताबें हदीस की जिन्हें **कुतुब-अल सित्ता** कहते हैं। सबसे ज़्यादा कीमती किताब जो सूफ़ियों (तरीकत) के बारे में वाज़ेह करती है वो है आला सूफ़ी उस्ताद मौलाना जलाल-अद-दीन रूमी रहिमाहुल्लाहु तआला की **मसनवी** [सबसे ज़्यादा कीमती किताब जिसने "तरीकत" और "शरीअत" दोनो के बारे में वाज़ेह किया है वो है आला सूफ़ी उस्ताद इमाम अर-रब्बानी रहिमाहुल्लाहु तआला के ज़रिए लिखी गई किताब **मकतूबात**।]

सिर्फ़ किसी ऐसे शख़्स की जो अपने आपको एक आलिम या एक मज़हबी आदमी ज़ाहिर करे, ये जाना जाता है उसकी किताबों या तकरीरों के मुताबिक इबादत के काम अदा करने की इजाज़त नहीं है। एक शख़्स को **इल्म अल हाल** की ऊपर बताई गई कीमती किताबों की तालीफ़ या तरजुमों को पढ़ना चाहिए। गलत तरीके से मिलाई गई तालीमात और वज़ाहते बजाए इन खरी किताबों के तरजुमों से, वो एक शख़्स को इस दुनिया में मुसिबतों में डाल देगा और बाद में भी अज़ाब में मुबतला करेगा।

दूसरा बड़ा गुनाह कुफ़्र के बाद वो है बिदअती ईमान रखना। हर बिदअती ईमान का उलटा सुन्नी ईमान है। नेकियों में सबसे ज़्यादा कीमती और ऊँचाई पर अल्लाह तआला के ऊपर ईमान के बाद वो है "अहले अस सुन्नत (या सुन्नी) का ईमान"। "अहले अस-सुन्नत" का खुलासा इस तरह है: अपने आपको मौहम्मद अलैहिसलाम की सुन्नत के मुताबिक ढालना, यानी उस तरीके पर जो आपने और आपके सहाबा ने रहनुमाई की,- जोकि हम तक ताबाईन

और इजमअ (हमख्याली, रज़ामंदी) इस्लामी आलिमों के ज़रिए हम तक पहुँची जो उनके जानशीन बने रज़ी अल्लाहु तआला अन्हुम अजमईन- ईमान और इबादत के मामले में, जो कुछ भी तुम कर रहे हो और कह रहे हो, अपने सारे रोज़ाना के कामों और सारे कारोबारी लेनदेन में। जो तरीका उन मुबारक लोगों ने बताया वो उनकी किताबों के ज़रिए सीखा जा सकता है। ज़्यादातर मुसलमान इस निजात के रास्ते से भटक गए हैं और अपनी अय्याश इच्छाओं में डूबने की वजह से **अलह-ए-बिदअत** बन जाते हैं, अपने सबब को ही मानते हैं, या अपने वक्त के साईन्सी तालीमात के ज़रिए गुमराह होते हैं।

9- मक्कारी (रिया)

हमने इस मतन में पहले भी बताया है कि रूहानी दिल मे साठ अहम बुराइयाँ/नुक्स होती हैं। नवीं बुराई मक्कारी (**रिया**) है। "रिया का मतलब है किसी चीज़ को उसकी असल शक्ल से मुखतलिफ़ पेश करना। मुखतसिर ये के, इसका मतलब है दावा करना, यानी, एक शख़्स दूसरी दुनिया के लिए काम कर रहा है अपने खयाल से दूसरों को मुत्तासिर करने के लिए के वो असल में एक पाक शख़्स है जिसे दूसरी दुनिया (**आखिरत**) की बहुत खुवाहिश है जबकि असल में वो दुनियावी इच्छाओं और इस दुनिया की दौलत को हासिल करना चाहता है। दूसरे लफ़्ज़ों में, इसका मतलब है दुनियावी दौलत को हासिल करने के लिए मज़हब को औज़ार के तौर पर इस्तेमाल करना, या अपने आपको दूसरों की हिमायत में लाना अपने इबादत के कामों को दिखाकर। [अगर एक शख़्स जिसके लफ़्ज़ और हरकात से रिया ज़ाहिर हो वो मज़हबी इल्म रखता है, तो उसे हिल्यासाज़ (**मुनाफ़िक**) कहा जाता है। अगर वो मज़हबी इल्म नहीं रखता, तो उसे मज़हबी पुरजोश कहा जाता है। कोई भी इस्लाम का दुश्मन जो साईन्सी इल्म नहीं रखता लेकिन अपने आपको ऐसा बताता है अपने खुद के खयालात को साईन्सी इल्म बताते हुए मुसलमानों को धोखा देने के लिए और उनके ईमान और मज़हब को दबाने के लिए दबलीग़ करना, उन्हें धोकेबाज़ साईन्सदाँ (ज़िदिक) कहा जाता है। मुसलमानों को इन दोनो तरह के लोगों पर भरोसा नहीं करना चाहिए। हीला सिर्फ़ इकराह (नफ़रत) जोकि मुलजी (रूकावट

पैदा करने वाला, ज़रूरी) है उस सूरत में इजाज़त दिया गया है। “इकराह” का मतलब है किसी को ऐसा करने के लिए ज़बरदस्ती कहा जाए जो वो करना नहीं चाहता। अगर नफ़रत का खुलासा कत्ल या जिस्म के किसी एक हिस्से को काटने की धमकी दी जाए, तब ये “इकराह मुलजी” (नफ़रत जोकि रूकावट पैदा करने वाला हुआ) कहलाया जाता है।”[फसाद बरपा करने वालों के ज़रिए फसाद फैलाना और एक ज़ालिम हुकूमत के ज़रिए तकलीफ़ फैलाना इकराह मुलजी की मिसाले हैं। ऐसी मिसालों पर, ये ज़रूरी हो जाता है के एक शख़्स जो जबरन करता था वो कर सकता है। रूकावट जो कैदी होने या हराने की धमकी है उसे हल्की रूकावट कहा जाता है। हल्की रूकावट हीला की इजाज़त नहीं देती। हीला का उलटा इखलास है, जिसका मतलब है सिर्फ़ अल्लाह तआला की रज़ा की गर्ज़ से इबादत के काम करना, बग़ैर किसी दुनियावी सोच के। इखलास के साथ वाला शख़्स अपनी इबादतों को किसी को दिखाने के बारे में कभी नहीं सोचता। दूसरे एक शख़्स को इखलास के साथ इबादत करते हुए देखकर उसके इखलास से कम नहीं होते। रसूलुल्लाह ‘सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम’ ने एक हदीस-ए-शरीफ़ में फरमाया: “**अल्लाह तआला की इबादत इस तरह करो जैसे के तुम उसे देख रहे हो! हाँलाकि तुम उसे देख नहीं रहे हो, वो तुम्हें देख रहा है!**”

दुनियावी मामलों में दूसरों की मदद करना उनका प्यार और तारीफ़ हासिल करने के लिए तो ये हीला है। धोका जो इबादत के ज़रिए किया जाए वो इससे ज़्यादा खराब है। हीला/धोखा जो अल्लाह तआला की रज़ा को सोचे बग़ैर किया जाए वो सारे ऊपर वालों से खराब है। इबादत करना ताकि अल्लाह तआला की मदद हासिल की जाए दुनियावी मामलों के लिए कोई हीला नहीं है। मिसाल के तौर पर, बारिश के लिए दुआ करना या अल्लाह तआला की रहनुमाई हासिल करने के लिए इसतिखारा की इबादत करना कोई हीला नहीं है। कुछ आलिमों ने भी कहा है के मंदरजाज़ेल हरकात कोई हीला पर मुबनी नहीं है: मज़हबी रहनुमा (**इमाम**) या मुबलिग़ या उस्ताद या दुनियावी मुसिबतों जैसे तकलीफ़, बीमारी, या गरीबी से बचने के लिए कुरआन की आयात की किरअत करने के लिए पैसे लेना कोई हीला नहीं है। ये हरकात इबादत की और दुनियावी फ़ायदों दोनों इरादों को रखती हैं। (**हज**) ज़ियारत पर जाना

तिजारती या कारोबारी मकासिद से किसी हीला को कायम नहीं करती। अगर ये हरकात इबादत के इरादे को शामिल नहीं करता तब ये हीला हो सकता है। अगर इबादत करने का इरादा दूसरे इरादों को पीछे करदे तब एक शख़्स उनके लिए सवाब हासिल कर सकता है। अपनी इबादत को दूसरों को दिखाना उनको ऐसा करने के लिए लुभाने के लिए या उनको पढ़ाने के लिए तो ये कोई हीला पर मबनी नहीं है। इसके बरअक्स ऐसा करना बहुत अच्छा काम है और एक शख़्स ऐसा करके बहुत सवाब कमा सकता है। "रमज़ान" के महीने में रोज़े रखना कोई हीला नहीं है। अगर एक शख़्स अल्लाह तआला की रज़ा के लिए (रोज़ाना की इबादत जिसे कहते हैं) नमाज़ पढ़ना शुरू करे, लेकिन बाद में वो हीला में पड़ जाए, तो बाद वाला हीला उस शख़्स को नुकसान नहीं पहुँचा सकता। शर्तिया **(फ़र्ज़)** इबादतें हीला के साथ अदा की गई हों उन्हें अभी भी कुबूल **(सहीह)** माना गया, और एक शख़्स की डयूटी है के वो उन्हें अदा करे जिन्हें पूरा किया जाए लेकिन एक शख़्स को उनका कोई सवाब नहीं मिलेगा। इस बात की इजाज़त (जाईज़) नहीं है के अल्लाह तआला की रज़ा के लिए एक जानवर को ज़बह करना जबकि उसका असल इरादा उसकी गौश्त की सपलाई हासिल करना हो। इस बात की भी इजाज़त (जाईज़) नहीं है के एक जानवर को दोनों इरादों यानी, अल्लाह तआला और एक आदमी के लिए ज़बह करना। कोई भी जानवर जो अल्लाह तआला की रज़ा के लिए ज़बह ना किया जाए बल्कि एक शख़्स की रज़ा के लिए ज़हब किया जाए जो पाक जंग से लोटा हो या ज़ियारत **(हज)** से वापिस हुआ हो या एक रहनुमा का इस्तकबाल करने के लिए इन इरादों के साथ एक जानवर को ज़बह करना हराम है, और इसका गौश्त खाना भी हराम है। हीला के डर से इबादत की अदाएगी करना छोड़ देने की भी इजाज़त नहीं है। अगर एक शख़्स अल्लाह तआला की रज़ा के लिए नमाज़ पढ़नी शुरू करे और तब पूरी इबादत में सिर्फ़ दुनियावी मामलात के बारे में सोचना भी कुबूल **(सहीह)** है। इस तरह से लिबास पहनना जो कौम में बड़े पेमाने पर बातों का सबब बने ये भी हीला है। मज़हबी लोगों को साफ़ और कीमती लिबास पहनना चाहिए क्योंकि लोग उनकी वज़अ को देखते हैं। इस वजह से, मज़हबी रहनुमाओं **(इमामों)** को जुमे और मज़हबी छुट्टियों **(ईद)** के दौरान प्यारे और कीमती कपड़े पहनना **सुन्नत** है।

किताबें लिखना, तबलीग़ करना या दूसरों को सलाह देना अपने आपको मश्हूर करने के इरादे से तो ये भी हीला है। तबलीग़ करने का मतलब है अच्छे काम (अमर-ए-मारूफ़) करना और उन कामों से रूकना जो इस्लाम ने (नाहये-ए-मुंकर) मुमानियत की हैं। दलीलें जीतने के मकसद से सीखना और पढ़ना या दूसरों पर सबक़त देखाने के लिए या फिर घमंड के लिए हीला पर मबनी है। इल्म का मुतालअ दुनियावी कबज़े हासिल करने के लिए या रूतबे हासिल करने के लिए भी हीला पर मबनी है। हीला ममनुअ (**हराम**) है। अल्लाह तआला की रज़ा के लिए इल्म हासिल करना अल्लाह तआला के लिए एक शख़्स के डर की हिस को बढ़ाता है। ये एक शख़्स को ख़ुद की कमियों को देखने का सबब बनता है और एक शख़्स को शैतान के धोखे के खिलाफ़ बचाता है। मज़हबी आदमी जो अपने इल्म को एक गाड़ी की तरह इस्तेमाल करते हैं दुनियावी मिलकियत या रूतबें हासिल करने के लिए वो खराब मज़हबी लोग (**उलेमा-ए-सू**) कहलाते हैं। उनकी मंज़िल दोज़ख है। दूसरी मिसाल हीला की वो है इबादत के कामों की अदाएगी करना पूरी तवज्जा के साथ सुन्नत की तफ़सील के मुताबिक जब उसके चारों तरफ़ लोग हों और जब वो अकेले में अदाएगी करे तो सुन्नत के बग़ैर अदा करता हो।

इस बात की इजाज़त है के इबादत के। ज़रिए हासिल किए गए सवाब को किसी को तौहफ़े में दे देना, ये बग़ैर जाने हुए के वो शख़्स मर गया है या ज़िन्दा है। हंफ़ी मसलक में, सवाब जो हासिल किए गए हों इबादत के कामों के तौर पर जैसे के हज, नमाज़, रोज़ा, ज़कात, (पढ़ना या किरअत करना) कुरआन अल करीम का, (रसूलुल्लाह की तारीफ़ में नअत पढ़ना, जिसे कहते हैं) मोलिद, ज़िकर और दुआ देना, वो सब दूसरे लोगों को तौहफ़े के तौर पर दिए जा सकते हैं।, बहरहाल इन इबादात के कामों के अदा करने के बदले में फीस लेना या इन खिदमात के लिए सौदा करना जाईज़ (इजाज़त) नहीं है। ताहम, एक शख़्स ये इबादात सिर्फ़ अल्लाह तआला की रज़ा के लिए करे और जो हदिया दिया जाए उसे कुबूल करे। मालिकी और शाफ़ई मसलकों में, एक शख़्स की मिलकियत के ज़रिए काम अदा करके सवाब हासिल किया जाए, जैसे के ख़ैरात की जाए, ज़कात [ज़कात का मतलब है लाज़मी ख़ैरात। वाज़ेह तफ़सील के लिए, बराएमहरबानी **सआदते अबदिया** के पाँचवे

हिस्से के पहले सबक को देखें।] और हज को किसी को हदिए के तौर पर दे दिया जाए, अगरचे ये सवाब का हदिया जाईज़ नहीं है जब जिस्मानी तौर पर इबादत के काम किए जाएँ। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस-ए-शरीफ़ में बयान फरमाया: "**अगर एक शख़्स कब्रिस्तान के पास से गुज़र रहा है** (या गाड़ी चला रहा है या सवारी पर है) **सुरह इख्लास को ग्यारह बार पढ़ता है और उस किरअत का सवाब जो उसे मिला वो उन** (रूहों को) **लोगों को बख्श दे जो कबरों में लेटे हैं, तो वो सवाब जो उसे** (अल्लाह तआला के ज़रिए) **दिया जाएगा वो उन मरे हुए लोगों से ज़रब/बढ़ा दिया जाएगा।**" हंफ़ी मसलक में एक शख़्स सवाब को तौहफ़तन दे सकता है, और मालिकी और शाफ़ई मसलक में एक शख़्स मरे हुए लोगों पर दुआ की रहमत भेज सकता है और अल्लाह तआला से मिन्नत कर सकता है के उन्हें और उनके गुनाहों को माफ़ कर दे।

इबादत को कुबूल **(सही)** कराने के लिए उसका इरादा अल्लाह तआला की रज़ा के लिए होना चाहिए। इरादा दिल के साथ किया जाता है। सिर्फ बोलकर इरादा किया जाए उसे कुबूल नहीं किया जाता। कुछ आलिमों के मुताबिक एक ही वक्त में दिल के ज़रिए किया गया इरादा और होंटो से दोहराया गया जाईज़ है। अगर जो दिल में इरादा है वो होंटो के ज़रिए कहे गए से मुखतलिफ़ है, तो दिल का इरादा बातिल माना जाएगा। इस उसूल को सिर्फ हल्फ़ लेने की सूरत में छोड़ा जा सकता है। जुबानी कहे गए या लफ़्ज़ जो हल्फ़ लेते वक्त मुंह से निकले वही बातिल हैं। हमारे पास ऐसी कोई इतलाअ या कोई हदीस नहीं है जो हमें ये सिखाए के इरादा ज़ुबान से दोहराया जा सकता है। चारों मसलकों में से किसी भी मज़हबी रहनुमा **(इमामों)** ने ऐसा नहीं कहा है। इरादे का सिर्फ ये मतलब नहीं है के दिल के ज़रिए ये याद रखना के कौन सी इबादत एक शख़्स करने का इरादा रखता है। इसका असली मतलब है के अल्लाह तआला की रज़ा के लिए इबादत करने की रज़ा के लिए इबादत करने की इच्छा रखना। इरादा उस वक्त बन जाता है जब एक शख़्स इबादत शुरू करता है। अगर एक शख़्स, मिसाल के तौर पर, उस इबादत को असल में करने से एक दिन पहले इबादत करने की सोचे, तो ऐसा इरादा कुबूल नहीं किया जाएगा। उसे एक खुव्वाहिश या वादा कहा जाएगा सिवाए एक इरादे के। हंफ़ी

मसलक में, रोज़ा रखने की नियत सूरत गुरूब होने से पहले से और "दहवा-ए-कुबरा" रोज़े रखने के दिन तक बाकी रहती है।[दहवा-ए-कुबरा का वक्त दोपहर से एक घंटा पहले है।]

कभी कभी एक "मुबाह काम" ना करना (मिसाल के तौर पर एक जो "शरीअत" के ज़रिए ना तो करने के लिए कहा गया और ना ही मना किया गया।), दूसरों को एक गुनाह करने से बचाना है, तो ये एक अच्छा काम है। ये उसूल "सुन्नतों" और "मुस्तहबात" पर नाफ़िज़ नहीं होता। दूसरे लफ़्ज़ों में **सुन्नतों** या **मुस्तहबात** की अदाएगी को छोड़ना दूसरे लोगों को एक गुनाह करने से बचाने के लिए तो इस बात की इजाज़त **(जाईज़)** नहीं है। मिसाल के तौर पर, ये बात सही नहीं है के मिसवाक का इस्तेमाल छोड़ देना या (खास लम्बाई वाला कपड़ा सिर के चारों तरफ़ बाँधना (एक पगड़ी पहनना या नंगे सिर जाना या एक गधे की सवारी करना, जिससे ऐसा ना हो कि लोग चुग़ली करें, (जोकि एक गुनाह का काम है)। "मिस्वाक" एक टहनी का टुकड़ा है जिसे एक "मिस्वाक", ज़ैतून या शहतुत के पेड़ से काटा जाता है। ये सीधे हाथ की बालिश्त की तरह लम्बी होती है और एक उँगली की तरह मोटी। औरतों के लिये **(जाईज़)** है के वो "मिस्वाक" का इस्तेमाल करने के बजाए गौंद चबा सकती हैं। कोई भी अगर "मिस्वाक" ना ढूँढ पाए तो वो अपना अगूँठा और पहली उँगली दाँतो पर मल सकता है। बिशर अल-हाफ़ी रहीमाहुल्लाहु तआला बग़ैर सिर को ढके चारों तरफ़ जाते थे।

एक बंदा अपने दिल में अल्लाह तआला का डर होने की वजह से या दूसरों की शर्म की वजह से, या फ़िर एक बुरी मिसाल कायम करने की वजह से, यानी के, अगर वो ऐसा करेगा तो दूसरे भी ऐसा करना शुरू कर देंगे इस वजह से वो गुनाह नहीं करता जब के वो ऐसा करने के काबिल होता है लेकिन वो ऐसा नहीं करता। एक बंदे की अल्लाह तआला की डर की वजह से गुनाह न करने की अलामत ये है कि वो ये गुनाह नहीं करता जबकि वो अकेला होता है और कोई उसे नहीं देखता। शर्म **(हया)** का मतलब है कि वो दूसरे लोगों की बुरी बातों से डरता है, मिसाल के तौर पर, अगर वो गुनाह करता है, तो लोग उसके बारे में बुरी बातें करते हैं। दूसरों को एक गुनाह करने के लिए उकसाना

उस गुनाह से ज़्यादा बड़ा है जो उसने अकेले अदा किया। दूसरों के गुनाह जिसने भी वो गुनाह किए कयामत तक वो सब उस गुनाह के करने वाले की हिसाब की किताब में लिख दिए जाएंगे। एक हदीस. में इस तरह बयान है, "**अगर एक बंदा दुनिया में अपने गुनाह छुपा लेता है, अल्लाह तआला योमुलहशर (कयामत) में दूसरों से उस गुनाह को छुपाएँगे।**" इस हदीस के मआनी में वो आदमी शामिल नहीं है जो अपने आपको बारा का बंदा बताने के लिए अपने गुनाह दूसरों से छुपाता है लेकिन उसने वो गुनाह किए जबकि वो अकेला था। वो एक छल होता है।

अगर दूसरे आपको इबादत करते हुए देखे तो इसकी इजाज़त नहीं है कि शर्म महसूस की जाए। शर्म का मतलब है के किसी के गुनाह या गलती को दूसरों को ना दिखाना। इस मसले के लिए, इस बात की इजाज़त नहीं है कि इस्लाम के बारे में पढ़ाने में शर्म करना, दूसरों को अच्छी बातें (अमर-ए-मारूफ़) करने के लिए उकसाना और उन्हें गलत काम (नहीं-ए-मुंकर) करने से मना करना, [इस्लाम की तालीमात के बारे में लिखना या किताबें बेचना, (इल्म-उल-हाल)] मोअज़्ज़न या इमाम के तौर पर काम करना, कुरान-अल-करीम को पढ़ना (या किरअत करना), या मौलीद की किरत करना। हदीस में "हया" का मतलब है, "**हया यकीन (ईमान) का हिस्सा है**" वो यह कि एक बंदा दूसरों की मौजूदगी में गंदे काम और गुनाह करने से महसूस करे। एक ईमान वाला **(मोमीन)** सबसे पहले अल्लाह तआला से शर्मिन्दा होगा। अगरचे, वो अपनी इबादत लगातार और पूरी ईमानदारी से अदा करता हो। एक बार, बुख़ारा शहर (मरकज़ी एशिया में एक शहर) के आलिमों में से एक ने हाकिम (सुल्तान) के बच्चों को सड़क पर एक नापसंदीदा खेल खेलते हुए देखा। उन्होने उन बच्चों को अपने डंडे से मारा। बच्चे भाग गए और अपने बाप से शिकायत की। हाकिम ने आलिम को अपने सामने हाज़िर कराया और उनसे पूछा कि क्या तुम ये नहीं जानते के अगर कोई हाकिम का नाफरमानी करता है तो उसे जेल में बंद कर दिया जाता है। आलिम ने उसे इस तरह पूछते हुए जवाब दिया कि क्या तुम्हे यह नहीं पता कि जो "रहमान" (अल्लाह तआला) की नाफरमानी करते हैं वो दोज़ख़ में जाते हैं। हाकिम ने उनसे पूछा की तुम्हें किस तरह अमर-ए-मारूफ़ बनने का हक़ मिल गया। आलिम ने यह पूछते हुए जवाब दिया कि

उसे किसने हाकिम बनाया। हाकिम ने जवाब दिया कि उसे खलीफ़ा ने हाकिम बनाया। तब, आलिम ने जवाब दिया कि खलीफ़ा के मालिक ने उसे अमीर-ए-मारूफ़ की ज़िम्मेदारी सौंपी है। हाकिम ने उनसे कहा कि मैं तुम्हे बुखारा के शहर में अमीर-ए-मारूफ़ की ज़िम्मेदारी सौंपता हूँ। उस पर आलिम ने जवाब दिया कि उस हालत में मैं इस नौकरी को छोड़ता हूँ। हाकिम ने उनसे कहा मैं तुम्हारे इंकार से हैरान हूँ, और उनसे कहा: "पहले तुमने कहा कि तुम अमीर-ए-मारूफ़ कर रहे हो बग़ैर इजाज़त के। जब मैं तुम्हें ऐसा करने की इजाज़त दे रहा हुँ, तो इस वक्त तुम इसे छोड़ रहे हो और मना कर रहे हो। यह किस तरह का कारोबार है?" आलिम ने जवाब दिया, "तुम अब इजाज़त दे रहे हो लेकिन पहले जब तुम मेरी अरज़ियों को पसंद नहीं करते थे तो वो इजाज़त तक वापिस ले लेते थे। लेकिन, जब मेरे मालिक ने मुझे अमर-ए-मारूफ़ की ज़िम्मेदारी सौंप दी है, तो मुझ से यह हक़ कोई वापिस नहीं ले सकता।" हाकिम उनके जवाब से बहुत खुश हुआ और उनसे कहा जो भी तुम्हारी ख़ुवाहिश/इच्छा है वो तुम्हें दी जाएगी। आलिम उससे कहते हैं, मेरी ख़ुवाहिश है कि मेरी जवानी मुझे वापिस मिल जाए। हाकिम उनसे कहता है मैं ऐसा नहीं कर सकता। आलिम उससे कहते हैं कि तुम मुकर्रब फरिश्ते मिकाईल **(मलाईक)**, जो कि दोज़ख़ के फरिश्तों के सरबराह हैं उनको हुक्म लिखो कि वो उसे दोज़ख़ में न डालें। हाकिम जवाब देता है कि वो यह ख़ुवाहिश भी पूरी नहीं कर सकता। आलिम उसपर जवाब देते हैं कि उनके पास जो "**सुल्तान**" है वो उससे जो भी माँगते हैं वो देता है, और जो कभी किसी भी चीज़ के पूछने पर यह नहीं कहते कि "मैं नहीं कर सकता"। हाकिम उनसे कहता है कि वे उसे अपनी दुआओं में शामिल करलें और उन्हें जाने देता है।

मंदरजाज़ेल हदीस शरीफ़ से यह संदेश पहुँचता है: "**वो लोग जो अपनी 'सलवात' जब लोगों के बीच में होते हैं तो बहुत खुबसूरती के साथ अदा करते हैं शेखी मारने के लिए और जबकि वे अकेले होते हैं तो वे इस तरह इबादत नहीं करते तो वे अल्लाह तआला की बेईज़्ज़ती करते हैं,**" और "**मुझे सबसे ज़्यादा खौफ़ इस बात का है कि कहीं तुम शिर्क अल-अस्ग़री, यानी, छोटा 'शिर्क' या दूसरे शब्दों में छल 'रिया, में न गिर जाओ,**" और "**उन लोगों के लिए जो इस दुनिया में अपनी इबादतें छल 'रिया' के साथ अदा करते**

हैं, उनके लिए योमुलहश्र 'कयामत' में इस तरह फरमाया जाएगाः ओ तुम, बुरे लोग! तुम्हारे लिए आज कोई ईनाम नहीं है। तुम अपनी पूरी दुनियावी ज़िन्दगी में जिनकी इबादत करते आए हो जाओ उनके पास और उनसे ही ईनाम माँगो," और, "**अल्लाह तआलाकहेगाः मेरा कोई साथी 'शरीक' नही है जो कोई भी मेरी अच्छाइयों में साथी था जाओ उससे ही ईनाम माँगो। अपनी दुआएँ पूरी सच्चाई से माँगो! अल्लाह तआला दयानत से की गई दुआएँ कुबूल करता है।**" इबादतें अदा करने का मतलब है अल्लाह तआला की रज़ा हासिल करना। कोई भी इबादत जो किसी की महरबानी या प्यार हासिल करने के लिए की जाए उसका मतलब है उस बंदे की इबादत करना। हमें हुक्म दिया गया है कि हम सिर्फ़ अल्लाह तआला के लिए इबादत करें। एक हदीस शरीफ़ से बयान है; "**अल्लाह तआला किसी के साथ भी राज़ी हो सकता है जो अल्लाह तआला की वहदानियत में यकीन रखते हैं और जो अपनी 'सलवात' और लाज़मी ख़ैरात 'ज़कात' पूरी दयानत से अदा करते हैं।**" रसूलुल्लाह 'सल्ललाहु अलैहि वसल्लम' ने मआज़ बिन जवाल से यमन के गवर्नर के तौर पर भेजने से पहले फरमायाः "**अपनी इबादतें सच्चाई से अदा करो। कोई भी इबादत जो पूरी सच्चाई/दयानत से की जाए चाहे अगर वो मिक़दार में कम ही क्यों न हो, वो योमुलहश्र 'कयामत' में तुम्हारे लिर काफ़ी होगी,"** और "**मुबारकबाद हो उन लोगों को जिन्होने अपनी इबादतें ईमानदारी से अदा कीं। वो रहनुमाई 'हिदायत' के सितारे हैं। वो उकसाए जाने वाले 'फितने' के ज़रिए पैदा हुए अंधेरे को खत्म करता है,"** और दुनियावी चीज़ें जिन्हें शरीअत ने मना किया है वो नफ़रत के लायक हैं। सिर्फ़ वो चीज़ें जो अल्लाह तआला की रज़ा के लिए की जाए वो कीमती हैं।" दुनियावी माल आना जाना है और उसकी मियाद वहुत कम है। इन चीज़ों को अपना ईमान कुर्वान करके हासिल करना वेवकूफ़ी है। सारे आदमी नाकाविल (**आजिज़**) हैं। नहीं तो अल्लाह तआला का फ़ैसला, कोई भी किसी भी शख़्स को कोई नुकसान या साथ नहीं दे सकता है। बंदों के लिए अल्लाह तआला ही काफ़ी है।

एक बंदे को अल्लाह तआला का डर (**खौफ़**) होना चाहिए साथ में उससे रहम की उम्मीद भी होनी चाहिए। उम्मीद (**रज़ा**) डर को बड़ा देता है। कोई भी जो इस हालत को सही मिलाकर रखता है वो अपनी इबादतों से

पूरी आसूदगी पाता है। कुछ आलिमों का कहना है कि जवानों को उम्मीद से ज़्यादा खौफ़ होता है और बड़ों को ज़्यादा उम्मीदें और चाहते होती हैं बनिसबत खौफ़ के। गलत लोगों को आशाएँ और उम्मीद (रज़ा) ज़्यादा होती हैं। एक को रखना बग़ैर दूसरी के यानी, उम्मीद रखना बग़ैर खौफ़ के या खौफ़ रखना बग़ैर उम्मीद के इस बात की इजाज़त नहीं है। पहली हालत का मतलब है कि एक बंदा अपनी उम्मीद खो दे। हदीस अल कूदसी में, अल्लाह ताला ने अपने प्यारे नबी मौहम्मद/मुहम्मद 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' से इर्शाद फरमाया: "**मैं अपने बंदों से उसी तरह मिलता हूँ जिस तरह वो मुझसे उम्मीद करते हैं।**" इसी तरह, कुरआन की सुरत ज़ूमर की तरेप्पन आयत में बयान है, "**अल्लाह अपने बंदों के सब गुनाह मुआफ़ कर देता है। वो मुआफ़ करने वाला और रहम करने वाला है।**" ये सारी बातें हमें बताती हैं कि रहम की उम्मीद खौफ़ से ज़्यादा है। दूसरी तरफ़ ये हदीस "**जो अल्लाह तआला के खौफ़ की वजह से रोता है वो दोज़ख़ में नहीं जाता,**" और, "**अगर तुम्हें वो पता लग जाए जो मुझे पता है, तो तुम जितना रोओ उससे कम हँसो,**" हमें बताती है कि उम्मीद से ज़्यादा खौफ़ होना चाहिए।

10- दुनियावी चाहतें (तूल-ए-अमल)

दिल की बिमारियों में से दसवीं दुनियावी खुवाहिशें/चाहतें (**तूल-ए-अमल**) हैं। एक शख़्स दिल में इस बिमारी के साथ चाहता है कि उसकी ज़िन्दगी लम्बी हो ताकि वो सारी इच्छाएँ, मज़ें और खुशियाँ पा सके। इबादते अदा करने की गर्ज़ से लम्बी ज़िन्दगी चाहना कोई दुनियावी खुवाहिश नहीं है। वो लोग जिन्हें दुनियावी चाहते होती हैं वो अपनी इबादतें बताए गए वक्त पर अदा नहीं करते। वो तौबा [तौबा करने का मतलब है के अपने गुनाहों पर पछताना, और ये ठान लेना वो गुनाह दोबारा नहीं करेंगे; और अल्लाह तआला से माफ़ी की भीख माँगना। अगरचे तौबा माँगने का कोई तरीका नहीं बताया गया, इस्लामी आलिमों ने एक खास दुआ बताई जो कि, उनका कहना है, दोनो के लिए काम आएगी माफी की मदद के लिए और दुनियावीं खतरों और मुसिबतों से बचाव के लिए भी। वो दुआ ये है: "**अस्तखफ़ैरूल्लाह अल अज़ीम अल**

लज़ी लाइलाहा इल्लल्ला होवल हय्युल कय्यूम व अतूबोह इलेहे।"] नहीं करते।उनके दिल घुसने वाले नहीं हैं।उनको मौत याद नहीं है।तालीम और सलाह उन पर कोई असर नहीं डालेगी।मंदरजाज़ेल हदीस शरीफ़ से बयान है: "**अनेक बारे मे हमेशा याद रखो जो चीज़ें खुशीयो को खत्म कर देती हैं,**"और "**मौत के बाद की ज़िन्दगी के हालात जो तुम जानते हो अगर वो जानवर जान जाते, तो तुम्हे कोई भी सही खाया पिया जानवर नहीं मिलता,**" और "**कोई भी जो दिन और रात लगातार मौत को याद रखेगा वो योमुलहश्र 'कयामत' में शहीदों के साथ होगा।**" एक शख़्स जो दुनियावी चाहतें **(तूल-ए-अमल)** रखता है वो हमेशा ये सोचता रहता है के किस तरह दुनियावी माल पर मरतबों को हासिल करूँ और उसी में अपनी ज़िन्दगी बरबाद कर देता है।वो आने वाली दुनिया को भूल जाता है और अपने आपको खुशियों और मौज मस्तियों में ग़र्क कर लेता है।एक शख़्स का अपने खानदान की मदद करना और एक साल का खाने का सामान दिलाना जो के ज़रूरी है वो "तुल-ए अमल" नहीं माना जाएगा यह एक साल का खाना हवाइज्ज-ए असलिया कहलाएगा और उसका शुमार उन चीज़ों में होगा जो ज़िन्दगी के लिए ज़रूरी हैं।इस लिए, लाज़मी खैरात के "निसाव" के हिसाब किताब में नहीं जोड़ा जाता।कोई भी जिसके पास सिर्फ़ इतना पैसा है वो अमीर नहीं हो जाता।एक कुंवारा जिसके पास इतना पैसा नहीं है वो **40** दिन का खाने का सामान भर सकता है।इस पैसे से ज़्यादा का माल भरने का मतलब है अल्लाह तआला में अपना भरोसा (तवक्कुल) खो देना।मंदरजाज़ेल हदीस शरीफ़ से रिवायत है: "**इंसानों में सबसे अच्छा वो है जो लम्बी ज़िन्दगी जिए और अच्छे काम करे,**" और "**इंसानों में सबसे बुरा वो है जो लम्बी ज़िन्दगी जिए और बुरे काम करे,**" और "**मरने की खुवाहिश या दुआ मत माँगो।कबर में बहुत सख्त अज़ाब होगा।लम्बी ज़िन्दगी जीकर** इस्लाम की इताअत करना ये एक बड़ी किस्मत की बात है।और "**इंसान का 2बाल, जो सफ़ेद हुआ जबके उस बाल का मालिक इस्लाम के रास्ते पर बुढ़ा हुआ वो उसके लिए यौमुलहश्र 'कयामत' में नूर (रोशनी) बन जाएंगे।**"

दुनियावी चाहतों की वजह प्यार और दुनियावी खुशियों से लगाव है और मौत की सोच को छोड़ना और जवानी और सेहत में बहुत करीबी भरोसा रखना।एक बंदे को इन वजूहात से छुटकारा पाना होगा।इन दुनियावी चाहतों

से बचने के लिए मौत किसी भी लम्हा आ सकती है और सेहत या जवानी आने वाली मौत को नहीं रोक सकते। आँकड़े के मुताबिक बुढ़े लोगों से ज़्यादा जवान लोगों की मौत का नंबर ज़्यादा है। ये हादसा अक्सर होता है के कई बीमार लोग ठीक हो जाते है जबके कई सेहतमंद लोग बग़ैर किसी खास वजह के अचानक मर जाते हैं। हर एक को चाहिए के दुनियावी ख़ुवाहिशों के खतरनाक असरात को सीखें और मौत को याद रखने के फायदे को जानें। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में इर्शाद फरमाया: "**हमेशा मौत को याद रखो! मौत को याद रखने से तुम गुनाह से पीछे रहते हो और ये तुम्हें उन कामों से भी रोकता है जो मरने के बाद की ज़िंदगी के लिए नुकसानदायक हैं।**" बरा बिन अज़ीब रज़ीअल्लाहु तआला अन्हा सहाबा में से एक ने कहा, "हम एक मय्यत कब्रिस्तान ले गए। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम कब्र के पास बैठ गए और रोना शुरू कर दिया और मिट्टी पर आँसू गिरने शुरू हो गए। उसके बाद आपने फरमाया, "**ऐ मेरे भाइयों! तुमसब इस के लिए तैयार हो जाओ।**" उमर बिन अबदुलअज़ीज़ रहीमाहुल्लाहु तआला ने आलिम को देखने पर, सलाह के लिए पूछा। आलिम ने कहा, "अब तो तुम खलीफ़ा हो। इसलिए, तुम दूसरों को हुक्म दो लेकिन, तुम बहुत जल्द मर जाओगे।" ख़लीफ़ा अबदुलअज़ीज़ ने उनसे और सलाह देने के लिए कहा। तब आलिम ने कहा, "तुम्हारे सारे बुज़ुर्गवारों, यहाँ तक के पहले आदमी और नबी,आदम अलैहिस्सलाम, ने भी मौत को चखा अब तुम्हारी बारी है।" खलीफ़ा लम्बे अरसे तक रोते रहे। मंदरजाज़ेल हदीस-ए-शरीफ़ से रिवायत है, "**इंसानियत को सबक पढ़ाने के लिए, मौत अकेली काफ़ी है। और एक शख़्स के लिए जो दौलत कमाने के लिए बहुत कोशिश करता है, कदा और कदर में ईमान रखना काफ़ी है,**" और "**इंसानों में सब से ज़्यादा होशियार वो है जो मौत को लगातार याद रखे। एक शख़्स जो मौत को याद रखता है वो अक्सर इस दुनिया में इज़्ज़त पाता है और आखरत में भी दरजे हासिल करता है,**" और "**उसको अल्लाह तआला से शर्मिन्दा होना चाहिए। जो छूपी हुई चीज़ें जो किसी दूसरे के लिए छोड़ी गई हैं उसके लिए किसी का वक्त बरबाद नहीं करना चाहिए। जिस चीज़ को हासिल करना मुमकिन न हो उसे हासिल करने की कोशिश नहीं करनी चाहिए। अपनी ज़रूरत से ज़्यादा अधिक इमारतों को बनाने**

में अपनी ज़िन्दगी बरबाद नहीं करनी चाहिए," और "**किसी को अपना घर ऐसे बनाने वाले समान से नहीं बनाना चाहिए जो हराम** (इस्लाम के ज़रिए मना की गई) **तरीकों से हासिल किया गया हो। अगर ऐसा करते हो तो इसका मतलब है अपना भरोसा और दुनियावी ज़िन्दगी दोनो को बरबाद करते हो।**" जब रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने सुना के आपके प्यारे साथी उसामा बिन ज़ैद रज़ीअल्लाहु तआला अन्हुमा ने एक गुलाम सौ सोने के सिक्के में खरीदा और तीस दिन बाद उसकी अदाएगी करेंगे, आपने फरमाया, "**क्या इससे तुम्हें तअज्जुब नहीं हुआ? उसामा तूल-ए-अमल का आदमी बन गया।**" अपनी ज़िन्दगी की ज़रूरत की चीज़ों को उधार के ज़रिए खरीदने की इजाज़त है। एक दूसरी हदीस-ए-शरीफ़ में रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमाया, "**कोई भी जो जन्नत में जाना चाहे उसे दुनियावी खुवाहिशें नहीं होनी चाहिए। अपने आपको दुनियावी कारोबार और अपने काम में मसरूफ होने से वो मौत को नहीं भूल सकता। अल्लाह तआला (की मौजूदगी) उसे हराम काम** "वो काम जो इस्लाम ने मना किए हैं" **करने में शर्म दिलाएंगे।**" इस बात की मनाही है के मना की गई खुशियों को हासिल करने के लिए लम्बी ज़िन्दगी की इच्छा की जाए। हाँलाकि, ज़िन्दगी में जिन खुशियों का मज़ा लेने की इजाज़त है उनके लिए दुनियावी चाहतें "तूल-ए-अमल" करना मना नहीं है, लेकिन ये एक अच्छी कोशिश नहीं है। हमें लम्बी ज़िन्दगी की आरज़ू नहीं करनी चाहिए,बल्कि इसके बजाए सेहतमंद और खुशहाल ज़िन्दगी की खुवाहिश करनी चाहिए।

11- दुनिया परस्ती (तमा) हासिल करने के लिए हराम ज़राए इस्तेमाल करना

दिल की ग्यारवीं बीमारी में से एक है "तमा"। दुनियावी खुशियों को मुमानियत तरीके से तलाश करके पूरा करने को "तमा" कहते हैं। बंदों से किसी चीज़ की उम्मीद रखना "तमा" की सबसे खराब किस्म है। फ़ाज़िल नमाज़ें **(नफ़ीला)** अदा करना भी तमा है, जब वो किसी के गरूर और तकब्बुर की वजह बनता है। इसलिए "मुबाह" अदा करना भी तमा है जब वो किसी को

दूसरी दुनिया/आखरत भूला दे। तमा' का उलटा है "तफ़वीज़", जिसका मतलब है के जाइज़ और फ़ाएदेमंद चीज़ों को हासिल करने की कोशिश करना और ये उम्मीद रखना के अल्लाह तआला हमें वो लेने देगा।

शैतान इंसानों को छल को सच्चाई की तरह और तमा को तफ़वीज़ की तरह दिखा कर धोखा देता है। अल्लाह तआला ने हर इंसान के दिल के लिए एक फरिश्ता मुकर्रर किया है। ये फरिश्ता उस इंसान के दिल में अच्छे खयालात **(इल्हाम)** डालता है। दूसरी तरफ़ शैतान एक शख़्स के दिल में बुरी सोंचे **(वसवसा)** डालता है। जो कोई भी जाइज़ (हलाल) खाना खाता होगा वो अच्छी सोच और बुरे संकेतो में फर्क कर लेगा। इसके उलट, जो कोई मुमानिअत (हराम) खाना खाता है वो इस काबिल नहीं होता के दोनो के बीच में कोई फर्क कर सके। एक शख़्स का नफ़ज़ भी उसके दिल में बुरे ख्यालात या संकेत या इच्छाएँ "**हवा**" कहलाती हैं। अच्छी सोचें और बुरी राए जारी नहीं रहतीं लेकिन ख्वाहिशें **(हवा)** लगातार रहती हैं, और वो वक़्त के साथ साथ बड़ती रहती हैं। जब तुम दुआ और **(ज़िकर)** करते हो तो बुरे ख्यालात कम होते हैं और आखिर में खत्म हो जाते हैं। नफ़ज़ की खुवाहिश कभी कम नहीं होती और आखिर में वो खुद की कढ़ी लड़ाई **(मुजाहदा)** को खत्म कर देता है। शैतान एक कुत्ते की तरह होता है। जब उसका पीछा किया जाता है तो वो भाग जाता है लेकिन बाद में वो दूसरी सिमत से वापस आ जाता है। नफ़ज़ एक चीते की तरह है इसका हमला उसको दाएरे में रखकर ही रोका जा सकता है। शैतान जो इंसानों को बुरे ख्यालात देता है उसे "हन्नास" कहते हैं। अगर इंसान शैतान उस ख्याल को छोड़कर दूसरे बहकावे के साथ शुरू हो जाता है। नफ़ज़ हमेशा तबाही वाले और बुरी चीज़ों को करना चाहता है। शैतान एक इंसान को बहुत फ़ाएदे और इस्तेमाल किए जाने वाले कामों को करने से रोकता है, और उसे कम फ़ायदे वाली चीज़ें करवाता है। उसको बड़े गुनाह के लिए बहलाने के लिए वो उसके अंदर मामूली सा अच्छा काम करने के लिए उकसाता है। वो मामूली सा अच्छा काम जो उस शैतान के इशारे पर वो आदमी पूरा काम करता है उसे बहुत अच्छा लगता है और वो उसे जल्दी पूरा करने की इच्छा करता है। इस वजह से, रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमाया "जल्दी शैतान के ज़रिए जलाई जाती है। मंदरजाज़ेल पाँच चीज़ें इस पैमाने से

बाहर हैं: "**बेटी की शादी करने में जल्दी करना, अपना कर्ज़ा वापस करने में जल्दी करना, मैय्यत को दफ़नाने में जल्दी करना, मेहमान को खाना खिलाने में जल्दी करना, और एक गुनाह करने पर माफ़ी माँगने में जल्दी करना।**" मंदरजाज़ेल हदीस शरीफ़ **इशात-उल-लमात** की किताब के उस हिस्से में लिखी हुई है जिसमें रोज़ाना की इबादतों (जिन्हें नमाज़ कहते हैं) (जब तक के उसका बताया गया वक़्त पूरा हो जाए) को मुलतवी करने की खराब बात को समझाया गया है, वो इस तरह पढ़ा जाएगा, "**ऐ अली! तीन मंदरजाज़ेल चीज़ों को कभी मुलतवी मत करो! 'सलात' की इबादत उसके बताए गए वक़्त में अदा करो!मुसलमान मैय्यत जब दफ़नाने के लिए तैयार हो जाए! एक लड़की या विधवा की शादी जल्दी कर दी जाए जब उनके लायक कोई शादी का रिश्ता आ जाए।**" "पूरी काबलियत के साथ" मुहावरे का इस हदीस शरीफ़ में उस आदमी का हवाला दिया गया है जो रोज़ाना की (पाँच) (नमाज़ें या सलात) इबादतें अदा करता हो, जिसने कोई गुनाह न किया हो और जो जाईज़ तरीके से पैसा कमाता हो।एक फरिश्ते के ज़रिए जो अच्छी चीज़ों की सोच मिली उसे अल्लाह तआला के डर के साथ करना चाहिए बग़ैर जल्दी किए या नतीजों को ध्यान से देखे बगैर।रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने मंदरजाज़ेल हदीस शरीफ़ में इस तरह इर्शाद फरमाया: "**एक सोच जो एक फरिश्ते के ज़रिए आए उसकी इस्लाम के साथ सहमती है।बुरी सोच 'वसवसा' जो शैतान के ज़रिए डाला जाए वो उसको इस्लाम से परे कर देता है।**" एक को चाहिए के वो अच्छी चीज़ों के लिए कोशिश करे और अपने नफ़ज़ के खिलाफ़ लड़े और ऐसा न हो की शैतान की बुरी सोचों में वो शामिल हो जाए।एक शख़्स जो अपने नफ़ज़ की ख़ुवाहिश को मानता है वो शैतान के बुरे खयालात भी मानेगा।जो अपने नफ़ज़ की ख़ुवाहिशों को नहीं मानते उनके लिए बारी बारी अच्छे खयालात को जो के एक फरिश्ते के ज़रिए आए आगे ले जाना बहुत आसान है।रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ में इर्शाद फरमाया: "**शैतान दिल में बुरी ख़ुवाहिशें 'वसवसा' डालता है।जब अल्लाह का नाम ज़िकर किया जाता है,** (यानी,अल्लाह तआला को याद किया जाता है और उसका नाम लिया जाता है,) **तो शैतान भाग जाता है।नहीं तो, वो अपने मश्वरों के साथ कायम रहता है।**" [ये हदीस शरीफ़ हमें बताती है के

ज़िकर करना ज़रूरी है।] जो दिल में चीज़ें आती हैं वो या तो शैतान की बुरी सोचें होती हैं या एक फरिश्ते की अच्छी सोचे हैं।चाहे वो किसी भी खसलत की हों, वो इस्लाम के मुकाबले के साथ मुआएना की जाएंगी, अगर ये तरीका नाकाम हो जाए, तो एक बंदे को ये जानने के लिए के क्या ये एक अच्छी सोच है या एक बुरी सोच है इसके लिए एक सच्चे आलिम से सहारा लेना चाहिए।एक बंदे को अकली आलिमों से जो सिर्फ़ पैसे या दुनियावी पदों के लिए मज़हब का कारोबार करते उनसे नहीं पूछना चाहिए।उसको एक असली, पक्के "शैख" या एक सही रूहानी रहनुमा (**मुर्शीद-अल-कामिल**) जिसके सारे उस्ताद जाने माने और पक्के सही रूहानी रहनुमा हों और जिनकी मुसलसल कड़ियाँ रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' से जूड़ी हुई हों।अल्लाह तआला के दोस्त जिन्हें "**कुतब-अल-मदार**" कहते हैं अगरचे वो शुमार में कम हैं, लेकिन वो कयामत तक मौजूद रहेंगे।जानकारी के रहनुमा (**कुतब-अल-इर्शा द**) जो अहले-सुन्नत के इस्लामी आलिम और एक मुकम्मल रूहानी रहनुमा हैं वो हमेशा हर तरफ़ मौजूद नहीं होते।इस ताकत के आलिम बहुत कम हैं, और उनके बाद में बहुत लम्बा वक्फ़ा है।एक को ये नहीं मान लेना चाहिए के ये रहनुमा (नकली शैख) जो हर वक़्त हर जगह मौजूद हैं वो उन सच्चे मुकम्मल रूहानी रहनुमाओं की तरह हैं।हर एक को बहुत ज़्यादा चौकन्ना रहना है ऐसा न हो की वो उन झूठे रहनुमाओं (**नकली शैखो**) के ज़रिए भटक जाएँ और अपनी इस दुनिया की और आने वाली दुनिया की खुशियों को खो दें।चीज़ें जो दिलों में आती हैं वो नफ़ज़ पर बड़ी नागवार गुज़रती हैं अगर वो इस्लाम के मुताबिक हैं या अगर वो एक फरिश्ते के ज़रिए आई हैं।दूसरी तरफ़,अगर उसके नफ़ज़ को वो सब चीज़ें अच्छी लगती हैं और वो उन्हें जल्दी में करना चाहता है, तब मालूम होता है के वो शैतान से आई हैं और वो बुरी चीज़ें हैं।

शैतान के पास बहुत सारी चाले हैं।दस उनमें से मश्हूर हैं:

पहली: शैतान एक शख़्स से कहता है के अल्लाह तआला को उसकी इबादत की ज़रूरत नहीं है।उसको सूरह बक़रा की बासठवीं आयत याद रखनी चाहिए जिसका मतलब, "**... और कोई भी जो अल्लाह तआला में और**

आखरी दिन/आखरत में यकीन रखता है, और सही काम करे, उन्हें इनाम मिलेगा..." **(2-62)**

दूसरी: शैतान एक शख़्स से कहता है के अल्लाह तआला रहम करने वाला है और माफ़ करने वाला है और इसलिए वो तुम्हें माफ़ कर देगा और जन्नत में जाने देगा। उसे कुरआन अल-करीम की सूरह लुक्मानकी तैतीसवीं आयत को याद रखना चाहिए जो फरमाती है, "**अल्लाह तआला की मेहरबानी से बह मत जाओ,**" और कुरान अल करीम की सूरह मरयम की तरेसठवीं आयत के मुताबिक, "**हम सिर्फ उन्हें ही जन्नत में भेजेंगे जिनके दिलों में अल्लाह का खौफ़ हो।**"

तीसरी: शैतान तुमसे कहेगा "तुम्हारी इबादतें या काम सब खराब और छल से भरे हुए हैं और इसलिए तुम वो शख़्स नहीं हो जो अल्लाह से खौफ़ खाओ। अल्लाह तआला ने कुरआन अल-करीम की सूरह मैदा में फरमाय है, '**अल्लाह सिर्फ उन लोगों की इबादतें कुबूल करता है जिनके दिलों में अल्लाह का खौफ होता है।**' इसलिए, तुम्हारी इबादतें कुबूल नहीं की जाएंगी और तुम ये सब किसी के लिए नहीं कर रहे और तुम उस जानवर की तरह सहन कर रहे हो जिसे उसका मालिक बग़ैर किसी वजह के कोड़े मार रहा है।" तुम्हे शैतान को इस तरह जवाब देना चाहिए के तुम अपनी इबादतें इसलिए अदा करते हो ताकि तुम सज़ा से बच सको और अल्लाह तआला के हुकम बचा लाओ, और ये के तुम्हारा फर्ज़ है के जो तुम्हें हुकम दिए गए हैं उनको मानो और चाहे अदा की गई इबादतें कुबूल हों या नहीं ये अल्लाह तआला का काम है और यह के इस बात की ज़मानत है के जो इबादतें उसके उसूलों और उसके "**फर्ज़**" के मुताबिक की जाएँ वो कुबूल की जाती हैं। लाज़िमी फराईज़ को अदा न करना एक बड़ा गुनाह है। एक को चाहिए के वो इन लाज़िमी फराईज़ को अदा करे ताकि वो इस बड़े गुनाह को करने से बच जाए। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**कोई भी जिसके पास इल्म हो वो अपने नफ़ज़ की खुवाहिशों में नहीं पड़ता और इबादतें अदा करता है। बेवकूफ़, हाँलाकि, अपने नफ़ज़ की खुवाहिशों में पड़ जाते हैं और तब अल्लाह तआला की माफ़ी की उम्मीद रखते हैं।**" वो चीज़ें जो आने

वाली दुनिया के लिए ज़रूरी हैं उनकी तैयारी इसी फना होने वाली दुनिया में करनी चाहिए।

चौथी: शैतान एक शख़्स को इबादत करने से ये कहकर रोकने की कोशिश करता है के उसे अभी अपनी जवान ताकत को पैसा कमाने में लगाना चाहिए, और बाद में, अपने लिए एक अरामदायक ज़िन्दगी का मेयार बनाने के बाद तुम अपनी इबादतों के काम कर सकते हो। उसे शैतान को इस तरह जवाब देना चाहिए के किसी को नहीं पता के कब वो मर जाए। हर किसी के मरने के वक़्त को अल्लाह तआला ने कभी न खत्म होने वाली माज़ी में बता दिया था। हो सकता है की किसी की मोत बहुत करीब हो; इसलिए, उसको इबादतों को उनके मुकर्रर वक़्त में जल्दी अदा कर देना चाहिए। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में इर्शाद फरमाया: "**हलाकल मूसाववीफून,**" जिसका मतलब है जो आज का काम कल पर छोड़ते हैं वो हार जाते हैं।

पाँचवा: जब शैतान एक शख़्स को उसकी इबादतें अदा करने से नहीं रोक पाता तो वो उससे कहता है, "जल्दी करो! सलात की इबादत में देरी मत करो!," या "देर मत करो!" ऐसा करके वो, उसे अपनी इबादत सही तरीके से और उसके उसूलों के मुताबिक करने से रोकता है। उसको शैतान को इस तरह जवाब देना चाहिए के यहाँ पर सिर्फ़ कुछ ही लाज़िमी इबादतें हैं। इसलिए, उसको उन सबको सही हालतों में अदा करना चाहिए। उसको और जाते हुए शैतान को बताना चाहिए के थोड़ी सी नफ़ील (फ़ाज़िल) इबादतें जो उसके बताए गए तरीके के मुताबिक अदा की जाए वो उन ज़ाइद इबादतों से अच्छी हैं जो सही तरीके से अदा न की जाएँ।

छठी: शैतान उसको कोशिश करेगा के वो छल करे ये कहकर के वो इस तरह अपनी इबादतें खुबसूरती के साथ अदा करे के हर कोई उसकी खुबसूरती को सराहें। उसको इन मश्वरों का इस तरह जवाब देना चाहिए के "कोई भी अपने आपको अच्छाई या नुकसान पहुँचाने के लायक नहीं है। तभी से ये मिसाल है, दूसरे को नुकसान पहुँचाना या उसके साथ अच्छाई करना ये बस से बाहर है। इसलिए, ये बेवकूफ़ीहोगी, के जिनके पास कोई ताकत नहीं है

ऐसे लोगों से कोई उम्मीद रखना। सिर्फ़ अल्लाह तआला अकेला लोगों को अच्छाई या नुकसान दे सकता है। इसलिए, अल्लाह एक शख़्स की इबादतें देखकर उसके साथ अच्छा हो जाता है।"

सातवीं: "जब शैतान ये समझ जाता है के वो एक शख़्स को उसकी इबादतें करने से नहीं रोक सकता, तो वो उसे अपनी इबादतों की खुदी का मश्वरा देता है। शैतान उस से कहता है के तुम कितने खबरदार और तेज़ हो इसके साथ ही वो कहता है जब हर कोई इस असलियत से बेखबर है, वो अपनी इबादतें अदा कर रहा है। तब उसे इस तरह जवाब देना चाहिए के अकलमंदी, खबदारी और होशियारी उसमें अपने आप नहीं आई है बल्कि ये सब अल्लाह तआला की देन है। अगर अल्लाह तआला की उस पर इनायत नहीं होती तो वो एक भी इबादत अदा करने के काबिल नहीं होता।

आठवीं: शैतान एक शख़्स के दिल में छुपा हुआ छल डाल/शर जगाने के लिए मश्वरा देगा के उसे अपनी इबादतें राज़दारी से अदा करनी चाहिए ताकि अल्लाह तआला दूसरों के दिलों में उसके लिए प्यार और इज़्ज़त वाली जगह बनाएँ। एक शख़्स जिसे ये सब इशारे मिलें उसे शैतान को इस तरह जवाब देना चाहिए, "में अल्लाह तआला का गुलाम हूँ और वो मेरा मालिक है। वो चाहे तो मेरी इबादतें कुबूल करले या उन्हें नकार दे। ये मेरा काम नहीं है के वो मेरा प्यार दूसरों के दिल में रखे या न रखे।"

नवीं: शैतान एक शख़्स को ये कहते हुए राए देता है, "तुम इबादतें क्यों अदा करते हो? ये तो पहले से ही तय हुआ है के एक शख़्स खुशी वाला शख़्स (**सईद**) होगा जो के जन्नत में जाएगा या बदकिस्मत शख़्स (**शकी**) जो के दोज़ख़ में जाएगा। इस वजह से, जो भी खुशी वाला शख़्स होगा, उसकी गलतियाँ भी माफ़ करदी जाएगी जब वो कोई गुनाह केरगा, इबादते अदा न करके, और उसके बावजूद वो जन्नत में दाखिल होगा। एक शख़्स जो के पहले से तय किया गया है के वो बदकिस्मत शख़्स है वो पक्के तौर पर दोज़ख़ में जाएगा चाहे वो कितनी भी इबादत करले। इसलिए, अपने आपको बेकार में मत थकाओ! आराम से रहो!" जिनकी इस तरह के इशारे मिलें वो इस तरह जवाब दें, "मैं अल्लाह तआला का गुलाम और एक गुलाम का फर्ज़ है वो

अपने मालिक के हुकम को पुरा करे।"अगर शैतान इस तराह कहते हुए मुखालफ़त करे, "अगर इबादत न करने के लिए सज़ा मिलने का डर हो तो इस सिलसिले में, एक शख़्स के लिए ज़रूरी हो जाता है के वो इबादत करे। लेकिन एक खुशवाश शख़्स के लिए सज़ा का कोई डर नहीं है।" उस शख़्स को इस तरह जवाब देना चाहिए, "मेरा मालिक सब चीज़ें जानता है और वो जो चाहेगा वो करेगा। वो जिसे चुने उसे चाहे तो खुशियाँ दे दे या परेशानियाँ दे दे किसी को ये हक़ नहीं है के उससे पूछे के उसने ये क्यों किया या वो क्यों किया।" शैतान ने अपने आपको जिसस (ईसा) अलैहिस सलाम पर ज़ाहिर किया और उनसे कहा, "आपके कहना का मतलब है के जो चीज़ें अवदी माज़ी में हैं वो पास होने वाली हैं?" ईसा अलैहिस सलाम ने जवाब दिया, "हाँ, बेशक यही वजह है।" तव शैतान ने कहा, "अगर ये वजह है, तो जाओ और पहाड़ की चोटी से छलाँग लगालो अगर ये अवदी माज़ी/तुम्हारी किस्मत में लिखा होगा के तुम्हे कोई नुकसान नहीं पहुँचेगा, तो तुम्हारा कोई नुकसान नहीं होगा!" ईसा अलैहिस सलाम ने जवाब दिया, "ऐ तू, लानत भेजे गए! अल्लाह तआला अपने गुलामों/वंदो को आज़माता है। एक वंदे को ये हक़ नहीं है के वो अपने मालिक को आज़माए।" एक शख़्स को अपने आपको इन फ़ितना भरी बातों से बचाने के लिए मंदरजाज़ेल कहना चाहिए: "अगर मेरी किस्मत में लिखा हुआ है के मैं खुशकिस्मतों में से एक हूँ तब मेरे लिए ये ज़रूरी है कि अपना ईनाम और मरतबा बढ़ाने के लिए मैं ज़्यादा इबादत करूँ। अगर में बदकिस्मतों में से हूँ तो मुझे उनकी सज़ाओं से बचने के लिए ज़्यादा इबादत करनी चाहिए।" उसको अपने आप से इस तरह कहना चाहिए, "इबादत अदा करना मेरे लिए कोई नुकसान लेकर नहीं आएगी। बेशक अल्लाह तआला जानने वाला (हकीम) है। इसलिए, उसकी अक्ल को ये ज़ैब नहीं देता कि वो उस शख़्स को सज़ा दे जो उसकी वजह से इबादत अदा कर रहा है। अगरचे एक खुशकिस्मत शख़्स को इबादत न करने से कोई नुकसान नहीं हो रहा, दूसरी तरफ़, ये उसे कोई फ़ायदा भी नहीं पहुँचा रहा। बहरहाल, किस तरह एक खुशकिस्मत शख़्स ये पसंद कर सकता है कि वो इबादत न करे? कोई जिसके पास भी सबब है वो ऐसी इबादत करेगा जिससे उसे फ़ायदा हो और उन चीज़ों से दूर रहेगा जो नुकसान देने वाली होगीं। अगर ये मेरी किस्मत में लिख दिया गया था के मैं

बदकिस्मतों में से एक हूँ, तब भी मैं एक ऐसा फरमाबरदार बंदा बनना चाहूँगा जो बजाए उसके जो दोज़ख़ में भेजा गया क्योंकि अल्लाह तआला की नाफ़रमानी की। इसके अलावा, अल्लाह तआला ने वादा किया है के जो इबादत करेंगे उन्हें वो जन्नत में जगह देगा और जो इबादत नहीं करेंगे उन्हें वो सज़ा देगा और दोज़ख़ में जगह देगा। बेशक अल्लाह तआला अपना वादा याद रखेगा। ये साबिक़ आलिमों के इतेफ़ाकसे पता चला है के वो अपने वादे से नहीं फ़िरता।" अल्लाह तआला ने सब चीज़ों को किसी न किसी बिना पर बनाया है। ये उसकी आदत-ए-इल्लाहिया (तस्सबुब का आलमी कानून) है। वो अपनी इस तस्सबुब का आलमी कानून को कुछ खास मिसालों में रोक देता है जैसे के मुअजिज़ात और करामात। [अल्लाह तआला अपने इस तस्सबुब के आलमी कानून को रोक देता है जब वो अपने प्यारे नबियों और औलिया को गैर मामूली वाक्यों और अजूबों, या मुअज़िज़े के साथ मज़बूत बनाता है। जब एक चमत्कार एक नबी के ज़रिए होता है, तो हम उसे **मोअजिज़ा** (जमा-मोअजिज़ात) कहते हैं; जब ये अल्लाह तआला के प्यारे बंदे, जिसे **वली** (जमा. औलिया) कहते हैं, उनके ज़रिए हो तो उसे **करामत** (जमा. करामात) कहते हैं।) उसने हमें आगाह कर दिया के इबादत जन्नत में दाखिल होने की सवारी है। दूसरे लफ़ज़ों में, उसने जन्नत को इबादात के ईनाम के तौर पर रहमत फरमाया। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में इर्शाद फरमाया: "**अपनी की गई इबादतों के सबब से कोई भी जन्नत में दाख़िल नहीं होगा।**"कोई चीज़ जो ईनाम के तौर पर दी जाए उसे गलती से ये नहीं समझ लेना चाहिए के वो उसकी कोशिशों की वजह से मिला है।

दसवीं: शैतान एक शख़्स से कहता है, "अगर ये एक शख़्स की तकदीर में है के वो इबादत अदा करे, तो, वो शख़्स इबादत करेगा। अल्लाह तआला का हुक्म नहीं बदलेगा। इंसान अल्लाह तआला का हुक्म मानने के लिए मजबूर है, इसलिए वो या तो इबादत करते हैं या फ़िर इबादत नहीं करते, ये सब अल्लाह तआला के अबदी हुक्म पर मुबनी है।" शैतान के ये मश्वरे उसके साबिका मशवरों से मिलते हुए हैं। इसके मुताबिक, वो जिन्हें तकदीर ने खुश बताया है वो इबादत करने के लायक हैं, और उनके लिए ये ज़रूरी है के जिन्हें तकदीर में बदकिस्मत बताया गया है वो इबादत न करें। उसको शैतान के इस

फरेब का इस तरह जवाब देना चाहिए: इसके बावजूद के अल्लाह तआला ने सब चीज़ें बनाई इंसानों की अच्छी और बुरी हरकात भी इसमें शामिल हैं, उसने इंसानों और जानवरों को थोड़ी मिक़दार में कुछ करने का **अज़म (इरादा अल जूज़िया)** दिया है। इस तरह का अज़म इंसानों के ज़रिए किया जाता है, लेकिन ये अज़म की मशकत इस बयान के साथ समझाई नहीं जा सकती के इंसान कुछ बना सकते हैं, क्योंकि ये अज़म बाहरी कायनात में (इंसानों के अलावा चीज़ें) मौजूद नहीं होता। ये इंसानों के दिलों में मौजूद होता है। जब कोई चीज़ बाहरी कायनात में आती है तब वो तखलीक होती है। इसके बरअक्स, अल्लाह तआला की कादिर मुतलक मरज़ी (जिसे **इरादा-ए-कुल्लिया** कहते हैं) खुद की असलियत की तरह मौजूद है। अल्लाह तआला ने आदमी के थोड़े से अज़म को उसकी हरकात को बनाने के लिए किया। अल्लाह तआला आदमी की कोशिश के बग़ैर भी बना सकता था लेकिन ये उसकी आलमी आदत है के आदमी की अपनी कोशिश के ज़रिए वो चीज़ें बनवाता है। ताहम, कई बार ये छूट है वो ये के वो अपनी इस आदत को रोक देता है अपने प्यारे नबियों अलैहिम-उस-सलावात व-तसलीमात और अपने (अज़ीज़ बंदे जिन्हें कहते हैं) औलिया कददस अल्लाहु तआला असराखुम-अल-अज़ीज़ के लिए,नवाज़े गए लोगों के ज़रिए वो अपने तस्सवुब के आलमी कानून को रोक देता है और गैर मामूली वाक्यात करवाता है। इन वाक्यात को मोअजिज़ात कहा जाता है।

आदमी की (मुख्तसर कोशिश) इरादा-ए-जूज़िया उसकी हरकात को असरदार बनाने के लिए अकेली हकीकत नहीं है। दूसरे लफ़्ज़ों में, जो कुछ इंसान सोचता है वो बन नहीं जाता। ना ही ये एक रसमी तरीका है अल्लाह तआला का जो वो चाहता है उसको बनाने का। इस वजह से, इंसानों को किसी भी तरह से उनकी हरकातों में नहीं डाला जा सकता। इंसानी मखलूक अपनी मरज़ी का इस्तेमाल करते हैं जब वो कुछ करना चाहते हैं। अगर अल्लाह तआला भी उसका हुक्म दें, तो वो हरकत हकीकत बन सकती है। शैतान इंसानों को ये कहकर वरग़लाता है, "एक इंसान इबादत अदा करता है अगर अल्लाह तआला की मरज़ी हो, और वो इबादत अदा नहीं करेगा अगर अल्लाह तआला न चाहे। इसलिए, आदमी को अपनी हरकात करने के लिए या न करने के लिए कोशिश कराई जाती है। इससे कोई मतलब नहीं है के एक इंसान काम

करता है के नहीं। कदा और कदर का हुक्म जो तकदीर में है वो असलियत में हो जाता है।" ये सही है के इंसानों की हरकात उनकी तकदीर के मुताबिक अमल में आती हैं लेकिन, उनको अमल में लाने के लिए, इंसानों को अपने होसले का इस्तेमाल करना होगा। दूसरे लफ़्ज़ों में, एक इंसान अपनी मरज़ी से इंतेखाब कर सकता है और जो चीज़ करना चाहता है वो पसंद कर सकता या फिर उसको नहीं भी पसंद कर सकता है। लाज़वाल हुक्म का मतलब है के अल्लाह तआला अपने वेइंतेहा इल्म और अकल के ज़रिए जानता है के कितना एक शख़्स अपने महदूद होसले का इस्तेमाल कर सकता है और हुक्म मानता है उसके मुताविक और ये सब (एक खास किताव जिसे) **लोह-इल-महफूज़** कहते हैं में लिख दिया है। चूँकि ये साफ़ मसला है, के कोई चीज़ को करने लिए कोई ज़वरदस्ती नहीं की जा रही है। अगर किसी को पता चल जाए के वताए गए दिन में दूसरा शख़्स क्या करेगा और हुक्म देगा के वो ये सव हरकात करे और उसकी सारी जानकारी एक कागज़ के टुकड़े पर लिख दे, तो वो शख़्स जिसने वो सब हरकात कीं वो ये दावा नहीं कर सकता के उसे ये सब करने के लिए ज़ोरज़बरदस्ती की गई। वो ये कहकर शिकायत नहीं कर सकता, "तुम जानते थे मैं क्या करने वाला हूँ। तुम मुझ से वो सब हरकात करवाना चाहते थे। इसके अलावा तुमने उन्हें एक कागज़ के टुकड़े पर भी लिखा। इसलिए, तुम उन सब हरकात का सबब बने जो मेने कीं!" इसलिए, वो सारी हरकात अपने होसले की बदोलत करता है, न कि इसलिए क्योंकि दूसरा शख़्स उन्हें जानता हो और चाहता है कि वो उसे अदा करे और उन्हें एक कागज़ के टुकड़े पर लिखे। इसी तरह, अल्लाह तआला का इल्म और हुक्म और उसका लोह-इल-महफूज़में तहरीर करना उसकी मखलूक पर दवाओ बनाना नहीं होता। अल्लाह तआला तकदीर में जानता है के एक खास शख़्स ये हरकत ज़रूर करेगा और इसलिए हुक्म देता है के वो ये हरकात करे और उन्हें लोह-इल-महफूज़ में लिख देता है। उसकी तकदीर का इल्म उन हरकात पर मुवनी है जो उस शख़्स ने महदूद होसले के ज़रिए इस्तेमाल की। इसलिए, एक शख़्स की हरकात उसके इल्म, इच्छा/होसले और तखलीक के ज़रिए अमल में आती हैं। अगर एक शख़्स अपने होसले का इस्तेमाल नहीं करता, अल्लाह तआला को पहले से पता होता है के वो अपना होसला इस्तेमाल नहीं करेगा और इस लिए वो हुक्म देता है

और न ही तखलीक करता है, इसके कहने का मतलब है के इल्म जानी हुई चीज़ों पर भरोसा करता है। अगर इंसानों के अंदर अज़म नहीं होता और अगर उनकी हरकात सिर्फ़ अल्लाह तआला की मरज़ी के ज़रिए चलतीं, तब वो कह सकता है के इंसानों को उनकी हरकात में ताकत दी गई। (सिर्फ़ इतेकाद की तालीमात का सच्चा इस्लामी स्कूल जिसे कहते है) अहल-अस-सुन्नत के मुताबिक इंसानों की हरकात दो ऐसे अमल के ज़रिए वजूद में आती हैं जो दरजे में एक दूसरे पर सबकत रखते हैं: (महदूद) ताकत (मरज़ी की) जो इंसानों के ज़रिए मशकत की जाती है: और (बेइंतेहा) ताकत (तखलीक की) अल्लाह तआला जिसका मालिक है।

[इंसान का रूहानी दिल (**क़ल्ब**) किसी मादा शै से नहीं बना है। ये एक बरकी या मकनातीसी लहरे हैं। ये कोई जगह नहीं घेंरती। लेकिन, इसकी ताकत और असर इंसान के सीने के उल्टी तरफ़ जो मादा शै दिल है उस पर आती है। अक़्ल (समझदारी), नफ़्ज़ और रूह (जान) भी रूहानी दिल (क़ल्ब) की तरह अलग असलियते हैं। ये तीनों असलियते रूहानी दिल से जुड़ी हुई हैं। इंसानों के हवास खमसा जैसे आँखे, कान, नाक, मुँह और ज़िल्द रंगो, आवाज़, महक, मज़ा और ठंडा या गरम महसूस करते हैं, और इन तासिर को निज़ामे असाब के ज़रिए दिमाग़ तक पहुँचाया जाता है। दिमाग़ जैसे ही इनको कुबूल करता है वैसे ही इनको दिल की तरफ़ कर देता है। अक्ल, नफ़्ज़, रूह की खुवाहिशों और तमन्नऐं और शैतान भी रूहानी दिल में दाखिल हो जाता है। क़ल्ब अपने अज़म का इस्तेमाल करता है और उनमें से एक को चुनता है और फैसला करता है। ये या तो उन दो में से एक की राय को मना और खत्म करता है, या उनको कुबूल कर लेता है और उसका राबता दिमाग़ से जोड़ता है, और दिमाग़ इन सबको खमसा तकअसाबी हरकात के ज़रिए पहुँचाता है। खमसा, बदले में हरकत करते हैं और अल्लाह तआला अगर चाहे और इन अज़ा को ताकत दे तो वो फैसला किए हुए अमल को अदा करते हैं। इस तरह, जो अमाल क़ल्ब के ज़रिए चुने या फ़ैसला किए जाते हैं वो हकीकत में आते हैं।]

12- तकब्बुर किब्र

दिल की बारहवीं बीमारी तकब्बुर है। तकब्बुर वो होता है जो एक शख़्स अपने आप पर रखता है और खुद को दूसरो से ऊँचा समझता है। इस बीमारी के साथ शख़्स अपने दिल में मुतमईन होता है जब वो अपने आपको दूसरों से ऊँचा समझता है। उजब (खूदी) भी एक बरतरी का एहसास है। इस मिसाल में एक शख़्स अपने आपको किसी खास शख़्स या लोगों से अपने को बरतर नहीं समझता बल्कि आमतौर पर इसका मतलब है वो अपने आपको और काम को बरतर समझता है। तकब्बुर एक ग़ैर मंज़ूर खसलत है और मना **(हराम)** की गई है। ये अपने पैदा करने वाले, रब को भूलने की निशानी है। बहुत सारे मज़हबी लोग इस बीमारी में मुबतला हैं। रसूलुलाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**एक शख़्स जिसके दिल में एक ज़र्रे के वज़न के बराबर तकब्बुर होगा वो जन्नत में दाखिल नहीं होगा।**" तकब्बुर का उलटा तवाहदो है, जो बराबरी का अहसास है। एक आजिज़ शख़्स अपने आपको सब के बराबर समझता है। वो अपने आपको दूसरो से बरतर या अदना नहीं समझता। आजज़ी इंसानों की एक कीमती ख़सलत है। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**आजिज़ लोगों के लिए ये कितनी खुशकिस्मती है।**" एक आजिज़ शख़्स अपने आपको दूसरों से अदना नहीं समझता। ना तो वो नाकारा है न ही वो सुस्त है। वो अपनी रोज़ी जाइज़ **(हलाल)** ज़रिए से कमाता है और वो दूसरों को ज़्यादा खैरात में दे देता है या तौहफ़े में दे देता है। वो साईन्सदानों या आलिमों से जान पहचान कायम करता है। वो ग़रीब लोगों के लिए हमदर्दी महसूस करता है। मंदरजाज़ेल हदीस-शरीफ में रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने इर्शाद फरमाया: "**एक शख़्स जो अपनी रोज़ी जाईज़ (हलाल) तरीके से कमाता हो, जिसकी खुशगवार फितरत हो, जो दूसरों की तरफ़ बहुत नरम हो, और जो किसी को कोई नुकसान न पहुँचाता हो वो बहुत खूबसूरत शख़्स है,**" और "**एक शख़्स जो अल्लाह तआला की रज़ा के लिए अपने आपको आजिज़ करे वो अल्लाह तआला के ज़रिए ऊँचा उठाया जाता है।**" एक तकब्बुरी शख़्स को बराबरी के तकब्बुर वाले तौर तरीके से पेश आने

(जाईज़) की इजाज़त है। अल्लाह तआला अपनी मखलूक की तरफ़ घमंडी **(मुतकब्बिर)** है। अल्लाह तआला गुरूर घमंडी (किब्र) रखता है। एक शख़्स ई नाम **(सवाब)** पाता है जब वो तकबव्बुर वाले शख़्स के साथ तकबव्बुर का तौर तरीका अपनाता है। कोई भी जो एक तकब्बुर वाले शख़्स के साथ आजज़ी से पेश आता है तो वो अपने साथ नाइंसाफी करता है (ऐसा करके। इस बात की भी इजाज़त है के जो शख़्स अपने रास्ते से भटक गया हो उसके साथ और अमीर लोगों के साथ तकब्बुर किया जा सकता है। उनकी तरफ़ तकब्बुर के तौर तरीके का मतलब ये नहीं है के अपनी बरतरी दिखाई जाए बल्कि उनको असलियत की तरफ़ लाया जाए। जंग/लड़ाई के दौरान अपने दुश्मन के खिलाफ़ घमंडी और मुतकब्बिर होना बहुत ईनाम पाने वाला है। इस तरह का मुतकब्बिर "हूयाला" कहलाता है एक शख़्स जो ज़कात देता है उसके अंदर खुशी और जोश के साथ थोड़ा तकब्बुर मिल जाता है। उसका तकब्बुर पाने वाले की तरफ़ बराहेरास्त नहीं होता बल्कि इसके बजाए उसका इरादा दिए गए माल या पैसे को हकीर मानना होता है। ये इस बात की निशानदही करता है के वो माल या पैसे का गुलाम नहीं है। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में इर्शाद फरमाया: "**देने वाला हाथ लेने वाले से ऊपर है।**" हीलासाज़ी की तरफ़ घमंडी या जो शैखी बाज़ों की तरफ़ पेश आए उसकी इजाज़त है। अपने से नीचे मरतबे या ओहदों वालो के साथ आजिज़ी बरतने की इजाज़त है लेकिन उसको आखिरी हद को नज़र अंदाज़ करने में ध्यान रखना होगा। हद से ज़्यादा आजिज़ी "तमालूक" कहलाती है। हद से ज़्यादा आजिज़ी सिर्फ अपने रूहानी उस्ताद या एक इस्लामी आलिम के साथ रखने की इजाज़त है। हद से ज़्यादा आजिज़ी (तमालूक) किसी और के साथ करने की इजाज़त नहीं है। एक हदीस शरीफ़ में बयान है, "**तमालूक इस्लामी अख्लाक का हिस्सा नहीं है।**"

नज़्म

एक उस्ताद और एक तिब्बी डॉक्टर के लिए,
"तमालूक" करना ज़रूरी है।
पहले अंदरूनी रूह के लिए, बाद में जिस्मानी,
इन बीमारियों के इलाज के लिए सेवा करो।

तकब्बुर के किस्म किस्म के ज़िन्दगी के तौर तरीकों में, सबसे खराब किस्म अल्लाह तआला की तरफ़ तकब्बुर करना है। इस किस्म के तकब्बुर की मिसाल नमरूद है। उसने अपनी खुदाई का दावा किया था। उसने नबी को आग में फैंका था क्योंकि वो अल्लाह तआला की तरफ़ से उसे नसीहत करने भेजे गए थे। इन बेअक्लों में से एक फिरओन भी था। उसने अपनी खुदाई मिसर में एलान की और कहा के वो मिसर का सबसे ज़्यादा ताकत वाला खुदा है। अल्लाह तआला ने अपने नबी मूसा अलैहि सलाम को उसे नसीहत करने भेजा लेकिन उसने यकीन करने से इंकार कर दिया और उसके बाद अल्लाह तआला ने उसे दरयाए नील में गिरा दिया। लोग जो इस तरह की फ़ितरत के होते है, यानी, जो इस काएनात के बानी में यकीन नहीं रखते, उन्हें बेदीन (देहरिया) कहा जाता है। [लोग जो इस की फ़ितरत के हैं वो हर सदी में पाए जाते हैं। मिसाल के तौर पर, माऊ और स्टालीन ने सेंकड़ों लोगों को कत्ल किया और सितम किया और मज़हबी आदमियों को इस्लामी आलिमों को किताबों को खत्म किया और उनकी कौमों पर जुल्म और खौफ़ तारी किया। वो ताकत के ज़रिए अपने मक़सद उनपर थौंपते थे, जो उन्हें ज़हनी आसूदगी देता था। उन्होने ये धोखा देना शुरू कर दिया के उनके पास बरतर हुनर है जैसे के तख़लीक करने वाले के पास है और उन्होने दूसरों से ऐसा कहना शुरू कर दिया। उन्होने अपने मुल्क में इस्लामी अदब के लाने पर रोक लगा दी उनके पढ़ने पर भी रोक लगा दी। वो उनको मार देते थे जो मज़हब की या अल्लाह तआला के बारे में बातें करते थे। और आखिर में, वो अपने आपको अल्लाह तआला के गुस्से से बचा नहीं पाए और तबाह हो गए। उनको फटकार पड़ती है और नफ़रत के साथ याद किया जाता है जिस तरह उनके तारिखी साथियों को नफ़रत के साथ याद किया जाता है। कुछ लोग जो माऊ और स्टालीन के नुकसानदह दहरियाई नशरो इशाअत के ज़हर के साथ अकल से खारिज हुए उन्होने चालबाज़ी से कुछ अरबी मुल्कों पर अपना कब्ज़ा कर लिया। इन लोगों ने उन इलहादी सरबराहों की नकल की और ज़ालिम मुतलकुलअनान बन गए और ऐसा निज़ामे हुकूमत हुकूमत शुरू किया जो इस्लाम के लिए नुकसानदह था। उन्होने तारिख/माज़ी से कोई सबक नहीं लिया, यानी किस तरह उन

ज़ालिमों की ज़िंदगियों का खमनाक खात्मा हुआ। वो नहीं सोचते के कितने बड़े अज़ाब इस दुनिया में दूसरी दुनिया में सज़ाएँ उनकी राह में हैं।]

बहुत सारे लोग भी हमारे नबी रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' की तरफ़ देखते हैं और कहते हैं, "क्या ये नबी हैं जो अल्लाह तआला की तरफ़ से भेजे गए हैं?" मक्का के नाफरमानों ने कहा, "ये बहुत अच्छा होता के अगर इस कुरआन को मक्का के सरबराहों में से किसी एक पर उतारा जाता।" इन आला इस्लामी आदमियों की तरफ़ इन नाफरमानों का इस तरह का तौर तरीका पूरी इस्लामी तारीख में मिलता है। इस कमज़ोर मखलूक का इस तरह का तौर तरीका, जो अपने जिस्म के बनने के बारे में भी नहीं जानते, वो एक तरह से अपने बनाने वाले और मालिक के खिलाफ़ जंग का ऐलान कर देते है, जो हर मामले में सबसे ज़्यादा ताकतवर है। एक बार, शैतान ने भी इस घमंड के साथ बरताव किया और कहा के वो आग से बनाया गया है, इसलिए वो बरतर है जब अल्ला तआला ने फरिश्तों को हुकूम दिया के वो आदम अलैहिसलाम के आगे झूकें और तब शैतान ने अल्लाह तआला के खिलाफ़ बग़ावत कर दी। जब शैतान/इबलीस ने देखा के आग रोशनी दे रही थी और बहुत ऊँची थी, उसने सोचा के वो पानी और मिटटी से बरतर थी। हकीकत में असली बरतरी आजज़ी के ज़रिए है, न के तकब्बुर के ज़रिए। जन्नत में मिटटी होगी और उसकी खुशबू मुश्क जैसी होगी। जन्नत में कोई आग नहीं होगी। आग दोज़ख में सज़ा देने का ज़रिया है। दुनिया में आग जिस चीज़ को भी छूती है उसे खत्म कर देती है लेकिन दूसरी तरफ़, मिटटी इमारते बनाने के समान के तौर पर खास है। मखलूक मिटटी (ज़मीन) पर रहती है। मिटटी के नीचे खज़ाने दफ़न है। काबा मिटटी से बनाया गया है। जबकि आग की रोशनी रात के अंधेरे को खत्म करती है और ज़मीन पर रोशनी लाती है, मिटटी फूलों और फलों के पैदा होने की वजह बनती है, हज़रत मौहम्मद 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम', जो सारी मखलूक से अव्वल हैं, वो मिटटी में कियाम कर रहे हैं।

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने मंदरजाज़ेल हदीस शरीफ़ में इर्शाद फरमाया: "**अल्लाह तआला ने हम पर वाज़ेह कर दिया है:किब्रियाई**

(सबसे ज़्यादा ताकत वाला) बरतरी और अज़मत (बड़ाई) मेरी सिफ़ात हैं। कोई भी जो मेरी ये सिफ़ात मेरे साथ बाँटने/शरीक करने की कोशिश करेगा, उनको दोज़ख में फ़ैंक दूँगा बगैर कोई रहम किए।" और "**कोई भी अपने दिल में एक ज़र्रे के वज़न के बराबर घमंड 'किब्र' के साथ जन्नत में दाखिल नहीं होगा।**" जब आप से पूछा गया क्या जो लोग साफ़ कपड़े पहनते है और साफ़ जूतों का इस्तेमाल करते हैं वो इस दर्जे में शामिल हैं, आपने जवाब दिया, "**अल्लाह तआला खुशकून (जमील) है और जो खुबसूरती (जमाल) रखते हैं उन्हें प्यार करता है**" या दूसरे लफ़्ज़ों में, अल्लाह तआला दबदबे वाले लोगों को प्यार करता है। [लोग जो अपने आपको एक गंदी और नफ़रत ज़दा वज़ असे बचाने के लिए साफ़ रखते हैं या अपने आपको एक गंदी वज़अ वाला पुकारे जाने से बचने के लिए या अच्छा और खुबसूरत दिखने के लिए वो "दबदबे वाले लोग" कहलाए जाते हैं। वो चीज़ें जो ज़िन्दगी को सहारा देने के लिए ज़रूरी है वो महज़ "खाली ज़रूरीयात" को इस तरह इस्तेमाल करना के वो प्यारी और खुबसूरत मानी जाए जैसे कि वो खुशकून हो। मिसाल के तौर पर, पहनने के लिए कुछ होना ये ज़िन्दगी की ज़रूरत है। जबके हर एक को अपने आपको ढकने के लिए कपड़ों की ज़रूरत होती है, फैशन में कुछ पहनना अच्छा दिखने के लिए, इसका मतलब है खुबसूरत होना। अपने बदन पर, अपने लिबास में या अपनी जाएदाद में कोई भी तबदीली करना दूसरों पर सजावट, अराईश या बरतरी के मक़सद से तो वो ज़ीनत कहलाता है, जो अपने बदन, अपनी सेहत, अपनी इज़्ज़त और कदरो कीमत को महफ़ूज़ रखने वाली चीज़ों की ज़रूरत से ज़्यादा हैं। किसी भी हालत में एक शख़्स के लिए 'ज़ीनत' को इस्तेमाल करने की इजाज़त नहीं है। नामहरम [इस लफ़्ज़ के वाज़िह तारीफ़ और मतलब के लिए, बराएमहरबानी सआदते अबदिया के चौथे हिस्से के आठवें बाब को देखें।] औरतों के लिए; आदमियों की मौजूदगी में 'ज़ीनत' के सामान को पहनने की इजाज़त नहीं है। अल्लाह तआला का हर काम और मौहज़ब लोगों से भी प्यार करता है। इस हदीस से हमें यह इतलाह मिलती है कि दूसरे गुनहगारों की तरह, तकब्बुर वाले लोग बग़ैर सज़ा के जन्नत में दाखिल नहीं होगें। जो जन्नत में दाखिल नहीं होगें उनका मकाम दोज़ख होगा, क्योंकि इन दोनो के अलावा आखिरत में और कोई जगह नहीं है। जो कोई भी

ज़र्रे के वज़न के बराबर भी यकीन रखता होगा वो हमेशा के लिए दोज़ख में नहीं रहेगा और आखिर में जन्नत में दाखिल होगा। कोई भी जिसने एक बड़ा गुनाह किया और उसने (मरने से पहले) उसके लिए तौबा नहीं करी, अगर उसने कोई सिफ़ारिश हासिल नहीं की, तो वो पहले जिस सज़ा के लायक है उसे वो सहनी पड़ेगी और उसके बाद वो जन्नत में दाखिल किया जाएगा। एक बार एक शख़्स जन्नत में दाखिल हो जाएगा, वो वहाँ से बाहर नहीं निकाला जाएगा। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने हदीस शरीफ़ इर्शाद फरमाया: "**कोई भी ईमान वाला (मोमिन) जो तकब्बुर वाला शख़्स नहीं था, जो धोकेबाज़ नही था, और जिसने दूसरों के हुक़ूक की पामाली न की हो वो बगैर सवाल जवाब के जन्नत में जाएगा;**" और "**एक ईमान वाला (मोमिन) जो दूसरों के हुक़ूक की पामाली करी वो बदनाम और ऐबी ईमान वाला है।**" एक शख़्स पैसा उधार लेता है अपनी ज़िन्दगी की ज़रूरयात को पूरा करने के लिए, लेकिन जैसे ही उसके पास ज़रिया हो जाए उसे पैसे वापिस दे देने चाहिए। ऊपर दी गई हदीस दूसरों के हुकूक की पामाली करने वालों के खिलाफ़ तमबीह है। इन हुकूक में वो पैसे शामिल हैं जो एक शख़्स ने बगैर ज़रूरत के उधार लिए या जो ज़राए होने के बावजूद वापिस नहीं किए गए या जो नाजाईज़ या मना किए हुए ज़राए के ज़रिए हासिल किए गए और वो पैसे जो बीवी को अदा करने का वादा किया (मेहर की रकम) और जो अभी तक नहीं दिया गया और दूसरों को मज़हबी इल्म की तालीम देने की महरबानी जो अभी तक उससे पूरी नहीं की। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अपनी वफ़ात से पहले अपने दामाद हज़रत अली रज़ी अल्लाहु तआला अन्ह को बुलाया और उनसे फरमाया, "**या अली!मुझे** (कुछ पैसा) **एक यहूदी जिसका नाम (फलाँ फलाँ) है उसका पैसा देना है। उसे वापिस कर देना** (मेरे लिए)!" अपने पहले भी उसी यहूदी से कुछ जो उधार लिए थे। आपकी आखिरी इलतेजा थी कि उसे वापिस कर दिया जाए। हज़रत अबदुल्लाह बिन सलाम रज़ी अल्लाहु तआला अनह, जो उस वक्त के माने हुए यहूदी आलिम थे, उन्होने 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' की नब्बूवत को पहचाना, और आपसे एक बार बात करने के बाद ही वो मुसलमान हो गया। एक दिन, देखा गया कि वो अपनी कमर पर लकड़ियाँ लादे हुए चल रहे थे। उनकी बरादरी के लोगों ने जिन्होने उन्हें इस तरह देखा उनसे

पूछा तुम इस तरह लकड़ियाँ लादकर क्यों चल रह हो जबकि तुम इतने अमीर हो और तुम्हारा ढेर सारा पैसा है। उन्होने कहा मैं ऐसा अपने नफ़्ज़ को तकब्बुर से बचाने के लिए कर रहा हूँ। अगर एक अमीर आदमी अपना सामान खुद उठा कर चले ताकि वो अपना पैसा कूली को देने से बचा सके तो वो उसकी नीचता **(तज़ल्लूल)** होगी। लेकिन अगर ऐसा वो हमारे रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' की **सुन्नत** को मानने के लिए करता है और अपने नफ़्ज़ की इच्छा को तोड़ने के लिए करता है, तो ये एक अच्छा काम है जो उसके लिए ईनाम **(सवाब)** लाता है। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में इर्शाद फरमाया: "**कयामत में जमा किए जाने वाले दिन (अल्लाह तआला लोगों की तीन जमाअत से बात नहीं करेगा और उन्हें सख्त सज़ा देगा; वो हैं: ज़िना करने वाला बूढ़ा आदमी, रियासत का झूठा सरबराह, और एक तकब्बुर वाला गरीब आदमी।**" अबू उबेदा बिन जर्राह रज़ी अल्लाहु तआला अन्ह; जोकि दमीकश में मुसलमान फौज के कमान्डर थे, अपने साथ दूसरे लोगों को लेकर खलीफ़ा हज़रत उमर का इसतकबाल करने बाहर निकले। हज़रत उमर रज़ी अल्लाहु तआला अन्ह और उनके गुलाम बारी बारी ऊँट पर सवारी कर रहे थे। जब वो लोग दमीकश में दाखिल हो रहे थे उस वक़्त उनके गुलाम की बारी थी ऊँट पर सवारी करने की। हज़रत उमर रज़ी अल्लाहु तआला अन्ह ऊँट से ऊतर गए और अपने गुलाम को ऊँट पर सवार होने दिया। आपने ऊँट का पटटा पकड़ा और चल पड़े। जैसे वो पानी के किनारे के पास पहुँचे, उन्होने अपने (तले के बग़ैर जूते) खुस्से उतारे और अपने पैरो को पानी में डाल दिए। अबु उबेदा रज़ी अल्लाहु तआला अन्ह दमीक्श की फौज के कमान्डर ने बेरहमी से कहा, "औ तुम, मुसलमानों के खलीफा यहाँ ज़मीन पर तुम क्या कर रहे हो? सारे दमीक्श के लोग, और खास कर बॉइज़ेनटीन ग्रीसी यहाँ पर हैं मुसलमानों के खलीफ़ा को देखने के लिए। वो इस वक़्त तुम्हें देख रहे हैं। वो तुम्हारे बरताव को हिकारत से देख रहे हैं।" मुबारक खलीफ़ा ने मंदरजाज़ेल जवाब दिया: "या अबा उबेदा! तुम्हारा यह एतिराज़ यहाँ जमा हुए लोगों के लिए नुकसानदह है। जो तुम्हें सुन रहे हैं वो सोचगें कि एक शख़्स की इज़्ज़त सवारियों में सवार होने से और सजावटी कपड़े पहनने में है। वे यह नहीं जानते कि असली इज़्ज़त मुसलमान होने में और अल्लाह तआला की इबादत करने में

है। हम छोटे और हकीर लोग समझे जाते थे। [हम फारसी शाहों के हाथोंमें गुलाम समझे जाते थे।] अल्लाह तआला ने हमें इस्लाम की अज़मत से नवाज़ा। अगर हम इस इज़्ज़त के अलावा जो अल्लाह तआला ने हम पर निछावर की है दूसरी इज़्ज़त की तरफ़ देखेंगे, तो अल्लाह तआला हमें वापिस अपने पिछले हकीर हालत में भेज देंगे; वे हमें किसी भी चीज़ से ज़्यादा हकीर बना सकता है।" बरतरी **(इज़्ज़त)** इस्लाम के साथ है। कोई भी जो इस्लाम की अखलाकियत को मानता है वो बरतर है। कोई भी जो इन उसूलों को नापसंद करे और दूसरी चीज़ों में बरतरी देखे वो हकीर है। इस्लाम का दूसरा हुकूम आजज़ी है। कोई भी जो आजज़ी से पेश आता है वो बरतर होता है और दूसरों से ऊपर उठता है। कोई भी जो घमंड **(तकब्बुर)** और हिकारत रखता है वो नीचा होता है।

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**जमा किए जाने वाले दिन (कयामत) में, जो लोग दुनिया में तकब्बुर करते थे उन्हें कब्र में से चिटिंयों की तरह हकीर और बेइज़्ज़ती से उठाया जाएगा। वे चिटिंयों की तरह छोटे होंगे लेकिन इंसान की शक्ल में होंगे। हर कोई उनको हकीर मखलूक की तरह देखेगा। उनको "बोलिस" दोज़ख की वादी में फैका जाएगा जो दोज़ख की सबसे गहरी वादी है और सबसे ज़्यादा सज़ाएँ वहीं मिलती हैं। इस वादी को "बोलिस" इसलिए कहते हैं क्योंकि जो लोग यहाँ फैंके जाते हैं वे अपने बाहर आने की सारी उम्मीदें खो देते हैं। वे आग में खो जाते हैं। जब वे पानी माँगते हैं, तो उन्हें दोज़ख के रहने वालों का पीप दिया जाता है।**" अबु हूरेरा रज़ी अल्लाहु तआला अनह मदीना शहर के गवर्नर, अपनी कमर पर लकड़ी लादे हुए जा रह थे। मौहम्मद बिन ज़ियाद रज़ी अल्लाहु तआला अन्ह ने आपको पहचान लिया और उनके आस पास के लोगों से फरमाया, "गवर्नर के लिए रास्ता खोलो।" वहाँ के जवान लोग गवर्नर की आजज़ी देखकर मुअम्मे में थे। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने अपनी हदीस शरीफ़ में इस तरह इर्शाद फरमाया: "**एक पैग़म्बर की उम्मत (कौम) में एक घमंडी शख़्स था। वो अपन कमरबंध को अपने इरद गिरद लपेटता, तो उसका लंहगा ज़मीन पर झाडू लगाता चलता। उसके इस घमंडी बरताव से अल्लाह तआला नाराज़ हुआ जिसके सबब ज़मीन उसे निगल गई।**"

और "**उनके कपड़े पहनकर एक गधे की सवारी करना और दूध दोहना इस बात को दिखाता है कि ये सब हरकात करने वाला शख़्स घमंडी नहीं है।**"

तकब्बुर सात वजूहात की वजह से होता है: मालूमात या मज़हबी मालूमात, अच्छे काम करना या इबादत करना, खानदान, खूबसूरती, मज़बूती, जाएदाद और रूतबा। लाइलम लोगों में इन अज़बाब की मौजूदगी उनमें घमंड की वजह बनती है।

अगरचे जानकारी तकब्बुर की वजह है, उसकी दवाई भी जानकारी है। ऐसे इल्म/जानकारी के लिए जिससे घमंड पैदा होता है उसके लिए कोई भी इलाज सोचना बहुत मुश्किल है। ईल्म बहुत कीमती चीज़ है। एक शख़्स जिसके पास ईल्म होता है वो अपने आपको ऊपर और इज़्ज़त वाला समझता है। ये कहना ज़्यादा बेहतर होगा कि उसका ईल्म असली ईल्म नहीं है बल्कि, असल में लाईल्मी है। असली ईल्म एक शख़्स को उसकी कमज़ोरियों और नाकाामियों से वाकिफ़ कराता है साथ में अल्लाह तआला की बड़ाई और फौकियत से भी वाकिफ़ कराता है। वो उसके दिल में अल्लाह तआला का खौफ़ बढ़ाता है और उसके बंदों की तरफ आजज़ी बढ़ाता है और उसको दूसरों के हुकूक की इज़्ज़त करने का सबब बनता है। इस तरह का ईल्म सीखना और पढ़ाना एक इकरार है जिसे "ईल्म अल-नफ़ी" कहते हैं। ये एक शख़्स को सिर्फ़ अल्लाह तआला की रज़ा के लिए इबादत अदा करने का सबब बनता है। जिस ईल्म से घमंड पैदा होता है उसका इलाज दो चीज़ों को जानकर हो सकता है:पहला ये जानना कि ईल्म की बरतरी नसबती है। वो ये कि यह उस शख़्स के असली इरादे पर मुबनी है जो ईल्म रखता है। उसको अपने आपको मज़हबी रहनुमा ("ईमाम" या "मुफ़ती") बनाने के लिए या मज़हबी शख़्स के तौर पर नम पने के लिए ईल्म हासिल नहीं करना चाहिए। दूसरा ये कि ये जानना कि वो सिर्फ़ उस ईल्म की मशकत के मुताबिक सीखे और दूसरों को सीखाए और वो ये सब अल्लाह तआला की रज़ा हासिल करने के लिए करे। बेअमल ईल्म जो बग़ैर अभ्यास (**अमल**) या सदाकत (**इखलास**) के किया जाए वो नुकसानदह है। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में बयान फरमाया: "**वो जो दुनियावी जाएदाद हासिल करने के लिए मज़हबी ईल्म**

हासिल करते हैं उन्हें जन्नत की खुशबू तक नहीं मिलेगी।" इस बात की इजाज़त है और ये ज़रूरी भी है कि दुनियावी जाएदाद हासिल करने के लिए साईन्सी ईल्म हासिल किया जाए। दूसरी हदीस शरीफ़ दो तरह के आलिमों के बारे में बताती है: "**मेरी (उम्मत) कौम में दो आलिमों के समूह होंगे। पहला समूह/ग्रुप अपने ईल्म के ज़रिए इंसानों के लिए फाएदेमंद होगा। वे अपनी तालीमात के लिए किसी फाएदे की उम्मीद नहीं रखते। दरियाओं में मछलियों, ज़मीन पर जानवर आसमानों में चिड़ियाँ सब लोगों के लिए दुआ करते हैं। इसके बरअक्स, वो ग्रुप/समूह जिसके ईल्म से दूसरों को कोई फाएदा ना पहुँचे और जो अपना ईल्म दुनियावी मिलकियत हासिल करने के लिए करें उनको एक आग का फंदा दोज़ख में ज़बरदस्ती पहनाया जाएगा।**" कुरआन हमें बताता है कि आसमानों और ज़मीन की सारी मखलूक अल्लाह तआला की इबादत करती है। आलिम जिसका हदीस में ज़िकर हुआ है: "**आलिम पैगम्बरों के वारिस हैं,**" वो हैं जो अल्लाह के पैग़म्बर 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' के बताए हुए मिसालों को मानते हैं। वो आलिम जो अपनी मज़हबी तालिमात इस्लाम के मुताबिक करते हैं वो एक रोशनी का ज़रिया हैं जो अपने माहौल को जगमगाते हैं। मंदरजाज़ेल हदीसें चारों तरफ़ जानी जाती हैं: "**जमा किए जाने वाले दिन 'कयामत' में, एक मज़हबी आलिमको दोज़ख में फैंका जाएगा। दोज़ख के रहने वाले जो उसे जानते होंगे उसके इतराफ़ जमा होंगे और पूछेंगे कि उसको इस तरह क्यों सज़ा मिली जबकि दुनिया मं वो ऐसा शख़्स था जो दूसरों को अल्लाह तआला के हुक्काम की तालिमात देता था। वो इस तरह जवाब देगा: हाँ! मैं वो गुनाह खुद करता था जो मैं तुमसे कहता था कि ना करो, और जो मैं तुमसे कहता था करने के लिए वो मैं खुद नहीं करता था। इसलिए अब मैं ये सज़ा भुगत रहा हूँ,**" और "**जब मैं उरूज (मैराज) की रात के दौरान जन्नत ले जाया जा रहा था, मैने कुछ लोगों को देखा। उनको इस तरह सज़ा मिल रही थी कि उनके होंठो को आग की कैंची से कतरा जा रहा था। मेने जिब्राईल से उनके बारे में पूछा उन्होने बताया ये मज़हबी तालीम देने वाले हैं जो दूसरे लोगों को वो काम करने की हिदायत करते थे जो वो खुद नहीं करते थे,**" और "**दोज़ख के सिपाही दीनी किताबों के याद रखने वाले (हाफ़ीज़ों) को बूतों की इबादत करने वालों से पहले सज़ा देंगे क्योकि, जो**

गुनाह जानते हुए किया जाए वो ज़्यादा खराब है उस गुनाह के जो बग़ैर जाने हुए किया जाए।" नबी के सहावा बहुत फाज़िल आलिम थे; इसलिए, वो काबिले माफ़ी गुनाह से भी उसी तरह डरते थे जिस तरह बड़े गुनाह से डरते थे। इस हदीस में बताए गए कुव्वते हाफ़िज़ा वाले (हाफ़िज़) पुराने वसीयत नामें को बहुत अच्छी तरह याद रखने वाले होंगे क्योंकि गुनहगार मुसलमानों को बिदअती लोगों की तरह सख्त सज़ा नहीं भूगतनी पड़ेगी। या, शायद, वो हाफ़िज़ होगें जो, अगरचे वो इस उम्मत में से होगें फिर भी, हराम और गुनाह से ज़रूरी गैर हाज़िरी का मज़ाक उड़ाएंगे, वो बिदअती बन जाएंगे। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ में इर्शाद फरमाया: "**आलिम तब तक पैग़म्बरों के भरोसेमंद नुमाइंदा हैं जब तक के वो अपने आपको सरकारी अफ़सरों के साथ नहीं मिलाते और दुनियावी जाएदाद के पीछे नहीं भागते। जब वो दुनियावी चीज़ें इकट्ठी करनी शुरू करदें और सरकारी अफ़सरों के साथ मिल जाएं, तब उनको समझा जाए के वो पैग़म्बरों के भरोसे को तोड़ रहे हैं।**" एक भरोसेमंद शख़्स से ये उम्मीद की जाती है के वो उन चीज़ों की हिफ़ाज़त करे जो इसे सौंपी गई हैं। इसी तरह, मज़हबी आलिम मज़हबी ईल्म की बदउनवानी से हिफ़ाज़त करें। एक बार, रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' "काबा" दौरे पे गए थे आप से पूछा गया सबसे ज़्यादा खराब शख़्स कौन है। अपने जवाब दिया, "**बुरे के बारे में मत पूछो! अच्छे के बारे में पूछो। बुरे आलिम सब इंसानों में सबसे ज़्यादा खराब हैं।**" क्योंकि, वो जानते हुए गुनाह करते हैं। ईसा (जिस्स) अलैहिसलाम ने एक बार कहा, "बुरे आलिम एक चट्टान के टुकड़े की तरह हैं जो पानी के रास्ते को बंद करता है। पानी चट्टान में सरायत नहीं करता।" एक बुरा आलिम एक गटटर की तरह है। बाहरी तौर पर, वो फन का माहिए काम है, लेकिन वो गंदगी से भरा हुआ है। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**जमा किए जाने वाले दिन (कयामत) में, सबसे ज़्यादा सख्त सज़ाएँ उन मज़हबी आलिमों को मिलेंगी जिन्होने अपनी तालीम से कोई फायदा नहीं उठाया।**" इस वजह से, धोकेबाज़, दूसरे लफ़्ज़ों में, वो बिदअती जो मुसलमान होने का दावा करते हैं, वो दोज़ख के सबसे गहरे हिस्से में जाएंगे। क्योंकि,वो जानते बुझते हुए बिदअती और ज़िददी रहे। एक शख़्स जो मज़हबी तालीम

सीखता है वो या तो अबदी नजात पा जाता है या अबदी गलतियों में डूब जाता है। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में इर्शाद फरमाया: "**कुछ लोग जिन्हें दोज़ख में सज़ा दी जाएगी उनमें से बुरी बदबू आएगी। दूसरे जो उनके आस पास होगें वो आग से ज़्यादा उस बदबू से भूगतेंगे। जब उनसे इस बदबू की वजह पूछी जाएगी, तो वो कहेंगे के वो मज़हबी आलिम थे लेकिन वो अपने मज़हबी अरकान अपनी तालीम के मुताबिक अदा नहीं करते थे।**" अबूदरदा रज़ी अल्लाहु तआला अन्हा ने एक बार कहा, "एक शख़्स कोई भी मज़हबी रूतबा रखता हो अगर वो अपने ईल्म के मुताबिक मज़हबी अदाएगी नहीं करता, तो उसे एक रहनुमा आलिम नहीं कह सकते।" शैतान/इबलीस को सारी मज़हबी मालूमात है लेकिन वो अपने ई ल्म के मुताबिक अपनी मज़हबी अदाएगी नहीं करता। मान लो के एक आदमी रेगिस्तान में अकेला रह जाता है और उसके कब्जे में दस तलवारें और दूसरे हथियार हैं। यह भी मान लो के वो बहुत बहादुर इंसान है जिसको पता है के इन हथियारों को किस तरह इस्तेमाल एक हमला करते हुए शेर पर नहीं करता, तो इन हथियार का क्या मतलब? उनका कोई मतलब नहीं, क्या है? इसी तरह से, एक सौ हज़ार मज़हबी सवालों के जवाब याद कर लेने का भी कोई भी मतलब नहीं उस शख़्स के लिए जब तक के वो अपनी मालूमात अमल में न लाए। इसी तरह, अगर एक बीमार को शख़्स को अपनी बीमारी का इलाज पता है लेकिन वो अपनी मालूमात इस इलाज को हासिल करने में नहीं लगाता, तो वो अपनी इस पूरी मालूमात से कोई फायदा नहीं उठा सकता।

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में इर्शा द फरमाया: "**कयामत के नज़दीक के वक्त, ज़्यादातर इबादत करने वाले अपने मज़हब से लाईल्म होंगे और आदमियों की अकसरियत जो अपने मज़हब में हाकिम का रूतब रखते होंगे वो गुनहगार (फ़ासिक) होंगे।**" इस हदीस में गुनहगार मज़हबी आदमी उसे कहा गया है जो सरकारी अफ़सरों से मिल गए हों सारे ऐशो आराम उठाने के लिए। सुफयान-ए-सवरी रज़ी अल्लाहु तआला अन्हा के मुताबिक दोज़ख़ में एक गहरा गड़हा है जो आग से बना है। ये गड़हा सिर्फ़ उन धोकेबाज़ों कि सज़ा के लिए है जिन्होने कुरआन को याद किया लेकिन सरकारी अफ़सरों से मिल गए। सुफ़यान रज़ी अल्लाहु तआला अन्हा दूवारा

फरमाते हैं: मैं कुरआन की तालीमात की तशरीह करने में बहुत आगे था।मैं एक आयात को तैंतीस मुखतलीफ़ तरीकों से बयान कर सकता था।जब, मैं उस वक्त के हाकिम **(सुलतान)** की दी हुई दावत में गया और मेने जो उस दावत में खाना खाया उसके असर की वजह से मैं अपना सारा ईल्म भूल गया।मौहमद बिन सलामा रज़ी अल्लाहु तआला अन्हा ने कहा जो सरकारी मामलों के करता धरता होते हैं उन लोगों के दरवाज़े पर कुछ मादी चीज़ हासिल होने की गर्ज़ से इंतेज़ार करते हुए एक कुरआन के हाफ़िज़ की हालत उस मक्खी से भी बदतर है जो गंदगी के टुकड़े पर बैठती है।

एक हदीस शरीफ़, "**एक शख़्स अल्लाह तआला के ज़रिए ईल्म से नवाज़ा गया लकिन वो दूसरो को इल्म नहीं पहुँचाता वो योमुल हिसाब/कयामत में सख्त अज़ाब में मुबतला होगा उसके गर्दन के इरद गिरद आग का फंदा कसा जाएगा,**" जो पहले भी इस मतन में दर्ज हो चुकी है।इस हदीस शरीफ में उन मज़हबी आदमियों का हवाला है जो लियाकत वाले लोगों को तालीम नहीं देते।पाँचवी आयत, "**अपनी मिलकयत बदकार लोगों को मत दो**" कुरआन की सूरत "नीसा" में एक नीचे और हकीर धेकेबाज़ को ईल्म की तालीम देने से मना फरमाया है।

मंदरजाज़ेल हदीस, "**इस्लाम चारों तरफ़ फैलेगा।मुसलमान ताजिर आज़ादी के साथ बड़े समंद्रो में जहाज़ों में दूसरे मुलकों में तिजारत के लिए जाएगें।मुसलमान जंगजू अपने घोड़ों पर सवार दूसरे मुलकों में जाएगें।बाद में, कुछ कुरआन के याद करने वाले (हाफ़िज़) उभरेगें और शान से कहेंगे, 'कोई है यहाँ जो मुझ से बेहतर कुरआन की तिलावत कर सके? या 'यहाँ ऐसा कोई है जो मुझ से ज़्यादा जानता हो?' वो दोज़ख की आग की लकड़ियाँ होंगे,**" इस बात की निशानदही करती है के कुरआन की उनकी तिलावत धोकेबाज़ी के साथ और उनका घमंड उन्हें दोज़ख में ले जाएगा।

एक दूसरी हदीस शरीफ़ में: "**जो कोई भी आलिम होने का दावा करता है वो एक जाहिल है।**" लोग जो अपने आपको हर चीज़ का जानने वाला बताते है, मिसाल के तौर पर, हर सवाल का जवाब देकर या जो कुछ भी वो देखते हैं उसकी वज़ाहत करते हैं असल में वो अपनी लाईल्मी का सबूत देते

हैं। वो जो ये कहता है के मैं इसका जवाब नहीं जानता लेकिन इसके बारे में पढ़ूँगा और फिर जवाब दूँगा वो सही में आलिम है। जब उन्होने रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' से पूछा, ज़मीन पर सबसे कीमती जगह कौनसी है, आपने जवाब दिया, **"मैं नहीं जानता। अगर मेरे मालिक ने मुझे आगाह किया तो में तुम्हें बताऊगाँ।"** तब आपने हज़रत जिबरईल से ये पूछा और उनसे भी यही जवाब मिला। तब, जिबरईल ने अल्लाह तआला से पूछा और जवाब मिल गया, **"मस्जिदें।"** जब कुरआन अल करीम की सूरह अराफ़ की एक सौ अठानवीं आयत ने ये खोला, जिसका मतलब था, **"माफ़ करने वाले बनो और मारूफ़ का हुकूम दो,"** रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने हज़रत जिबरईल से इसका मतलब बताने के लिए कहा। मुबारक फरिश्ते ने कहा, **"मुझे अपने रब** (अल्लाह तआला) **से सीखने दो"** और चले गए। जब वो वापिस आए तो कहा के अल्लाह तआला ने हुकूम दिया है, **"उन के करीब जाओ जो तुम से दूर हो गए! वो तुम्हें नहीं देते उनको तुम फय्याज़ी से दो! जो तुम पर जुल्म करें उन्हें माफ़ कर दो!"** जब शबी रहीमा हुल्लाहु तआला ने सवाल पूछा आपने जवाब दिया के मुझे जवाब नहीं आता। उन्होने आपको सरज़निश की के ये आपके लायक नहीं, ईराक के मुफ़ती थे आप, ऐसा कहना के आप नहीं जानते। आपका जवाब था: "हमेशा मुझ से उस चीज़ के लिए मलूमात क्यों किया जाता है जो मैं जानता ही नहीं, दरहकीकत फरिश्तों में सबसे अफ़ज़ल ने भी इसे न जानने का इकरार किया?" इमाम अबू युसूफ रहीमा हुल्लाहू तआला ने एक सवाल का जवाब दिया के वो नहीं जानते। जब उन्होने उनको सवाल का जवाब न देने पर मलामत किया के वो बैतुलमाल से उजरत लेते हैं, उन्होने जवाब दिया, मैं जितना जानता हूँ उतना ही मुझे पैसा दिया जाता है। बैतुलमाल मुझे कीमत देने में कम है उन हकीकतों के लिए जो मैं नहीं जानता।" जो अपने नफ़ज़ को नहीं मानते ऐसे जाहिल लोगों के साथ दोस्ती करना बहुत बेहतर है उन मज़हबी लोगों के साथ दोस्ती कायम करने से जो अपने नफ़ज़ के गुलाम हैं। एक मज़हबी शख़्स अपने मज़हबी रूतबे को रखने की वजह से गुरूर में आता है ये उसकी जहालत की निशानी है क्योंकि ईल्म एक शख़्स को आजिज़ और हलीम बनाता और उसे गुरूर और तकब्बुर से बचाता है।

तकब्बुर और घमंडी होने से बचना चाहिए। बड़ाई **(किबर)** को अल्लाह तआला से मंसूब किया जाता है। फ़खर होना **(किब्रया)** या बड़ाई का सबब अल्लाह तआला के कब्ज़े में है। जब एक इंसान अपने नफ़ज़ को हकीर मानता है उसकी कीमत अल्लाह तआला की नज़र में बढ़ जाती है। इसके बरअक्स, एक शख़्स जो अपने आपको खूब और आला समझता है उसकी अल्लाह तआला की नज़र में कोई कीमत नहीं। कोई भी आलिम जो तकब्बुर और घमंडी होने के नुकसानात नहीं जानता वो एक असली आलिम नहीं माना जा सकता। ज़्यादा ईल्म हासिल करने से अल्लाह तआला का डर बड़ जाता है और वो कोई गुनाह करने की सोच भी नहीं सकता। इस वजह से, सारे पैग़म्बर हलीम लोग थे। वो सब अल्लाह तआला से डरते थे। वो तकब्बुर और अहंकार **(उजब)** जैसी बुराइयाँ नहीं रखते थे। जवानों और गुनाहगारों (फ़ासिक और फ़जिर) के साथ तकब्बुर से पेश नहीं आना चाहिए। बहरहाल, ये ज़रूरी है के घमंडी लोगों के साथ बराबरी के घमंड से पेश आया जाए। अगर एक शख़्स बहुत पढ़ा हुआ हो;जब वो किसी जाहिल गुनहगार को देखे तो अपने आप से यूँ कहे, "ये शख़्स गुनाह कर रहा है क्योंकि ये नहीं जानता। इसके बावजूद के मैं ये सब जानता हूँ ताहम मैं ये गुनाह करता हूँ।" जब वो किसी आलिम को देखे तो सोचे, "इस शख़्स के पास मुझसे ज़्यादा ईल्म है। और ये अपने ईल्म का पूरा हिसाब अदा करता है; ये अपनी मज़हबी अदाएगी पूरे इखलास के साथ अदा करता है;जबकि मैं नहीं करता।" जब वो किसी बूढ़े शख़्स को देखे तो कहे, "इस शख़्स ने शायद मुझ से ज़्यादा इबादत की है,"और अगर जो शख़्स वो देखे वो उससे जवान हो, तो वो सोचे, "जवान लोगों ने मुझ से कम गुनाह किए हैं।" जब वो अपना हम उमर शख़्स देखे, तो वो अपने आपसे कहे, "मैं अपने गुनाहों के बारे में जानता हूँ, न के उसकी करनी के बारे में। जब बेई न्साफियों को जान लिया जाए तो उसकी नुक्ताचीनी की जाए।" जब वो किसी बिदअती या काफ़िर को देखे तो यूँ कहे, "एक शख़्स का एतेकादी हालत काबिले तसखीर होती है जिसे उसके खत्म होने तक बदला जा सकता है। मैं नहीं जानता मेरा खात्मा कैसे होगा।" इसलिए, ऐसे लोग एक मुसलमान को तकब्बुर वाला बनने की वजह नहीं बनते। ताहम उनको पसंद नहीं करते। असल में,लोग जो बिदत और इलहादियत को फैलाते हैं वो अल्लाह के पैग़म्बर

सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की सुन्नत के दुश्मन हैं। वो सुन्नत की (रोशनी) नूर को बुझाने की कोशिश करते हैं, बिदत और मज़हब से नाफरमानी फैलाने के लिए, अहले सुन्नत रहीमा हुमल्लाहु तआला के आलिमों को ज़लील करने के लिए, आयत-ए-करीमा और हदीस शरीफ़ की शक्ल बिगाड़ने के लिए, और इस वजह से इस्लाम को अंदरूनी बरबाद करने के लिए।

[जो किताबें हमारी तंज़ीम के ज़रिए छापी जा रही हैं वो सब "अहले सुन्नत के आलिमों" की किताबों का तर्जुमा हैं। इन किताबों में हमारी अपनी कोई भी सोच नहीं है। हमारी सब किताबों में, हम कोशिश करते हैं नौजवानों को "अहले सुन्नत के आलिमों" की बरतरी के बारे में बताने की। हम उन्हें बताते हैं किदूसरी दुनिया **(आखिरत)** खुशियाँ सिर्फ़ "अहले सुन्नत के आलिमों" के बताए गए रास्ते पर हासिल होंगी। हम कोशिश कर रहे हैं इस खुशियों और बचाव के रास्ते को इंसानियत को बताने की और हम इस काम की किसी से भी कोई दुनियावी फ़ायदा नहीं चाहते। जो सही रास्ते से भटक गए हैं, या "लामज़हबी" हैं या और दूसरे इस्लाम के दुश्मन हो सकता है हमारी इन किताबों को बाटने की कोशिश को पसंद न करें और इसलिए ग़ैर ज़रूरी झूठ और इल्ज़ाम हमारी किताबों पर लगाएँ। क्योंकि उनके पास ज़रूरी इस्लामी ईल्म नहीं है, वो इस मामले में हमारा मुकाबला नहीं कर सकते। ना ही वो ये कह सकते हैं के हम उन किताबों को बेचकर मुनाफ़ा कमा रहे हैं, क्योंकि हम ऐसा नहीं कर रहे। सब ये जानते हैं। ज़्यादातर हम ये किताबें मुफ़्त में भेज देते हैं जो हम से मँगाते हैं। हमने सुना के कुछ लोग दूसरों से कह रहे थे के इन किताबों में नाकिस ईल्म है लेकिन जब हमने उन्हें मुकाबले के लिए कहा के दिखाओ कौनसा हिस्सा नाकिस है उन्होने कहा, "ओह! हो हमने सिर्फ़ दूसरों से सुना था। ये वो था जो उन्होने हमें बताया।" अलहमदोलिल्लाह, खबरदार नौजवान इन झूठ और ईल्ज़ामों को नहीं मानते और दिन पर दिन हमारी इन किताबों को पढ़ने वालों की तादाद बढ़ती जा रही है।]

जो लोग मुसलमानों को तकसीम करने की कोशिश करते हैं, इन बरबाद करने वाले लोगों के साथ हमदर्दी नहीं रखनी चाहिए। उसको ये भी सोचना चाहिए के किस तरह एक शख़्स की ज़िन्दगी खत्म होती है और किस

तरह अल्लाह तआला ने अबदी माज़ी में एक शख़्स के खात्में के बारे में हुकूम दिया है। किसी को सही तरह नहीं पता, यहाँ रहते हुए, किस को आखिरत में ऊँचा मकाम मिलेगा। जो मज़हबी ओहदे रखते थे उनमें से बहुत से कुफ़र की हालत में मरे। बहुत सारे काफ़िरों की ज़िन्दगी ईमान की हालत में खत्म हुई। जो बातें ऊपर कही गई हैं उनको मानते हुए, एक शख़्स जो कहता है के एक काफ़िर दोज़ख में जाएगा और वो खुद जन्नत में जाएगा तो वो ये बात मानता है के वो छुपा (**ग़ायब**) का इल्म जानता है, जो बदले में उसको कुफ़र की हालत में डाल देगा। इसलिए, इस बात की इजाज़त नहीं है के किसी भी शख़्स की तरफ़ घमंड किया जाए।

एक शख़्स इस तरह बहस कर सकता है:ये ज़रूरी है के दूसरों को मश्वरा दिया जाए, यानी, काफिरों और उन लोगों को जो सही रास्ते से भटक गए हैं और उन्हें मना की हुई बातों को करने से रोकना, लेकिन ज़ाहिर है तुम उन्हें सलाह नहीं दे सकते अगर तुम अपने आपको उनसे कमतर देखते हो। इसके अलावा, हमारा मालिक इस तरह से अपने अमल की अदाएगी करता है के एक शख़्स जो ज़िन्दगी जिया है उसी हालत में वो मरता है। कुछ मामलों में इसका उलटा भी हुआ है लेकिन ऐसी मिसाले बहुत कम हैं। इसके अलावा, अल्लाह तआला ईमान वालो की तारीफ़ करता है और कहता है के वो काफिरों से बरतर हैं। हमें इस बहस का इस तरह जवाब देना चाहिए: ये ज़रूरी है के उनको नापसंद किया जाए क्योंकि अल्लाह तआला ने हमें हुकूम दिया है "**उनको पसंद मत करो**," इसलिए नहीं के हम उनसे बरतर हैं। नीचे दी हुई मिसाल इस नुक्ते को और वाज़ेह करेगी। जब एक हाकिम (**सुल्तान**) ने अपने छोटे लड़के को अपने नौकर के साथ दूर दराज़ भेजा,उसने अपने नौकर को हिदायत दी के अगर उसका लड़का सही तरह से पेश न आए तो तुम उसे मार सकते हो। बाद में, जब लड़के ने बदतमीज़ी की तो नौकर ने हिदायत के मुताबिक उसे मारा। जबकि वो उसके लड़के को मार रहा था तो उसे पता था के वो उससे बरतर नहीं है। इसलिए, वो उसे तकब्बुर के साथ पेश नहीं आया। इसी तरह,एक ईमान वाला काफ़िर को पसंद नहीं करता ये इस मिसाल से मिलता हुआ है। अल्लाह तआला ने हमें हिदायत दी के ईमान वाले बरतर होने की वजह से नहीं है बल्कि ये उनके बरतर ईमान की वजह से है। ईमान

को रखने वाले बरतर होते हैं। लाज़वाल फौकियत/बरतरी आखिरी सांस में अपने आपको दिखाती हैं।

एक खास इबादत की कीमती होना कुछ हालतों पर मुजनी है। एक मुसलमान अपना वक्त बेकार चीज़ों **(मा-ला-यानी)** में बरबाद नहीं करता। पहले खलीफ़ा हज़रत अबू बकर रज़ी-अल्लाहुतआला अन्हा ने कहा के वो बगैर सत्तर मुबाह **(हलाल)** अमल के कर सकते हैं ऐसा न हो के वो कोई मुमानियत **(हराम)** किया हुआ अमल अदा कर दे। इसलिए, कोई भी अपनी इबादतों पर मुनहसिर नहीं करता और तकब्बुर वाला बन जाता है। इबादत का कुबूल होना पूरी नीयत पर मुनहसिर करता है। ये सिर्फ़ अल्लाह तआला की रज़ा के लिए अदा किया जाता है। ऐसी पाक नीयत को हासिल करना आसान नहीं है। अपने नफ़स की सफाई या पाकी तकवे के ज़रिए हासिल हो सकती है, जिसका मतलब है मना की गई चीज़ों से दूर रहना। जिसकी नफ़स साफ़ नहीं है उसके लिए सिर्फ़ अल्लाह तआला की रज़ा के लिए इबादत करना बहुत मुश्किल होता है।

अपने बाप दादाओं/बुर्ज़ुगों की शेखी मारना और घमंड करना ये जहालत और बेवकूफ़ी की निशानी है। कैन (काबील) आदम अलैहिस्सलाम का बेटा था। कानन (कनान), या यम (शेम) नोहा (नुह) अलैहिसलाम का बेटा था। उनके बाप पैग़म्बर होते हुए उन्हें कुफ्र से नहीं बचा सके। वो जो अपने बड़ों की हालतों का जाएज़ा लेना चाहिए। क्या वो अब एक मिटटी का टुकड़ा नहीं बच चुके होंगे? क्या ये माकूल है के एक मिटटी के टुकड़े पर शेखी मारी जाए?किसी को उनकी पाकिज़गी पर डींग नहीं मारनी चाहिए, बल्कि इसके नजाए उसे उनकी तरह एक पाक शख़्स बनना चाहिए। ज़्यादातर औरतें अपनी खुबसूरती पर घमंड करती हैं। लेकिन, खुबसूरती हमेशा नहीं रहती। ये बहुत जल्दी चली जाती है। ये किसी शख़्स की ज़ाती मिलकियत नहीं है। जो चीज़ आरज़ी तौर पर तुम्हें दी गई उस पर डींग मारना बेवकुफ़ी है। जिसमानी खुबसूरत, एक खुबसूरत दिल के साथ, यानी, रूहानी खुबसूरत, बहुत कीमती है। दिल की सफ़ाई/पाकी उसके मालिक की हमारे पैग़म्बर 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' की सुन्नत पर कायम रहने से ज़ाहिर होती है। अगर इंसानों का दिल,

ज़मीर और अखलाक कीमती नहीं होते, तो इंसानों में जानवरों से कोई फ़र्क नहीं होता। वो जानवरों से भी नीचे हो जाते। वो मशीनों की तरह हो जाते जो गंदगी से भर जाती हैं और जिन्हें सफ़ाई और देख रेख की ज़रूरत पड़ती। वो टूटी हुई मशीनों की तरह हो जाती जिन्हें हमेशा तेल की, सफ़ाई की और मरम्मत की ज़रूरत पड़ती है। क्या ये वो चीज़ है जिस पर एक शख़्स फ़खर कर सकता है? बल्कि उसको तो बेचारगी दिखानी चाहिए।

अपनी जवानी और ताकत पर तकब्बुर करना भी जहालत है। आम तौर पर पठ्ठो और हवासे खमसा ज़्यादा मिकदार में आदमियों की बनिसबत जानवरों में मज़बूत होते हैं। उस के मुताबिक,जानवरों को इंसानों की तरफ तकब्बुर करना चाहिए, क्या नहीं? और, कौन ये हमेशा के लिए दावा कर सकता है के वो जवान रहेगा, या कभी बीमार नहीं पड़ेगा, या कभी कोई हादसा नहीं होगा? क्या तारीख में ऐसा कोई है जिसने अपनी जवानी और ताकत या साँस न खोई हो ? इसलिए, क्या किसी के लिए ये मुनासिब है के उसके पास जो चीज़ आरज़ी तौर पर थोड़े अरसे के लिए है और जो जानवरों में भी मौजूद हो उसके बारे में डींग मारे या तकब्बुर करे।

ना ही ये इंसानों के लिए सही है के वो अपनी जाएदाद, बच्चे, रूतबे और मरतबे की शैखी मारे और घमंड करे क्योंकि ये बरतर खसुसियात नहीं हैं जो उनमें हैं। ये सब आरज़ी और गायब होने वाली चीज़ें हैं जो इंसानों को बहुत जल्दी छोड़ जाती हैं। और ये बदअखलाक और हकीर लोगों में भी मौजूद होता है। असल में, ये उन लोगों में ज़्यादा वक्त मौजूद रहता है। अगर ये वो सब चीज़ें हैं जो बरतरी का सबब हैं, तो वो लोग जिनमें ये नहीं है या जिनके पास में पहले थी और बाद में उन्हें खो दिया तो बेशक वो हकीर लोग हैं। अगर जाएदाद का होना इज़्ज़त वाला आदमी माना जाए क्योंकि उसके पास चोरी का माल होता है चाहे वो थोड़े वक्त के लिए ही क्यों न उसका हो।

नफ़रत **(हिकद)** भी तकब्बुर का सबब नहीं हो सकती है। हसद के लफ़्ज़ी मआनी हैं नफ़रत करना या बुग़ज़ को पालना,या दिल से दुश्मनी रखना। एक शख़्स जो इस बरबाद करने वाले एहसादा में मुबतला हों वो उनपर गुस्सा होते हैं जो या तो उनके बराबर हों या उनसे बरतर हों। क्योंकि वो

इसका कुछ नहीं कर सकता, इसलिए वो उस शख़्स की तरफ घमंडी हो जाता है। इस तरह के लोग उन लोगों की तरफ़ बिल्कुल भी नरम नहीं होते जो आजज़ी के लायाक होते हैं, और उनके सही लफ़्ज़ और सलाह को भी कुबूल नहीं करते। वो हर एक को ये दिखाने की कोशिश करते हैं के वो उस शख़्स से बेहतर हैं। जब वो किसी को गलती से नुकसान पहुँचाते हैं, तब भी वो माफ़ी नहीं माँगते।

झलन (**हसद**) भी तकब्बुर का सबब है। एक शख़्स बहुत ज़्यादा इस एहसास के साथ ये इच्छा रखता है के वो बरकतें जो किसी और के पास हैं वो उस शख़्स को छोड़कर उसके पास आ जाएँ। वो चाहता है के दूसरों के पास वो सब न हो। वो उन लोगों की सही बातें भी सुनने से मना कर देता है जिनसे वो जलता है। वो न उनसे कुछ सीखना चाहता है। चाहे वो जानता है के वो उससे बरतर है, फिर भी वो उसके साथ तकब्बुर से पेश आता है।

रीया (फरेब, घमंड) भी तकब्बुर का सबब बनता है। एक शख़्स जिसकी ये आदत हो वो अपने दोस्तों की मौजूदगी में अजनबियों के साथ तकब्बुर से पेश आता है। लेकिन जब वो अजनबी के साथ अकेला होता है, तो वो उसके साथ तकब्बुर से पेश नहीं आता। इस्लामी आलिमों को ऐसा लिबास पहनना चाहिए जो उनकी इज़्ज़त बन जाए और अपने आपको घमंडी लोगों से बचाने के लिए पूरे शान के साथ अमल करना चाहिए। इस वजह से, आला इस्लामी आलिम, इमाम अल-आज़म अबु हनीफ़ा रहीमा हुल्लाहु तआला ने कहा के आलिमों को बड़ा सिर का साफ़ा और चोग़ों में बड़ी आसतिने पहननी चाहिए। मुबलिग़ो को अपनी इबादतों का इनाम मिलता है अगर वो अपने आपको नए और साफ़ कपड़ों से सजाते हैं। अगर उनको इज़्ज़त न मिले, तब उनके अलफ़ाज़ दूसरों पर कोई असर नहीं छोड़ेंगे क्योंकि जाहिल लोग दूसरों को उनके लिबास और हुलिए से जाँचते हैं। वो इल्म की या पाकी की कीमत नहीं जानते।

ज़्यादातर लोग अपने घमंडी बरताव को नहीं जानते। इसलिए, एक के लिए ज़रूरी है के वो तकब्बुर की अलामत को जाने। जब तक तकब्बुर वाला शख़्स एक नई जगह पर जाता है तो वो चाहता है के सब खड़े हो जाएँ। ये

चीज़ उस आलिम पर लागू नहीं होती जो किसी जगह वाज़ के लिए जाता है और जानता है के वहाँ लोग उसकी इज़्ज़त करेंगे। अगर वो ये इच्छा रखता है के वहाँ लोग उसके लिए खड़े हों,तो वो तकब्बुर नहीं है। आम तौर से, अगर एक शख़्स अपने आपको बैठा हुआ चाहे,और दूसरों को खड़ा हुआ तो ये तकब्बुर है। हज़रत अली रज़ी अल्लाहु तआला अन्हा ने फरमाया, "कोई भी जो ये जानना चाहता है के दोज़खी कैसा होगा तो उसे उस शख़्स को देख लेना चाहिए जो अपने आपको बैठा हुआ लेकिन दूसरों को खड़ा हुआ देखना चाहता है।" असहाबा-ए-किराम रीज़वानउल्लाही तआला अलैहि अजमईन रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' को दुनिया में हर चीज़ से ज़्यादा प्यार करते थे लेकिन जब आप उन सब के पास आते थे तो वो लोग खड़े नहीं होते थे क्योंकि वो सब जानते थे के रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' नहीं चाहते के वो उनके लिए खड़े हों। हाँलाकि, जब एक इस्लामी उस्ताद (**आलिम**) मुसलमानों के एक ग्रुप में आता था, तो वो सब उसके ईल्म की वजह से उसे ताज़ीम देने के लिए खड़े हो जाते थे। याहया बिन कतान रहीमा हुल्लाहु तआला सूरज छुपने से पहले (अस्र) की नमाज़ पढ़ कर मस्ज़िद की मिनार से अपनी कमर लगाकर बैठे थे, जब उनके वक्त के कुछ मश्हूर आलिम आए। उनमें से एक इमाम अहमद बिन हनबल रहीमाहुल्लाहु तआला थे। उन्होनें उनसे हदीस के ईल्म के बारे में सवाल पूछे। उन्होने उनके सारे सवालों के जवाब दिए। वो सब खड़े हुए थे जबकि वो बैठे हुए थे। उन्होने उनमें से किसी को बैठने के लिए नहीं कहा, और उनमें से किसी ने बैठने की जुरअत भी नहीं करी। उनकी बातचीत सूरज छुपने के वक्त तक चलती रही आम रिवाज ये है के जवान आलिम ऊँची मसंद पर बैठता है बनिस्बत एक बूड़े जाहिल आदमी से। एक तालिबे इल्म को अपने उस्ताद से पहले बोलना शुरू नहीं करना चाहिए, उसकी गैर हाज़िरी में उसकी जगह पर नहीं बैठना चाहिए, और सड़क पर उनसे आगे नहीं चलना चाहिए। अगर एक शख़्स चाहे के दूसरे उठकर उसक लिए खड़े हों लेकिन उसे ये पता हो के ये तमन्ना और ख्वाहिश सही नहीं है और इस ख्वाहिश से पीछा छुड़ाना चाहता हो, तब उसकी ख्वाहिश को कुदरती झुकाओ समझा जाएगा, या फिर ये एक झूठा मतलब समझा जाएगा जो शैतान के

ज़रिए डाला गया। दोनों ही बातों में, ये एक गुनाह नहीं है क्योंकि उसका काबू उसके हाथों में नहीं है। ये उसकी ख्वाहिश के बावजूद होता है।

एक दूसरी निशानी तकब्बुर की वो है अकेले चलने से नफ़रत होना और इस बात की तरफ़ झुकाओ होना के कोई उसके पीछे चले, या ये चाहता हो के घोड़े पर सवार और घोड़े के इरद गिरद उसके शार्गिद चल रहे हों। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' मदीना के शहर में "बकी" कब्रिस्तान की तरफ़ जा रहे थे। कुछ लोगों ने आपको देखा और पीछे चलना शुरू कर दिया। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' रूक गए और हुकूम दिया के मुझ से आगे चलो और आप उनके पीछे चले। जब आपके इस बरताव की वजह पूछी गई तो आपने फरमाया, "**मेने उनके पेरों की आवाज़ सुनी। मेरे दिल में कहीं ज़र्रे के वज़न के बराबर भी तकब्बुर न आ जाए इससे बचने के लिए मुझे लगा के वो मुझे से आगे चलें।**" ये ज़ाहिर है के आपके दिल में कोई तकब्बुर नहीं था लेकिन ये अपने सहाबा को बताने का या पढ़ाने का एक तरीका था। अबूदरदा रहीमाहुल्लाहु तआला के मुताबिक, जब एक घमंडी आदमी के पीछे चलने वाले लोगों की तादाद बढ़ जाती है, तो अल्लाह तआला से उस घमंडी आदमी का रूहानी फ़ासला भी बढ़ जाता है।

मंदरजाज़ेल आमाल भी तकब्बुर की निशानदही करते हैं: अपने दोस्तों या मिलने वालों से मिलने न जाना; तुम्हारे बाज़ू में कोई बैठे तो उसे नापसंद करना; मरीज़ या बीमार शख़्स के साथ न बैठना; घर का काम न करना, घरदारी के लिए ज़रूरी खरीदारी न करना; एक कपड़ा जो तुम एक बार पहन चुके हो उसे नापसंद करना, या जब तुम काम करो तो इन सबको मिला दो। के गरीब शख़्स का दावतनामा मना करदो और एक अमीर का कुबूल करलो ये भी तकब्बुर है मंदरजाज़ेल अमाल जब दूसरों की मौजूदगी में किए जाएँ तो बहाना समझा जाता है और जब अकेले या दूसरों की मौजूदगी में किया जाए तो तकब्बुर माना जाता है; अपने कुंबे और रिश्तेदारों को ज़रूरयात मुहैय्या न कराना, ना ही उनकी सही आगाही को मानना और बहस करना जो उन्हें सलाह देते हैं, और ना ही उनका शुक्रिया अदा करते हैं जो उनकी कमियाँ बताते हैं।

एक शख़्स का आजिज़ शख़्स होने के लिए ज़रूरी है के उसे अपने आगाज़ का पता हो मिसाल के तौर पर कहाँ से वो आया है और कहाँ उसे जाना है।वो उससे पहले मौजूद नहीं था।बाद में, वो एक कमज़ोर बच्चा बन जाता है जो हरकत नहीं कर सकता।अब वो एक ऐसा शख़्स है जो हमेशा इस डर में रहता है के कब बीमार हो या मर जाए।आखिर में, वो मर जाता है, सड़ जाता है और मिट्टी बन जाता है।वो कीड़े मकोड़ों की ग़िज़ा बन जाता है।उसकी तकलीफ़ें एक जेल की तकलीफ़ो की तरह हैं, मिसाल के तौर पर, वो अपने आपको फ़ाँसी पर लटकने का इंतेज़ार कर रहा हो, यानी, दुनिया के तहखाने में हर पल वो अपनी सज़ा की खबर सनने के लिए इंतेज़ार कर रहा है।वो मर जाता है।उसका जिस्म लाश बन जाता है और कीड़ों का खाना बन जाता है।वो अपनी कबर में सज़ा भूगत्ता है।आखिरकार, वो मौत/कबर में से उठाया जाता है और कयामत के दिन की तकलीफ़ें भूगत्ता है।कौनसा शख़्स ज़्यादा सही ये कहलाने के लिए के वो इस डर के साथ रह रहा हो के उसे दोज़ख में लाज़वाल सज़ा मिलेगा: आजिज़ या घमंडी? अल्लाह तआला जो उठाने वाला है, मखलूक को बचाने वाला है, पूरी ताकत वाला जो किसी से नहीं मिलता और जो वाहिद हाकिम है और जो सब ताकतों से ऊपर है ने कहा, "**मैं घमंडी लोगों को पसंद नहीं करता,**" और "**मुझे आजिज़ लोग पसंद है।**" इसलिए, कौन सब से ज़्यादा कमज़ोर इंसानी मखलूक के लिए मौज़ूँ है? क्या कोई दाना जिसने अल्लाह तआला की बड़ाई को पहचान लिया हो वो कभी घमंडी हो सकता है? इंसानों को चाहिए के वो हमेशा अपनी कमज़ोरियाँ और आजिज़ी अल्लाह तआला को दिखाएँ।इसलिए, हर वक्त और हर मौके पर उन्हें अपनी कमज़ोरियाँ और आजज़ी उसको दिखानी चाहिए।अबू सुलेमान दर्रानी रहीमाहुल्लाहु तआला ने कहा,"अगर पूरी मखलूक भी मुझे हकीर बनाने की कोशिश करले मुझे अपने से ज़्यादा हकीर शख़्से ज़ाहिर करने के लिए जो असल में मैं हूँ, वो ऐसा करने में नाकाम रहेंगे, क्योंकि मैं जानता हूँ में सबसे कम रूतबे वाले से भी नीचा हूँ जो कोई भी सोच सकता है।" क्या कभी कोई शख़्स अपने आपको सबसे ज़्यादा हकीर समझ सकता है, शैतान और फिरओन को शामिल करने के भी, वो दोनो [और कुछ दूसरे ज़ालिम इस्लाम और इंसानियत के दुश्मन, जैसे के स्टेलिन, माओ और उनके गुलाम] वो सब वक्तों

के खराब काफ़िर हैं? लोग जो खुदाई और दावा करते हैं और अपनी ख्वाहिशें लादने के लिए हज़ारों लोगों को परेशान किया और मरवा दिया, वो सब काफ़िरों में सबसे ज़्यादा ज़लील हैं। वो अल्लाह के गुस्से को सहेंगे, और वो उनको खराब कुफ्र में डाल देगा। "मेरे लिए; वो मेरे साथ हमदर्दी करेगा, मुझे सही ईमान और राह दिखाएगा। वो अगर चाहे तो वो इसका उलटा भी कर सकता है। अलहमदोलिल्लाह, वो ऐसा नहीं करेगा। लेकिन मेने बहुत सारे गुनाह किए हैं और बेइंसाफियों के जुर्म किए हैं जो किसी और ने नहीं किए। और मैं नहीं जानता के मैं कैसे मरूगाँ।" सबको अपने आप से ये अलफ़ाज़ कहने चाहिए और आजिज़ी रहना चाहिए।

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**अल्लाह तआला ने मुझे आजिज़ रहने का हुकूम दिया है। कोई भी तुम्मेसे किसी दूसरे के साथ तकब्बुर से पेश नहीं आएगा!**" इस हदीस के मुताबिक हमें और गैर मुस्लिम शहरियों (**ज़िम्मी**) और जो इजाज़त (पासपोर्ट) के साथ हमारे मुल्क में घुमने आएँ कारोबार करने वालों और सैलानियों के साथ आजिज़ रहना चाहिए। क्योंकि सबके साथ इंकेसारी के साथ रहना ज़रूरी है, ये इस हदीस का ज़रूरी खात्मा है के इस बात की इजाज़त नहीं है के उनको किसी भी तरह से नुकसान पहुँचाया जाए।

[ये हदीस और इसकी तशरीह अहले-सुन्नत के आलिमों के ज़रिए इस बात का साफ़ इशारा करती है के जो मुसलमान गैर मुस्लिम मुल्कों (**दार-उल-हरब**) में रहते हैं उन्हें इस मुल्क के शहरियों के हुकूक, माल और इज़्ज़त पर हमला करना की इजाज़त नहीं है। चोरी, फसाद, दूसरों को नुकसान पहुँचाना, उस ज़मीन के कानून की खिलाफ़ वरज़ी करना, सरकारी अफ़सरों की बेइज़्ज़ती करना, टैक्स के कानून की खिलाफ़ वरज़ी, महसूल या किराया की अदाएगी सेबचना, और इसी तरह के बरताव जो इस्लाम की इज़्ज़त और इस्लामी अखलाकियात से मुकाबला नहीं करते उनकी इजाज़त नहीं है। काफ़िरों के मुल्क में इसाई कानून की खिलाफ़ वरजी न करने का मतलब ये नहीं है के उन्हें "**उलूल-अमर**" मान लिया जाए। (दूसरे के) हुकूम जो अल्लाह तआला की तरफ़ नाफ़रमानी लाते हों वो ज़रूरी नहीं है के उनके लिए पलट कर वार किया

जाए। इस तरह के हुकूम पर कुछ इज़हार नहीं करना चाहिए, चाहे अगर वो किसी गैर मज़हबी ऊँचे मरतबे वाले ने ही क्यों ना दिया हो। कायम हुई सरकार के खिलाफ़ बग़ावत करना और अमल किए हुए कानून की मुखालफ़त करना फितने का सबब बन सकता है,(यानी, बुराई, अचानक हुआ बदलाव, तरग़ीबदेना,) जो के हराम है, (यानी इस्लाम के ज़रिए मना है) ये मामला फ़िकह की किताबों में (इस्लाम के अमल, समाजी, मआशी, कारोबार कारवाई, हुकूमत और कानून सासी की साईन्स, और जो इलमो अदब की हैं) नाजाईज़ तशदूद और दबाओ वाले हिस्से, और मुहम्मद मासूम रहमतुल्लाह अलैहि की **मकतूबात** की तीसरी जिल्द के पचपनवें खत में समझाया गया है। अगर एक शख़्स, चाहे वो मुस्लिम मुल्क में रहता हो या गैर मुस्लिम मुल्क में जिसे दारूल-हरब कहते हैं, अगर वो पैग़म्बर 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' के इन एहकाम की मुखालफत में काम करता है और या कोइ ऐसे कम करता है जो उस मुल्क के कानून के खिलाफ़ हैं जहाँ वो रह रहा हो, वो ना सिर्फ़ गुनहगार होगा बल्कि इस्लाम को दुनिया की नज़र में मज़हबी अकीदे से खुनखवार/उजड/जंगली और मुसलमानों को वहशी ज़ाहिर करेंगे, जोकि बदले में इस्लाम के खिलाफ़ धोका होगा।

जिहाद का मतलब है '**अमर-ए-मारूफ़**' और '**नहय-इ-अन-इल-मुंकर**'। पहले वाले का मतलब है 'इस्लाम को काफ़िरों को बताना, और इस तरह उन्हें कुफ़्र की तबाही से बचाना, और बाद वाले का मतलब है मुसलमानों को इस्लामी रीति रिवाज के बारे में पढ़ाना और उनको इस्लाम में मुमानियत की गई बातों को करने से रोकना। इन दो फराईज़ (जिहाद से) में से कोई एक आप तीन तरीके से अदा कर सकते हैं। पहला तरीका है जिस्मानी तौर से करना, या साफ़ मआनी में हर तरह हथियार का इस्तेमाल करके जिहाद करना; इस तरह का जिहाद मुतलकुल अनान हाकिम और शाही ताकतों की गलत पालिसी को लाचार लोगों पर थौपनें से बचाने के लिए करते हैं जो अपने अंधे भरोसे या इस्लाम के बारे में लाईल्म होने की वजह से मासियत के कुएँ में गिर जाते हैं या जो जुल्म, सख्ती, परेशानी, इस्तेहसाल या गुमराही की ज़िन्दगी जी रहे हैं। जदीद हथियार इस्तेमाल किए जाते हैं इन जाबिर और शाही जालिमों के खिलाफ़ उनकी ताकतों को नेसतोनाबूद करने के लिए, और इस तरह बदनसीब गुलामों और पामाल लोगों को उनके चंगुल से छुटकारा मिल जाता है। तब उन्हें

दावातें दी जाती है के वो अपनी मरज़ी से मुसलमान बने। अगर वो मुसलामन होना पसंद नहीं करते तो उन्हें इजाज़त होती है के वो अपनी मरज़ी के मज़हब को अपनाए और एक इस्लामी रियासत में जो सबको आज़ादी, बरावरी रहें। इस तरह का **(जिहाद)** सिर्फ़ इस्लामी रियासतें या उनकी फौंजे कर सकती हैं। किसी भी एक मुसलमान को इस बात की इजाज़त नहीं होती के वो एक इस्लामी रियासत के पहले से बताए बगैर उनकी इजाज़त हुकूम और ईल्म में लाए बगैर किसी काफ़िर पर हमला करना या उसे लूटना जाईज़ नहीं है। इस्लामी मज़हब उन मुसलमानों को सख्त सज़ा देता है जो किसी दूसरे मुल्क के शहरी को कत्ल करदे जिसके साथ इस्लामी रियासत का अमन का मुआहिदा/समझौता हुआ हो। जैसे के इससे पहले से साफ़ ज़ाहिर हो रहा है के, इस्लामी मज़हब में लड़ाई का मतलब ये नहीं हैं कि दूसरे मुल्कों को बरवाद करो या दूसरे लोगों को मारो। इसका असल में मतलब है के इस्लाम को इस तरह लोगों तक पहुँचाना के वो अपनी मरज़ी और प्यार से मुसलमान बने और अपने आपको लाज़वाल तवाही से बचाएँ। हमारे पैग़म्बर 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम', सहावा अलैहिमुर रिज़वान और असली इस्लामी रियास्तें मिसाल के तौर पर ऑटोमान/उस्मानिया सलतन्नत सब ने इस तरह का जिहाद अदा किया। वो कभी कमज़ोर और निहतते लोगों पर हमला नहीं करते थे। वो इस्लाम के दुश्मनों के खिलाफ़ लड़ते थे, ज़ालिम काफ़िर, शाही और बिदअती और मेटने वाले लोगों के खिलाफ़ जो मुसलमान नाम रखते थे और इसके बावजूद इस्लाम के पैग़ाम को उन गरीब लोगों तक पहुँचने से रोकते थे। वो उनके खिलाफ़ लड़े और जो उनकी ज़दकोब ताकतों से परेशान हाल ज़िन्दगी गुज़ार रहे थे उन्हें आज़ाद कराया। उन्होने, उन्हें इस्लाम के बारे में वताया और इस तरह उन्हें मुसलमान बनने का मौका दिया उनकी मरज़ी से और इस तरह उन्हें अवदी खुशियाँ हासिल करने में मदद करी।

इस्लामी रियासत या इस्लामी फौज का दूसरा फ़र्ज़ है मुसलमानों और इस्लाम को बचाना और मासियत और बिदअत के खिलाफ़ जिहाद करना जो मुसलमानों और इस्लाम को खत्म करने के लिए इस्लामी मुल्कों पर हमला करते हैं। अल्लाह तआला ने सूरह अनफ़ाल में हुकूम दिया के इस्लामी रियासत अमन के वक्त के दौरान सीखते हुए साईन्सी तहकीकात करें और मासियतो मुल्कों में

जदीद हथियारों को बनाएँ। रियासत के मुलाज़िम/अफ़सर जो नए हथियारों को बनाने के फ़र्ज़ को नज़रअंदाज़ करें वो इस्लाम की शरीअत की नाफ़रमानी करते हैं और लाखों मुसलमानों की मौत और इस्लाम को कमज़ोर करने के ज़िम्मेदार होते हैं और नतीजे के तौर पर वो अपने दुश्मनों के हमलों की मुखालफ़त करने में नाकाम रहते हैं।

इस्लामी जिहाद का दूसरा तरीका है के सारे बातचीत के ज़राओं का इस्तेमाल किया जाए इस्लाम को फैलाने और इंसानियत को बताने के लिए। इस तरह का जिहाद सिर्फ़ इस्लामी आलिम ही कर सकते हैं वो भी इस्लामी रियास्तों की मदद और उनके काबू में रहते हुए। हमारे ज़माने में, इस्लाम के दुश्मन, यानी पादरए, इश्तराकी, फ्रीमेसनस, और वो लोग जो कोई मज़हब नहीं मानते थे **(ला-मज़हबिया)** वो सारे ज़राए गुफ़्तों शुनीद के इस्तेमाल करते थे इस्लाम पर हमला करने की गर्ज़ से। वो लोगों को झूठी कहानियाँ और बदनामियों के ज़रिए लाइल्म मुसलमानों को धोका देने की कोशिश करते थे और इस तरह इस्लाम को बरबाद करना चाहते थे। हाल ही में, **1992** में हमने सुना के ईसाइयों ने ग्यारह सवाल तैयार किए है और उनको इस्लामी मुल्कों में बाँटा है। बंगलादेश के आलिमों ने इन सवालों के जवाब लिखे और इस तरह ईसाई पादरियों के ग्रुप को ज़लील किया, जो के इस मंजर के पीछे के मंसूबा बाज़ थे। हकीकत किताबेवी जो के इस्तानबुल में है इन जवाबों को **असीरतुल मुस्तकीम** नाम की किताब में “अल-अकाज़ीब-उल-जदीदातुल-हीरिस्तीआनीया” नाम से शामिल किए हैं और अब सारी दुनिया में उन्हें तकसीम कर रहे हैं। इसी तरह, दूसरा ग्रुप यानी, कादीयानीस (**अहमदीयास**), बहाईस, मोदूदी के मानने वाले, तबलीग़ी जमाअत के लोग, सलाफिया ग्रुप, और वो लोग जो किसी मज़हब (ला-मज़हबिया के कुरआन अल करीम और हदीस शरीफ़ में से गलत और खराब मआनी निकाल कर इस्लाम के सही रास्ते से भटक गए हैं। इनमें से कुछ पाजी अपनी इस इलहादियत को इतनी दूर ले गए हैं के वो मासियत के फ़ंदे में फंस गए। ये सब अपने खराब और राह से भटके हुए एतेकाद को किताबों रिसालों और किताबचों की इशाअत के ज़रिए और रडियो के ज़रिए फैला रहे हैं। वो इस मकसद पर लाखों खर्च कर रहे हैं। एक तरफ़ वो इस्लाम को अंदर से बरबाद कर रहे हैं “अहले-अस-सुन्नत के मुसलमानों यानी “सुन्नी मुसलमानों”

को धोका देकर, और दूसरी तरफ़ वो सब लोगों को मज़हब के नाम पर ऐसी चीज़ों से मिला रहे है जो पाक और सही इस्लाम नहीं है। इन सब नशरो इशाअत के बीच, वो लोग जो मुसलमान बनना चाहते हैं वो घबरा जाते हैं और या तो वो मुसलमान बनने का इरादा छोड़ देते हैं या फिर गलत रास्ते पर चल पड़ते हैं इस भरोसे के साथ के वो मुसलमान बन चुके हैं।

आज, सबसे बड़ा जिहाद "अहले-सुन्नत" के आलिमों के ज़रिए अदा किया जा रहा है उन अदरूनी और बेरूनी इस्लाम के दुश्मनों के खिलाफ़ जो बरबादी और मक्कारी वाले नशरो इशाअत कर रहे हैं, "अहले-सुन्नत" की ईल्म की तालिमात को फ़ैलाते हुए, यानी, हमारे पैग़म्बर मुहम्मद 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' और उनकी सहाबा के तरीके के ज़रिए सारी दुनिया के लोगों के लिए गुफ़्तों शूनीद के ज़राए का इस्तेमाल करते हुए।

जिहाद का तीसरा तरीका है इबादत के ज़रिए। ये "फ़र्ज़ अल ऐन" है या दूसरे लफ़्ज़ों में ये हर मुसलमान के लिए फ़र्ज़ है के वो इस तरह का जिहाद करे। इस तरह का जिहाद ना करने का मतलब है बड़ा गुनाह करना। तीसरी तरह से जिहाद इस तरह होता है के उनके लिए दुआ करना जिन्होने पहले दो तरह के जिहाद अदा किए हैं। वो जो दो तरह के जिहाद कर रहे हैं वो उनकी दुआएँ चाहते हैं जो पहले दो जिहाद में शामिल नहीं हैं। सारी दुआएँ जो संजिदगी से अदा की जाएँ वो हरहाल में कुबूल होती हैं।

अल्लाह तआला बगैर किसी शक के उनकी मदद करता है जो अल्लाह तआला की मदद में यकीन रखते हैं और इस्लाम के एहकाम को मानते हैं और ऊपर बताए गए तीन तरह के जिहाद अदा करते हैं। अल्लाह तआला उन लोगों की दुआएँ कुबूल नहीं करता जो अपने आपको जिहाद के लिए तैयार ना करें और जो पहले से जदीद जंग के हथियार तैयार करके ना रखे और जो आपस में मज़बूत भाईचारा और प्यार कायम ना करें बल्कि उसके बजाए ये सोचें के उन्होने इबादत करके अपने जिहाद का फ़र्ज़ अदा कर दिया। (दुआ) इबादत कुबूल होने के लिए कुछ शराईत का पूरा करना ज़रूरी है। ये शरीयत इस करार को कायम रखती हैं जो इसके नतीजे का सबब बनता है के हमने दुआ माँगी। जैसा के हमने ऊपर बताया है के जिहाद में कामयाब

होने के लिए, हमें इस्लाम के एहकाम को मानना होगा। इस्लाम हमें जिहाद के लिए अपने आपको तैयार करने के लिए हुकूम देता है। जिहाद का पहला तरीका जदीद हथियार की दस्तयाबी पर है और इसके इस्तेमाल को सीखने पर है। इसके अलावा, इसमें जंगी तरबीयत और अपने रेहनुमाओं और कमांडरो की फरमाबरदारी करने पर है जो इनके सरबराह हैं और साथ में इलहादी तहरीकों से दूर रहना है। अगर फरमान जारी करने वाले ओहदों के पास भरोसा **(वक्फ़)** है, तो हर मुसलमान जिसके पास ज़राएँ हैं वो ऐसी ट्रस्ट की मदद करेगा। "अहले-सुन्नत के आलिमों की या ट्रस्ट की मदद करना जो ऐसे आलिमों की मदद करते हैं जिन्होने माल के ज़रिए जिहाद कायम किया। अल्लाह तआला ने उन जिहाद अदा करने वालों से वादा किया है जिन्होने जिस्मानी और माली जिहाद अदा किया के वो लाज़वाल जन्नत के बाग़ों में जाएँगे। अली मुहम्मद बेलही ने अपनी किताब मुफ़ती-ए-मुजाहिद जो के फारसी में लिखी गई और **1411** ए-एच में छपी में पूरी तरह जिहाद को वाज़ेह किया है।]

एक हदीस शरीफ़ इस तरह पढ़ी जाएगी: "**उन लोगों के लिए कितनी खुशकिस्मती है के उन्हें अल्लाह की बरकतें हासिल हुई, और जो बहुत आजिज़ी के साथ पेश आते हैं और जो अपनी कमियों के बारे में जानते हैं और जो अपनी रोज़ी** (जिस तरह इस्लाम ने बताई है और कहीं है) **हलाल तरीके से कमाते हैं, और अपनी कमाई सही मकसद के लिए इस्तेमाल करते हैं, और जो फ़िकह के ईल्म को तसव्वुफ़ के ईल्म सात यानी हिकमत के साथ मिलाते हैं और जो हलाल और हराम के बीच सरहदों का पहरा देते हैं, और जो गरीबों के साथ रहम करते हैं, और वो ऐसा अल्लाह तआला की रज़ा के लिए करते हैं, और जो खुबसूरत अखलाकी आदत हासिल करते हैं, और जो किसी को नुकसान नहीं पहुँचाते,और जिनके रीति रिवाज उनके नज़रिए के मुताबिक हों, और जो अपने माल को ज़्यादा बढ़ाते हैं और अपनी ज़बान/कलाम की ज़्यादती को बचा कर रखते हैं।**"

आजिज़ी जब गलत मकसद के लिए इस्तेमाल की जाए जैसे मज़ाक, हिलया, शेखी बाज़ी, या मआशी ऊँचे रूतबे या हिफ़ाज़ती गोर करने के लिए तो बुराई बन जाती है। इस बुराई से बचने के लिए उन चीज़ों को खत्म करने के

ज़रूरत है जो इसका सबब हैं। जो भी कोई इन चीज़ों से जो बुराई का सबब बनती हैं उनसे छुटकारा पाले तो सही मआनी में आजिज़ी हासिल करेगा।

उल्लेमा और ईल्म की कदर

फारसी में एक किताब लिखी गई थी जिसका नाम **रीयास्त-ऊन-नासीखिन** था [ये किताब **835** हिजरी में मुहम्मद रवहामी ने फारसी में लिखी थी। ये **1313** हिजरी में बंबई में छापी गई। इसको दूसरी बार **1994** में इस्तानबुल में हकीकत किताबवी के ज़रिए दोबारा छापी गई।] उसमें **356**वें सफ़े पर शुरू में लिखा था: वो हदीस जो **मिरसाद-उल-इबाद मिनल-मबदा-ए-इल्ल-मआद**नाम की किताब में लिखी हुई है [इस किताब के लिखने वाले नजमऊददीन अबू बकर रज़ी **654** हिजरी में गुज़र गए थे।] बयान करती है, "**एक शख़्स जो मज़हबी इल्म आलिमों की इज़्ज़त हासिल करने के इरादे के साथ करता है या जाहिलों के साथ बहस करके मश्हूर होने के इरादे से करे उसे जन्नत की खुशबू तक नहीं मिलेगी।**" इस हदीस से ये समझ आता है के एक शख़्स जो मज़हबी इल्म दोलत या मरतबा पाने के लिए या अपनी वहशी ख़्वाहिशों को पूरा करने के लिए और अपने इल्म को अमल में ना लाए,तो वो इस्लामी (आलिम) नहीं है। दूसरी हदीस से बयान है: "**एक शख़्स जो दुनियावी माल को हासिल करने के लिए सीखता है और इन दुनियावी माल को जमा भी कर लेता है लेकिन आखिरत के लिए जो उसने पाया वो दोज़ख की आग है।**" इस तरह का इल्म किसी को भी फायदा नहीं पहुँचा सकता। ये ज़रूरी है के इस तरह के इल्म से बचा जाए। इस वजह से मंदरजाज़ेल हदीस में बयान है, "**ऐ मेरे रब! महरबानी करके मुझे बेकार इल्म से बचाईए।**" वो इल्म जो एक मुसलमान के ज़रिए सीखा जाए वो "इस्लामी इल्म" कहलाता है। इस्लामी इल्म को दो हिस्सों में बाँटा गया है, "मज़हबी इल्म" और "साईन्सी इल्म"। बेकार इल्म को भी दो हिस्सों में बाँटा गया है। पहली है मज़हबी इल्म जो ऊपर बताए गए शख़्स के ज़रिए सीखी जाए, जिन्हें कहा गया है के वो दोज़ख में जाएँगे। दूसरी तरह की है साईन्सी इल्म जो मज़हबी इल्म से मिलती हुई नहीं है। [पुराने ज़माने के रोमन यहूदियों को शेर के आगे फैंक कर सताया करते थे,

इसाई फ़िल्सितिन में वस्ती ज़माने में मुसलमानों के खिलाफ़ वहशी हमले करते थे, हिटलर के ज़रिए यूरोप में और एशिया में रूसी और चीन के इश्तरकियों के ज़रिए ढेरो लोगों का मारा गया और अंग्रेज़ कौमों को धोका देकर लोगों पर हमला करते थे और उन्हें एक दूसरे के साथ लड़वाते थे, ये सब दूसरे तरह की साईन्सी इल्म का इस्तेमाल करते हुए पूरा किया गया।] अल्लाह तआला कहता है के ये बदबख्त लोग जो इंसानियत के दुश्मन हैं लेकिन साईन्सी इल्म में आगे है वो गधों से मिलते जुलते हैं। उसने खास तौर से कहा, "**ये सब गधों की तरह हैं जो तोरह और नए तोरात से भरे हुए हैं।**" ये ज़ालिम लोग जो साईन्सी इल्म रखते हैं और इस्लामी इल्म से अनजान हैं वो सही रास्ते पर नहीं हैं। अल्लाह तआला उनसे खुश नहीं है। **कुनूज़-ऊद-दिकाईक की** किताब में एक हदीस शामिल है, "**तुम में से सबसे अच्छा वो है जो कुरआन को याद करता है और पढ़ता है।**" मिश्कात ने एक हदीस शरीफ़ में इस तरह बयान किया, "**हर मुसलमान मर्द और औरत को इस्लामी इल्म सीखना चाहिए।**" इस हदीस के ज़रिए इल्म का मतलब है वो इल्म जो अल्लाह तआला ने पसंद किया है और मंज़ूर किया। ऐसे लोगों को इल्म देना जो उसे सही तरह से संभाल नहीं सकते वो ऐसे हैं जैसे सुअर के गलों में सोने की चैने बाँध देना। [मंदरजाज़ेल हदीस शरीफ़ एक तुर्की अखबार के ज़रिए **12** जून **1995** में एककैलेन्डर की शीट पर छपी, "**कयामत के नज़दीक सच्चा मज़हबी इल्म नायाब होगा। नावाकीफ़ मज़हबी आदमी अपने नज़रिए के मुताबिक फतवे देंगे और लोगों को सही रास्ते से भटकाने का सबब बनेंगे।**"] एक दूसरी हदीस शरीफ़ में रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमाया, "**एक वक्त/ज़माना आएगा जब लोग मज़हबी आदमियों से इस तरह दूर भागेंगे जिस तरह वो मरे हुए गधे से दूर भागते हैं।**" उनकी हालत से हमें पता चलेगा के इंसानों की हालत कितनी खराब और बुरी है। क्योंकि,अल्लाह तआला इल्म की कदर करता है। लेकिन वो बेवकूफ़ जो दुनिया की इबादत करते है और अपने बच्चपन में स्कूल नहीं गए; ना ही जवान होने के बाद उन्होने किसी सच्चे इस्लामी आलिम की सोहबत में उनसे फज़ल हासिल किया इसलिए, वो अपनी हालतों को नहीं जानते के वो कितने खतरे में है, वो ज़रूरी इल्म हासिल नहीं करते और ना ही वो किसी असली मज़हबी आलिम की किताब पढ़ते हैं और सीखते हैं। उनका सिर्फ़ एक

मकसद होता है के किस तरह पैसे और माल को दबाया जाए और एक मरतबा हासिल किया जाए। वो इस बात की परवाह नहीं करते के वो जाईज़ (हलाल) या नाजाईज़ (हराम) तरीके से कमा रहे हैं। वो सही और गलत की तमीज़ नहीं कर सकते। वो इल्म की और सच्चे मज़हबी उल्लेमाओं की खुबी को नहीं सराहते। सच्चे मज़हबी आलिमों की तहरीरे और वाज़ ऐसे लोगों की नज़र में कोई कीमत नहीं रखते। ऐसे लोगों की नज़र में इन सच्चे मज़हबी आलिमों की किताबों और वाज़ उन लोगों के बराबर है जिस बाज़ार में वो जानवर बेचते है उस बाज़ार में वो खुशबू बेचे या ऐसे शख़्स के साथ मिलाते हैं जो अंधे लोगों को शीशे बेचते हैं। या फिर ये इस तरह है के कुरआन की सूरह ताहा अबू लहब को पढ़ाई जाए या फिर गली में घूमने वालों की जेब में सच्चे मोती और कीमती पत्थर भर दिए जाएँ या फिर चालाक लोग अंधे शख़्स को सुरमा तौहफे में दे; ताहम एक चालाक शख़्स इन में से कोई भी काम नहीं करेगा। अल्लाह तआला ऐसे लोगों की इस तरह वज़ाहत करते हैं: "**ये जानवरों की तरह हैं। दरअसल, ये जानवरों से भी हकीर हैं।**" एक हदीस शरीफ़ जो इनेस बिन मालिक रज़ी अल्लाहु तआला अन्ह के हुकूम के हावाले से है: "**अल्लाह तआला एक शख़्स को समाज में ज़लील करेगा अगर वो बगैर किसी वाजबी सबूत के एक आलिम की बेइज़्ज़ती करेगा। एक शख़्स जो आलिमों की इज़्ज़त करेगा वो अल्लाह तआला के ज़रिए इज़्ज़त पाएगा और पैग़म्बरों की तरह ऊँचा मकाम पाएगा।**" एक दूसरी हदीस शरीफ इस तरह पढ़ी जाएगी: "**अगर एक शख़्स एक आलिम के साथ बात कर रहा है और उस आलिम की आवाज़ से ज़्यादा अपनी आवाज़ ऊँची करता है तो अल्लाह तआला उसे इस दुनिया में और आखिरत में भी ज़लील करेगा। अगर वो माफी महसूस करे और पछताए तब उसे माफ किया जा सकता है।**" ये ऊपर बताई गई बातों से साफ ज़ाहिर है के सच्चे आलिम की पूरी इज़्ज़त करना ज़रूरी है।

एक नज़्म:

तुम एक पानी की बूंद से बने हो, मत भूलो!
कभी अपने आपको आलिम के बराबर मत समझो!

सुनो क्या हुकूम दिया मुस्तफ़ा ने!
आलिमो की इ़ज़्ज़त करना ही मेरी इ़ज़्ज़त करना है !

ये अच्छी तरह जान लो के इल्म और उल्लैमा ही सिर्फ़ इंसानों को गलत रास्ते पर चलने से बचा सकते हैं। एक रेहनुमा (रहबर) के बग़ैर तुम सही रास्ता नहीं पा सकते। इस वजह से ये ज़रूरी है के तुम अहले-सुन्नत के सच्चे आलिमों को ढूँढो और उसके बाद सही मज़हबी किताबें पढ़ो जो उन्होने लिखी हैं। क़ुरआन की सुरह "कैहफ़" में लिखा है के हाँलाकि आला पैग़म्बर मौसेस (मूसा) अलैहिसलाम इल्म के आला मरतबे पर थे, इतने ज़्यादा के वो अल्लाह तआला से खुद बातचीत किया करते थे और अल्लाह तआला के प्यार का शरबत पीते थे इसके बावजूद उनको युशा अलैहिसलाम से इल्म सीखने के लिए मिलना पड़ा जोकि खिज़र अलैहिसलाम के शार्गीद थे इसके बावजूद के मौसिस (मूसा) अलैहिसल्लाम मंतिक के मास्टर थे, तब भी वो खिज़र अलैहिसल्लाम से सीखने गए। ये तफ़सीर की किताब जोकि बुखारी रहीमाहुल्लाहु तआला ने लिखी थी उसमें बड़े तौर पर बयान है; ऐ मेरे भाई! क्या तुमने इल्म और आलिमों से ज़्यादा कोई बेशकीमत चीज़ ढूँढी है जो तुम अपनी ज़िन्दगी इसके साथ गुज़ार रहे हो। क्या तुम नहीं जानते के हमारा मज़हब हमें हुकूम देता है के इल्म और आलिमों को इ़ज़्ज़त दो और जो लोग अल्लाह तआला की कतार/राह पर हैं उनमें शामिल हो जाओ। इस वजह से, अपनी ज़िन्दगी ग़ैर ज़रूरी चीज़ों के साथ अलग मत गुज़ारो। एक हदीस शरीफ़ में इस तरह पढ़ा गया: "**एक पैग़म्बर और एक आलिम के बीच में सिर्फ़ एक ईकाई का फर्क है जो सही इल्म रखते हैं और इसी इल्म के मुताबिक काम करते हैं। ये एक ईकाई नब्बुवत की ईकाइ है।**" हर एक को चाहिए के इल्म को सीखने की कोशिश करे इस नसीब को हासिल करने के लिए।

एक नज़्म:

ओह! खुशी वाला शख़्स वो है जो इल्म सीखता है!
अपनी ज़िन्दगी का एक मिनट भी बरबाद मत कर!
इस कीमती सलाह की कदर कर!
जो करद ना करें, उनके लिए अफ़सुरदगी है!

कहानी: इमाम युसूफ़ काज़ी का एक पन्दरह साल का लड़का था। वो अपने बेटे से बहुत प्यार करते थे। एक दिन अचानक उनका बेटा मर गया। उन्होने अपने शार्गिदों से कहा वो उनके मरे हुए बेटे की (जैसे के इस्लाम में बताया गया है) तदफ़ीन का इंतेज़ाम करें (बग़ैर उनके) क्योंकि वो अपने उस्ताद की जमाअत छोड़ना नहीं चाहते थे। इमाम के इंतेकाल के बाद, कुछ लोगों ने उन्हें ख्वाब में देखा। वो जन्नत में एक बहुत बड़े महल के पास खड़े थे। वो महल इतना लम्बा था के वो "अरश" की तरफ बढ़ता हुआ लग रहा था। जब उन्होने पूछा ये महल किसका है, तो उन्होने कहा के वो उनका महल है। तब उन्होने पूछा आपने इतना बड़ा महल कैसे पाया। उन्होने जवाब दिया के ये महल उन्होने इल्म के लिए अपने प्यार और साथ के साथ उसको सीखने और पढ़ाने की वजह से पाया। ऐ मेरे भाई! इस दुनिया में और आखिरत में अज़ीज़ होने के लिए, इल्म को सीखो!

एक नज़्म:

हर वक्त खुश रहने के लिए,
चारों तरफ इज़्ज़त पाने के लिए,
इल्म को हासिल करने की कोशिश करो,
बनजाओ इल्म का ताज ले जाने वाले!

कहानी: **रीयाद-ऊन-नासीखीन** किताब के लिखने वाले मौलाना मुहम्मद रव्हामी ने कहा के उनके उस्ताद अल्लामा मुहम्मद जलाल काइनी सुम्मा हिरावी के बड़े बेटे बहुत पाक आलिम थे। जब वो मर रह थे, तो उनके वालिद/बाप उनके बिस्तर के पास थे। उनके इंतेकाल के बाद, उन्होने उनका मुंह ढक दिया और स्कूल चले गए और थोड़े वक्त के लिए हदीस पढ़नी शुरू कर दी। पढ़ाने के बाद, वो वापिस चले गए और तदफ़ीन की तैयारी में लग गए। पहाड़ों पर से शहर के चारों तरफ़ एक आवाज़ आई और कहा, "मेरे बेटे के मरने का वक्त आ गया। वो मर गया। क्योंकि ये अल्लाह तआला के हुकूम के मुताबिक है, मैं उसका हुकूम मानता हूँ और उसे तसलीम करता हूँ। मैं इसके अलावा और कुछ नहीं सोच रहा। हसन बिन अत्तिया रहीमाहुल्लाहु तआला ने कहा, "**कोई भी जो एक इस्लामी आलिम की मौत से ग़मज़दा ना हो वो धोकेबाज़ है। यहाँ पर इससे**

बड़ी कोई तबाही नहीं है इंसानियत के लिए के एक इस्लामी आलिम की मौत हो जाए।जब एक इस्लामी आलिम मरता है, तो आसमान और आसमान पर रहने वाले सब सत्तर दिनों तक रोते हैं।" जब एक असली आलिम मरता है तो, मज़हब में एक ज़ख्म हो जाता है और ये चोट/ज़ख्म दुनिया के खत्म होने तक रहता है।एक दूसरी हदीस शरीफ़ में भी आया है: "**एक इंसान चाहे वो एक आलिम हो या एक शार्गिद इलम को सीखने के रास्ते पर हो या वो जो उनसे प्यार करता हो।लोग जो इन तीनों तरह के अलावा हैं वो मक्खियों की तरह हैं जो मुस्तहकम हों।**"कोशिश करिए के आप इस सामने वाले ग्रुप में ना हों!

एक नज़्म:

ये इल्म जो इंसानो को दोज़ख से बचाता है।
इल्म एक जाएदाद है जो कोई तुमसे ले नहीं सकता।
इल्म के अलावा और कोई चीज़ मत मांगो,
इल्म एक ज़रिया है जो दोनों जहान में खुशियाँ दिलाता है!

ये बलदाजी के फ़तवों में लिखा है के इमाम-ए-सदरूस-शाहिद [सदर-उस-शाहिद हुसामादीन उमर को **536** में समरकंद में शहीद कर दिया गया] ने बयान किया, "एक शख़्स की शादी (निकाह) अपने आप खत्म हो जाता है अगर वो किसी असली आलिम (जानने वाले का) का मज़ाक उड़ाता है।" कोई भी को किसी आलिम को बेवकूफ़, जाहिल, सूअर या गधे के नाम से पुकारता है उसे कोढ़ों से सज़ा मिलेगी।अगर वो ये सब किसी की इज़्ज़त कम करने के मकसद से करता है तो वो कााफ़िर बन जाता है और उसका निकाह [शादी का मुहाएदा जो इस्लाम के मुताबिक होता है।] अपने आप खत्म हो जाता है।इमाम-ए-मुहम्मद का कहना है के एक लफ़्ज़ भी ऐसा बोलना जो कुफ्र का सबब बने वो भी इसी तरह से सूलुक किया जाएगा, यानी, वो काफ़िर बन जाएगा और उसकी शादी खत्म हो जाएगी।कोई भी जो इल्म और आलिमों की बेइज़्ज़ती करता है वो एक काफ़िर बन जाता है।अल्लाह तआला हम सबको फाएदेमंद इल्म दे और हमें बेकार इल्म से बचाए।

13-ज़रूरत से ज़्यादा आजिज़ी (तज़ाल्लूल)

आजिज़ी में ज़्यादती कमतरी (**तज़ाल्लूल**), या कमीनापन या अपने आपको नीचे दिखाना कहलाती है। आजिज़ी मना (हराम) है। जैसा का और दूसरी मना की हुई चीज़ों के साथ है, इस बुराई को थोपी गई ज़रूरत पर लागू करना, ये भी इजाज़त (**जाईज़**) दी गई बन जाती है। यहाँ कुछ थोपी गई ज़रूरतों की मिसाले हैं: अपने मज़हब, माल, इज़्ज़त, या ज़िन्दगी, को बचाना। या अपने आपको किसी ज़ालिम से बचाना। आसानी से जिसका हल निकल आए उसकी इजाज़त है जब वहाँ पर कोई थोपी गई ज़रूरत या मुश्किल हो।

हद से ज़्यादा आजिज़ी भी बुराई में से एक है। मंदरजाज़ेल ज़ाइद आजिज़ी की अच्छी मिसाल है। जब एक ओअलिम (**आलिम**) के पास एक जूता बनाने वाला आए, तो आलिम उसके इसतिक़बाल के लिए खड़ा हो जाए और उसे अपनी जगह बैठने के लिए कहें और जब वो जाने लगे,तो उसके साथ चलते हुए उसे दरवाज़े तक छोड़ने जाए और उसके जूते उसके सामने रखे। इसके बरअक्स, अगर आलिम उसे लेने के लिए खड़ा होता है और फिर वापिस बैठ जाता है और उसे बताता है के कहाँ बैठना है और उससे बातचीत करता है उसके कारोबार के बारे में और उसके आने का मकसद पूछता है और साथ के साथ उसके सवालों के जवाब ख़ुशी से और मुसकराते हुए चेहरे के साथ देता है और उसकी दावत क़ुबूल करता है और उसकी मुश्किले हल करने में मदद करता है, इन सब में वो आजिज़ी दिखा सकता है। रसूल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**एक शख़्स जो अपने मुस्लिम भाई को परेशानी से बचाता है वो इनाम पाता है** (आख़िरत में)**इतना सवाब जैसे के उसने** (नफ़िली) **हज और उमरा अदा किया हो।**" हज़रत हसन रज़ी अल्लाहु तआला अन्ह ने थाबित बेनानी से उनके लिए कुछ करने को कहा। उन्होने कहा मैं मस्जिद में मसरूफ़ हूँ (गोशा नशीनी) एतेक़ाफ़ में

और वो किसी और वक्त में उनका काम कर देंगे। हज़रत हसन रज़ी अल्लाहु तआला ने कहा: क्या तुम नहीं जानते के अपने मुस्लिम भाई की ज़रूरत को पूरा करने के लिए अपनी जगह छोड़ देना ज़्यादा गुन वाला है वनिसबत एक नफ़ली हज या उमरा के?"ये हदीस शरीफ़ इतेफ़ाकन इस खात्मे की बुनियाद है के ये बहुत सवाब की बात है किसी औहदे वाले के लिए के वो किसी ज़रूरतमंद की मदद करे और उस्तादों के लिए के वो अपने शार्गिदों की मदद करें अपना हुकूम और माल के ज़रिए। कोई भी जो मांगता है जबकि उसके पास पूरे ज़राए (नफ़का) हैं अपने आपको सहारा देने के लिए एक दिन के लिए वो हद से ज़्यादा आजिज़ी दिखाता है और इस तरह हराम का मुसतहीक होता है। अगर एक शख़्स के पास एक दिन का ज़रिया (नफ़का) हो और दूसरों के लिए दान जमा करे जिनके पास एक दिन का ज़रिया ना हो या फिर उनके लिए जो दूसरों के करज़दार हों, तो वो को आजिज़ी की ज़्यादती नहीं कर रहा। छोटा तौहफा देना इस उम्मीद पर के बदले में बड़ा तौहफ़ा मिलेगा वो आज़िज़ी की ज़्यादती है। कुरआन की आयातों में इस तरह के तौहफे देना मना है। किसी के मिलने के बदले में एक बेहतर तौहफ़ा देना अच्छी बात है लेकिन इस बात की इजाज़त नहीं है के एक तौहफ़ा देना ये उम्मीद लगाकर के बदले में इससे अच्छा तौहफ़ा मिलेगा। किसी दावात में बग़ैर बुलाए चले जाना भी बहुत ज़्यादा हकीर की बात है। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस-शरीफ़में फरमाया: "**किसी दावत में बुलाए जाने पर हाज़िर ना होना एक गुनाह है। लेकिन किसी दावत में बग़ैर बुलाए चले जाना एक चोरी है।**"एक शादी की रसम की दावत में जाना ज़रूरी (**वाजिब**) है अगर वहाँ पर कोई मुमानिअत की गई (हराम) चीज़ें ना हों या ऐसे काम जो मना हो उस तकरीब में। बाकी दूसरी तरह की दावतों में जाना **सुन्नत** है। इस बात की इजाज़त नहीं है के ऐसी दावतें कुबूल करना जो सिर्फ़ शान दिखाने के लिए या शेखी बाज़ी या धोके बाज़ी के लिए हो। सरकारी अफ़सरों, अमीर लोगों और जजों के साथ इस उम्मीद पर दोस्ती करना के दुनियावी फायदा होगा उनसे ये भी नीचता की बात है। थोंपी गई लाचारी (**ज़रूरत**) के मामले के अलावा जो ऊपर बताए जा चुके हैं। इन लोगों से मिलते वक्त सिर को झूकाना या पैरों को छूना सलाम करने के लिए भी वो आजिज़ी को ज़्यादती है और एक बहुत बड़ा गुनाह

है। इबादत करने के मकसद से सिर को झूकाना मासियत का सबब बन सकता है। इसका मतलब ये हुआ के यहूदियों के सालाम करने के तरीके की नकल करना। [एक गरीब शख़्स का मतलब है एक ज़रूरतमंद। इस्लाम में, एक शख़्स जिसके पास इतना पैसा हो के वो अपनी ज़िन्दगी की बुनियादी चीज़ों को खरीद सकता हो लेकिन इतना पैसा न हो के वो कुरबानी करने के लिए एक भेड़ खरीद सके, वो गरीब है। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने अल्लाह तआला से गरीबी की हालत पूछी और उसके कबज़े की सिफ़ारिश करी, ये माली गरीबी से अलग है; इसका मतलब है इस बात की आगाही के तुम जो भी करो उस सब में तुम्हें अल्लाह तआला की ज़रूरत है। अबदुल्लाह-अद-दहलवी रहीमाहुल्लाहु तआला ने अपनी किताब **दूरूल-मआरिफ़** में कहा है, "सूफ़ियों में गरीब (फ़कीर) का मतलब है के उसकी कोई ख्वाहिश ना होना, या, दूसरे लफ़्ज़ों में, वो जिसकी अल्लाह तआला को खुश करने के अलावा और कोई ख्वाहिश न हो।" एक शख़्स जो इस खासियत को जान लेता है वो सबर और तसल्ली अपना लेता है जब वहाँ पर कोई ज़राए (**नफ़का**) नहीं होता अपनी ज़िन्दगी की ज़रूरयातको मुतमईन करने के लिए वो उस काम से राज़ी हो जाता है जो अल्लाह तआला ने हुकुम दिया है और वो खुराक हासिल करने के लिए काम करता है ताकि अल्लाह तआला के एहकाम की फरमाबरदारी कर सके। जैसे के वो काम करता है, तो उस पर जो काम इबादत के (फ़र्ज़) किए गए हैं वो उन्हें करना छोड़ नहीं देता, और मना किए गए काम भी नहीं करता। जब वो कमा कर उसे खर्च कर रहा होता है तो वो इस्लाम के हुकूम को मानता है। इस तरह के शख़्स के लिए गरीबी बिल्कुल वैसे ही कारामद है जैसे के अमीर होना और एक ज़रिया है दोनों दुनिया में यहाँ भी और बाद वाली में भी खुशियाँ हासिल करने का। एक शख़्स जो अपने नफ़ज़ की मानता है और जिसके पास सबर और तसल्ली नहीं होती वो अल्लाह तआला के हुकूम और किस्मत से मुतमईन नहीं होता। जब वो गरीब होता है, ऐतराज़ करता है ये कहकर के उसने उसे बहुत कम दिया। जब वो अमीर होता है, तो वो फिर भी राज़ी नहीं होता और ज़्यादा के लिए कहता है। वो अपनी कमाई मना की हुई चीज़ों पर लगाता है। उसकी गरीब या अमीरी उसके लिए दोनों में इस दुनिया में भी और आखिरत में भी एक तबाही का ज़रिया है।]

किसी भी तरह का कारोबार या तिजारत करना या नौकरी और मज़दूरी करने की इजाज़त है, मिसाल के तौर पर, चरवाहे, माली, मिस्तरी की, या कुली का काम करना या कोई तामीरात का काम करना कोई आजिज़ी की ज़्यादती नहीं है। पैग़म्बर अलैहिम-उस-सलावात-औ-वा-तसलीमात और औलिया वो सब इस तरह के काम करते थे। अपने बीवी और बच्चों और अपने आपको सहारा देने के लिए काम करना एक ज़रूरी काम (फ़र्ज़) है। इस बात की इजाज़त (मुबाह) है के ज़्यादा पैसा कमाने के लिए (जो फ़र्ज़ रकम है उससे बढ़कर) कोई भी काम कर लिया जाए इस इरादे के साथ के ज़ाइद पैसे जो उसने कमाए हैं उनसे दूसरों की मदद करेगा। पैग़म्बर इदरीस अलैहिस-सलाम दर्ज़ी की तरह काम करते थे। पैग़म्बर डेविड (दाऊद) अलैहिस-सलाम लोहार का काम करते थे। पैग़म्बर अवराहम (इब्राहिम) अलैहिस-सलाम एक किसान और बाफ़ता के तिजारती के तौर पर काम करते थे। पैग़म्बर आदम अलैहिस-सलाम ने पहली बार कपड़ा बुना। [मज़हब के दुश्मन लिखते हैं के पहले इंसान ग़ारो में रहते थे और पत्तों से अपने आपको ढाकते थे। उनके पास इन इलज़ामात को सहारा देने के लिए कोई दस्तावेज़ या सबूत नहीं हैं।] पैग़म्बर जिसस (ईसा), नुहा (नुह) और सालिह अलैहिस-सलाम जूते बनाने, बड़ई का काम और थैले या संदूक बनाने का काम करते थे। ज़्यादातर पैग़म्बर अलैहिम-उस-सलावातो-वातसलीमात चरवाहे थे। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में इर्शाद फरमाया: "**अपनी घरेलू ज़रूरयात के सामान को खरीदना और उसे अपने घर ले जाना इस बात का इशारा करता है के वो शख़्स घमंडी नहीं है।**" रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' बहुत सारी चीज़ें खरीदते थे और बेचते थे। आप ज़्यादा खरीदते थे (बनिस्वत बेचने के)। आप दूसरों के लिए काम करते थे और दूसरों को अपने लिए काम करने के लिए नौकरी पर रखते थे। आप तिजारती सरगरमियो में हिस्सा लेते थे जैसे के किसी जमाअत मे शामिल हो जाना या अपने वक्त मे इस तरह के सरगरमियों में शामिल होना और तिजारती हिस्सेदारी कायम करना। आप दूसरों की जगह भी चले जाते थे या अपनी जगह बहुत सारी सरगरमियों में दूसरों को (वकालत) पे भेज देते थे। आप तुहफ़े देते और लेते थे। आम पैसा या दूसरी चीज़ें उधार लेते थे। आपने ट्रस्ट (**वक्फ़**) कायम किया। लेकिन, आपने इन

दुनियावी सरगरमियों को अदा करते हुए कभी किसी से कोई सख्त लफ़्ज़ नहीं कहा ना ही किसी पर गुस्सा हुए। आप हलफ़ लेते थे और दूसरों को हलफ़ दिलवाते थे। अगरचे आप पूरे उसूलों के साथ हलफ़/कसम निभाते थे, फिर एक आत मौके पर आपने ऐसा नहीं किया तो उसका (हरजाना जिसे) कफ़्फ़ारा कहते हैं वो अदा किया एक कसम को तोड़ने के लिए। आप मज़ाक करते थे लेकिन आपके मज़ाक हमेशा सच्चाई पर मुबनी होते थे और इसलिए हमेशा फ़ाएदेमंद और उसके अच्छे नतीजे मिलते थे। ये किब्र (घमंड) होगा के ऊपर बताए गए बरताव को नज़रअंदाज़ करना या उससे शर्म महसूस होना। बहुत सारे लोग इस सिलसिले में गलती पर हो जाते हैं क्योंकि वो आजिज़ी को उसकी आखिरी हद से गड़बड़ा देते हैं। नफ़्ज़ बहुत सारे लोगों को तवददु और तज़ल्लूल के बीच के नाज़ूक फ़र्क पर धोका देती है।

14-खुद से प्यार (उजब)

इन बुराइयों में से, चौदहवीं है खुद से प्यार। खुद से प्यार का मतलब है के कोई अपनी इबादतों और अच्छे कामों को पसंद करे और उनमें फ़खर महसूस करे। अपनी अदा की गई इबादतों की कीमत को और अच्छे कामों को सराहे और ऐसा न हो के वो ना ही डरें और परेशान हों तो वो खो देगें और वो खुद से प्यार करना नहीं होगा। ना ही ये खुद से प्यार है के इस बात से मज़ें लेना या खुश होना के ये सारे इबादत के काम जो अदा किए गए हैं वो अल्लाह तआला की बरकतों की वजह से हासिल हुई हैं। तामम ये खुद से प्यार है के एक इबादत का एक अच्छा करने के बाद तुम खुशी मनाओ एक नरगिसी खुशी की तरह, बग़ैर सोचे हुए के अल्लाह तआला ने तुमपर अपनी महरबानी निछावर की है। खुद से प्यार का उलटा है 'मिन्नत' के इस बात को मानना के तुमने अपनी मेहनत और पसीने की वजह से ये बरकत हासिल नहीं की है बल्कि ये अल्लाह तआला का फ़ज़ल जो तुम पर नाज़िल हुआ। इस तरह से सोचना ज़रूरी (**फ़र्ज़**) है जबकि वहाँ पर खुद से प्यार का खदशा हो, और वरना ये जाइज़ (**मुसतहब**) है। इंसानों पर जो एक असर गालिब हैं वो है जहालत और लाइल्मी (**गफ़लत**) जोके खुद से प्यार का सबब है। क्योंकि खुद

से प्यार एक बुराई है, तो हमें उससे छुटकारा हासिल करना चाहिए। इस खुद से प्यार से छुटकारा पाने के लिए, एक को ज़रूरी है के वो सोचे के सारे अच्छे और फ़ाएदेमंद काम और खुदादार वसफ़, मिसाल के तौर पर अक्ल, दिमाग़ और इल्म वो सब उसे दिए गए हैं ताकि वो उनके साथ अच्छे काम या इबादतें कर सके। माल और रूतबे सब अल्लाह तआला के हुकूम और इच्छा से हमें मिलता है और उसके हुकूम के मुताबिक उसकी मखलूक होने की वज़ह से। 'बरकतो' का मतलब है ऐसी चीज़ें जो इंसानो के लिए फ़ाएदेमंद हैं। इंसान इसकी मिठास अपने काबू में करके महसूस कर सकता है। सब तरह के फ़ज़ल/बरकतें सिर्फ अल्लाह तआला की तरफ से भेजी जाती हैं। उसके बराबर कोई नहीं जो तखलीक करे और उन्हें भेजे। जब सहाबा रज़ी अल्लाहु तआला अलैहिम अजमईन ने पाक जंग 'हुनेन' के दोरान इस्लामी मोर्चे के साथ इतने ज़्यादा जंगजुओं को लड़ते हुए देखा तो उन्होने कहा वो दूसरी जंग हारना नहीं चाहते। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने जब उन्हे ये कहते सुना तो बहुत परेशान हुए। जंग के शरू में अल्लाह तआला की तरफ़ से कोई लड़ने वाले नहीं आए इस्लामी मोर्चे पर और उन्होने जंग हारना शुरू करदी। लेकिन बाद में अल्लाह तआला को उन पर रहम आया और उन्हें जीत से नवाज़ा। पैग़म्बर डेविड (दाऊद) अलैहिस-सलाम इस तरह दुआ माँगते थे, "ए मेरे रब! यहाँ पर कोई ऐसी रात नहीं है के हमारे कुछ बच्चे तुझ से दुआ नहीं माँगते और ऐसा कोई दिन नहीं है के हमारे कुछ बच्चे तेरे लिए रोज़ा ना रखें।" अल्लाह तआला ने जवाब दिया, "**अगर मैं हुकूम ना दूँ और ताकत और मौका ना दूँ,तो उनमें से कोई भी बाकमाल नहीं हो सकता।**" डेविड (दाऊद) अलैहिस-सलाम का ये बयान अल्लाह तआला को नाराज़ और उनको इसकी वजह से अच्छी न लगने वाली चीज़ों को भूगतना पड़ा जोकि तारिख की किताबों में लिखा हुआ है। हम पहले ही वो चीज़ें बता चुके हैं जो घमंड (**किब्र**) का सबब बनती हैं। वो खुदबीनीं (**उजब**) का भी सबब है। अल्लाह तआला की बरकतों का शुक्रिया अदा करना भी एक बहुत बड़ी रहमत है।

खुद से प्यार बेशुमार खतरों और नुकसान का मुसतहीक है। सबसे पहले ये किब्र पैदा करता है और हमें हमारे गुनाहों को भी भुलाने का सबब बनता है। गुनाह करना हमारे दिलों को काला करता है। कोई भी जो अपने

गुनाहों के बारे में सोचता है वो अपनी इबादतों को इतना खुब नहीं समझता और ये भी सोचता है के इबादत कर पाना एक फ़ज़ल और अल्लाह तआला की हिमायत है। जो अपने आप से प्यार करते हैं वो अल्लाह तआला की सज़ा के बारे में भूल जाते हैं और, सौदा करते वकत,वो किसी से सलाह नहीं लेते और इस तरह वो दूसरों से फ़ायदेमंद सलाह लेने का मौका गंवा देते हैं।

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**तीन चीज़ें एक शख़्स को तबाही की तरफ़ खींचती हैं: भूल, हवा, और उजब।**" एक शख़्स जो **भूल** खता है, यानी, कंजूस शख़्स वो ज़रूरी काम अदा करने से महरूम रखा जाता है जो के अल्लाह तआला की रज़ा के लिए अदा किए जाते हैं या वो फ़राईज़ जो दूसरों की तरफ़ अदा किए जाएँ। एक शख़्स जो अपने नफ़ज़ की ख्वाहिश (**हवा**) की तकलीद करता है और जो खुद से प्यार रखता है यानी जो अपने नफ़ज़ को पसंद करता है वो बेशक गढ़े में और तबाहियों में गिरेगा। इमाम-ए-मुहम्मद अल-ग़ज़ाली रहीमाहुल्लाहु तआला ने कहा, "हर तरह की बुराइयाँ तीन ज़रियों से पैदा होती हैं: हसद, धोके बाज़ी और खुद से प्यार। अपने दिल को इन सब से पाक रखो!" एक शख़्स जो खुद से प्यार करता है हमेशा मैं, मैं कहता रहेगा। वो हमेशा अपने आपको हर महफ़िल में आगे देखना चाहेगा। वो हमेशा चाहेगा के उसकी बात दूसरे लोग कुबूल करें।

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**मैं डरता हूँ, मासूम/बेगुनाह होना कहीं तुम्हें बातों में बहलाकर इससे बड़े गुनाह में ना डाल दे: उजब (खुद से प्यार)!**" एक गुनहागार नरमी दिखाएगा और गुनाह महसूस करेगा और इसलिए नदामत के लिए कहेगा। एक शख़्स जो पागलपन की हद तक अपने से प्यार करता हो वो अपने इल्म पर और काम पर घमंड करेगा और तकब्बुर और खुदपसंदी में लग जाएगा और इसलिए उसके लिए पछताना बहुत मुश्किल हो जाएगा। अल्लाह तआला गुनहागारों की बोझ भरी कराह का साथ देगा बनिस्बत के इबादत करती हुई मग़रूर आवाज़ों को। सबसे बुरी तरह की खुद पसंदी है अपने को पसंद करना या अपनी गलती से खुश होना और अपने नफ़ज़ की ख्वाहिश (**हवा**) से। एक

शख़्स जो अपने आपको इस खुद नुमाई से तबाह कर लेता है वो हमेशा अपने नफ़्ज़ की ख्वाहिश की तकलीद करता है: दूसरे लफ़्ज़ों में वो अपने नफ़्ज़ का गुलाम बन जाता है और कभी भी किसी की सलाह को नहीं मानता क्योंकि वो सोचता है के दूसरे जहालत का गिरोह हैं। लेकिन असलियत में वो बहुत बड़ा जाहिल है। राह से भटके हुए लोग **(अहल-अल-बिदत)** और वो जो कोई मसलक नहीं मानते यानी "लामदहबिया लोग" इस ज़मरे में आते हैं। वो अपने भटके हुए ईमान और अपनी गलत इबादतों से जुड़े रहते हैं ये समझते हुए के वो सही रास्ते पर हैं। इस तरह की खुद पसंदी के लिए कोई इलाज ढूँढ़ना बहुत मुश्किल है। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' से सुरह मैदा की एक सौ पाँचवी आयत को समझाने के लिए कहा, जो अंग्रेज़ों में इस तरह पढ़ी जाएगी: "**ए वो जो यकीन रखते हैं! अपने आपकी हिफ़ाज़त करो!अगर तुम** (सच्ची) **रहनुमाई की तकलीद करो,तुम पर कोई नुकसान नहीं आएगा उनकी तरफ़ से जो गुमराह हैं...**" **(5-105)** रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने जवाब दिया, "**दूसरों को इस्लाम के एहकाम के बारे में बता दो और उन्हें इस्लाम की मुमानियत के बारे में बता दो! अगर एक शख़्स खुद पसंदीदिखाए और तुम्हें ना सुने, तुम अपनी खुद की कमियाँ पूरी करो।**" आलिम जिन्होनें इस "खुद पसंदी" की बीमारी के इलाज के लिए दवाई बनाई है वो अहले-सुन्नत के आलिम हैं। क्योंकि ये बीमार लोगखुद अपनी बीमारी नहीं जानते और अपने आपको सेहतमंद मानते हैं, वो इन डाक्टरों,यानी इस्लामी आलिमों की सलाह और इल्म को नहीं मानते, और इस तरह इन बरबाद बीमारियों में चलते रहते हैं। हकीकत में, ये आलिम इन दवाई से इलाज करते हैं जो उन्होने पैग़म्बर मुहम्मद 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' से हासिल की बग़ैर किसी रदोबदल के। लाइल्म और बेवकूफ़ लोग समझते हैं के इन आलिमों ने अपने आप ये दवाइ तैयार की है। वो अपने आप से खुश होते हैं ये सोचते हुए के वो उनमें से है जो सही रास्ते पर चल रहे हैं।

जलन (हसद)

पंदरहवीं बुराई जलन **(हसद)** है। हसद के मआनी हैं जलना। एक शख़्स जो इस बीमारी को सेह रहा होता है वो ये नहीं चाहता के अल्लाह तआला दूसरो पर जो बरकतें **(नेमत)** निछावर कर रहा है वो ना करे या दूसरें लफ़ज़ों में वो चाहता है के वो सारी बरकतें खो दें। ये खुवाहिश रखना के दूसरों के पास कोई नुकसान करने वाली चीज़ें ना हो ये हसद तो नही पर ग़ैरत होगी। ये खुवाहिश रखना के दूसरे जो मज़हबी इल्म का इस्तेमाल कर रहे हैं दुनियावी फ़ायदा उठाने के लिए वो अपना इल्म भूल जाएँ ये भी ग़ैरत है। ये चाहना के वो लोग जो अपने माल और दौलत को मना की हुई या ज़ुल्म करने वाली चीज़ों को बढ़ावा देने के लिए या "**बिदत**" को फैलाने के लिए या इस्लाम को बरबाद करने के लिए इस्तेमाल करते हैं वो तबाह हो जाएँ तो ऐसा सोचना कोई हसद नहीं है बल्कि ये मज़हबी ग़ैरत है। वो जो अपने दिल में हसद रखता है जबकि वो इसे पसंद नहीं करता या इस बुराई को बरदाशत नहीं करना चाहता तो वो कोई गुनाह नहीं है। चीज़ें जो दिल में आती हैं, मिसाल के तौर पर सोचें या यादें वो गुनाह नहीं समझी जाएँगी क्योंकि इन सब चीज़ों को काबू में रखना किसी के अपने बस में नहीं है। बहरहाल, अगर कोई अपने दिल में हसद होने की वजह से परेशान नहीं है या शर्मीन्दगी नहीं है या जलन/हसद की खुवाहिश है, वो एक गुनाह है और मना किया हुआ काम है। इसी तरह, अगर एक शख़्स की उसकी बातों और आदतों से झलके तो वो एक बहुत बड़ा गुनाह है। हमारे प्यारे पैग़म्बर 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने इस हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**इंसान अपने आपको तीन चीज़ों से कभी आज़ाद नहीं कर सकता: सुई-जन, 'तय्यरा' और 'हसद'। जब एक शख़्स किसी के बारे में गलत राए रखता है (सुई-ज़न), वो अपनी बुरी/गलत राए के मुताबिक काम नहीं कर सकता। जिन बातों पर तुम्हें शक हो उन्हे अल्लाह तआला के भरोसे (तवक्कुल) पर करो और, अगर तुम किसी शख़्स से जलते हो तो, उसे कभी नुकसान मत पहुँचाओ।**" "तैय्यारा" का मतलब है बुरी फाल/अलामत पर यकीन रखना। "सुई-ज़न" का मतलब है एक शख़्स का किसी खास बंदे के बारे में सोचना के वो बुरा शख़्स है। इस हदीस शरीफ़ से ये नतीजा निकला है

के अपने दिल में हसद रखने की मुमानियत नहीं है लेकिन इसकी मौजूदगी से अपने दिल में खुश होना या इसकी ख़ुवाहिश को लगातार रखना मना है। मंदरजाज़ेल पैसेज हदीका किताब में से है: "एक सोच जो रूहानी दिल में आती है वो मंदजाज़ेल पाँच किस्मों पर सही बैठती हैं: पहली किस्म है जो रहने की ताकत नहीं रखती; इसलिए उसको दफ़ा कर दिया जाता है और वो 'हाजिज़' कहलाती है। दूसरी किस्म थोड़े वक्त के लिए दिल में आती है और 'हातिर' कहलाती है। तीसरा किस्म दिल में शक डालने का सबब बनती है मिसाल के तौर पर, ऐसा किया जाए या ना करा जाए; इसको हदीस-उन-नफ़ज़ कहते हैं। चौथी किस्म है जो दिल करना पसंद करे और उसे 'हैम' कहते है। पाँचवी किस्म चौथी किस्म से सिर्फ़ इस तरह अलग है जब पसंद बहुत ज़्यादा मज़बूत हो जाए और दिल उसको करने के बारे में सोचे पूरी मज़बूत इच्छा के साथ; उसे "अज़म" और "जज़म" कहते है। पहली तीन किस्में फ़रिशतों के ज़रिए दरज नहीं की जातीं। चौथी हालत मिसाल के तौर पर, "हैम" इनाम के तौर पर दर्ज की जाती है अगर ये सारे अच्छे कामों में से एक हो और इसे किसी ने ना किया हो तो इसे इनाम के तौर पर दर्ज किया जाता है। पाँचवी किस्म के लिए "अज़म": अगर ये मुमानियत किए हुए कामों में से एक हो और इसे अदा किया जाए तब एक गुनाह दर्ज किया जाएगा।" अगर इसे अदा नहीं किया गया तो इसे भूला दिया जाता है। हमारे प्यारे पैग़म्बर 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने मंदरजाज़ेल हदीस शरीफ़ में इर्शाद फरमाया: "**बुरे ख्यालात जो दिल में आते हैं वो भूला दिए जाते हैं अगर वो अमल में नहीं आते या किसी दूसरे को बताए नहीं जाते।**" जब कुछ ख्याल मासियत या बिदत के या गलत सोचें तुम्हारे दिलों में आए, अगर तुम इनसे परेशान हो जाओ और इन्हें फौरन नामंज़ूर करदो, तो इतनी छोटी हालत मासियत नहीं होगी। ताहम, अगर एक शख़्स मंसूबा बनाए के एक साल बाद वो काफ़िर बन जाएगा, चाहे अगर उसने किसी चीज़ की शर्त पर बनाया हो, वो उसी लम्हा काफ़िर बन जाएगा जैसे ही उसका मंसूबा एक फ़ैसला बन जाएगा। इसी तरह से, एक औरत जो किसी काफ़िर से एक साल बाद शादी करने का फैसला करती है, तो जिस पल वो ये फ़ैसला करती है उसी लम्हे से वो काफ़िर बन जाती है।

[कुछ मज़हबी मुमानियत (हराम) चीज़ों को करना उस गुनाह से बड़ा है जिस गुनाह का करने का फ़ैसला किया जाए। "**हराम**" का मतलब कुछ चीज़ें जो अल्लाह तआला ने मना की हैं। गुनाह एक नाम है, जिसका मतलब हैं वो सज़ा जो उन लोगों को मिलती है जो मुमानियत किए गए कामों को करते हैं। एक गुनाह करने का मतलब है ऐसी चीज़ें करना जिनसे सज़ा मिले। इसका मतलब है हराम काम करना। "सवाब" का मतलब है वो इनाम जो दुनियावी ज़िन्दगी में यानी, इबादतें और अच्छे काम करने पर दूसरी दुनिया/आखिरत में मिलेगा। अल्लाह तआला ने हमसे वादा किया है के उन लोगों को जो दुनिया में अच्छे काम करते हैं और इबादते करते हैं उनको आखिरत में इनाम देगा। ये ज़रूरी (**वाजिब**) नहीं है के अच्छे काम करने या इबादतें अदा करने पर इनाम मिले लेकिन अल्लाह तआला ने बेहद रहम और फ़राग़दिली की वजह से ऐसा करने का वादा किया है। अल्लाह तआला अपने वादे से कभी नहीं मुकरता और जो वो वादा करता है वो ज़रूर पूरा करता है।]

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**अगर एक शख़्स अपने दिल में एक मुमानियत चीज़ (हराम) करने का फ़ैसला करे लेकिन अल्लाह तआला के डर की वजह वो उसे अदा ना करे, तो वो एक गुनाह दर्ज नहीं किया जाएगा; लेकिन अगर वो मना किया गया काम कर लेता है तो वो दर्ज कर लिया जाता है।**"

इस बात की मनाही है के काफ़िर होने या एक मज़हब से मुनहरिफ़ (अहल-ए-बिदत) होने का इरादा रखे। क्योंकि ये इरादे असल माहियत में बुराई हैं। बहरहाल, हराम काम को करने का सोचना बुराई है क्योंकि ये एक शख़्स से उस मुमानियत किए गए काम को करवाती है। सोचना कोई अपने आप से बुराई नहीं है बल्कि उस बुरी सोच को अमली जामा पहनाना बुराई और बदसुरती है। जब सोचा हुआ मना किया गया काम अदा नहीं किया जाता, तो वो मना किया हुआ या गुनहागार नहीं रह जाता। इस तरह बरदाशत करना अल्लाह तआला की रहमत है उन लोगों के लिए जो पैग़म्बर मुहम्मद 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' की तकलीद करते हैं।

यह खुवाहिश रखना के दूसरों को जो बरकतें हासिल हैं वो उनको भी हासिल हों हसद नहीं है अगर वो इस ज़हर आलूद खुवाहिश में तबाह न हो जाए के दूसरे उन बरकतों से महरूम हो जाएँ।ये महदूद/क़लील महसूसीयत दुश्मनी (ग़ीपता) कहलाते हैं, जो एक फ़ज़ीलत है।ये ज़रूरी (**वाजिब**) है के एक मुसलमान जो इस्लाम के उसूलों के मुताबिक ज़िन्दगी गुज़ार रहा हो मिसाल के तौर पर; जो इकरार (फ़र्ज़) अदा करे और जो अपने आपको मना किए हुए कामों से दूर रखे कीना वर एक शख़्स के लिए जो दुनियावी बरकतें रखता है उसके लिए महसूस करता है वो इस्लाम में थोड़ा सा नापसंद "मकरूह तनज़ीही" है।

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में इर्शाद फरमाया: "**अल्लाह तआला एक मोमिन के लिए ग़ैरत रखता है और मोमिन भी दूसरें मोमिनो के लिए ग़ैरत रखता है।**" अल्लाह तआला ने अपनी ग़ैरत की वजह से हरमकारी मना की है।अल्लाह तआला ने कहा, "**ए आदम के बेटों!मेने तुम्हें अपने लिए तखलीक किया और बाकी सब चीज़ें मेने तुम्हारे लिए बनाई हैं उससे तुम अपने तखलीक किए जाने का मतलब ना भूल जाओ।**" हदीस अल कूदसी में, अल्लाह तआला ने ऐलान किया: "**मेने तुम्हें अपने लिए तखलीक किया।अपने आपको दूसरी चीज़ों के साथ मसरूफ़ मत करो!मैं तुम्हारी ग़िज़ा मुहय्या कराऊँगा, परेशान मत हो!**"पैग़म्बर जौसेफ़ (युसूफ़) ने एक शख़्स से पूछा जो उस वक्त के बादशाह (**सुल्तान**) को देखने जा रहा था के मेरा नाम सुल्तान के आगे लेना जो अल्लाह तआला की **ग़ैरत** का सबब बनी और इस लिए पैग़म्बर जोसेफ़ अलैहि सलाम को कई सालों तक कैद में रहना पड़ा।इसी तरह पैग़म्बर अब्राहम (इब्राहिम) अलैहि सलाम अपने बेटे की पैदाइश पर खुश हुए और अल्लाह तआला की ग़ैरत का सबब बने और इब्राहिम अलैहि सलाम को हुकूम दिया उनके बेटे इसमाईल की कुरबानी देने का।बहुत सारे अल्लाह तआला के गुलाम मिसाल के तौर पर कुछ (उनके प्यारे कहे जाते हैं) औलिया अल्लाह तआला की ग़ैरत से नज़मों ज़बत थे।**ग़ैरत** का मतलब है के एक शख़्स किसी शख़्स पर उसके हुकूक को बाँटे दूसरों के साथ।अल्लाह तआला की **ग़ैरत** का मतलब है के वो इंसानी मखलूक को गुनाह करने पर अपनी रज़ा नहीं दे सकता।इंसानी मखलूक पर ये ज़िम्मेदारी है के

अपनी ज़िन्दगी इच्छा पर ना गुज़ारे, बल्कि उसका सच्चा गुलाम बनकर गुज़ारे, जिसका मतलब है के उसके एहकाम और मुमानियत को मानना।अपनी खुवाहिश के मुताबिक काम करने का हक अल्लाह तआला के नादर हदूद में है।जहाँ तक इंसानी मखलूक का मामला है, अपनी खुवाहिशों की तकमील के लिए या गुनाह करने का मतलब है अल्लाह के हक की खिलाफ़ वरज़ी करना, यानी, अल्लाह तआला के हक में से हिस्सा लेना।एक ईमान वाले शख़्स को अपने ऊपर ग़ैरत रखना चाहिए ऐसा ना हो के वो गुनाह करले।एक पक्की सोच बेचैनी की और दिल की धड़कन परेशान करती है के गुनाह होने जा रहा है, ये सब निशानी है ग़ैरत की।एक ईमान वाले का दिल अल्लाह तआला का घर होता है और जहाँ नेकियों का बसेरा होता है।अपने दिल में बुराई और गंदी सोच को दाखिला देने का मतलब है के उनके खुबसूरत बसेरा करने वालों को सताओ उनको ज़बरदस्ती उन गंदे घुस पैठियों के साथ सुहबत कराना।ये ज़बरदस्ती दिल की धड़कन को उसके मुकाबले पर बढ़ा देती है, इसलिए दिल की ग़ैरत को भी।साद बिन उबादा रज़ी अल्लाहु तआला अन्ह जो के अंसार के सालार थे ने रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' से पूछा: "या रसूलुल्लाह! अगर मैं अपनी बीवी को किसी और आदमी के साथ बिस्तरी में देखूँ,क्या मैं उसको बग़ैर चार चश्मदीद गवाहों के कत्ल ना करदूँ?" "नहीं, तुम नहीं कर सकते।" आलिमयाँ के सबसे अच्छे ने जवाब दिया।जब साद को जवाब से मदद नहीं मिली, "मैं इसको सहन नहीं कर सकता के चार चश्मदीद गवाह इसके लिए चाहिए।मैं उसको वहीं के वहीं खत्म कर दूँगा," अल्लाह तआला के नवाज़े गए पैग़म्बर 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमाया: "**जो तुम्हें बड़े कहें उसे सुनो! वो बहुत ग़यूरवाला है।मैं उससे ज़्यादा ग़यूर हूँ।और अल्लाह तआला बहुत ज़्यादा ग़ैरत रखता है मुझ से भी ज़्यादा।**" ('**ग़यूर**'**ग़ैरत** की खासियत बताने वाले शक्ल है।) आलिमयाँ की इज़्ज़त का कहने का मतलब था; ये वो नहीं है जो ग़ैरत मानती है।मैं इस्लाम की हद बदियों की खिलाफ़ वरज़ी नहीं कर सकता, मैं उससे ज़्यादा ग़यूर, जैसे के मैं हूँ।अल्लाह तआला सबसे ज़्यादा ग़यूर; ताहम वो कभी जानकारी के लिए सज़ा देने में जल्दी नहीं करेगा," इसलिए जो सज़ा मिलनी है उसको देने में जल्दी करना वो इंसाफ़ नहीं है; हर मुसलमान जो दूसरे मुसलमान को कोई मना किया हुआ काम करते देखे

तो उसे सज़ा (ताज़ीर) फ़ौरन दे। इस बात की इजाज़त नहीं है चश्मदीद गवाहों के लिए के जुर्म का इरतकाब होने के बाद सज़ा अमल में लाई जाए। इस मामले में ये (मुस्लिम) हुकूमत की यानी; (मुस्लिम) जज का फ़र्ज़ है के सज़ा को अमल में लाए। अगर एक शख़्स ज़नाकार को देखता है और उन्हें उसी वक्त कत्ल कर देता है, तो मुकदमे के दौरान उसे चार चश्मदीद गवाह पेश करने होंगे। उसका हलफ़ लेना काफ़ी नहीं होगा। अगर वो चार चश्मदीद गवाह पेश करने में ना काम रहता है तो जज उसे कत्ल करने के लिए सज़ा दे सकता है। एक औरत के लिए इस बात की इजाज़त (जाइज़) नहीं है के वो दूसरी बीवी "या कोई दूसरी बीवी" के लिए ग़ैरत दिखाए। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' एक रात अपनी बीवी हज़रत आएशा रज़ी अल्लाहु तआला अनहा के कमरे से चले गए। अल्लाह के रहमत वाली बीवी हज़रत ने सोचा,के आप दूसरी बीवियों में से किसी एक के कमरे में गए हैं और उनके बारे में ग़ैरत की। रसूलुल्लाह जब उनके कमरे में वापिस आए तो उनको दुखी देखा और पूछा, "क्या तुमने ग़ैरत रखी?" उन्होने कहा, "क्या मुझ जैसी गरीब मखलूक" 'ग़ैरत' नहीं रख सकती आप जैसे शख़्स के बारे में जो सबसे ज़्यादा इज़्ज़त वाले हैं सारी मखलूक में और जो सारी मखलूक शफ़कत वालें है? अब आपने जवाब दिया, "**तुमने शैतान की बुरी राए (वसवसा) की तकलीद की।**" उन्होने पूछा क्या मेरे पास शैतान था। आपने जवाब दिया, "**हाँ वहाँ है।**" उन्होने आगे पूछा क्या रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' के पास भी शैतान था। आपने जवाब दिया, "**हाँ, वहाँ है,लेकिन अल्लाह तआला मुझे शैतान के बुरे वसवसों से बचाता है।**" आपने दलील दी के मेरा शैतान मुसलमान बन गया है और अब सिर्फ़ अच्छे ख्यालात मुझे बताता है। एक और हदीस शरीफ़ में रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने इर्शाद फरमाया: "**अल्लाह तआला ने मुझ पर दो नेमतें निछावर कीं जो उसने किसी और को नहीं बख्शीं: मेरा शैतान काफ़िर हुआ करता था लेकिन उसने उसे मुसलमान बना दिया और उसने मुझे बीवियाँ बख्शीं जो इस्लाम को फैलाने के रास्ते पर मेरी मदद करती हैं!**"आदम अलैहि सलाम का शैतान काफ़िर था और उनकी बीवी ईव (हज़रत हव्वा) जन्नत में शैतान की कसम के फरेब में आ गई और वो हज़रत आदम अलैहि सलाम से वो मशहूर गलती कराने का सबब बनीं।

लोगों की ग़ैरत मना किए हुए काम जुर्म करने की तरफ़ से दिल फ़ैर देना है अल्लाह तआला के लिये।

हसद का उलटा होता है दूसरों को सलाह (नसीहत) देना। एक शख़्स के दिल में दूसरे शख्स के लिए जो बरकतें (दुनियावी या दुनियावी के अलावा) हासिल कर रहा होता ये खुवाहिश होती है के वो बरकतें अपने पास रखले ताकि वो उनके ज़रिए अच्छी मज़हबी या दुनियावी चीज़ें कर सके। ये हर मुसलमान के लिए फ़र्ज़ **(वाजिब)** होता है के दूसरों को सलाह दे। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमाया, "**एक शख़्स जो दूसरे के अच्छे काम अदा करने का आला बनता है वो भी उतना ही सवाब हासिल करता है जितना के वो शख़्स जो अच्छाई कर रहा है,**" और "**कोई भी मुस्लिम जो अपने लिए वो बरकतें माँगता है लेकिन दूसरे मुसलमानों के लिए वो ही बरकतें नहीं माँगता तो उसे इमान नहीं है,**" और "**मज़हब की बुनियाद सलाह/नसीहत देना है।**"अल्लाह तआला की रज़ा के लिए सलाह देने का मतलब है के दूसरे लोगों का बताना के अल्लाह तआला मौजूद है, यहाँ पर सिर्फ़ एक अल्लाह है, वो सिर्फ़ वाहिद है जिससे सारे कमाल और फ़ज़ीलत मंसूब हैं, उसमें कोई कमी नहीं है या ऐसा कोई कमाल जो उसके लाएक नहीं है, सबके लिए ज़रूरी है के पाक इरादे के साथ उसकी इबादत करे, हर एक को चाहिए के उसकी हिमायत और मंज़ूरी हासिल करे जबके वो अपना कोई काम खत्म करे, कोई उसके खिलाफ़ बग़ावत ना करे, हर कोई उसके दोस्तों से प्यार करे, हर कोई उसके दुश्मनों की मुखालफ़त करे, हर कोई उन्हें पसंद करे जो उसके एहकाम माने, हर कोई उसे नापसंद करे जो उसके एहकाम की खिलाफ़ वरज़ी करे, हर कोई उसकी बरकतों का हवाला दे और उनके लिए अपना शुक्रिया अदा करे, हर कोई उसकी मखलूक की तरफ़ हमदर्दी रखे और कोई इतने वज़ूक के साथ उसके साथ कोई कमाल न जोड़े जो के वो नहीं रखता। कुरआन के लिए सलाह (नसीहत) देना क्योंकि कुरआन में लिखी हुई हकीकत पर यकीन रखना है; कुरआन में लिखे हुए एहकाम को हर एक को मानना चाहिए; किसी को थोड़ी सी अकल के साथ कुरआन की तशरीह नहीं करनी चाहिए; हर एक को कुरआन को पढ़ना चाहिए या किरअत करनी चाहिए सबसे अच्छे और सच्चे तरीके से और हर एक को ये पता होना चाहिए और दूसरों को भी बताना

चाहिए के बग़ैर पाकी और सफ़ाई (**वुज़ू**) के कुरआन को छूने की इजाज़त नहीं है। पैग़म्बर मुहम्मद अलैहि सलाम के बारे में सलाह देने का मतलब है के दूसरे भी ये जान लें आपके ज़रिए बताई गई बातों पर यकीन करना ज़रूरी है; सबके लिए ये ज़रूरी है के आपकी और आपके नाम की इज़्ज़त करें; ये सब के लिए ज़रूरी है के आपकी **सुन्नत** को फ़ैलाएँ और अमल करें; सबके लिए ये ज़रूरी है के आपकी खुबसूरत सलूक और अखलाकियात को ज़हन नशीन करले, और हर एक के लिए ये ज़रूरी है के आपकी नस्ल (**अहले-बैत**) और आपके साथी (**सहाबा**) [बराएमहरबानी **सहाबा 'खुदा के महबूब'** नाम की किताब को देखिए, जो **हकीकत किताबेवी** फ़तेह इस्तानबुल तुर्की में दस्याब है।) और आपके मानने वाली (**उम्मत**) से प्यार करे। मुल्क की हुकूमत के लिए नसीहत देना दूसरों को बताना है के ये ज़रूरी है के उन सरकारी अफ़सरों की मदद करो जो अल्लाह तआला की इज़्ज़त करते हैं और उसके मज़हब की हिफ़ाज़त करते हैं और लोगों को आज़ादी देते हैं के वो अपने मज़हब पर अमल करें। ये उनकी नसीहत के लिए है के उन्हें सच्चा या सही रास्ता बताना और उन्हें बताना के वो मुसलमानों के हुकूक पर ध्यान दें। ये नहीं के उनके खिलाफ़ बग़ावतकरें और ना ही कानून की खिलाफ़ वरज़ी करें। उनके लिए दुआ करो ताकि वो इस्लाम और इंसानियत की खिदमत कर सकें। उनकी ग़ैर हाज़िरी में उनके लिए दुआ करना और माली या जिस्मानी या (दुआ) इबादत के ज़रिए इनकी मदद करना जब वो (**जिहाद**) अदा करें काफ़िरों के खिलाफ़। लगान अदा करना और ज़रूरी ज़कात देना। एक दूसरे पर बंदूकों के साथ हमला मत करो। उनको सही रास्ते पर रहनुमाई करना और उन्हें आगे ले जाना इंसाफ़ के रास्ते पर बहुत नरमाई के साथ बग़ैर उनके खिलाफ़ जाए चाहे वो ज़्यादती और नाइंसाफ़ी के जुर्म का इरतकाब ही क्यों ना करें। ना ही उनके साथ कमीना बरताव करो और ना ही इस बात का सबब बनो के वो सीधे और रास्ते से भटक जाएँ। ये हर एक को बताना के ये ज़रूरी है जो हुकूमत के मुलाज़िम/सरबराह होते हैं उनके खिलाफ़ बग़ावत ना की जाए। सबको ये बताना के सबके लिए मज़हबी कानून (**फ़ीकह**) की तालीमात को मानना ज़रूरी है; और इल्म-अल-हालकी किताबें और अखलाकियात की किताबें जो "अहले-सुन्नत के आलिमों" ने लिखीं हैं उन्हें मानना ज़रूरी है। सलाह (**नसीहत**) देना सबको ये बताना के उन्हें वो काम

करने चाहिए जो इस दुनिया में और आखिरत फ़ाएदेमंद हैं और वो उन कामों/चीज़ों को करने से बचें जो इस दुनिया में और दूसरी दुनिया में नुकसान देने वाली हैं और उन्हें किसी को ज़रब नहीं पहुँचानी चाहिए और दूसरों को वो पढ़ाओ जो वो नहीं जानते और जब ज़रूरत हो अपनी गलतियों पर नज़रसानी करो। ये उनको बताना के जो फर्ज़ लाज़िम किए गए हैं उन्हें अदा करना और जिन कामों को करने की मुमानियत की गई उन्हें ना करना और ये सब चीज़ें बहुत नरमाई से उनको बतानी हैं। ये ज़रूरी है उनको बताना के जवानों की तरफ़ हमदर्दी रखना और बड़ों को इज़्ज़त देना और दूसरों को यकसाँ बरताव करना जिस तरह तुम चाहते हो के वो तुम्हारे साथ बरताव करे। और उनके साथ इस तरह सलूक मत करो जिस तरह तुम अपने साथ नहीं चाहते ये सब उनको बताना ज़रूरी है। आख़िर में, उनको ये बताना के वो दूसरों की माली और जिस्मानी मदद भी करें।

हमारे रसूल/पैग़म्बर 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में इर्शाद फरमाया: "**वो जो मुसलमानों की मदद नहीं करते और वो जो मुसलमानों की फ़लाह और आराम के लिए काम नहीं करते वो उनमें से नहीं हैं। वो जो अल्लाह, कुरआन, रसूलुल्लाह, हुकूमत के सरबराह और सारे मुसलमानों के लिए नसीहत नहीं देते वो उनमें से नहीं है।**"

हसद इबादत के इनाम को खत्म कर देती है। हमारे पैग़म्बर 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में इर्शाद फरमाया: "**हासिद होने से खबरदार रहो। ऐसा मशहूर है के हसद इनाम (सवाब) को बरबाद कर देती है जिस तरह आग लकड़ी को बरबाद कर देती है।**" एक हासिद शख़्स जिस शख़्स से जलता है उसके बारे में पीठ पीछे बातें करता है और अफ़वाह फ़ैलाता है। वो अपने माल और खुद पर हमला करता है उसका इनाम (**सवाब**) उससे ले लिया जाता है और जिस शख़्स पर उसने हमला किया उसे कयामत वाले दिन मुआवज़े के तौर पर दे दिया जाता है। जब एक हासिद शख़्स उस शख़्स की बरकतें (नेमतें) देखता है जिससे वो हसद करता है, वो तो बहुत परेशान हो जाता है और उसकी नींदे उड़ जाती हैं। लोग जो नेक काम करते हैं वो दस गुना सवाब/इनाम हासिल करते हैं। हसद उनमें से नौ को बरबाद कर

देती है पीछे सिर्फ़ एक छोड़ जाती है। कोई गुनाह नहीं है सिवाए मासियत (कुफ़्र) के जो सारे किए गए अच्छे कामों के इनाम को खत्म कर देती है। मुमानियत किए गए कामों को करना ये मानकर के ये बड़े गुनाह नहीं हैं या इस्लाम की तरफ़ ध्यान ना लगाकर या मना किए गए कामों को करके और दूसरे कामों को करके जो मासियत और कुफ़्र (इरतिदाद) का सबब बनें ये सब उन इनामों को तबाह कर देते हैं जो अच्छे कामों को करके हासिल किए गए हों। हमारे पैग़म्बर 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में इर्शाद फरमाया: "**तुम ने** (मुसलमानों ने) (पिछले पैग़म्बरों को मानने वालों से) **पिछली उम्मत से दो खतरनाक बीमारियों का मुहायदा किया हुआ है: हसद और हजामत करना। जब मैं कहता हूँ हजामत, तो मेरा मतलब ये नहीं होता के वो अपने सिर के बाल कटवाते थे। मेरा कहना का मतलब है के अपने मज़हब को जड़ से उखाड़ते थे और एक साथ उसे मिटाते थे। मैं तुम्हारे सामने कसम खाता हूँ के जिस किसी को भी इतेकाद नहीं है वो जन्नत में दाखिल नहीं होगा। जब तक के तुम एक दूसरे से प्यार ना करो, तुम इतेकाद/भरोसा/यकीन हासिल नही कर सकते। एक दूसरे के प्यार के काबिल होने के लिए तुम्हें एक दूसरे को अक्सर मुखातिब (सलाम) करना चाहिए।**"

[ये हदीस शरीफ़ एक दूसरे के साथ आदाब (सलाम) करने की अहमियत को साफ़ बताती है और इसकी अदाएगी करने का हुकूम देती है। जब दो मुसलमान एक दूसरे से मिलें, तो ये **सुन्नत** हैं के एक उनमें से "सलाम अलैकुम" कहें और दूसरे के लिए ये वाजिब (**फर्ज़**) के वो उसका जवाब दे "वा अलैकुम सलाम"। इस बात की इजाज़त (**जाईज़**) नहीं है के एक दूसरे को दूसरे फिकरों जो काफ़िरों के ज़रिए इस्तेमाल किए जाते हैं या हाथ से, जिस्म से या दूसरी नकल से सलाम किया जाए। जब दो मुसलमान एक दूसरे को थोड़े फासलेसे देखते हैं जिसकी वजह से वो एक दूसरे को सुन नहीं सकते, उनके लिए ऊपर बताए गए फिकरे दोहराए जा सकते हैं आदाब (**सलाम**) करने के लिए या एक दूसरे को खैरमक़दम करने के लिए वो अपना सीधा हाथ अपनी भौं तक उठा सकते हैं। जब काफ़िरों के खैरमकदम कर रहे हो तो, इस बात की इजाज़त है के उनके ज़रिए बोलेगए फ़िकरे इस्तेमाल कर लिए जाए (**फ़ितने**) को उभारने से बचने के लिए। फितना पैदा करना मना (**हराम**)

है।ऊपर बताए गए तरीकों को काफ़िरों के साथ सलाम दुआ करे वक्त इस्तेमाल करते हुए फ़ितने को तरग़ीब ना देना बहुत इनाम (सवाब) वाला काम है।]

(एक हदीस शरीफ़ में) इस तरह बयान है: "**एक मुसलमान अच्छाई रखता है लेकिन जब वो हासिद बन जाता है तो सारी अच्छाई उसके पास से चली जाती है।**" रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक दूसरी हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**वो जो हासिद होते हैं, जो 'नमीमा' और 'कहानत' करते हैं वो मेरे साथ नहीं हैं।**" "नमीमा" का मतलब है एक की बात दूसरे तक ले जाना फितना जगाने के लिए और मुसलमानों के बीच नाईतेफ़ाकी पैदा करने के लिए। "कहानत" का मतलब है अनजान पर मुकदस अमल करना।[जो अनजाने आने वाले कल के बारे में पैशनगोई करे उन्हें फाल खोलने वाला **(काहिन)** कहते हैं।हमें उनपर यकीन नहीं करना चाहिए।] इस हदीस शरीफ़ से ये ज़ाहिर है के जो हासिद होते हैं उन्हें रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' की सिफ़ारिश **(शफ़ाअत)** नहीं मिलेगी।उन्हें सिफ़ारिश के लिए पूछने का कोई हक नहीं होगा।

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**छ: तरह के लोगों से छ: चीज़ों में से सवाल पूछे जाएंगे, जमा किए जाने वाले दिन/योमुलजमा की जगह पर सज़ा मिलना,और उसके बाद दोज़ख में फेंक दिया जाएगा:रियासत के सदरों से ज़्यादती 'ज़ुल्म' में से; अरबी नसल से उनकी नसल परस्ती की ग़ैरत से; छोटे गाँव के लीडरों का घमंड 'किबर' से; कारोबारियों से उनके वादा खिलाफ़ी या धोके बाज़ी से;गाँव वालो की जहालत से; और आलिमों की हसद से।**" एक कारोबारी के लिए ये ज़रूरी है के ऐसे लफ़्ज़ों जैसे झूठ, सूद, धोका, और दूसरों के फंड पर कब्ज़ा करना नाजाइज़ तरीके से कारोबारी अमल करके इनके मआनी को याद करके अपने आप को इन मना किए हुए कामों से कैसे बचाया जाए इसे भी याद कर लेना चाहिए।गाँव वालों और हर मुसलमान के लिए "अहले सुन्नत के ईमान" के इल्म और वो इल्म जो ये सिखाए उन चीज़ों को कैसे सीखें जो मज़हब (इल्म अल-हाल के इल्म) में ज़रूरी हैं।ये हदीस शरीफ़ हमें बताती है के हसद उन

आदमियों में ज़्यादा होती है जो समाज में मज़हबी रूतबा रखते हैं। **तफ़सीर-ए-कबीर** किताब में मंदजाज़ेल मालूमात फराहम करती है हसद दस हिस्सों में है और उनमें से नौ मज़हबी आदमियों में मौजूद होते हैं। दुनियावी मुश्किलों के दस हिस्से हैं और उनमें सेनौ पाक आदमियों 'सालिह' में हैं। हकीर 'ज़िल्लत' के दस हिस्से हैं और उनमें से नौ यहूदियों में मौजूद हैं। आजिज़ी 'तव्वज़ू' के दस हिस्से हैं और उनमें से नौ नसारा (ईसा अलैहि सलाम को जो पाक मज़हब ज़ाहिर किया गया उसके मानने वाले) में मौजूद हैं। भूख 'शहूद' के दस हिस्से हैं और उनमें नौ औरतों में और एक हिस्सा आदमियों में मौजूद है। 'इल्म' वाकफ़ियत के दस हिस्से हैं और एक हिस्सा इराक में मौजूद है। एतेकाद (ईमान) के दस हिस्से हैं ओर उनमें से नौ हिस्से यमन में हैं। दानाई 'अक्ल' के दस हिस्से हैं और उनमें से नौ आदमियों में हैं। दुनिया की रहमत 'बरकत' दस हिस्सों में है और उनमें से नौ दमशकश में है। हज़रत फ़खर-उद-दीन राज़ी ने जो इस किताब की तशरीह (तफ़सील) में लिखा वो उनके वक्त की हकीकतों का हवाला देती हैं। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' के इस दुनिया में अपनी मौजूदगी से इज़्ज़तयाब करने से पहले, ये यहूदियोंका रिवाज था। के बाहर जंग पर जाने से पहले मंदरजाज़ेल दुआ कहना: ए मेरे रब! तेरे काबिले ताज़ीम पैग़म्बर की रज़ा के लिए, जिसको तूने जल्द ही वादा किया है भेजने के लिए और जिसको तू बहुत चाहता है..." उनकी दुआएँ क़ुबूल की गई और अल्लाह तआला ने उनकी मदद की। जब रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने लोगों को मुसलमान होने की दावत दी, वो जानते थे के ये वादा किए गए पैग़म्बर हैं लेकिन उनकी हसद की वजह से वो आपसे मुंकर थे। उनकी हसद उनको और उनकी नसलों को ना खत्म होने वाली बरबादी, तबाही और सज़ाओं की तरफ़ चली गई।

अल्लाह तआला ने हमें अपने आपको शैतान की बदकारी (**शर**) से और साथ में एक हासिद शख़्स की बदकारियों से बचने का हुकूम दिया।

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**अपनी ज़रूरतों या हाजतों के लिए अमीर अहल-ए-नेअमत से खुफ़िया तरीके पूछो क्योंकि दूसरे उन लोगों से जल सकते हैं जिनके पास ये**

बरकतें (नेअमते) हैं।" जब दूसरो को पता चलेगा के तुम्हारी ज़रूरतें या हाजतें पूरी हो रही हैं, तो उन की हसद का निशाना बनोगे। एक शख़्स जिसके पास कोई राज़ हो तो उसके पास एक इखतियार है; वो उसे छूपा भी सकता है या ज़ाहिर भी कर सकता है। ज़्यादा तर वक्त, एक शख़्स जो अपना राज़ ज़ाहिर करता है वो अफ़सोस करता है। एक शख़्स अपनी बातों पर काबू रख सकता है जब तक के वो उसके मूंह से बाहर ना आ जाए। उसके पास एक इखतियार होता है चाहे वो बता दे या न बताए लेकिन अगर एक बार जो अल्फ़ाज़ मूंह से बाहर आए वो अपने ही लफ़्ज़ों का गुलाम बन जाता है। जब वो उनकी मिलकियत के साथ होते है तो वो लोग अपने राज़ों में इतने मज़बूत नहीं होते। इस तरह कहावत कही जाती है: "अपने 'ज़हब', 'ज़िहाब' और 'मसलक' को राज़ रखो।" [इस सिलसिले में "ज़हब" का मतलब है सोना; "ज़िहाब" का मतलब है ईमान; और मसलक का मतलब है तुम्हारी रोज़मर्रा की आमद जामद में ज़िन्दगी के मियार की सतह का ते होना।]

एक शख़्स का हसद अल्लाह तआला के हुकूम को नहीं बदल सकता। एक हासिद शख़्स अपने आपको बेज़रूरत परेशानियों में डालता है और थकाता है और जो गुनाह के ढेर वो लगाता है वो अलग से नुकसान है। हज़रत मआविया रज़ी अल्लाहु तआला अन्ह ने अपने बेटे को नसीहत करी, "हसद से बहुत ज़्यादा बचो! जो नुकसान तुम अपने दुश्मन का करोगे उससे ज़्यादा और जल्दी डरामाई तरीके से तुम अपने आप पर ज़ुल्म करोगे अपने हसद की तबाही की वजह से।" सुफ़यान अल-सावरी रहमतहुल्लाही तआला अलैह ने कहा के वो जो हसद नहीं रखते उनका साफ़ दिमाग होता है। कोई हासिद शख़्स उसकी खुवाहिशें नहीं ले सकता,जो शुमार नहीं की गई घुसी हुई इनायत नहीं की गई हसद हमेशा ज़िम्मेदार रहेगी। हसद असाब का फ़साद कराती है और ज़िन्दगी की लम्बाई/दूरी को कम करती है। असमा-ए-रहीमाहुल्लाहु तआला ने हवाला दिया: "मैं एक गाँव वाले से मिला जो एक सौ बीस साल का था, मेने उसकी लम्बी ज़िन्दगी का राज़ पूछा। उसने कहा मैं कभी हासिद नहीं हुआ।"अबूल लेस समरकंदी रहमतुल्लाही तआला अलैहि ने ग़ौर किया:तीन लोग हैं यहाँ पर जिनकी दुआ कभी कुबूल नहीं होगी। एक शख़्स जो अपनी ज़िन्दगी हराम पर जीता है; दूसरा जो चूग़ली करता है; और तीसरा जो हसद रखता है।"

एक शख़्स जो हसद सहता है वो दोनों दुनिया में उसका कोई नुकसान नहीं उठाते। इसके उल्ट, वो इससे फ़ायदा उठाते हैं। हासिद शख़्स अपनी ज़िन्दगी मुसीबत में गुज़ारता है। जब वो देखता है के जिस शख़्स से वो हसद रखता है उसने अपनी कोई भी नेअमतें नहीं खोई जो उसके पास थीं, इसके उल्टा, उसकी दौलत बढ़ती जा रही है, तो उसका असावी तवाज़न खो जाता है। एक हासिद शख़्स, अपनी हसद से पीछा छुड़ाने के लिए,जिस शख़्स से हसद रखता है उसे तुहफ़े भेजे, उसको नसीहत करे और उसकी तारीफ़ करे। उसे उसकी तरफ़ आजिज़ी दिखानी चाहिए और उसके लिए दुआ करनी चाहिए ताकि उसकी नेअमतें और बढ़ें।

छोड़ दिया तन्हा ज़मीनों में,
मैं भटक रहा हूँ चारों तरफ़, रोता हुआ मुसलसल;
एक बार मेरे दिल ने प्यार का मज़ा लिया था,
उसमें खून बहने लगा, और मेने उसे जलाया मुसलसल।

प्यार पेश किया गया,बहुत सजी हुई देवी की तरह,
आसमान और ज़मीन उसकी खुशबू से भर गए;
क्या वहाँ कोई होगा,इस पागल का,
राओ, ए मेरी आखों,अफ़सोस,ए मेरे खुदा!

16-नफ़रत हिक़द

दिल की 16वीं बुराई है नफ़रत। "हिक़द" का मतलब है दूसरे शख़्स से नफ़रत करना, अदावत को सहना, और उसके लिए अपने दिल में बुग़ज़ रखना। इस तरह की अदावत अपने दिल में रखना उस शख़्स के लिए जो तुम्हें नसीहत करे मना (हराम) है। तुम्हें उसकी नसीहत को मानना होगा बजाए इसके के उससे नफ़रत करो। क्योंकि सलाह/नसीहत देने वाला अल्लाह तआला के हुकूम की तामिल करता है, इसलिए उससे प्यार करना होगा और इज़्ज़त देनी होगी। ज़ालिम और ज़्यादती करने वालों से नफ़रत करने की मनाही नहीं है। जब एक कर्ज़ खवाह मर जाता है तो जो कर्ज़ उस पर होता है वो उसके

वारिसों की तरफ़ मुंतकील हो जाता है; अगर कर्ज़दार उन्हें अदा नहीं कर पाता, तो उसे हिसाब के दिन/कयामत में उसे अदा करना होगा। एक तश्दूद करने वाले **(ज़ालिम)** को माफ़ कर देना ही सही है। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' "अहद" की पहाड़ी की जंग में ज़ख्मी हो गए और आपका एक मुबारक दाँत टूट गया। सहाबा रीज़वानअल्लाही तआला अलैहिम अजमईन ने आपकी हालत देखी और बहुत ज़्यादा दुखी हो गए और रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' से पूछा के उन लोगों पर लानत करने के लिए कहिए, ताकि अल्लाह तआला उनको सज़ा दे। आपने जवाब दिया, **'मैं बददुआ (लानत) देने नहीं भेजा गया। मैं पूछने के लिए और कारामद और फ़ायदेमंद चीज़ों के लिए दुआ करने के लिए भेजा गया हूँ और इसी तरह हर मखलूक के लिए रहम और हमदर्दी करने के लिए।**" तब आपने आगे कहा, **"ए मेरे रब!इन लोगों को सही रास्ता 'हिदायत' ढूँढने की हिस/समझ अता फरमा। ये सच्चाई को नहीं पहचानते और ये नहीं जानते।**" आप अपने दुश्मनों को माफ़ कर देते थे और कभी भी उन पर सज़ा/सज़ाब भेजने के लिए नहीं कहते थे।

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में इर्शा द फरमाया: "**ज़कात किसी के माल को कम नहीं कर देती। माल का खैरात 'सदका' देना माल को घटाता नहीं है। अल्लाह माफ़ कर देने वालों को इज़्ज़त 'अज़ीज़' मरतबे पर पहुँचाते हैं। जो लोग अल्लाह की रज़ा के लिए माफ़ करते हैं वो उसके ज़रिए बुलंद किए जाते हैं।**"गुलावदी रहीमाहुल्लाहु तआला ने समझाया के इस हदीस शरीफ़ में बताई गई खैरात वो ज़रूरी खैरात (ज़कात) से हवाला है। नरम लोग अपनी इबादतों और अच्छे कामों के लिए ज़्यादा इनाम हासिल करते हैं और उनके गुनाह तेज़ी से माफ़ होते हैं। जानवरों की रूह की इच्छा इंसानों की सीरत में तख़लीक होती है। वो माल और पैसे को प्यार करते हैं। इस तरह, गुस्से के एहसास **(ग़ज़ब)**, घमंड **(किबर)** का बदला उनमें आपने आप दावे करने लगता है। ये हदीस शरीफ़ इन बुराइयों के लिए इलाज बताती है खैरात और फर्ज़ की गई ज़कात के ज़रिए। माफ़ी की सिफ़ारिश करके, ये गलत असरात को साफ़ करती है जो गुस्से और बदले के एहसास की वजह से पैदा होते हैं। इस हदीस शरीफ़ में जिस माफ़ी का हवाला दिया गया है वो एक

ऐसा ज़मरा है जो बगैर शर्त के हिदायत किया गया है।एक ज़मरे वाली हिदायत किसी शर्त से बंधी हुई नहीं होती।ये सब इसमें शामिल है।इसको कुछ शर्तो में बांधा नहीं जा सकता।माफ़ी सबसे अच्छी है चाहे अगर किसी की मुआवज़ा हासिल होना मुमकिन ना हो।ये और भी अच्छा है जब किसी के हाथ में जो नुकसान भूगता है उसका मुआवज़ा हासिल करने की ताकत हो माफ़ करना जबकि उसके हाथ में मुआवज़ा ज़बरदस्ती हासिल करने की ताकत थी ये अना (नफ़्ज़) के लिए करना बहुत मुश्किल हो जाता है।ज़ालिम को माफ़ कर देना नेक हलीम (**हिल्म**) बाज़ रखना, हमदर्दी और बहादुरी का ऊँचा मरतबा है।इस शख़्स को तुहफ़ा देना, जिसने तुम्हारे साथ कभी कोई महरबानी ना की हो, वो हिमायत (**एहसान**) का सबसे ऊँचा दर्जा है।उस शख़्स की हिमायत करना जिसने तुम्हारे साथ बुराई की हो वो इंसानियत का सबसे ऊँची मिसाल है।

ये सारे सबब एक दुश्मन को दोस्त में बदल देते हैं।जिसस (ईसा अलैहि सलाम) ने कहा, "मेने पहले कहा था के कोई भी जो किसी के दाँत तोड़ता है तो बदले में उसको चीज़ देनी होगी और कोई भी जो किसी की नाक या कान काटता है तो बदले में उसको चीज़ देनी।लेकिन अब मैं तुम से कहता हूँ के पहले बुरा करने वाले की तरफ़ ध्यान मत दो और दूसरा, अगर तुम्हें कोई सीधे गाल पर मारे तो तुम उलटा गल भी उसकी तरफ़ करदो।" शैख इबन-उल अरबी रहीमाहुल्लाहु [मुहीउददीन इबनी अरबी ने दमशकश में **638** हिजरी, **1240** ए.डी. में वफ़ात पाई।] ने कहा, उन लोगों की तरफ़ अच्छाई के साथ पेश आना जिन्होने तुम्हारे साथ बुरा किया है, इसका मतलब निकलता है के जो रहमतें तुम पर निछावर की गई उसका तुम शुक्रिया 'शुक्रन' अदा कर रहे हो।उन लोगों के साथ बुरा बरताव करना जो तुम्हारे साथ अच्छाई करते हैं उसका मतलब है जो बरकतें तुम पर निछावर की गई हैं उनका तुम शक्रिया अदा नहीं कर रहे।" जो हक तुम्हारा है उसे हासिल करना लेकिन उतना ज़्यादा नहीं जितना के उस शख़्स ने जो तुमसे कुछ लिया हुआ है और तुम्हारा हक बनता है तो वो बदला (**इंतीसार**) होगा।माफ़ कर देना इंसाफ़ (**अदालत**) का ऊँचा मरतबा है और बदला लेना इंसाफ़ का सबसे छोटा दर्जा है।एक पाक शख़्स (**सालिह**) जिस ऊँचे दर्जे पर पहुँचता है वो इंसाफ़ की संद होती है।एक

ज़ालिम और सित्मगर को माफ़ कर देना कमज़ोरी **(अजज़)** का अहसास भी दे सकता है और वो और ज़्यादा ज़ुल्म भी बढ़ा सकते हैं। इन ज़ालिम और सित्मगरों के खिलाफ़ बदला लेते रहने से हमेशा ज़ुल्म की मिकदार को घटाता है या पूरे तौर पर खत्म कर देगा। इस लिए, इन मामलों में बदला लेना बजाए इसके के उन्हें माफ़ कर दिया जाए वो ज़्यादा अच्छा और इनाम पाने वाला है। जितना बाकी है उससे ज़्यादा हासिल करना जबके उसे इतना मिल रहा है ये भी नाइंसाफ़ी **(जवर)** है। ऐसा हवाला दिया गया है के जो नाइंसाफ़ी करते है उन्हें सज़ा दी जाती है। एक शख़्स जो किसी ज़ालिम को माफ़ करता है उसे अल्लाह तआला का प्यार हासिल होता है। एक ज़ालिम से जो बकाया है वो वापिस मिलना भी इंसाफ़ है। एक काफ़िर के नज़दीक भी इंसाफ़ अमल में लाना होगा। लेकिन, माफ़ कर देना एक बेहतर आदत है जबके उसके पास बदले की ताकत हो। जब रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' किसी को ज़ालिम को कोसते हुए देखते थे तो आप उससे फरमाते थे, **"तुम बदले (इंतीसार) को अमल में ला रहे हो।"** अगर वो उसे माफ़ कर दे तो ज़्यादा अच्छा है। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में जो बरीका किताब के पहले हिस्से के आखिर में लिखी हुई है: **"एक शख़्स जिसके पास तीन चीज़ें हैं वो जिस दरवाज़े से खुवाहिश करेगा उस के ज़रिए जन्नत में दाखिल होगा:एक जिसने दूसरे के हुकूम वापिस करे जिनकी पहले वो खिलाफ़ वरज़ी कर चुका था, एक जो 'सलात' की दुआ के बाद कुरआन के सबक 'इखलास' को ग्यारह बार किरअत करे, और एक जो मरने से पहले अपने कातिल को माफ़ करदे।"** [ज़लकरनैन का नाम कुरआन में ज़िकर किया गया है। या तो वो एक पैग़म्बर थे या एक वली।] वो आलिम जो कहते हैं के ज़ुलकरनैन पैग़म्बर नहीं थे उनका कहना था उन्हें चार खुबियाँ दी गई जो पैग़म्बरों में मौजूद होती हैं। ये चार खुबियाँ है: वो माफ़ कर सकते थे जबके उनके पास मुकाबले की ताकत थी,जो वो वादा करते थे उसे पूरा करते थे, वो हमेशा सच बोलते थे, और वो अपनी खुराक **(रिज़क)** की तैयारी नहीं करते थे पिछले दिन से। माफ़ करने का इनाम (सवाब) जो वो पाता है वो उस नाइंसाफ़ी के हिस्से के बराबर होता है जो वो बरदाश्त करता है।

ग्यारह बुराइयाँ नफ़रत (**हिकद**) से आती हैं: हसद; दूसरों पर जो बदकिस्मती गिरती है उस पर खुशी मनाना (शमातत); अलैहदगी (हिजर); देखना (दूसरों) को नाम भों चढ़ाकर (इस्तीसग़ार); झूठ; ग़ीबत; दूसरों के राज़ अफ़शां करना; दूसरों का मज़ाक उड़ाना; दूसरों को बेकार मुश्किलों में डालना; दूसरें के हुकूक ना देना और माफ़ी से बाज़ रहना।

कोई भी जो नफ़रत (**हिकद**) रखता है वो मंदरजाज़ेल गुनाहों में पकड़ा जाता है: तोहमतें लगाना; झूठ बोलना; झूठी गवाही देना; ग़ीबत करना; दूसरों के राज़ खोलना, नक्ल उतारना; गुस्सा करना; बग़ावत करना और फ़ायदे वाली आमदो रफ़्त को बंद करना।मंदरजाज़ेल हदीस शरीफ़ ये बताती है के इस्लाम जादूगरी की इजाज़त नहीं देता: "**इस बात की उम्मीद की जा सकती है के जो मंदरजाज़ेल तीन बेइंसाफियाँ नहीं रखते उनके सारे गुनाहों को माफ़ कर दिया जाए: ग़ैर यकीनी (शिर्क) की बीमारी पकड़ना (पहले मर जाना); जादूगरी (का अमल ना करना); और नफ़रत (हिकद) का (ना होना) इस्लाम के भाइयों की तरफ़।**"

"सिहर" करने का मतलब है जादूगरी (**अफ़सून**) का अमल करना और ये इस्लाम में मना (**हराम**) है।एक शख़्स जो जादूगरी (**सिहर**) करता है वो "जादू" (जादूगर/फ़ुसूँगर) कहलाता है फारसी में।अगर एक शख़्स जो जादूगरी (**सिहर**) में यकीन रखता है के वो जादू से हर चीज़ कर सकता है, तो वो मुशरिक बन जाता है।एक शख़्स जो जादू के मौजूद होने और उसके से इंकार करे वो भी मुशरिक बन जाता है।हमें इस बात का यकीन होना चाहिए के जादूगरी, और दूसरी दवाइयों की तरह असर कर सकती है अल्लाह तआला के हुकूम पर मुबनी है ये सब।ये एक बहुत बड़ा गुनाह है के ये मानना के अल्लाह तआला जितनी भी उसकी खुवाहिशें है वो सब तखलीक करता है, अगरचे असलियत में ये कुफ़्र का काम नहीं है।जादू का इलाज **सआदत-ए-अबदिया** तुर्की किताब में बहुत तफ़सील से लिखा हुआ है।

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**अल्लाह तआला शाबान के मुबारक महिने के पन्द्रहेवें दिन अपनी सब मखलूक पर रहम फरमाता है।ताहम, वो ना मानने वालों 'मुशरिकों**

मुशाहीन को माफ़ नहीं करता।" "मुशाहीन" का मतलब है एक शख़्स जो "बिदअत" की चीज़ों **(अहल-अल-बिदअत)** को माने और एक शख़्स जो अपने आपको किसी मसलक के मुताबिक नहीं करता।

[वो जो मसलक की अहल अस सुन्नत वल जमाअत की नहीं मानते, वो गलत रास्ते **(अहल-अल-बिदअत)** को मानने वाले होते हैं।कोई भी जो चारों मसलकों में किसी एक को भी नहीं मानते वो अपने आपको अहल-अस-सुन्नत के ग्रुप से अलग कर लेते हैं।वो जो "अहल-अस-सुन्नत" के ग्रुप से अलग हो जाते हैं वो या तो मुशरिक बन जाते हैं या गलत रास्ते (अहल-अल-बिदत) [हमारे पैग़म्बर 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमाया के मुसलमान तेहत्तर फिरकों में बटें हुए हैं भरोसे के मामले में, और उनमें से सिर्फ वो ग्रुप यानी, **अहल-अस-सुन्नत** का ग्रुप जिसे कहते हैं, या **फिरका-ए-नाजीया,** सही रास्ते पर चल रहे हैं।बाकी के बहत्तर ग्रुप जो बचे हुए हैं, और जिनमें से ज़्यादातर दोबारा ग़ायब हो गए, इस वक्त के दौरान।वहाँ पर दो मुख्तलीफ़ नायब शाखें हैं जिनको असली मामले में **मसलक** यानी **मसलक-ए-एशरिया** और **मतूरिज़िया का मसलक;** और दूसरी चार अमली नायब शाखें जिनको अमली मामले में यानी, **हनफ़ी मसलक, शाफ़ई मसलक** और **हंबली मसलक** कहते हैं ये सारी निजात के ग्रुप **(फ़िरका-ए-नाजिया)** के अंदर आते हैं जो ऊपर बोले गए (हदीस शरीफ़) में सिफ़ारिश किए गए इंसानियत के सबसे अच्छे 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' के ज़रिए।बराए महरबानी हमारी दूसरी इशाअत को भी इस असली मामले की तफ़सीली जानकारी के लिए देखिए।इस पर जिसे फौकियत दी गई है वो है: **एतेकाद और इस्लाम, सुन्नी रास्ता, सआदते अबदिया** (पाँच हिस्से), **सही लफ़्ज़ के दस्तावेज़,**और बाकी।) को मानने वाले बन जाते हैं।वहाँ पर कई तरह के काफ़िर हैं।उनमें सबसे खराब "मुशरिक" है।मुशरिक का मतलब है एक शख़्स जो अल्लाह तआला पर और कयामत के दिन पर ईमान नहीं रखता।देहरिया, इलहादी और इश्तराकी सब "मुशरिक" होते हैं।गलत राह **(अहल-अल-बिदअत)** पर चलने वाले काफ़िर नहीं होते।लेकिन, इस्लामी आलिमों ने हमें बताया के बिदत के वो लोग जिनकी सच्चाई से इंकार और मज़हबी उसूलों की खिलाफ़ वरज़ी उन्हें उन अकीदों के इंकार करने की भूल चूक में डाल देती हैं जो के कुरआन और हदीस में वाज़ेह तौर पर बताई गई हैं,

वो काफ़िर बन जाते हैं।ईमान ना रखने वाले लफ़ज़ के बजाए "मुशरिक" लफ़ज़ इस्तेमाल होता है कुरआन और हदीस में।मिसाल के तौर पर जब अल्लाह तआला कुरआन में कहे के "मुशरिक" को माफ़ नहीं करेगा तो इसका मतलब ये आता है के किसी भी तरह के "ईमान ना मानने वाले" को माफ़ नहीं करेगा।अगर वो लोग जो सही रास्ते से भटक गए हैं वो अपने ईमान से इतने ज़्यादा गुमराह नहीं हुए हैं, वो अभी तक मुसलमान हैं और वो "अहल-अत-कीवला" हैं।लेकिन, इस्लाम पर उनका नुकसान उस नुकसान से ज़्यादा है जो ईमान ना रखने वालों के सबब होता है।वो जो मज़हबी रूतबा रखते हैं और चार में से किसी एक भी मसलक को नहीं मानते मिसाल के तौर पर मौदूदी और सय्यद कुतूब के मानने वाले इसी तरह वो जो अपने आपको "सलाफ़िया" कहते हैं लेकिन असल माहियत में इबन अल तैमिया की तालीमात को मानते हैं, ये सब ऊपर बताई गई "अहल-अल-बिदत" के ज़मरे में आती हैं।हिंदुस्तान के जाने माने आलिमों में से एक जिनका नाम, मुफ़ती महमूद बिन अब्दुलग़यूर पैशावरी रहीमाहुल्लाहु तआला ने अपनी किताब **हुज्जतुल-इस्लाम** जो **1264** हिजरी [**1848** ए.डी.], में छपी, में **तुहफ़ातुल-अरब-ए-वा-ल-अजम** किताबचे से मंदरजाज़ेल फारसी का हवाला पेश किया: मुसलमानों के लिए ये वाजिब है के अपने आपको मुजतहीद की तालीमात के मुवाफ़िक़ करें, तेंतसिवी आयत सुरह नहल की और सुरह अंबिया की सातवी आयत के मतलब के लिए: "...**उनके बारे में पूछो जो इस पैग़ाम के मालिक हैं;**" और सुरह तौबा की सौवी आयत का मतलब है: "**(इस्लाम का) हरादल दस्ता जिनमें से पहले वो थे जिन्होने छोड़ दिया (अपने घरों को), (यानी मुहाजरीन) और उनमें से वो जो उन्हें मदद (यानी, अनसार) देते थे,और वो (भी) जो उनकी (सब) अच्छे कामों में तकलीद करते थे: अल्लाह तआला उनसे बहुत ज़्यादा खुश है, (क्योंकि वो उसके साथ हैं)।**" ये आयतें हमें हुकूम देती हैं के हम इनकी तकलीद करें।जब मआज़ बिन जबल रज़ी अल्लाहु तआला अन्ह यमन के गवर्नर बने तो रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने उनसे पूछा के वो किस तरह लोगों के मामलात सुलझाएगें।उन्होने जवाब दिया, "जब वो कुरआन में और हदीस में उसका कोई हल नहीं निकाल पाएँगे तो वो राए" **(इजतिहाद)** लेगें और अपनी समझ के मुताबिक उसका फ़ैसला करेगें।रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने

उनके जवाब को बहुत पसंद किया और अल्लाह तआला का बहुत ज़्यादा शुक्र अदा किया। जलालउददीन-ए-सुयूती रहीमाहुल्लाहु तआला ने अपनी किताब **जाज़ि-उल-मवाहीब** में हमें बताया के अहमद शिहावउददीन क़राफ़ी रहीमाहुल्लाहु तआला जो "मालिकी" आलिमों में से एक थे जो मिसर में रहते थे [उन्होने **684** हिजरी या **1285** ए.डी.में रहलत फरमाई।] ने कहा, "वहाँ पर आलिमों की हम ख्याली **(इजमा)** है के नया मुसलमान किसी भी आलिम को मुंतखिब करे उसकी नकल करे ये ज़रूरी है।" क्योंकि एक औसत मुसलमान के लिए इस बात की इजाज़त है के एक खास हदीस शरीफ़ सही है, अगर एक हदीस का आलिम (इमाम) कहे के वो सही है, इसी तरह इस बात की इजाज़त है उनके लिए के ये कहना के ये खास मज़हबी राए (उसूल) सही (पक्का) है अगर एक फ़िक्ह का आलिम ये कहदे के ये सही [बराए महरबानी **सआदते अबदिया** के छठे सबक के दूसरे हिस्से को देखें हदीस शरीफ़ की किस्मों के लिए।] है। इसी तरह, इस बात की इजाज़त **(जाइज़)** है के जो फैसला मज़हबी कानून के डॉक्टरों ने मंज़ूर किया है (फ़िकह के इमाम) उसे दोहराया जाए "फ़िक्ह" **(मसलक)** की मुश्किलात को सही करने के लिए, मिसाल के तौर पर वो कह सकते हैं, "फ़लाँ फलाँ 'मसलक' की मुश्किल सही है या उसके उलटा के इस काम को इस तरीके से करना या उस तरीके से करना 'सही' है।" सुरह निसा की अटठानवीं **(58)** आयत कुरआन अल करीम में मतलब है: "**जब तुम किसी मज़हबी मामले पर मुखालफ़त करो, तो जवाब के लिए कुरआन और मुहम्मद** अलैहि सलाम **की सुन्नत को देखो।**" ये एहकाम "मुजतहिद" आलिमों के लिए बराहे रास्त हैं। इबन अल हज़म ने कहा: "इस बात की इजाज़त (हलाल) नहीं है के किसी ज़िंदा या मुरदा/मुर्दा की नकल की जाए। हर फ़र्द को अपना खुद का 'इजतिहाद' बनाना है। उनका बयान माकूल बयान नहीं है क्योंकि वो अहल-अस-सुन्नत के आलिम नहीं थे।"[हमारी किताब **अशदद-उल-जिहाद** में लिखा है के इबन-उल-हज़म एक इलहादी शख़्स था जो बगैर किसी मसलक के था।] ये एक शख़्स के ज़रूरी **(वाजिब)** है जो मज़हबी फैसले **(मुफ़ती)** देता है के वो एक "मुजतहीद" हो। एक "मुफ़ती" जो के "मतलक मुजतहिद" नहीं है कोई फ़ैसला **(फ़त्वा)** नहीं दे सकता ये मना **(हराम)** है। लेकिन पिछले फ़ैसले आगे ले जाने की उसे इजाज़त है। इस बात की

इजाज़त नहीं है के जो "मुफ़ती" "मुतलक मुजतहिद" नहीं है उससे नया फ़ैसला लेना। मंदरजाज़ेल **किफ़ाया** नाम की किताब के रोज़े वाले सबक में है: जो शख़्स मुजतहिद नहीं है उसे इस बात की इजाज़त नहीं है के जो हदीस उसने सुनी उसके मुताबिक अमल करे। क्योंकि, वो हदीस उन हदीसों में से हो सकती है जिन्हें वज़ाहत की ज़रूरत है या उन हदीसों में से जिनकी मौजूदगी नाकारा है (दूसरी हदीस शरीफ़ के ज़रिए)। इस तरह फ़तवों (फ़ैसलों) के मामले में नहीं है। [दूसरे लफ़्ज़ों में, एक फ़तवा हर हाल में खरा है। इसके बारे में वहाँ पर कोई शक नहीं है और हर एक को फ़तवे को मानना होगा।] इससे मिलती जुलती इत्तिलाआ इस मज़मून पर **तकरीर**की किताब में मौजूद है। **तुहफ़ा-तुल-अरब-एवल-अजम** किताबचे से तशरीह यहाँ खत्म होती है।]

नफ़रत की एक वजह गुस्सा (ग़ज़ब) है। जब एक शख़्स गुस्सा हो जाता है लेकिन वो बदला लेने के काबिल नहीं होता, उसका गुस्सा अपने आपको नफ़रत में तबदील कर देता है। गुस्सा खुन की हरकत के बढ़ जाने की वजह से आता है [खून में तनाव बढ़ने की वजह से] अल्लाह तआला की रज़ा के लिए गुस्सा तारीफ़ वाला काम है। ये एक शख़्स के मज़हबी ग़ैरत से निकलता है।

17- दूसरे की बदनसीबी पर खुश होना (शामातात)

दूसरे की बदनसीबी पर खुश होना "शामतात" है। रसूलुल्लाह 'सल्लाल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में इर्शाद फरमाया: "**एक मज़हबी भाई के लिए शामातात नहीं रखना चाहिए! अगर तुम शामतात रखोगे तब अल्लाह तआला उसे तबाही से आज़ाद कर देंगे और तुम्हें हुबहू तबाही से सज़ा देंगे।**" अगर किसी ज़ालिम की मौत की खबर सुनकर तुम खुशी महसूस करते हो तो वो "शामातात" नहीं है क्योंकि उसके जुल्म से आज़ादी पर उसे शादमानी मिलती है। अपने दुश्मन की मुसिबतों पर जो वो उसकी मौत के

अलावा उसकी तवाही और मुश्किलों की खवर सुनकर खुश हाना भी “शामातात” है। ये और भी खराब है अगर एक ये यकीन रखे वो उसकी तबाहियों और मुश्किलों का सबब है, मिसाल के तौर पर ये मानना के उसकी **(दुआ)** इबादत कुबूल हो और इसका दुश्मन मुसिबत झेले। इस तरह का यकीन रखना खुद पसंदी **(उजब)** का सबब बनता है। एक ये सोचता है के उसके दुश्मन की मुसिबतें उसके अपने फ़रेब (“मकर”या“इसतिदराज”) से है। इसलिए, उसको उन मुसवतों को खत्म करने के लिए दुआ करनी चाहिए। रसूलुल्लाह ‘सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम’ ने एक हदीस शरीफ़ में इर्शाद फरमाया: “**एक मोमिन की दूसरे मोमिन भाई के लिए अच्छी दुआ कुबूल होती है। एक फरिश्ता कहता है, “अल्लाह तआल तुम्हें भी इसी तरह की अच्छाई दे!और उसके बाद वो कहते हैं, आमीन!एक फरिश्ते की इबादत ‘दुआ’ कभी मना नहीं होती।**” अगर एक दुश्मन ग़ाजिब (ज़ालिम) है और जो परेशानियाँ और तबाहियाँ वो बरदाश्त कर रहा है वो सब उसे दूसरों पर ज़ुल्म करने से रोकता हैं। तब वो इन तकलीफ़ों से खुश हो क्योंकि वो परेशानियाँ इसकी “शामतात” नहीं होंगी और ना ही एक गुनाह बल्कि इसके बजाए वो मज़हबी **ग़ैरत** होगी। मज़हबी **ग़ैरत** उसके मज़बूत ईमान का इशारा होगी। अल्लाह तआला के लिए **ग़ैरत** रखना अच्छा है। अगर ये किसी की वहशी इच्छा का बकाया है तो ये अच्छा नहीं है। हकीकत में, एक ज़ालिम की तकलीफ़ों को सुनकर उनपर हँसना अच्छी बात नहीं है लेकिन क्योंकि वो उसे दूसरों पर ज़ुल्म करने से बाज़ रखता है, तो इसकी इजाज़त हो जाती है।

18- अलैहदगी (हिजर)

“हिजर” का मतलब है (किसी के साथ) दोस्ती छोड़ देना और (उनके साथ) से अलग हो जाना। रसूलुल्लाह ‘सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम’ ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: “**एक ईमान वाले (मोमिन) को दूसरे ईमान वाले (मोमिन) से तीन दिन से ज़्यादा खफ़ा रहने की इजाज़त (हलाल) नहीं है। तीन दिन के बाद उसके लिए ज़रूरी (वाजिब) है के वो उसके पास जाए और उसे आदाब (सलाम) करे। अगर बाद वाला बदले में उसके खेरमकदम का जवाब दे तो वो**

दोना इनाम (सवाब) बाँटते हैं, वरना बाद वाले के लिए गुनाह दर्ज हो जाता है।" ये यू भी ठीक नहीं है ना ही इजाज़त है एक ईमान वाले आदमी या औरत के लिए के वो दुसरे ईमान वाले (मोमिन) के साथ गुस्सा करें या मुखालफ़त करे अपने तअल्लुक़ात को खराब करने के लिए और उनके साथ बिल्कुल बात चीत बंद कर देना किसी मामूली झगड़े पर। गैर मुस्लिम (ज़िम्मी) मिसाल के तैर पर, ईसाई और यहूदी जो एक इस्लामी रियासत में शहरियों की तरह रहते हैं उन्हें "मामलात" में मुसलमानों की तरह सलूक करना चाहिए। मज़हबी इबादतें और निकाह के अलावा दूसरी सरगरमियाँ "मआमलात" कहलाती हैं।

[इस्लाम के समाजी कानून के मुताबिक शादी का मुआहिदा। तफ़सीली जानकारी के लिए बराए महरबानी **सआदते अबदिया** का बारहवें सबक का पाँचवा हिस्सा देखें।] [इस बात की इजाज़त नहीं है के एक इस्लामी रियास्त में रहने वाले गैर मुस्लिम शहरियों के साथ दुनियावी मआमलाल के लिए दूरी बनाए जाए। ये ज़रूरी है के उनके दिलों को राज़ी रखा जाए उनके साथ अच्छा बरताव करके और मुसकराते चेहरे के साथ और ऐसी हालतों से बचा जाए जो उनकी तरफ़ बदअतवारी या बुरे सुलूक का सबब बनें। चाहे इस्लामी रियासत की सरहदों के अंदर हो या बाहर हो, जहाँ कहीं भी हो, और चाहे वो मुस्लिम हो या एक गैर मुस्लिम, कोई भी हो, वहाँ पर किसी भी हाल में इस बात की इजाज़त नहीं है के किसी शख़्स के हुकूक, माल, हिफ़ाज़त या इज़्ज़त की खिलाफ़ वरज़ी की जाए। एक ईमान न रखने वाला जो इस्लामी रियास्त में रहता है या ग़ैर मुस्लिम सय्याह जो इस्लामी रियास्त में घूमने आए या ग़ैर मुस्लिम कारोबारी जो इस्लामी रियास्त की सरहदों के अंदर है तिजारत/कारोबार करने के गर्ज़ से वो इस्लामी रियास्त में रहने वाले एक मुसलमान शहरी की तरह सारे हुकूक हासिल करेंगे इस्लाम के कानून के मुताबिक जो रोज़ाना की ज़िन्दगी के हर पहलू पर आईद होते हैं मज़हबी इबादतों के अलावा जो सिर्फ़ मुसलमानों को अदा करनी होती है। वो अपनी दुआएँ या मज़हबी फराइज़ को अदा करने में आज़ाद होते हैं। इस्लाम इन हुकूक और आज़ादी को इनको फराहम करता है। एक मुसलमान को अल्लाह तआला के एहकाम को मानना होगा और कोई गलत काम नहीं करना होगा। वो

उन कानूनों की नाफ़रमानी नहीं कर सकता जो उसके मुल्क पर हुकूमत करते हैं। वो कोई जुर्म नहीं कर सकता। वो किसी तरग़ीब को नहीं उठा सकता। वो हर एक के साथ चारों तरफ़ अच्छा रहे चाहे वो मुसलमान हो या ग़ैर मुस्लिम। असल में, एक मुसलमान दूसरे के हुकूक का ध्यान रखता है और कभी किसी पर ज़्यादती/जुल्म नहीं करता। अपने मियारे ज़िन्दगी के बरताव को उम्दा तरीके से सुधार के वो खुबसूरत अखलाक और ज़रूरी सच्चाई इस्लाम के नज़मो ज़बत के कानून को करके वो दूसरी कौमों के लोगों से इस्लामी मज़हब की इज़्ज़त और सराहना करवा सकता है।

ये अच्छा है एक शख़्स के लिए के जिसके साथ उसका मन मुटाव है वो इस्लाम के ज़रिए बताई गई तीन दिन की मुददत के खत्म होने से पहले उसके पास चला जाए और बात चीत करले। तीन दिन का तहम्मुल परेशानी से बचने के लिए होता है। तीन दिन की हद के बाद गुनाह शुरू हो जाता है और जैसे जैसे दिन गुज़रते हैं ये बढ़ता रहता है। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**जिस शख़्स ने तुम्हें नाराज़ किया उसके पास जाओ और उसे मनाओ! उस शख़्स को माफ़ करदो जिसने तुम पर जुल्म किया। जिसने तुम्हारे साथ बुरा किया उसके साथ अच्छे रहो!**" वहाँ पर तीन इनाम (**सवाब**) हैं एक शख़्स के लिए जो कहे "असलाम अलैकुम" और बीस इनाम हैं उसके लिए जो कहे, "असलाम अलैकुम व रहमतुल्लाह" और तीस इनाम उसके लिए है जो कहे "असलाम अलैकुम व रहमतुल्लाह व बरकातोहू" वहाँ पर ऐसा इनाम उनके लिए है जो बदले में वैसा जवाब दें, यानी दस इनाम उनके लिए जो कहे, "वा अलैकुम सलाम", बीस इनाम उनके लिए जो जवाब दे "वा अलैकुम सलाम वा रहमतुल्लाह" और तीस इनाम उसके लिए जो (**सलाम**) के बदले में कहे "वा अलैकम सलाम वा रहमतुल्लाह वा बरकातोहू"। एक शख़्स जो तीन दिन की मुददत के अंदर मन मुटाव दूर नहीं करता तो उसे दोज़ख में सज़ा मिलती है अगर उसे माफी या सिफ़ारिश (**शफ़ाअत**) हासिल ना हो। इस बात की इजाज़त है, और बल्कि मुस्तहब [ये काबिले तारीफ़ काम है, जो इस्लाम ने हुकूम किया है, अगरचे ये फर्ज़ नहीं है।] है एक गुनहागार के साथ "हिजर" रखना उसको सबक सिखाने की वजह से। ये असलूब के मुताबिक अलैहदगी लगाना है अल्लाह तआला की रज़ा के

लिए! रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "सबसे अच्छी और सबसे ज़्यादा कीमती सारे अच्छे कामों और इबादतों में वो है **'हुब्ब-ए-फ़िलाह** और **बुग्द-ए-फ़िलाह**।" "हुब्ब-ए-फ़िलाह का मतलब है अल्लाह तआला की रज़ा के लिए प्यार करना और "बुगद-ए-फ़िलाह" का मतलब है अल्लाह तआला की रज़ा के लिए नापसंद करना और अलैहदगी हासिल करना।अल्लाह तआला ने मूसा (मोसेस) अलैहि सलाम से पूछा: "तुम मेरे लिए क्या कर सकते हो?" जब उन्होने जवाब दिया के वो "सलात" अदा करेगे और रोज़े रखेंगे और खैरात/ज़कात देंगे और याद (**ज़ीकर**) करेंगे, यानी, उसका नाम हमेशा लेगें।अल्लाह तआला ने उनसे कहा: " 'सलाम' जो तुम अदा करोगे वो तुम्हारे लिए सबूत (**बुरहान**) होगा, यानी, वो तुम्हें बुरे काम करने से बचाएगा;जो रोज़े तुम रखोगे वो तुम्हारे लिए एक कवच होगा, यानी, वो तुम्हें दोज़ख की आग से बचाएगा;जो खैरात (ज़कात) तुम दोगे वो तुम्हें योमुल हिसाब/कयामत में साया देगा; और याद (ज़िकर) करना तुम्हें जमा लिए जाने वाली जगह पर हिसाब किताब के दिन में रोशनी देगा।या मूसा!तुम मेरे लिए क्या कर सकते हो? इस बार मूसा अलैहि सलाम ने अल्लाह तआला से भीख मांगी के वो उनपर ये ज़ाहिर करे के वो कैसे उनके लिए कुछ कर सकते हैं। "या मूसा," अल्लाह तआला ने कहा। "क्या तुम मेरे दोस्तों से प्यार करते थे और मेरे दुश्मनों से परे रहोगे?" इस पर मूसा अलैहि सलाम समझ गए के सब अच्छे कामों और इबादतों से अफ़ज़ल अल्लाह तआला की रज़ा के लिए (**हुब्ब-ए-फ़िताह**) प्यार करना था और अल्लाह तआला की रज़ा के लिए अलग रहना (**बुगद-ए-फिलाह**) है।इस बात की इजाज़त है के उस शख़्स से जिसने गुनाह किए हैं उससे एक लम्बे अरसे के लिए "हिजर" किया जाए।ये बात बहुत मश्हूर है मुसलमानों में के मश्हूर इमाम अहमद इबनि हंबल रहीमाहुल्लाहु तआला अपने चाचा और चचेरे भाइयों से दूर हो गए थे क्योंकि उन्होने एक ऐसा तुहफ़ा कुबूल कर लिया था जिसे वो जानते थे के (वो चीज़ जिसे इस्लाम ने मना की और इसलिए उसे कहते हें) वो हराम ज़रिए से आई है।और, रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने भी तीन लोगों और उनकी बीवियों पर हिजर नाफ़िज़ किया, यानी आप उनसे थोड़े वक्त के लिए अलग हो गए, क्योंकि वो जंग-ए-तबूक में शामिल होने में नाकाम रहे थे।

19-बुज़दिली (जुबन)

"जुबन" का मतलब है बुज़दिली से। गुस्से (ग़ज़ब) की सही मिक़दार या सख्ती से पेश आने को बहादुरी **(शुजाअत)** कहते हैं। गुस्सा जो ज़रूरी मिकदार से कम हो वो बुज़दिली **(जुबन)** कहलाता है। बुज़दिली एक बुराई है। इमाम-ए-मुहम्मद बिन इदरीस शाफ़ई रहीमाहुल्लाहु तआला ने कहा, "एक शख़्स जो बुज़दिली से पेश आए ऐसी हालत में जब बहादुरी की ज़रूरत हो तो वो एक गधे की तरह है। एक शख़्स जिसे जज के ज़रिए सज़ा मिली हो वो अगर उस सज़ा को कुबूल नहीं करता तो एक शैतान की तरह है।" एक बुज़दिल अपनी बीवी या रिश्तेदारों के लिए कोई ग़ैरत नहीं दिखा सकता जब हालत ऐसा चाहते हों। वो उनको बचाने के काबिल नहीं होता इसलिए वो तकलीफ़े (ज़ुल्म) और बेइज़्ज़ती **(ज़िल्लत)** बरदाश्त करता है। वो जब एक मना किया गया **(हराम)** काम होते हुए देखता है तो वो कुछ भी नहीं कहता और वो दूसरे लोगों की दौलत या माल की तरफ़ लालची भी होता है। वो एक मुसतकिल काम को करते रहने के काबिल नहीं होता ना ही वो उस फ़र्ज़ की एहमियत की कदर करता है जो उसे सौंपा गया है। अल्लाह तआला ने कुरआन की सुरह "तौबा" में **(शुजाअत)** बहादुरी की तारीफ़ की है और सुरह "नूर" में हुकूम दिया है के जबके तुम ज़िनाकार को सज़ा दे रहे हो तो रहम मत करो।

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में इर्शाद फरमाया: "**अगर मेरी अज़ीज़ बेटी फ़ातिमा चोरी करती, तो मैं उसके भी हाथ काट देता।**" अल्लाह तआला ने अपने मुबारक नबी 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' के साथियों (सहाबा) की तारीफ़ की सुरह फ़ातेह में ये फरमाते हुए: "**वो ईमान ना रखने वालों की तरफ़ सख्त हैं।**" उन्होने उनकी तारीफ़ करी क्योंकि वो ईमान ना रखने वालों के साथ गुस्सा थे और जंग में उनके साथ सख्ती से पेश आए। कुरआन अल करीम की सुरह तौबा की तेहत्तरवीं आयत-ए-करीमा का मतलब है: "**ईमान ना रखने वालों के साथ सख्त रहो।**" इसका मतलब है जब ईमान ना रखने वाले लोग/काफ़िर लोग हमला करे तो हमें बुज़दिली नहीं दिखानी चाहिए। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक

हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**मेरी उम्मत (मुसलमानों) में सबसे अच्छा वो है जो मज़बूत/पक्का हो लौहे की तरह।**" ये ज़रूरी है वो जो इस्लाम पर हमला करे या मुसलमानों के साथ सख्त नफ़रत रखे तो ज़रूरी है के उनकी तरफ़ खुरदरे और सख्त हो जाओ। इस बात की इजाज़त **(जाइज़)** नहीं है के उन लोगों के साथ बुज़दिली की जाए। डरपोक/बुज़दिल उड़ाने अल्लाह तआला के हुकूम को नहीं बदल सकतीं। जब अल्लाह तआला किसी की मौत के वक्त का हुकूम दें, तो मौत के फरिश्ते **(अज़राईल)** उस शख़्स को चाहे वो कहीं भी होगा ढूँढेंगे। इस बात की इजाज़त नहीं है के अपने आपको खतरे में डालो। ये एक गुनाह है खतरे वाली जगह पर अकेले रहना या खतरनाक रास्ते/सड़क पर अकेले चलना।

20-तहवर

गुस्से की ज़्यादती या सख्ती जो खतरे के निशान से ऊपर पहुँच जाती है वो **तहवर** (दिलेरी, बेवकूफ़ी की हद तक सख्त) कहलाती है। तहवर के साथ वाला शख़्स सख्ती, गुस्सा और खुरदरी सिफ़ात ज़ाहिर करता है। तहवर का उलटा नरमाई **(हिल्म)** है। एक हिल्म आदत वाला शख़्स जब किसी ऐसी हालत से दोचार होता है जो गुस्सा **(ग़ज़ब)** का सबब बनता है तो वो कभी गुस्से या जोश में नहीं आता। एक बुज़दिल शख़्स सिर्फ़ अपने आपको नुकसान पहुँचाता है। कहा जाता है, एक गुस्से वाला शख़्स न सिर्फ़ अपने आपको बल्कि दूसरों को भी नुकसान पहुँचाता है। गुस्सा एक शख़्स को कुफ़्र में भी डाल सकता है। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में इर्शाद फरमाया: "**गुस्सा (ग़ज़ब) एक शख़्स के ईमान को बदनाम कर देता है।**" रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को दुनियावी मामलों के लिए कभी भी गुस्सा करते हुए नहीं देखा गया। आप सिर्फ़ अल्लाह की रज़ा के लिए गुस्सा कर सकते थे। एक शख़्स गुस्से की हालत में ऐसा कुछ कह सकता है या कर सकता है जो कुफ़्र की वजह बन सकता है। एक गुस्से वाले शख़्स को आगे ये सोचना चाहिए कि उसका मुखालिफ़ उसके गुस्से पर इज़हार कर सकता है और बदले में कुछ कर सकता है। गुस्सा एक शख़्स के दिल को नाहमवार कर सकता

है और ये नाहमवारी उसके चेहरे पर एक गंदी और खौफ़नाक छवी बना सकता है।

अपने गुस्से पर हावी होना या काबू पा लेना "**कज़म**" कहलाता है। कामयाब "कज़म" बहुत अच्छा और फायदेमंद काम है और एक शख़्स को बहुत सारे इनाम **(सवाब)** हासिल होने की वजह बन सकते हैं। जो कोई भी अपने गुस्से या ग़ज़ब पर काबू पा लेता है उसे जन्नत के इनाम से नवाज़ा जाता है। अल्लाह तआला एक शख़्स से बहुत प्यार करता है अगर वो अपने गुस्से पर अल्लाह तआला की रज़ा के लिए काबू पा लेता है और अपने मुखातिफ़ को माफ़ कर देता है और कोई बदला नहीं लेता। मंदरजाज़ेल हदीस-शरीफ़ हमें इस तरह के शख़्स के बारे में जानकारी देती है, "**अगर एक शख़्स अल्लाह तआला की रज़ा के लिए अपने गुस्से पर काबू पा लेता है, तो अल्लाह तआला अपनी सज़ा (अज़ाब) उसकी तरफ़ से हटा लेता है,**" और "**अल्लाह तआला एक मुसलमान पर रहम करता है, प्यार करता है और उसे बचाता है अगर वो तीन खासियतें रखता हो: एक वो जो रहमतें नाज़िल होने पर शुक्र अदा करता हो;एक जो ज़ालिम को माफ़ कर देता हो; एक जो अपने गुस्से 'ग़ज़ब' पर काबू पा लेता हो।**" दी गई रहमतों का शुक्र अदा करने का मतलब है इस्लाम के उसूलों के मुताबिक रहमतों का इस्तेमाल करना। नीचे बताई गई हदीस शरीफ़ में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इर्शाद फरमाया: "**अगर एक शख़्स जिसे बहुत गुस्सा आया वो नरमाई के साथ पेश आए हाँलाकि उसके पास इतनी ताकत है के वो जो चाहे कर सकता है, अल्लाह उसका दिल ईमान और हिफ़ाज़त के एहसास से भर देगा,**" और "**कोई भी जो अपना गुस्सा छुपा ले या काबू पाले वो अल्लाह तआला उसके साथ बराबरी का सलूक करेगा, यानी, अल्लाह तआला उसके शर्मनाक कामों और बुराइयों को छुपाएगा।**" इमाम अल ग़ज़ाली रहीमाहुल्लाहु तआला ने कहा, "**नरमाई 'हिल्म' का होना ज़्यादा कीमती है अपने गुस्से 'ग़ज़ब' पर काबू पाने से।**" एक हदीस शरीफ ने नरमाई **(हिल्म)** की कीमत की तरफ़ इशारा किया, "**ए मेरे अल्लाह! मुझे जानकारी 'इल्म' दो, मुझे नरमाई 'हिल्म' से सजाओ, मुझे परहेज़गारी 'तकवा' से नवाज़ो,और मुझे अच्छी सहत 'आफ़ियत' की खुबसूरती दो।**" किसी ने अबदुल्लाह इबनी अब्बास रज़ी अल्लाहु तआला अन्हुमा को कोसा और आपने

इस तरह उसे जवाब दिया ये पूछकर कि अगर वो उस शख़्स की कोई भी मदद कर सकें। वो शख़्स बहुत शर्मीन्दा हुआ और उसने अपना सिर झुका दिया और माफ़ी मांगी। एक दूसरे शख़्स ने ज़ेनुल आबिदिन अली रज़ी अल्लाहु तआला अन्हुमा को कोसा जो हज़रत हुसेन रज़ी अल्लाहु तआला अन्ह के बेटे थे। उन्होने अपनी पौशाक उतारी उसे तुहफ़े के तौर पर दे दी। ईसा (जिस्स) अलैहि सलाम कुछ यहूदियों के पास से गुज़रे। उन्होने उनको सारे बुरे नामों से पुकाराना शुरू कर दिया। उन्होने बदले में उनसे नरमाई से बात करी। जब उनसे पूछा गया कि वो क्यों उनके साथ इतनी नरमाई से पेश आए जबकि उन्होने उनपर सारी गंदगी फेंकी, उन्होने जवाब दिया, "जिसके पास जो होता है वही वो दूसरो को देता है।" आम उसूल ये है कि जो शख़्स किसी की परवाह नहीं करता वो हमेशा आराम से रहता है और खुश रहता है और हर कोई उसकी तारीफ़ करता है।

एक हदीस शरीफ़ इस तरह पढ़ी जाएगी; "**गुस्सा (गज़ब) शैतान के बुरे मश्वरे (वसवसा) से पनपतेहैं। शैतान को आग से बनाया गया है। आग को पानी से बुझाया जाता है। गुस्से पर काबू पाने के लिए अपने को साफ़ करलो (वुज़ू) कर लो!**"इस वजह से, एक गुस्से वाले शख़्स को "अऊज़ु बिसमिल्लाह" और "कुल अऊज़ु" [क़ुरआन के आखिरी दो सबक जो "कुल अऊज़ु" के लफ़्ज़ से शुरू होते हैं।] पढ़ लेना चाहिए। एक गुस्से वाले शख़्स की समझ **(अक्ल)** काम करना बंद कर देती है और वो इस्लाम के ज़रिए तए की गई हदूद से आगे चला जाता है। एक गुस्से वाले शख़्स को बैठ जाना चाहिए अगर जो वो खड़ा हुआ हो। एक हदीस शरीफ़ इस तरह पढ़ी जाएगी: "**जो कोई भी गुस्से (ग़ज़ब) की हालत में हो उसे बैठ जाना चाहिए अगर वो खड़ा हो। अगर गुस्सा जारी रहे, तो उसे अपनी एक करवट की तरफ़ लेट जाना चाहिए!**" खड़े हुए शख़्स के लिए बदले के लिए जल्दी करना बहुत आसान होता है। बैठना उसके गुस्से को कम कर देता है। लेट जाना उसके गुस्से को और कम कर देता है। गुस्सा तकब्बुर **(किब्र)** का नतीजा है। नीचे लेट जाना तकब्बुर को कम कर देता है। एक हदीस शरीफ़ में हुकूम है कि एक गुस्से वाले शख़्स को मंदरजाज़ेल दुआ (पढ़नी या) किरअत करनी चाहिए, "**अल्लाहुम्मग़फिर ली ज़नबी वा अज़हीब ग़ैज़ा क़ल्बी वा आजिरनी मिनश शैतान।**" इस इबादत **(दुआ)** का

मतलब इस तरह है: **"ए मेरे अल्लाह!मेरे गुनाह माफ फरमादे।मुझे मेरे दिल के अंदर के गुस्से से बचा और शैतान के बुरे वसवसे से बचा।"** अगर एक शख़्स उस गुस्से **ग़ज़ब** करने वाले शख़्स के साथ नरमी से बरताव नहीं कर सकता तो उसे उससे अलग हो जाना चाहिए और उसे कभी देखना नहीं चाहिए।

एक शख़्स को दुनियावी या मज़हबी मामलात में दूसरों के साथ गुस्सा नहीं करना चाहिए। **"ला तग़ज़ब"** हदीस शरीफ़ गुस्से को रोकती है।जब एक शख़्स को गुस्सा आता है तो उसके सारे असाब बिगड़ जाते हैं और उसके जिस्म के कुछ हिस्से अपनी साख्त खो देते हैं।डाक्टर भी इस बीमारी का इलाज नहीं ढूँढ़ पाते इस बिमारी का सिर्फ़ एक ही इलाज है वो है ऊपर बताई गई हदीस शरीफ़ **ला "तग़ज़ब"**।एक गुस्से वाला शख़्स अपने आस पास के लोगों को अपने रव्वैये/बरताव और लफ़्ज़ों से घायल करता है।उनको असाब की बिमारी भी हो जाती है।उनके घरों में कोई भाईचारा और अमन नहीं होता।यह कभी अलैहदगी या कत्ल का नतीजा भी बन जाता है।अगर एक घर में कोई गुस्से वाला नहीं होता, तो वहाँ खुशियाँ आराम, अमन और शादमानी होती है।अगर वहाँ ऐसा शख़्स है जिसे गुस्सा आता है, तो वहाँ कोई शादमानी, सुख और अमन नहीं होता।शौहर और बीवी के बीच में या बेटे और उसकी माँ के बीच में हमेशा कुछ न कुछ गैर रज़ामंदी या अदावत रहती है।इन सबसे ये समझ लेना चाहिए कि इस्लामी शरीअत के उसूलों के हुकूम को बजा लाना खुशियाँ आराम और शादमानी ले कर आता है।बल्कि काफ़िर भी जो शरीअत के उसूलों को मानते हैं वो इस दुनिया में खुशियाँ हासिल करते हैं।

जाहिल और बेवकूफ़ लोग गुस्से **(ग़ज़ब)** और ख़शम **(तहवर)** को बहादुरी **(शुजाअत)**, इज़्ज़त, मरदानगी, और हुब्बुलवतन मानते हैं।वो बुरे गुस्से **(ग़ज़ब)** को इन खुश आवाज़ी लफ़्ज़ों से सजाते और सवारतें है।वो दूसरों को बताते हैं के गुस्सा होना बहुत अच्छी चीज़ है और अपनी इस बात को मनवाने के लिए वो बड़ी शख्सियतों की कहानियाँ सुनाते हैं के वो कैसे गुस्सा करते थे।उनका बरताव उनकी लाइल्मी ज़ाहिर करता है और ये साबित करता है के उनके दिमाग़ सही काम नहीं करते।हकीकत में, एक बिमार शख़्स एक सेहतमंद शख़्स से जल्दी पागल हो सकता है, औरतें आदमियों से जल्दी गुस्से में आती

हैं, और बढ़ती हुई उमर के लोग जवानों से ज़्यादा गुस्से में आ सकते हैं। लोग जो तीस साल से कम उमर के हैं वो जवान कहलाते हैं, तीस और पचास के बीच के लोग बुरदबार कहलाते हैं और वो जो पचास से ऊपर है वो बूढ़े (शैख) लोग कहलाते हैं और जो सत्तर साल से ऊपर हैं वो बहुत बूढ़े आदमी (पिर-ए-फ़ानी) कहलाते हैं।

जलाल-ओ जमाल को हिलाने वाला अहम तरीन गुस्सा एक शख़्स की ख़सलत में होता है। वो पुरजोश और गुस्से का वअज़ होता है जो पढ़ाने वाले के अपने ज़ाती दिमाग़ का होता है इस्लामी तालीमात और मज़हबी किताबों पर मुबनी नहीं होता। इसका वाहिद इलाज हल्की, नरम और मीठी ज़बान है। एक दिन हज़रत हसन और हुसैन रज़ी अल्लाहु तआला अन्हुमा (अल्लाह के पैग़म्बर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के दो प्यारे नवासे) सहरा में घूम रहे थे, तभी उन्होने वहाँ एक बूढ़े शख़्स को **वुज़ू** करते हुए देखा। वो बूढ़ा शख़्स वुज़ू के ज़रूरी वाजबात पूरे नहीं कर रहा था। उन्हें उस बूढ़े आदमी को यह बताते हुए शर्म महसूस हुई कि उसका वुज़ू कबूल नहीं होगा। वो उसके पास गए और कहा कि वो दोनो इस बात पर लड़ रहे हैं कि उनमें से कौन अच्छा वुज़ू कर रहा है और इस बूढ़े आदमी को जज बनाया। हर एक ने वुज़ू किया सारे वाजबात पूरे करते हुए। बूढ़ा शख़्स उनकी हरकात को बहुत नज़दीक से देख रहा था और आखिर में उनसे बोले, "ओह मेरे बेटों। मेने तुमसे वुज़ू करने का सही तरीका सीख लिया।" पैग़म्बर अबराहम (इब्राहिम अलैहि सलाम) दो सो आग पूजने वालों (**मजूसी**) को दावत दी। बदले में उन लोगों ने इब्राहिम अलैहि सलाम से पूछा वो उनके लिए क्या कर सकते हैं। इब्राहिम अलैहि सलाम ने उनसे अपने आका (अल्लाह तआला) के आगे सिर झुकाने (**सजदा**) को कहा। उन्होने आपस में उनकी इस इच्छा के बारे में बात चीत करी और कहा वो अपनी सख़ावत के लिए जाने जाते हैं इसलिए उन्होने फैसला किया कि उनकी बात टाली ना जाए। उन्होने कहा तुम्हारे आका के लिए सजदा करने से कुछ बदल नहीं जाएगा और उन्होने कहा, सजदा करने के बाद, वो अपने देवताओं को पूजने जाएंगे। जबकि वो झूके (**सजदा**) हुए थे, इब्राहिम अलैहि सलाम ने अल्लाह तआला से इलतिजा की, इस तरह कहते हुए, "ए मेरे रब! मैं सिर्फ़ इतना ही कर सकता था। ये तेरे हाथ में है के इनके ऊपर खुशियाँ निछावर कर दे और

इन्हें सही रास्ता दिखा। बराए महरबानी,इन्हें मुसलमान बनाकर इज़्ज़त बख्श," उनकी इबादत क़ुबूल हुई और वो सब मुसलमान बन गए। ये ज़रूरी है कि एक शख़्स को अकेले में नसीहत करना जबकि वो एक मना किया हुआ काम करने जा रहा हो। जब एक को मुमानियत वाला काम करते हुए देखा जाए, तो उसे बहुत नरमाई से फ़ौरन तनबीह करदी जाए। हर एक को वक़्त से पहले अकेले में सलाह देना ज़्यादा कारामद है।

एक दूसरी वजह एक शख़्स की गुस्सा करने की वो है गलत समझ लिया जाना। एक सलाह किया हुआ तरीका गलतफ़हमी से बचने का वो है मुख्तसर, साफ़, और गैर ज़ूमाआनी ज़बान। ज़ू मआनी ज़बान सुनने वालों को तंग करती है। सही लफ़्ज़ **(अमर अल-मारूफ)** का मवासलात करते वक्त तीन हालतों का ख्याल रखना चाहिए। पहली हालत अल्लाह तआला की मुमानियत की गई या अहकाम के बारे में बताते हुए पाक नियत का होना। दूसरी, जिस मज़मून को पढ़ाया जाए उस पर पूरी क़ुदरत होना जो भी काग़ज़ात या ज़राए जानकारी देने के लिए पेश किए जाएँ। और तीसरी, नतीजे की परेशानियों में सबर। सूफ़ी ज़बान पहले से लाज़मी, और पहले से सख्त गौशानशीन है। सख्त, झगड़ालू ज़बान शर्र (फ़ितना) पैदा करती है। एक रात, हज़रत उमर की खिलाफ़त के दौरान, वो और अबदुल्लाह इबन मसूद रज़ी अल्लाहु अन्हुम मदीना की सड़कों पर गश्त लगा रहे थे,तभी पास के घरों के दरवाज़ों में से एक में एक औरत के गाने की आवाज़ आई। चाबी के छेद में से झाँकने पर ख़लीफ़ा ने देखा एक बूढ़ा आदमी अपने पास एक शराब की बोतल और एक जवान गाने वाली कमरे की बीच में बैठे हुए हैं। जब वो खिड़की से कमरे के अंदर गए, तो बूढ़े आदमी ने कहा: ए, अमीर अल मोमिनिन (ईमान वालों के रहनुमा)! क्या तुम अल्लाह तआला की रज़ा के लिए एक लम्हे के लिए मेरी बात सुनोगे?" हज़रत उमर रज़ी अल्लाहु तआला अन्ह ने कहा, "ठीक है। आगे बढ़ो और बोलो!" बूड़े आदमी ने कहा, "ये सोचते हुए कि मेने एक गलत काम किया है, तुमने अल्लाह तआला के तीन मुखतलीफ़ कानूनों को तोड़ा है।" जब हज़रत उमर रज़ी अल्लाहु तआला अन्ह ने पूछा वो तीन मुखतलीफ़ खिलाफ़वरज़ियाँ क्या हैं, तो बूढ़े आदमी ने कहा, अल्लाह तआला ने दूसरों के घरों में झाँकने से मना किया है। तुम मेरे घर में चाबी के छेद से झाँक रहे

थे। अल्लाह तआला ने दूसरों के घरों में उनकी इजाज़त के बग़ैर दाखिल मना किया है। तुम बग़ैर इजाज़त घुसे। आखिर में, अल्लाह तआला ने हमें हुकूम दिया है के घरों में सामने से दाखिल हो और रहने वालों को सलाम करो। तुम खिड़की से दाखिल हुए और बग़ैर सलाम दुआ के आए। हज़रत उमर रज़ी अल्लाहु तआला ने इंसाफ़ और सच्चाई के साथ जवाब दिया, "जो तुमने कहा वो सब सही है!" फिर उन्होने माफ़ी मांगी, और वहाँ से आँसू के साथ चले गए।

हमें उन लोगों के लिए अच्छी राए रखनी चाहिए जो हमें सलाह देते हैं, बाकी सब मुसलमानों के लिए भी। हमें उनकी बातों की और सलाह की अच्छी उम्मीद के साथ वज़ाहत करनी चाहिए। एक मुसलमान की अच्छाई और पाकी में यकीन रखना ऐसा काम है जो ईनाम दिला सकता है। पहले से मिजाज़ पर मुबनी करके शक करना कलील उम्मीद बनाना किफ़लाँ मुसलमान पर भरोसा नहीं किया जा सकता वो असल में उस शक रखने वाले के अपने ढीले अखलाक़ की परछाई है। जो कहा गया है हमें उसे समझने की कोशिश करनी चाहिए और अगर हम उसे समझने में नाकाम रहते हैं तो हमें उसके बारे में पूछताछ करनी चाहिए। हमें फौरन ही उस शख़्स के बारे में बुरी राए नहीं बनानी चाहिए जो हमें कुछ बता रहा है। शैतान के ज़रिए जो बुरे वसवसे हमारे दिल में आते हैं, दूसरों के बारे में गलत राए (**सू-ए-ज़न**) रखना उनमें से एक है जिसमें शैतान सबसे ज़्यादा कामयाब होता है। सू-ए-ज़न एक ममनूअ (**हराम**) है। उस हालत में कि बातें करने की आवाज़ इतनी शदीद हो जो सब बातों में अच्छी उम्मीद रखने के मिजाज़ के साथ वज़ाहत की जाए या ज़बान से फ़िसल जाए या दिमाग़ से चूक हो जाए (उस शख़्स के हिस्से पर जो बात कर रहा है) तो उस पर ग़ौर किया जाए।

जब एक गरीब किसी अमीर शख़्स से कुछ चीज़ की इलतिजा करे और उसकी इलतिजा मना करदी जाए, तो उन दोनों में ये गुस्से (**ग़ज़ब**) का सबब बन सकती है।

एक शख़्स से जोकि मसरूफ़ हो या सोच रहा हो या फ़िकरमंद हो या तनाव में हो उससे कोई सवाल पूछना या कुछ कहना उसको गुस्सा दिलाने का

सबब बन सकता है।एक रोता हुआ बच्चा या बच्चों या जानवरों की आवाज़ कुछ लोगों में गुस्से का सबब बन सकती है।इस तरह का गुस्सा बहुत ज़्यादा नागवार होता है।इससे भी ज़्यादा खराब गुस्सा अकसर उनमें देखा गया है, जो बेजान चीज़ों की हरकात पर दिखाते हैं।इस जज़बाती ज़्यादती की मिसाल वो लोग हैं जब कोई चीज़ वो कुल्हाड़ी से काटना चाहते हैं और वो मंज़र से हट जाती है जहाँ उन्होने रखी है या उसे एक बार में तोड़ नहीं पाते, इतने ज़्यादा वो पागल हो जाते हैं कि उसके ऊपर बारूद फैक देते हैं और कभी उसे दिवाने तरीके खत्म कर देते हैं,मिसाल के तौर पर जलाकर।और वहाँ ऐसे भी लोग हैं जो अपने आप पर पागल होते हैं, अपनी कसम खाते हैं, और अपने आप पर ज़ुल्म करते हैं।ये एक लियाकत वाला काम है, एक तरह की मज़हबी ग़ैरत, अपनी इबादतों की खराब अदाएगी पर खुद पर ही गुस्सा करना; ये सवाब पैदा करता है।हुकूमत के रहनुमाओं की तरफ़, या रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' की तरफ़ या अल्लाह तआला की तरफ़ गुस्सा करना उनके एहकाम और मुमानिअत की वजह से, ये सबसे खराब किस्म है गुस्से की।इस तरह का गुस्सा कुफ्र का सबब बनता है।ये हदीस शरीफ़, "**गुस्सा (ग़ज़ब) एक शख़्स के ईमान को बदनाम कर देता है**" ये ज़ाहिर करती है के रसूलुल्लाह या अल्लाह तआला की तरफ़ गुस्सा रखना कुफ्र/बेयकीनी का सबब बनता है।किसी को ममनुअ काम करते हुए देखकर गुस्सा होना बहुत अच्छी बात है और ये उसकी मज़हबी **ग़ैरत** भी दिखाती है।लेकिन, एक शख़्स को जब गुस्सा आए तो उसे इस्लाम की हदूद को या समझ (**अक़्ल**) पार नहीं करना चाहिए।उस शख़्स को गंदे नामों से पुकारना मिसाल के तौर पर काफ़िर, मुनाफ़िक़ और इसी तरह के दूसरे नाम तो ये ममनुअ (हराम) इस तरह के नामों से पुकारना उस नाम पुकारने वाले सज़ा आईद करता है।ये इस्लाम के उसूलों के खिलाफ़ नहीं है उस शख़्स के लिए जो एक गुनहागार को देखे संगदिली के साथ उसके लिए 'जाहिल' और बेवकूफ़ जैसे लफ़्ज़ों का इस्तेमाल करे;ताहम ये अच्छा है के गुनहागार को नरम और मीठे लफ़्ज़ों से पुकारा जाए, क्योंकि रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने हदीस शरीफ़ में इर्शाद फरमाया: "**अल्लाह तआला हमेशा नरम गुफ़तगू के लिए है।**" रियास्ती हुकाम या पुलिस के लिए ये फर्ज़ है के वो उस शख़्स को जो ममनूअ काम कर रहा हो उसे ताकत के साथ रोक सकते

हैं।लेकिन उसे ज़रूरत से ज़्यादा मारना या ज़दकोब करना ज़्यादती (ज़ुल्म) है, जो कि एक गुनाह का काम है।कानूनी ओहदेदार या किसी हुकूमत के रूकन की ग़ैरहाज़िरी में, एक रसूख/ताकत वाला आदमी काफ़ी है उसको रोकने के लिए।बहरहाल, कोई भी कानूनी कारवाई जैसे के फाँसी की सज़ा और घर वापसी वो सिर्फ़ रियास्त और रियास्त के जज के इखतियार में है।एक सज़ा जो मिलनी चाहिए उससे ज़्यादा देना ज़ुल्म (नाइंसाफी, बेरहमी) है।इसी अलामत के ज़रिए, रियास्ती मुलाज़िमों के लिए जो अमीर-ए-मारूफ़ और नहय-ए-मुंकर के ओहदों पर हों उनके ज़रिए ज़दकोब किया जाना हराम है।

गुस्से (**ग़ज़ब**) का उल्टा नरमाई (**हिल्म**) है।नरमाई एक शख़्स के गुस्से को काबू करने की काबलियत से ज़्यादा बेहतर है।नरमाई का मतलब है किसी भी तरह गुस्सा ना करना।ये बहुत समझदारी की निशानी है।रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने मंदरजाज़ेल हदीस शरीफ़ में इर्शाद फरमाया: "**अल्लाह तआला उन लोगों से प्यार करता है जो वाक्य के साथ नरमाई से पेश आते हैं जिसकी वजह से गुस्सा 'ग़ज़ब' पैदा होता है,**" और "**अल्लाह तआला उन लोगों से प्यार करता है जो नरमाई 'हिल्म', शर्म 'हया' और 'इफ़्फ़त'** रखते **हैं।वो उन लोगों को नापसंद करता है जो गंदी ज़बान 'फ़हश' बोलते हैं और उन फ़कीरों से जो सताने वाले तरीके से इलतमाज़ करते हैं।**" "इफ़्फ़त" का मतलब है दूसरों की दौलत पर निगाह ना रखना। "फहश" का मतलब है गंदी और बुरी चीज़ें।रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' मंदरजाज़ेल दुआ अक्सर दोहराते थे, "**ए मेरे रब!मुझे जानकारी (इल्म), हलावत (हिल्म), परहेज़गारी (तक़वा), और 'आफियत' बख़्श दे**" "इल्म-अल-नफ़ी" इल्म की तीन शाखों से यकजा हैं: कलाम, फ़िकह और अखलाक। "आफ़ियत" का इस दुआ में मलतब है के मंदरजाज़ेल पाँच चीज़ों का होना: यकीन और एतमाद बग़ैर बिदत; तवाहियों से बरी इबादत की अदाएगी और काम; एक नफ़्ज़ का होना जो (हर तरह के) शहवा से बरी हो; एक दिल हवा और वसवसे से बरी; और एक बिमारियों से बरी जिस्म।जब उन्होने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से पूछा के कौन सी वाहिद इबादत सबसे अच्छी थी, आपने जवाब दिया, "**अल्लाह तआला से आफ़ियत के लिए पूछना।ईमान के बाद, और कोई इनायत नहीं आफ़ियत से बढ़कर।**" [एक शख़्स को ज़्यादा पछतावा, यानी

(एक खास दुआ का) **इस्तीग़फ़ार** [इस्तग़फ़ार की दुआ ये है: "**अस्तग़फ़िरूल्लाह अल अज़ीम अल-लज़ी ला इल्लाहा इल्ला हुवा ल हय्युल कय्यूम का अतूबोह इलैहि।**"] का कहना है आफ़ियत हासिल करने के लिए।"] रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**ऐसा शख़्स बनो जो जानकारी 'इल्म और सकीना रखता हो!' जबकि तुम सीख रहे हो या पढ़ा रहे हो तो नरमाई से बोलो!कभी अपने इल्म पर घमंड मत करो!**"

"सकीना" का मतलब है बुरदबारी और मरतब रखना।रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मंदरजाज़ेल हदीस शरीफ़ में इर्शाद फरमाया: "**जो शख़्स इस्लाम के मुताबिक अपनी ज़िन्दगी जिए और जो मिज़ाज का बहुत नरम हो उसे दोज़ख की आग कभी नहीं जलाएगी।**" और "**नरम होना इनाएतें लेकर आता है।अपने फराईज़ या कारोबार में ढीलापन या ज़्यादती रखना लापरवाही 'ग़फ़लत' की हालत की वजह बनती है,**" और "**एक शख़्स जो नरमाई 'रिफ़क' नहीं रखता वो कारामद और फ़ाएदेमंद शख़्स नहीं है,**"और "**नरमाई रिफ़क एक शख़्स को खुबसूरत या सजाती है और उसकी खामियाँ खत्म करती है।**"

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक दूसरी हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**इल्म पढ़ने से हासिल होता है और नरमाई 'हिल्म' मेहनत करने और लगन के साथ काम करने से हासिल होगा।अल्लाह तआला उनको कामयाबी अता करता है जो काम की और फ़ाएदेमंद वाली चीज़ें करते हैं।और वो उनकी हिफ़ाज़त करता है जो बुरे कामों को करने से बचते हैं।**"

21-वादे की खिलाफ़वर्ज़ी ग़दर

एक चीज़ जो गुस्से की वजह बनती है वो है एक शख़्स का अपने वादे या लफ़्ज़ (ग़दर) से मुकर जाना।जब एक शख़्स किसी चीज़ को पक्का करने का कहता है, तो उस प्रतीज्ञा को **(वादा)** कहते हैं।अगर एक वादा दो लोगों के तरीफ़ेन से किया जाए तो उसे "**अहद**" कहते हैं।एक **वादा** जो हल्फ़ लेकर किया जाए उसे "**मीसाक**" कहते हैं।जब उन दो में से जिन्होने आपस में

किसी चीज़ का वादा किया था, मिसाल के तौर पर एक इकरार (**अहद**) किया था, वो "ग़दर" का मुस्तहीक होता है। मिसाल के तौर पर, अगर एक मुल्क की रियासत का रहनुमा ये समझता है या महसूस करता है कि उसे काफ़िरों के पड़ोसी मुल्क से अमन का अहद तोड़ देना चाहिए तो ये उसके लिए ज़रूरी (**वाजिब**) हो जाता है कि वो उसे आगाह करे। इस बात की इजाज़त (**जाईज़**) नहीं है कि उन्हें पहले से बताए बग़ैर अमन के अहद को तोड़ दिया जाए। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**वो जो ग़दर का इरतकाब करता है उसे इंसाफ़ वाले दिन (कयामत) में बहुत भारी मुआवज़ा चुकाना होगा।**" ग़दर का इरतकाब करने की मनाही है। काफ़िरों के साथ किया गया इकरार (**अहद**) रखना ज़रूरी है।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**एक नाकाबिले भरोसा आदमी यकीन नहीं रखता। एक शख़्स जो इकरार 'अहद' तोड़ता है वो कोई मज़हब नहीं रखता।**" ये हदीस शरीफ़ इस बात की तरफ़ इशारा करती है कि जो दूसरों का भरोसा बेकार करते है वो पक्का ईमान नहीं रखते और वो जो इस मामले को इतनी एहमियत नहीं देते वो अपना ईमान खो देते हैं।

22-बेईमानी हियानत

दिलकी बाइसवीं बीमारी है "**हियानत**" "हियानत" का इरतिकाब करना गुस्से (**ग़ज़ब**) का सबब बनता है। "हियानत" की भी मुमानियत (**हराम**) की गई है और ये धोके की अलामत है। ख्यानत का मतलब इस तरह है: एक शख़्स जो अपने आपको दूसरों के सामने भरोसेमंद ज़ाहिर करे और तब ऐसा कुछ करे जो इस नक़्श को झूठा साबित करदे। एक ईमान (मोमिन) वाला शख़्स वो है जिसे हर कोई अपनी ज़िंदगी या मिलकियत का भरोसा सौंप दे। अमानत (यकीन वाला) और ख्यानत (बेईमानी) ना सिर्फ़ मिलकियत पर नाफ़िज़ होती, बल्कि बोले (या लिखे) गए लफ़्ज़ों पर भी होती है। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**एक शख़्स जिससे सलाह**

की जाए वो भरोसे के लायक है।" दरहकिकत/असल में दूसरे इस शख़्स पर भरोसा इसलिए करते हैं क्योंकि वो जानते हैं कि ये शख़्स उन्हें सच्चाई बता रहा है और जो सवाल उनसे पूछा गया है वो किसी को बताएँगे नहीं। ये उसके लिए ज़रूरी **(वाजिब)** है कि वो सच्चाई बताए। एक शख़्स अपना माल किसी दूसरे के पास रखवा सकता है जिस पर वो भरोसा करता हो। इसी तरह, एक शख़्स दूसरे से सलाह कर सकता है जिसे वो जानता है कि सच्चाई बताएगा। कुरआन अल करीम की सुरह "अल-इमरान" की एक सौ उन्सठवीं आयत में मकसद बताया गया है: "**कोई तदबीर करने से पहले दूसरों के साथ सलाह करो।**" दूसरों के साथ मश्वरा करना उस किले की तरह है जो एक शख़्स को पछतावे से बचाता है। जिस शख़्स से एक शख़्स मश्वरा करना चाहता है उसे अपने ज़माने के लोगों के हालात का पता हो उसके साथ मुल्क और वक़्त के हालात और वज़ा के बारे में भी पता हो। इसको सियासत और नज़मोज़बत की जानकारी जिसे **(इल्म-अल-सियासत)** कहते हैं। इसके अलावा, वो बहुत दूर की सोच रखने वाला और अकलमंद शख़्स हो और साथ ही सेहतमंद भी। उसके लिए कोई ऐसी बात कहना गुनाह का बाईस होगा जिसके बारे में वो नहीं जानता या फिर कोई ऐसी बात कहे जो उसके इल्म के मुताबिक ना हो। अगर वो यह सब बातें गलती से कह देता है तो यह कोई गुनाह की बात नहीं है उसके लिए। अगर एक शख़्स ऐसे आदमी से मश्वरा करता है जो ऊपर बताए गए उसूल नहीं रखता तो वो दोनो ही फ़िरके एक गुनाह का इरतिकाब कर रहे हैं। वो जो दुनियावी और मज़हबी मामलों में मज़हबी फ़ैसले **(फ़तवे)** देते हैं हाँलाकि वो ऊपर बताई गई लियाकत नहीं रखते, उन्हें फरिश्ते कोसते हैं। ख्यानत (बेईमानी) की दूसरी किस्म है के किसी को ऐसी चीज़ करने के लिए हुक्म देना जो कि तुम जानते हो के नुकसान वाली है।

[मशहूर मज़हबी किताब **हदीका** में लिखा है के अबदुल्लाह इबन अल मसूद रज़ी अल्लाहु तआला ने कहा, "पहली चीज़ जो तुम अपने मज़हब में से खोते हो वो है भरोसेमंद 'अमानत' होना। आखरी चीज़ जो तुम खोते हो वो है 'सलात इबादत/दुआ। वहाँ कुछ लोग ऐसे भी हैं जो सलात पढ़ते हैं जबकि दरअसल उनके पास कोई भी यकीन नहीं होता," रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**कोई भी जो अपने दोस्त**

का क़त्ल करता है वो मेरी 'उम्मत' में से नहीं है। ये सच है चाहे अगर वो मक़्तूल काफ़िर ही क्यों ना हो।"]

23- वादा खिलाफ़ी

गुस्से (ग़ज़ब) की दूसरी वजह है वादे को तोड़ना। हम पहले से ये वाज़ेह कर चुके हैं के एक वादा जो सिर्फ़ एक जमाअत के ज़रिए किया जाए उसे "इकरार" **(वादा)** कहते हैं और एक इकरार जो दोनो जमाअतों के ज़रिए किया जाए उसे कोल व करार "अहद" कहते हैं। सज़ा का इकरार "वाईद" कहलाता है। ये एक रहमदिली होगी के इस किस्म के वादे को पूरा ना किया जाए। झूठ के ज़रिए वादा करना ममनूअ **(हराम)** है इस तरह का वादा ना रखना भी एक ज़ाईद गुनाह है। इस तरह का वादा रखना झूठ के गुनाह को भूलाता है। (फासिद बेय) का ग़ैरकानूनी फरोख़्त इकरारनामा भी इसी तरह का है। इस तरह के ग़ैरकानूनी फरोख़्त इकरार नामे को मंसूख और उस को फरोख़्त छोड़ देना ज़रूरी (वाजिब) है। जब जमाअतें ग़ैरकानूनी फरोख़्त इकरार नामे को खत्म करती हैं और पछताती हैं तो उनका गुनाह माफ़ कर दिया जाता है। लेकिन अगर वो इस तरह के ग़ैरकानूनी फरोख़्त के इकरार नामें को बंद नहीं करते तो उनका गुनाह दोगुना हो जाता है। एक शख़्स को अपने वादे को पूरा करना चाहिए।

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**हीलासाज़ी की तीन अलामतें हैं: झूठ बोलना, अपने वादे पर कायम ना रहना और भरोसे (अमानत) को तोड़ना।**" अगर एक शख़्स उसके बस के बाहर की वजूहात की बिना पर अपना वादा पूरा करने के काबिल नहीं होता, तब ये हीलासाज़ी की अलामत नहीं है। दूसरी तरफ़, बेईमानी मिलकियत के एक टुकड़े या राज़ के मामले में हीलासाज़ी है। एक हदीस शरीफ़ में जो के हदीस शरीफ़ की जानी मानी किताब **सही-ए-बुखारी** में लिखा हुई है और उमर बिन आस रज़ी अल्लाहु तआला अन्ह के ज़रिए हवाला दी गई है, 'रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमाया: "**चार चीज़ें हीलासाज़ी की अलामतों**

की तरह हैं: भरोसे से मुंकर होना; झूठ बोलना; अपने वादे को कायम ना रखना; दूसरी जमाअत (ग़दर) को बताए बग़ैर एक इकरार नामें को तोड़ना और इंसाफ़ की अदालत में सच्चाई ना बोलना।" इबन हजर मेक्की रहमतुल्लाही तआला अलैहि ने हीलासाज़ी (मुनाफ़िक होना) को इस तरह तारीफ़ की है "एक के इरादे और बाहरी बरताव के बीच तअल्लुक में कमी होना।" भरोसे के मामलात में हीलासाज़ी करना बेयकीनी (कुफ़्र) है।अपनी बातों में या कामों में हीलासाज़ी करना ममनूअ है।एतेकाद के मामलात में हीला/धोका करना वो दूसरे किस्म के कुफ़्र से ज़्यादा खराब है।इस इरादे के साथ इकरार (**वादा**) करना के मुस्तक़बिल में इस वादे को पूरा करेगा तो इसकी इजाज़त (जाईज़) है और बिल्क इनाम (सवाब) वाली बात है।इस तरह के वादे को पूरा करना "**वाजिब**" नहीं है, बल्कि ये "मुसतहब" है।इसको पूरा ना करना मकरूह तंज़ीही है।रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**अगर एक शख़्स अपने वादे को पूरा ना कर पाए तो ये कोई गुनाह नहीं होगा जो एक शख़्स ने उसे पूरा करने के इरादे से दिया हो।**" हंफ़ी और शाफ़ी उल्मा रहीमाहुल्लाहु तआला की तालिमात के मुताबिक बग़ैर किसी उज़र, (यानी एक माफ़ी या वजह जो इस्लाम ने साबित की है) के एक आपसी इकरारनामे (अहद) को तोड़ना मकरूह है, और अगर तुम्हारे पास कोई उज़र हो तो तुम ऐसा कर सकते हो।ताहम, तुम्हारा इरादा इस अहद को तोड़ने का हो तो ये ज़रूरी (**वाजिब**) है के इसमें शामिल जमाअत को बताया जाए।हंबाली उल्मा रहीमाहुल्लाहु तआला की तालिमात के मुताबिक एक वादे को पूरा करना वाजिब है।उसको पूरा ना करना ममनूअ (हराम) है।चारों मसलकों के ज़रिए मंज़ूरी (सही) बताए गए तरीके से कोई चीज़ अदा करना **तकवा** है।

हर मुसलमान के लिए ये वाजिब है के वो सारे दूसरे मुसलमानों से प्यार करे चाहे वो चारों में से किसी भी एक मसलक का हो, उन पर दुआओं की रहमतें करने के लिए, और (चारों) मसलकों के वास्ते बातिल बेइमानी को नज़रअंदाज़ करने के लिए।अगरचे सारे उल्लेमा इस बात पर एक राए हैं के चारों मसलकों की **तलफ़ीक** करने की इजाज़त नहीं है।तलफ़ीक का मतलब (बनाना) है के किसी खास काम या इबादत के काम को अदा करने के लिए

चारों मसलकों में सबसे आसान तरीका चूना जाए। इस की वजह से चारों मसलकों में जो काम अदा किया जाए वो बातिल होता है। बहरहाल, एक खास मसलक के ज़रिए इबादत के कामों को करने के लिए अपनाए गए रास्ते (आसान तरीके), सही (जाइज़) है।

[एक खास काम या इबादत के कामों को अदा करने के लिए, एक मुसलमान को सबसे पहले इरादा करना चाहिए के वो चारों मसलकों में से किसी एक के उसूलों को मानता हो और उन उसूलों के मुताबिक ही काम करे। चारों मसलकों में से हर एक आसान तरीके जिसे '**रूहसात**' कहते हैं और एक मुश्किल तरीका जिसे '**अज़ीमत**' कहते हैं की तालीम दी हैं, एक खास काम को अदा करने के लिए मुश्किल तरीका (**अज़ीमत**) को सबक़त देना ज़्यादा अच्छा है, नफ़्ज़ के लिए कोई चीज़ करना ज़्यादा मुश्किल, नाकाबिले बरदाश्त और ज़्यादा मुसिबत वाला है। इंसानी नफ़्ज़ को दबाने के लिए और कमज़ोर करने के मक़सद से इबादत का हुकूम दिया गया, जोकि इंसानी मालिक और उसके खालिक़ अल्लाह तआला दोनो के लिए नामुवाफ़िक है। उसको एक शख़्त दबाओ के अंदर रखना चाहिए ताकि इसको अजीरन होने से बचाया जाए। ताहम, इसकी पूरी तबाही नाकाबिले अमल है, क्योंकि ये पूरे शरीर को चलाता है। ये एक बेवकूफ़ और लाइल्म/जाहिल नौकर है। एक कमज़ोर या बीमार शख़्स या एक शख़्स जोकि मुश्किल हालत में हो उसे चाहिए के इबादत या कामों की अदाएगी को छोड़ने के बजाए आसान तरीका (**रूहसात**) अपनाए। असल में, अगर अमली तौर पर इबादत के एक खास काम को करना नामुमकिन हो चाहे अपने खुद के मसलक की सहूलतों का इस्तेमाल किया हो, तो इस बात की इजाज़त है के तीनों मसलकों में से किसी एक की नक्ल करले,इस तरह उस मसलक में मौजूद सहूलयात को इस्तेमाल करे।]

24- दूसरों के खिलाफ़ बूरी राए रखना सु-ए-ज़न

ये बात मानना के उसका गुनाह माफ़ नहीं किया जाएगा इसका मतलब है के अल्लाह तआला के खिलाफ़ **सु-ए-ज़न** रखना। और ये मानना के सारे ईमान वाले गुनहगार हैं, इसका मतलब ईमान वालों (मोमिनों) के खिलाफ़ **सु-ए-ज़न** का इरतिकाब करना। "सु-ए-ज़न" एक ममनुअ (**हराम**) काम है। किसी को ममनुअ काम करते हुए देखकर उसके खिलाफ़ नफ़रत रखना या जानना के उसने ममनुअ काम किया है तो वो सु-ए-ज़न नहीं है; बल्कि वो अल्लाह तआला की रज़ा के लिए नापसंदीदगी (**बुख्द-अल-फिलाह**) रखना है, ये **सवाब** (आखिरत में ईनाम) पैदा करता है। जब एक मुसलमान दूसरे मुसलमान (भाई) को कोई गलत काम करते हुए देखता है, उसे बहुत अच्छे तरीके से (**हुसन-अल-ज़न**) उसे रोकना चाहिए और उसे वो काम दोबारा करने से बचाने की कोशिश करनी चाहिए। एक मनफ़ी सोच जो उसके दिल में आए लेकिन ज़्यादा देर रूक नहीं पाए तो वो सु-ए-ज़न नहीं है। दिल में एक मज़बूत सोच को मनफ़ी/गलत तरीके से कायम रखना "सु-ए-ज़न" है। क़ुरआन अल-करीम की सुरह "हुज़ूरात" की 12वीं आयत का मतलब है: "**ए तुम मानने वाले!शक को जितना ज़्यादा (जितना मुमकिन हो) हो सके नज़रअंदाज़ करो; क्योंकि कुछ मामलों में शक करना गुनाह है:...**" रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**सु-ए-ज़न मत रखो। सु-ए-ज़न ग़लत फ़ैसलों की वजह है। दूसरों के निजी मामलात में मत झाँको। दूसरों की खामियों को परे रखो। दूसरों के साथ बहस मत करो। दूसरों से हसद मत रखो। एक दूसरे के खिलाफ़ अदावत मत रखो। एक दूसरे की चुगली मत करो। एक दूसरे को भाई की तरह प्यार करो। एक मुसलमान दूसरे मुसलमान का भाई है। इसलिए, एक मुसलमान को दूसरे मुसलमान पर जुल्म नहीं करना चाहिए;उसे उसकी मदद करनी चाहिए। उसे हकीर निगाह से नहीं देखना चाहिए।**" एक मुसलमान के लिए दूसरे मुसलमान को कत्ल करना ममनूअ (**हराम**) है। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु

अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**एक मुसलमान को दूसरे मुसलमान की खुदी, जाएदाद या इज़्ज़त पर हमला नहीं करना चाहिए। अल्लाह तआला तुम्हारे जिस्म की खुबसूरती या ताकत को नहीं देखता। वो तुम्हारे दिलों को देखता है।**" अल्लाह तआला तुम्हारे दिलों में अल्लाह का खौफ़/डरऔर इख्लास को देखता है। काम और इबादतें कुबूल कराने के लिए, यानी इनाम (**सवाब**) देने के लिए, उनकी ज़रूरी हालतों और बाकाएदा इरादे के साथ यानी अल्लाह तआला (इख्लास) की रज़ा के लिए, उन्हे पूरे ध्यान से किया जाए। ये इल्हाद (यानी नापाकी जो एक शख़्स को इस्लाम से बाहर करने का सबब है के नीयत से लापरवाह होकर इस बात का दावा करना के ये काम "इबादत का जो के सही है वो कुबूल किया जा सकता है।" एक शख़्स जो ऐसा कहता है वो ज़िंदीक (बिदअती) है। ये बयान, "अल्लाह तआला तुम्हारे दिलों को देख रहा है। वो कोई भी चीज़ कुबूल कर लेता है जो अच्छी नीयत के साथ की जाए," लाइल्म तरीकत के शैखों की मिलकीयत होना।

[ये लाइल्म शैख कहते हैं के उनके दिल साफ़ हैं और बाद में सारे ममनुअ काम (**हराम**) और बेइंसाफ़ियाँ करते हैं। वो कहते हैं के कोई भी काम जो अच्छी नीयत से किया जाए वो एक इबादत का काम है और तुम्हें ईनाम (**सवाब**) दिला सकता है। इन बकवासी गुनहगारों को ना तो पसंद किया जाए और ना ही माना जाए, क्योंकि इनका असली मक़सद मुसलमानों को धोका देना है और इस तरह अपने चारों तरफ़ शार्गिदों को मुतासिर करना। ये "सु-ए-ज़न" नहीं है के ये कहना के इस तरह के लोग गुनहगार (**फ़ासिक**) हैं।]

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**अल्लाह तआला की तरफ़ अच्छी राए 'हुस्न अल ज़न' रखो।**" कुरआन अल करीम की सुरह ज़ूमर की तरेप्पनवीं आयत का मतलब है: "**ए मेरे बंदों बहुत सारे गुनाहों के साथ! अल्लाह तआला की शफ़कत हासिल होने से उम्मीद मत छोड़ो। अल्लाह सारे गुनाह माफ कर देता है। वो एक हस्ती है बेइंतहा माफ़ियों और दाईम शफ़क़तों के साथ।**" अल्लाह तआला बेशक हर किस्म के कुफ़्र और गुनाह को माफ़ कर देता है जब पशेमानी उसकी शराईत के मुताबिक हो। अगर वो चाहे, तो कुफ़्र के अलावा हर तरह के गुनाह बग़ैर

पशेमानी के माफ़ कर सकता है। एक हदीस अल-कुदसी में, अल्लाह तआला ने ऐलान किया: **"मैं अपने बंदों के साथ उसी तरह सुलूक करता हूँ जिस तरह मेरे बंदें मेरे बारे में सोचते हैं।"** अल्लाह तआला उनको माफ़ कर देता है जो इस उम्मीद पर पछताते हैं के वो उन्हें माफ़ कर देगा।

[अल्लाह तआला की अपने पैग़म्बरों सलावातुल्लाही तआला वा तसलीमातुहू अलैहिम अजमईन को बताना आगही **(वही)** कहलाता है। यहाँ पर दो तरह की पैग़ाम रसाई है। फरिश्ते **जिबरईल** अल्लाह तआला से जानकारी हासिल करके उन्हें पैग़म्बर के पास लाते और पढ़ते थे। इस तरह के पैग़ाम को "वही अल-मततलू" कहते हैं। इस तरह की वही अल्लाह तआला की तरफ़ से दोनो तरह से आती थी मतलब में और सवारी में भी। कुरआन अल-करीम "वही अल-मतलू" है। दूसरी तरह की "वही ग़ैर रल-मतलू" है ["वही अल मतलू" के अलावा पैग़ाम]। इस तरह की वही सीधे पैग़म्बर के दिल में अल्लाह तआला की तरफ़ से आती थी। तब पैग़म्बर पैग़ाम/वहीका मतलब अपने साथियों को अपने लफ़्ज़ों में बताते थे; उनको "हदीस-ए-कुदसी" कहते हैं। "हदीस-ए-कुदसी" के अलफ़ाज़ पैग़म्बर के हैं। हदीस-ए-शरीफ़ पैग़म्बर की बातें हैं जो मफ़हूम में और सवारी में दोनों में ही पैग़म्बर की मिलकियत हैं।

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने हदीस शरीफ़ में इर्शाद फरमाया: "**अल्लाह तआला के लिए अच्छी राए (हुस्न-ए-ज़न) रखना एक इबादत का काम है।**" और '**मैं कस्म खाता हूँ अल्लाह तआला के नाम की, जो सिर्फ़ एक इलाहा है बग़ैर किसी साथी के वो कोई भी इबादत (दिल के साथ) जो उसके लिए अच्छी राए रखते हुए अदा की गई हो उसे कुबूल करता है।**" और "**हिसाब किताब के दिन 'कयामत' में अल्लाह तआला किसी को दोज़ख में फैकने का हुकूम देगा। जबकि उसे दोज़ख की तरफ़ ले जाया जा रहा होगा, तो वो शख़्स घूमेगा और अल्लाह तआला से कहेगा, 'ए मेरे रब! जबकि मैं ज़मीन पर था, मैं हमेशा तेरे लिए अच्छी राए रखता था!' अल्लाह तआला कहेगा, 'इसको दोज़ख में मत ले जाओ। मैं इसके साथ वैसे ही सुलूक करूँगा जिस तरह ये मेरे बारे में सोचता था।**"

अगर ये पता ना हो के एक खास मानने वाला सुल्हा (पाक) या फ़ासिक (गुनहागार, बुरा), है, तो हमें उसके बारे में अच्छी राए रखनी चाहिए। जब एक शख़्स के सुल्हा या बुरे होने की हालत में हमवारी हो, तो इस तरह की ग़ैर यकीनी हालत को **शक** (शुबह, वहम) कहा जाता है। दोनो ही सिम्तों के इस तरह की नाहमवार मुमकीन हालत **ज़न** (कियास, राए, अंदाज़) होती है, जबकि इससे कम मुमकिन हालत को **वहम** (धोका, शक) कहते हैं।

25- जाएदाद की मोहब्बत

जाएदाद या दौलत जो ममनुअ (**हराम**) ज़रिए से कमाई गई हो वो एक शख़्स की मिलकियत नहीं होगी। इस तरह हासिल की गई ग़ैर कानूनी जाएदाद का इस्तेमाल ममनुअ है। इजाज़त (**हलाल**) दी गई जाएदाद को इकट्ठा करना जो कि एक शख़्स की ज़रूरत से ज़्यादा हो वो इस्लाम में नापसंदीदा काम (मकरूह) है। इसकी "**ज़कात**" अदा ना करना दूसरी दुनिया (आखिरत) में सज़ा का बाइस है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**उन लोगों पर लानत हो जो अपने आपको सोने और चाँदी का गुलाम बनाते हैं!**" एक गुलाम हमेशा कोशिश करता है के वो अपने मालिक का साथ हासिल करले। दुनियावी मिलकियत के पीछे भागना अपनी भूख या नफ़्ज़ की खुवाहिश को मुतमईन करने से भी बदतर है। अगर माल और पैसे के पीछे भागना एक शख़्स को अल्लाह तआला के एहकाम भूला दे, तो वो "दुनिया के लिए मुहब्बत" कहलाता है। एक शैतान उस दिल पर कब्ज़ा कर लेता है जिस में ज़िकर (अल्लाह तआला का नाम और याद) ना किया जाए। सबसे ज़्यादा चुगलखोरी वाली चाल जो एक शैतान एक शख़्स पर चलाता है वो है उसको अच्छे काम के लिए उकसाना ताकि वो अपने आपको सुल्हा और अच्छा इंसान समझे। एक शख़्स जो इस खुदी में गिर जाता है वो अपने आपका गुलाम बन जाता है। एक हदीस शरीफ़ इस तरह पढ़ी जाएगी: "**माज़ी में, सब मानने वाले पैग़म्बरों की उम्मतों को कई तरह की तरकीबों 'फ़ीतनों' से आज़माया जाता था। खुफ़िया माल और पैसे फितने की ऐसी किस्म है जिसके ज़रिए मेरी उम्मत**

(मुसलमानों) को बहकाया जाता था।" वो इतनी मेहनत से दुनिया की दौलत के पीछे भागते थे जैसे के आखिरत के बारे में भूल गए।

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "जिस वक्त अल्लाह तआला ने इंसानी मखलूक की तख़लीक की, उसने उनकी ज़िन्दगियों की लम्बाई,कब वो मरेंगे,और उनकी ग़िज़ा 'रिज़क' का हुकूम दिया।एक शख़्स की खुराक ना ही बदलेगी, ना ही बढ़ेगी या घटेगी और ना ही उस शख़्स के मुकर्रर वक्त से पहले या बाद में पहुँचेगी।जैसे के इंसान अपनी ग़िज़ा ढूँढता है, उसी तरह ग़िज़ा अपने मालिक तक पहुँच जाएगी।बहुत सारे गरीब लोग हैं जो कई अमीरों से ज़्यादा खुशियों भरी ज़िन्दगी गुज़ार रहे हैं।अल्लाह तआला उन लोगों को जो उससे डरते हैं और जिन्होने इस्लाम को पूरे दिल के साथ अपनाया हुआ है उन तक ग़ैर मुतवक्केअ तरीके से रोज़ी पहुँचाता है।हदीस-ए-कुदसी में है के अल्लाह तआला ने फरमाया; **"ए दुनिया! जो शख़्स मेरी खिदमत करे तुम उसके गुलाम बन जाओ! जो तुम्हारी खिदमत करे उन्हें मुश्किलें दिखाओ!"**और रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: **"ए मेरे रब!जो मुझ से प्यार करें उन्हें फाएदेमंद माल दे।जो मेरी तरफ़ दुश्मनी रखें उन्हें बहुत सारे बच्चे और अफ़रात में माल दे।"** एक यहूदी शख़्स मर गया और अपने पीछे दो लड़के और एक रिहाई शगाह छोड़ गया।दोनो लड़के एक इक़रार नामे पर नहीं पहुँच पाए के किस तरह उस रिहाईशगाह को तकसीम किया जाए।उन्होने दीवार में से एक आवाज़ आती सुनी, "मेरी वजह से एक दूसरे के दुश्मन मत बनो।मैं एक बादशाह था।मेने एक लम्बी ज़िन्दगी गुज़ारी।मैं एक सौ तीस साल तक कब्र में रहा।बाद में, वो मेरी कब्र से मिट्टी लेकर बरतन बनाने लगे।वो उन बरतनों को चालीस साल तक घरों में इस्तेमाल करते रहे।मुझे तोड़ दिया गया और रास्तों पर फैंक दिया गया।बाद में, उन्होने मुझे ईंटें बनाने के लिए इस्तेमाल किया जो इस दीवार को बनाने के लिए इस्तेमाल किया।एक दूसरे के साथ झगड़ा मत करो।तुम मेरी तरह बन जाओगे।"

हसन कलाबी रहीमाहुल्लाहु तआला ने **मवाकिफ** किताब की इबतिदा में कहा है: हज़रत हसन और हज़रत हुसेन रज़ी अल्लाहु अन्हुमा बीमार हो

गए। हज़रत अली और हज़रत फ़ातिमा और उनकी नौकरानी रज़ी अल्लाहु अजमईन ने कसम खाई के अगर वो दोनो दोबारा अच्छे हो जाएं तो वो तीन दिन तक रोज़े रखेंगे। जब रहमती बच्चे सेहतयाब हो जाए, तो तीनो लोगों ने तीन दिन के रोज़े रखने की तैयारी की। पहले दिन के रोज़े के खात्मे पर उनके पास खाने को कुछ भी नहीं था। इसलिए उन्होने एक यहूदी से तीन साअ [हंफ़ी मसलक के मुताबिक **12.6** लीटर। बराए महरबानी **सआदते अबदिया** के पाँचवे हिस्से के तीसरे सबक के अकेली जिल्द को तफ़सील के लिए देखें।] जौ उधार लिए। हज़रत फ़ातिमा रज़ी अल्लाहु अन्ह ने एक साअ जौ को पीसा और पाँच रोटियाँ सेंकी। एक गरीब शख़्स आया और कुछ खाने के लिए पूछा। उसको पूरी रोटियाँ देकर जो उनके पास थीं,वो भूखे ही सोने चले गए। इस इरादे के साथ के दूसरे दिन भी रोज़ा रखेंगे। हज़रत फ़ातिमा रज़ी अल्लाहु तआला अन्ह ने दूसरे जौ के साअ से पाँच रोटियाँ बनाई। रोज़े के खात्मे पर एक यतीम आया। उन्होने वो रोटियाँ उसे दे दीं और खुद भूखे सो गए। फिर दोबारा उन्होने तीसरे दिन के रोज़े की नीयत की। आपने आखरी बचे हुए जौ से फिर पाँच रोटियाँ बनाई। रोज़े के खात्में पर एक गुलाम आया और खाना मागने लगा। उन्होने उसे रोटियाँ दे दीं। अल्लाह तआला ने अपने पैग़म्बर 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' को वही के ज़रिए एक आयत-ए-करीमा भेजी उनकी नज़र और ईसार की तारीफ़ के लिए [नज़र का मतलब 'कसम'। ईसार का मतलब अपने मुसलमान भाई को कुछ देना अगरचे तुम्हें उसकी ज़रूरत हो। ईसार ज़रूरत की चीज़ों पर होता है, नाके सुल्हा कामों या इबादत के कामों पर। मिसाल के तौर पर,एक शख़्स जिसके पास सिर्फ़ इतना पानी हो के वो अपने आपको साफ़ कर सके तो उसे उसको सिर्फ़ अपने लिए इस्तेमाल करना चाहिए बजाए इसके के वो इसे किसी को दे दे। 'नज़र' की तफ़सील के लिए,बराए महरबानी **सआदत-ए-अबदिया** के पाँचवे हिस्से के पाँचवे बाब को देखिए।]। सिर्फ़ अपनी ज़रूरत के हिसाब से गुज़ारा (रिज़क) [माल और पैसा] रखना और बाकी बाँट देना 'जुहद' कहलाता है।

[ये **अदालत** (इंसाफ़) है के एक शख़्स को उसके बकाया या जो कर्ज़ा तुमने उससे लिया है उसे दे दो; ये **एहसान** (नरमाई) होगा अगर उसके बकाया

से ज़्यादा उसे दिया जाए; और ये ईसार है के अपना सारा रिज़क, यानी जो माल तुम्हें चाहिए, वो तुम किसी को दे दो।]

एक शख़्स जो जुहद रखता है वो 'ज़ाहिद' कहलाता है। दो रकात (एक रस्म के मुताबिक) नमाज़ जो एक इस्लामी आलिम के ज़रिए अदा की जाए जो ज़ाहिद है वो उन सब नमाज़ों से ज़्यादा कीमती है जो एक ग़ैर ज़ाहिद शख़्स के ज़रिए पूरी ज़िन्दगी अदा की जाए। कुछ सहाबा रज़ी अल्लाहु तआला अन्हुमा अजमईन ने कुछ तावाईन से कहा: "तुम अल्लाह के पैग़म्बर 'सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम' के सहाबा से ज़्यादा इबादत के काम अदा करते हो। ताहम वो तुम से ज़्यादा महबूब हैं क्योंकि उनमें तुम से ज़्यादा ज़ुहद है।" दुनिया के अंडो की तरफ़ शाईक होना ममनुअ (हराम) तरीकों की तरफ़ झुकाओ बनाता है अपने नफ़्ज़ की इच्छाओं और तसल्ली करने के लिए और उसको पाने के लिए ज़रूरी पैसा कमाने के लिए। दुनिया के लिए रख़बत रखने का मतलब है इज़्ज़त की तलाश और दुनियावी ज़ाएके जो फ़ाएदे के बजाए ज़्यादा नुकसान के ज़िम्मेदार होते हैं। वो फ़ानी, आरज़ी हैं। उनको हासिल करने के लिए, हाँलाकि, ये बहुत सख़्त काम है। उनके बीच में भी बेकार और अदना मसरूफ़यात हैं जिन्हें **लाब** और **लहव** कहते हैं।

['ज़रूरत' वो चीज़ है जो एक शख़्स को मरने से या किसी एक अज़ा के खोने से या शदीद दर्द से बचाती है। 'एहतीयाज' वो चीज़ है जो तुम्हे अपने रूहानी या जिस्मानी कुव्वत के लिए या खैरात देने के लिए पाक काम अदा करने के लिए,ज़ियारत (**हज**) करने के लिए, ज़रूरी खैरात (**ज़कात**) देने के लिए, (नज़र वाली इबादत) (**कुरबान**) अदा करने के लिए, और तुम्हारे कर्ज़ अदा करने के लिए तुम्हें चाहिए हो। 'ज़ीनत' वो चीज़ें हैं जो एहतियाज की ज़्यादती में हैं और जो तुम अपने पास रखना पसंद करते हो। जो चीज़ एहतियाज के साथ ज़्यादती में है उसे शैखी मारने या घमंड करने के लिए इस्तेमाल करना ज़ीनत की हुदूद से बाहर एक ममनुअ काम है। ये ज़रूरी (**फ़र्ज़**) है के जितनी 'ज़रूरत' हो उतना कमाया जाए। एहतियाज की तरह कमाना **सुन्नत** है। इसको तसकीन (**कनाअत**) भी कहते हैं। ज़ीनत की तरह कमाना इखतियारी (**मुबाह**) है। एहतियाज और ज़ीनत को पूरा करने के लिए कमाना

एक **(इबादत)** बंदगी का काम है लेकिन इस रक़म को कमाने के लिए हमें इस्लाम के उसूलो की खिलाफ़ वर्ज़ी नहीं करनी चाहिए।एहतियाज और ज़ीनत के लिए इतना कमाना के वो शरीअत के मुक़ाबले हो तो वो बंदगी है लेकिन शरीअत के बाहर जाना दौलत या माल कमाने के लिए एहतियाज और ज़ीनत से ज़्यादा तो वो ममनुअ है।इस तरह से चीज़ें हासिल करना वो **(दुनिया)** ज़मीन के लिए है। 'शरीअत' का मतलब है अल्लाह तआला के एहकाम और मुमानिअत।]

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**चीज़ें जो ज़मीन 'दुनिया' के लिए हैं वो लानती हैं।जो चीज़ें अल्लाह तआला ने मंज़ूर की हैं और जो अल्लाह तआला के लिए हैं वो लानती नहीं हैं।**" जो चीज़ें ज़मीन (दुनिया) के लिए हैं उनकी अल्लाह तआला की निगाह में कोई कीमत नहीं है।वो रोज़ी **(रिज़क)** जो मज़हबी उसूलों **(शरीयत)** से कमाई और इस्तेमाल की जाती हैं वो ज़मीन **(दुनिया)** के लिए नहीं हैं; बल्कि वो दुनियावी बरकत **(नेअमत)** है।दुनियावी बरकतों के बीच में सबसे ज़्यादा कीमती बरकत पाक **(सालिह)** औरत है।एक शख़्स जो यकीन (ईमान) रखता है और इस्लाम के उसूलों को मानता है वो एक पाक **(सालिह)** शख़्स है।एक सालिह औरत अपने शौहर को ममनुअ काम करने से बचाती है और उसे इबादत करने और अच्छे काम करने की अदाएगी में मदद करती है।एक ग़ैर सालिह औरत नुकसानदह है और वो ज़मीनी चीज़ों **(दुनिया)** में से एक है।एक हदीस शरीफ़ इस तरह पढ़ी जाती है: "**दुनियाकी बरकतों के बीच में, मेरी औरतें और अच्छे इतर मेरे लिए प्यारे बना दिए गए।**" और दोबारा, एक दूसरी हदीस शरीफ़ में बयान है: "**अगर दुनिया की चीज़ों की अल्लाह तआला की निगाह में ज़रा भी कीमत होती, तो वो पानी की एक बूंद तक काफ़िरों को नहीं देता।**" उसने काफ़िरों को दुनियावी चीज़ें बहुत तादाद में दे रखी हैं और इसलिए उनको तबाही तक पहुँचा देता है।एक दूसरी हदीस शरीफ़ में इस तरह बयान है: "**अल्लाह तआला की निगाह में एक ईमान वाले की कीमत उसकी दुनियावी चीज़ों के मुकाबले जो वो रखता है घट जाती है,**" और "**जब ज़मीन 'दुनिया' का प्यार बढ़ जाता है, तो दूसरी दुनिया आखिरत के नुकसान को भी बढ़ा देता है।जब दूसरी दुनिया के लिए प्यार बढ़ जाता है, तो उसका दुनिया**

का नुकसान घट जाता है।" हज़रत अली रज़ी अल्लाहु तआला अन्ह फरमाते हैं के ये दुनिया और बाद की दुनिया दोनो मश्रिक और मग़रीब की तरह अलग हैं।एक शख़्स जब करीब पहुँच जाता है तो एक दूसरे से अलग हो जाता है।एक दूसरी हदीस शरीफ़ में, रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमाया: "**दुनियावी चीज़ों के पीछे भागना ऐसा है जैसे पानी पर चलना।क्या ये मुमकिन है पैरों के लिए के वो गीले ना हों? चीज़ें जो इस्लाम के एहकामों को कसकर पकड़ने के खिलाफ़ रूकावट हैं वो ज़मीन 'दुनिया' है।"** और "**अगर अल्लाह तआला एक शख़्स को पसंद करता है, तो वो उसे दुनिया में ज़ाहिद और आखिरत में राग़िब बना देता है।वो उसकी कमियों के बारे में आगाह करता है।"** और "**अल्लाह तआला उन से प्यार करता है जो दुनिया में ज़ाहिद हैं।लोग उसको प्यार करते हैं जो उन चीज़ों में ज़ाहिद है जो दूसरे लोग रखते हैं।"** और "**दुनियावी चीज़ें हासिल करने वाले के लिए अपनी चाहतें पाना मुश्किल है।"** और "**दुनिया के लिए ज़्यादा प्यार रखना आगे की गलती है।"** ये सारी खराबियों और गलतियों का सबब है।एक शख़्स जो दुनिया के पीछे भागता है, वो शकूक में घिर जाता है, उसके बाद नापसंदीदा हरकात **(मकरूहात)** में, और उसके बाद ममनुअ हरकात **(हराम)** में, और उसके बाद वो कुफ़्र में भी घिर सकता है।यही वजह है कि पुराने लोग **(उम्मतें)** पैग़म्बर अलैहिम उस-सलावातुह व-तस्लीमात में कोई यकीन नहीं रखते थे क्योंकि वो उनकी दुनिया के लिए ज़्यादा प्यार था।दुनिया के लिए प्यार एक शराब की तरह है।एक शख़्स उसमें से जब एक बार उसमें से पी लेता है, वो सिर्फ़ मरने के वक्त ही होश में आता है।मूसा (मोसिस) अलैहिस-सलाम तूर पहाड़ की तरफ़ जा रहे थे,जब उन्होने एक शख़्स को बहुत बुरे तरीके से रोते हुए देखा।उन्होने अल्लाह तआला से कहा, "ए मेरे रब!ये तेरा बंदा तेरे डर की वजह से किस कदर रो रहा है।" अल्लाह तआला ने फरमाया: "**चाहे ये खून के आँसू भी बहा ले लेकिन मैं इसे तब तक माफ़ नहीं करूँगा जब तक ये दुनिया का प्यार रखता है।"** मंदरजाज़ेल हदीस शरीफ़ इस तरह है: "**एक शख़्स जो जाईज़ तरीके से दुनियावी चीज़ें कमाता है वो उसके लिए आखिरत में जवाबदह होता है।एक शख़्स जो ममनुअ तरीके से कमाता है वो सज़ा पाता है।"** और "**अगर अल्लाह तआला अपने किसी एक बंदे को नहीं चाहता, तो**

वो उससे उसका पैसा ममनुअ (हराम) चीज़ों पर खर्च करवाता है।" शैखी मारने और घमंड के लिए मकान तामीर करना इस किस्म में आता है। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**अगर एक शख़्स 'हलाल' पैसे से एक इमारत तामीर करता है, तो वो ईनाम सवाब हासिल करता है जब तक के लोग उस इमारत से फाएदा हासिल करते रहते हैं।**" ऊँची इमारत की तामीर करना साफ़ हवा और उसके मुखालिफ़ बचाने के लिए इसकी इजाज़त है। दिखावे के लिए और घमंड के लिए ऊँची इमारतें तामीर करना ममनुअ **(हराम)** है। इमाम-अल-आज़म अबू हनीफ़ा रहीमाहुल्लाहु तआला ने कहा, "इस्लामी आलिमों को और मरतबे वालों के लिए खुबसूरत लिबास पहनना और आलिशान इमारतों में रहना अपने आपको जाहिल लोगों की नफ़रत से बचाना और अपने दुश्मन के दिलों में अज़मत और ताकत डालने के लिए है।

26- सालिह कामों की अदाएगी को टालना (तसवीफ़)

"तसवीफ़" अच्छे कामों को मलतवी में डालना है। अच्छे कामों और इबादत के कामों को जल्दी करना "मुसारात" है। ये एक हदीस शरीफ़ में लिखा है: "**अपने मरने से पहले माफ़ी "तौबा" करलो। जब अच्छा काम करो तो जल्दी करो इससे पहले के कोई रूकावट पैदा हो जाए उस अच्छे काम को रोकने के लिए। अल्लाह तआला को ज़्यादा याद रखो। 'ज़कात' और खैरात देने में जल्दी करो। ये सब करने से तुम अल्लाह तआला की तरफ से रोज़ी 'रिज़्क' और मदद हासिल करोगे।**" और "**पाँच चीज़ों के आने से पहले पाँच चीज़ों की कीमत जान लो:मरने से पहले ज़िन्दगी की कीमत; बीमारी से पहले सेहत की कीमत; दुनिया में आखिरत कमाने की कीमत; बुढ़ापे से पहले जवानी की कीमत; और गरीबी से पहले दौलत की कीमत।**" एक शख़्स जो खैरात देने **(ज़कात)** के फर्ज़ को नहीं देखता और अल्लाह तआला की राह में अपनी दौलत खर्च नहीं करता तो वो बहुत नुकसान में रहता है, अपनी दौलत के खोने

पर। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया:"**एक शख़्स जो 'तसवीफ़' करता है वो नेसतो नाबूद हो जाता है।**"

[इमाम-अर-रब्वानी रहमतुल्लाही अलैह एक दिन बेतुलख़ला में गए और, थोड़ी देर बाद, नौकर को बुलाने के लिये बेतुलख़ला के दरवाज़े को बजाया। नौकर दौड़ा आया, ये सोचकर के बड़े आलिम हो सकता है पानी या कपड़े का टुकड़ा जो वो **तहारत** (अपने आपको साफ़ करने) के लिए इस्तेमाल करते वो भूल गए हों। इमाम अर रब्वानी ने थोड़ा सा दरवाज़ा खोला और अपनी कमीज़ नौकर को हिदायत देते हुए फरमाया: "इस कमीज़ को तौहफ़े के तौर पर फलाँ फलाँ शख़्स को दे दो।" नौकर ने परेशान होकर पूछा," ए मेरे मालिक! क्या आप ये हुकूम बेतुलख़ला से बाहर आकर नहीं दे सकते थे? आपने अपने आपको इतनी मुश्किल में क्यों डाला?" "इमाम" ने जवाब दिया, "उस गरीब शख़्स को अपनी कमीज़े तौहफ़े के तौर पर देने का ख्याल मेरे दिमाग़ में बेतुलख़ला में आया। मैं डर गया था के अगर मेने बाहर आने तक तसवीफ़ कर दी, तो हो सकता है शैतान मुझे बुरे मश्वरे वसवसे में डाल दे जिसकी वजह से मैं वो अच्छा काम करने से बाज़ रह जाऊँ।"]

27- फ़ासिकों के लिए हमदर्दी रखना

एक शख़्स जो ममनुअ काम **(हराम)** ज़ालिम तरीके से करता है वो 'फ़ासिक' कहलाता है, और जो गुनाह किया जाए वो 'फ़िस्क' कहलाता है। सबसे ज़्यादा "फ़िस्क" ज़्यादती **(जुल्म)** करना है। इस लिए ये खुला जुर्म था और इसमें हर फर्द के हुकूक भी शामिल थे। कुरआन अल करीम सुरह अल-इमरान की सत्तावनवीं और एक सौं चालीसवीं आयत-ए-करीमा का मतलब है: "**...अल्लाह तआला उनको नहीं चाहता जो गलत (ज़ालिमुन) करते हैं।**" एक हदीस शरीफ़ इस तरह पढ़ी जाती है: "**ज़ालिम के लिए दुआ करना के वो लम्बी ज़िन्दगी जिए उसका मतलब है अल्लाह तआला की तरफ़ नाफ़रमानी चाहना।**" जब सुफ़यान-ए-सवरी रहीमाहुल्लाहु तआला ने पूछा, "एक जाबिर (ज़ालिम) रेगिस्तान में प्यासा खत्म होने वाला हो। क्या हम उसे पानी दे दे?"

उन्होने जवाव दिया, “नहीं, कभी नहीं।” अगर एक ज़ालिम ने जबरन एक घर को रहने के लिए हासिल किया,तो उस घर में घुसना/जाना हराम है।एक शख़्स जो फ़ासिक है उसकी तरफ़ नरमाई का बरताव करना, अगरचे वो ज़ालिम नहीं है, फिर भी उसके ईमान का दो तिहाई नुकसान होगा।ये हकीकत एक शख़्स की तरफ़ जो ज़ालिम है (उसी वक्त में) अज़हद आजिज़ी को नापने का सही पैमाना है।एक ज़ालिम शख़्स के हाथ को चूमना या उसके आगे सिर झूकाना हराम है।ये काम तब (जाईज़) इजाज़त वाले हैं जब वो शख़्स आदिल (इंसाफ) हो।अबू उबेदा बिन जैराह ने हज़रत उमर रज़ी अल्लाहु अनहुमा के हाथ पर प्यार किया।उस शख़्स के घर में जाने और रहने की इजाज़त नहीं है जो अपना ज़्यादातर पैसा ममनुअ तरीके से कमाता हो।ऐसे शख़्स की तारीफ़ करना बातों से या किसी और काम के ज़रिए तो ये ममनुअ है।इस बात की इजाज़त तब ही है जब एक शख़्स अपने आपको या किसी और को उसके ज़ुल्म से बचाए।उसकी मौजूदगी में, एक शख़्स को झूठ नहीं बोलना चाहिए और ना ही उसकी तारीफ़ करनी चाहिए।अगर एक शख़्स सोचे के वो उसका मश्वरा सुन लेगा, तो उस शख़्स को उसे मश्वरा दे देना चाहिए।अगर एक ज़ालिम शख़्स तुमसे मिलने आता है तब इस बात की इजाज़त है के तुम उससे मिलने के लिए खड़े हो जाओ।लेकिन ये ज़्यादा अच्छा है अगर तुम उसके ज़ुल्म की बुराई दिखाने और इस्लाम की कीमत (**इज़्ज़त**) के लिए खड़े ना हो।अगर हालात तुम्हें इजाज़त दें, तो तुम उसे सलाह दे सकते हो।ये हमेशा अच्छा होगा के जाबिर और ज़ालिमों से दूर रहा जाए।एक हदीस शरीफ़ में बयान है: “**जब तुम किसी मुनाफ़िक से बातें कर रहे हो तो उसे ‘जनाब’ मत कहो।**” ये कुफ्र का काम है के किसी काफ़िर या एक ज़ालिम की ताज़ीम की जाए, उनको एहतराम के साथ अदाव किया जाए, या उनको ताज़ीम की अलामत के साथ मुख़ातिब किया जाए।एक काफ़िर को इज़्ज़त देना या इस तरह के तारीफ़ के कलमात कहना, “मेरे मालिक” या उसको इज़्ज़त के साथ अदाब करना कुफ्र का सबब बनता है।जो कोई भी अल्लाह तआला के खिलाफ़ बग़ावत करेगा वो **फ़ासिक** कहलाएगा।वो जो दूसरों को बग़ावत और फ़िस्क फ़ैलाने का सबब बनते हैं वो **फ़ाजिर** कहलाते हैं।गुनहगार जो ममनुअ काम (**हराम**) करने के लिए जाना जाता है वो महबूब नहीं होता।उन लोगों को प्यार करना जो करना जो

बिदअत फैलाते हैं और जो दूसरों पर ज़ुल्म करते हैं एक गुनाह है। ये एक हदीस शरीफ़ में बयान है: "**जबकि लोगों के पास ताकत है एक गुनहगार 'फ़ासिक' के'फ़िस्क' को रोकने के लिए, अगर कोई उसे नहीं रोकता, तो अल्लाह तआला उन सबको इस दुनिया में और आखिरत में सज़ा देगा।**" उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ रहीमाहुल्लाहु तआला ने कहा, "अल्लाह तआला सबको सज़ा नहीं देता जब कोई ममनुअ काम 'हराम' करता है लेकिन जब उनमें से कोई खुले तौर पर ममनुअ काम करता है और दूसरे जो उसे देख रहे हैं वो उन्हें नहीं रोकते। तब वो उन सबको सज़ा देगा।" अल्लाह तआला ने पैग़म्बर यशाह अलैहि-सलातु वसल्लम पर ज़ाहिर किया: "मैं तुम्हारी उम्मत के बीच चालीस हज़ार सालिह लोगों को साठ हज़ार गुनहगारों (फ़ासिकों) के साथ अज़ाब दूँगा!" जब यशाह ने मिन्नत की, "या रब (ए मालिक)। गुनहगार तो सज़ा के लायक हैं लेकिन सालिह लोगों को सज़ा देने की क्या वजह है?" अल्लाह तआला ने जवाब दिया, "वो सब मेरे गुस्से में मेरे साथ नहीं हुए (गुनहगारों के मामले में)। बल्कि वो उनके साथ खाते भी है।" अगर **अमर अल-मारूफ़** उस शख़्स की तरह किया जाए जो सही रास्ते से भटक गया हो और ज़ालिमों की तरफ़ तो वो खुद को, तुम्हारे खानदान को आम तौर से मुसलमानों को नुकसान की तरग़ीब देने का सबब बनता है, तब इसे ना किया जाए। इस तरह के मामलों में, तुम्हारे दिलों की नफ़रत उनकी तरफ़ काफ़ी है। यानी उन लोगों की तरफ़ नफ़रत महसूस करना जो खुले तौर पर ममनुअ काम (**फ़ासिक**) करते हैं। ये ज़रूरी है के उनको नरम अंदाज़ से नरम और मीठे अलफ़ाज़ में सलाह दी जाए।

अगर एक शख़्स इबादत के कामों को अदा करता है और खुले तौर पर ममनुअ काम यानी "फ़िस्क़" भी करता है, तो उसे उसके कामों के मुताबिक लेबल किया जाता है। अगर ये दोनो उलटे कामों में हमरारी आए एक शख़्स के ज़ाहिरी बरताव में,तब उसे हमदर्दी के साथ सुलूक किया जाए जिसका वो मुस्तहीक है उसकी इबादतों के काम के बदले और उसी वक्त उसकी मुखालफ़त हो जो उसका फ़िस्क उसपर आएद करता है। ये रियास्ती हाकिमों का फ़र्ज़ है के उन लोगों को रोके जो फ़िस्क फैलाते हैं।

[एक शख़्स जो शरीअत का फरमावरदार है और अपना दिल अल्लाह तआला को राज़ी करने के मक़सद से किसी मुरशीद की तरफ़ लगाता है, तो वो एक पाक (**सालिह**) शख़्स है। एक शख़्स जो अल्लाह तआला को खुश करना चाहता है और उसका प्यार हासिल करता है, वो एक 'वली' कहलाता है। और एक वली जो दूसरों की रहनुमाई करता है ताकि वो भी अल्लाह तआला का प्यार हासिल कर सकें, वो एक **मुर्शिद** कहलाता है। इस्लाम तीन ज़रूरी चीज़ों पर मुबनी है:इल्म (जानकारी); अमल (आदत); इख्लास (अल्लाह तआला को खुश करने के लिए कुछ करना) इस्लामी जानकारी दो जुज़ पर मुबनी है: मज़हबी जानकारी और साईसी जानकारी। मज़हबी ईल्म पेड़ से गिरती हुई एक नाश्पाती की तरह नहीं है जो एक शख़्स के सिर पर गिरती है। ये एक असली रहनुमा (**मुर्शिद**) के लफ़्ज़ों, हरकात, बरताव या तहरीरों से पता चलता है। जैसे ही आखिरत (**कयामत**) नज़दीक आएगी तो असली रहनुमा कहीं भी नज़र नहीं आएगें और जाहिल, झूठे, गुनहगार मज़हबी आदमियों की हाकमियत तादात में बढ़ जाएगी। वो अल्लाह तआला की मोहब्बत हासिल करने की कोशिश नहीं करते, वो पैसा, मरतबा, ओहदा और शोहरत कमाने के लिए काम करते हैं। वो मालदार लोगों को और उन लोगों को जो ओहदा और रूतबा रखते हैं उन तक रसाई हासिल करते हैं। एक शख़्स को चाहिए के वो जाने माने अहले-सुन्ना के आलिमों की किताबो को पढ़ें, ऐसा ना हो कि वो ऐसे बदमाशों में घिर जाए और अबदी खुशी हासिल करने के लिए।]

28- आलिमों की तरफ़ अदावत

इस्लामी इल्म या इस्लामी आलिमों का मज़ाक उड़ाना कुफ्र का सबब बन सकता है। कोई भी जो कस्म खाता है या इस्लामी आलिम के बारे में गलत बोलता है वो एक काफ़िर और बिदअती बन जाता है। फ़िस्क या बिदअत (एक आलिम के ऊपर) इसको ज़रूरी बना देती है के वो नापसंद करे। ताहम उसे दुनियावी अहमियत के लिए नापसंद करना गुनाह से भरा है। इसी तरह सालिह (पाक) मुसलमानों को नापसंद समझने के मामले में है। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने मंदरजाज़ेल हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**तीन**

चीज़ें यकीन के ज़ाएके को बढ़ा देती हैं अल्लाह तआला और उसके नबी को सब चीज़ों से ज़्यादा चाहना; अल्लाह तआला की रज़ा के लिए एक मुसलमान को चाहना अगरचे वो तुम्हें नहीं चाहता; और अल्लाह तआला के दुश्मनों को नापसंद करना।" और "**सबसे ज़्यादा कीमती इबादत अल्लाह तआला की रज़ा के लिए प्यार करना है 'हुब्ब-ए-फ़िलाह' और अल्लाह तआला की रज़ा के लिए नापसंद करना 'बुग्द-ए-फ़िलाह'**। " ये ज़रूरी है के उस ईमान वाले को ज़्यादा चाहा जाए जो ज़्यादा इबादतें करता हैं बनिस्बत उस ईमान वाले के जो कम बंदगी (**इबादत**) करता है। ऐसे काफ़िरों को ज़्यादा नापसंद करने की ज़रूरत नहीं है जो ज़्यादा बग़ावत करें और जो गुनाह (**फहश**) और कुफ्र फ़ैलाएँ। अल्लाह तआला की रज़ा के लिए उन लोगों के बीच में से उन्हे नापसंद करना ज़रूरी है, जिसमें सबसे पहले आदमी की अपनी नफ़्ज़ आती है। उनको चाहने का मतलब है के उनके रास्ते पर चलना और उनके तरीकों की नक्ल करना। ईमान की निशानी अल्लाह तआला की रज़ा के लिए प्यार है (**हुब्ब-ए-फ़िलाह**) और अल्लाह तआला की रज़ा के लिए नापसंद करना (**बुग़द-ए-फ़िलाह**) है। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने मंदरजाज़ेल हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**अल्लाह तआला के पास कुछ बंदे हैं। वो नबी नहीं हैं। पैग़म्बर और शहीद उठाए जाने वाले दिन 'कयामत' में उनसे हसद करेंगे। वो ईमान वाले हैं जो दूर रहते हैं एक दूसरे से लेकिन वो एक दूसरे को अल्लाह तआला की रज़ा के लिए चाहते हैं अगरचे वो एक दूसरे को नहीं जानते,**" और "**आखिरत में, हर कोई उसके साथ होगा जिसे वो दुनिया में चाहता होगा।**" अगर वो जिनसे प्यार करना जताते थे उनके बताए गए रास्ते पर नहीं चलते, तो उनका प्यार सच्चा नहीं होगा। एक शख़्स को सालिह लोगों के साथ दोस्त होना चाहिए जिन पर उन्हें ईमान और सच्चाई के मामले में एतमाद हो। यहूदी और ईसाई कहते हैं के उन्हे अपने नबियों से प्यार है। लेकिन, क्योंकि वो उनके रास्ते पर नहीं चलते और, बल्कि वो गलत रास्ते को मानते जो यहूदी मज़हबी हाकिम (हाहम्स) और पादरियों का घड़ा हुआ है, वो आखिरत में अपने नबियों के साथ नहीं होंगे। बल्कि इससे भी, के वो दोज़ख में जाएगें। **कुड नॉट आनसर** किताब जिसे हकीकत किताबवी ने छापा उसने इस मसले में यहूदियों और इसाइयों के मज़मून को बहुत गहराई से वाज़ेह

किया।ऊँची जाने/रूहें लोगों को रागि़ब करती हैं जो रूहानी ऊँचाइयों तक उन्हें चाहते हैं।इसके उलट, नीची रूहें उन्हें निचली सतह तक रागि़ब करती हैं।एक शख़्स आज जो दुनिया में उसके दोस्त है उन्हें देखकर ये समझ सकता है कि मरने के बाद उसकी रूह कहाँ जाएगी।एक शख़्स दूसरे शख़्स को या तो उसकी आदत की वजह से या फ़िर उसके तर्क **(अक़्ल)** की वजह से प्यार करता है, उस शख़्स को प्यार करने की ज़रूरत है या तो जो नरमाई वो उससे हासिल कर रहा है या अल्लाह तआला की रज़ा के लिए।जो लोग एक दूसरे को चाहते हैं उनकी रूहें एक दूसरे को दुनिया में मुतासिर करती हैं।इसी तरह,वो आखिरत में भी एक दूसरे को रागि़ब करेंगे।अनेस बिन मल्कि रज़ी अल्लाहु अन्ह ने कहा के कोई भी खबर मुसलमानों को इतना खुश नहीं कर सकती जितनी के मंदरजा वाला/ऊपर वाली हदीस शरीफ़ में बताई गई खबर।वो जो काफ़िरों को चाहते हैं वो उनके साथ दोज़ख में जाएंगे।एक शख़्स मदद नहीं कर सकता वो रास्ता चलते हुए जिसे उस शख़्स ने बताया जिसे वो चाहता है।सबसे ज़्यादा मज़बूत सबूत किसी शख़्स की चाहने का ये है के जो उसे पसंद हो वो पसंद करो और जिन चीज़ों को वो नापसंद करो उन्हें वो भी पसंद ना करे।

29- तहरीक करना (फ़ित्ना)

फित्ने की एक मिसाल है के दूसरे लोगों को मुसिबतें और परेशानियों का सबब बनें,मिसाल के तौर पर ऐसी पालिसी लाई जाए जो फौजी के कब्ज़े का रास्ता हमवार करे।ये एक हदीस शरीफ़ में लिखा है: **“फ़ित्ना सो रहा हैं।अल्लाह तआला उनपर अपनी लानत भेजे जो उसे जगाते हैं।”** ज़मीन के कानून और खिलाफ़ और रियास्त के खिलाफ़ बग़ावत को उभारना फित्ने को जगाने जैसा ही है, जो असल में ममनुअ है।ये कत्ले नफ़्स से बड़ा गुनाह है जो बग़ैर कम किए हुए।इस्लाम एक ज़ालिम हुकूमत जो के जबर और जुल्म वाले कदम उठाती है उसके खिलाफ़ भी बग़ावत करने को मना करती है।अगर एक ज़ालिम हुकूमत के खिलाफ़ एक बग़ावत उठ भी जाती है, या कोई हरकत जो इस तश्दुद भरी हंगामा खेज़ी का साथ देती है वो भी मना है।बग़ावत का

नुकसान, और एक साथ किया गया गुनाह, वो उस गुनाह और नुकसान से बड़ा है जो अंदरूनी बेरहमी है।

फ़िल्ने की एक और मिसाल है (इमाम के लिए जो जमाअत में इबादत कराते हैं जिसे नमाज़ कहते हैं) [बराएमहरबानी **सआदते अबदिया** के चौथे हिस्से को (रोज़ाना की इबादत जिसे कहते हैं) नमाज़ के लिए वाज़ेह तफ़सील देखिए।] जितनी सुन्नत में बताई गई हैं उससे ज़्यादा लम्बी सुरतें पढ़ना और इस तरह नमाज़ को लम्बा खिचना। अगर जमाअत में मौजूद सारे शरीकों की मरज़ी उसकी लम्बी किरअत पर हो, तब ये कोई फ़िला नहीं है; इसकी इज़ाज़त है। मुअल्लिम और मज़हबी ओहदों के आदमियों उन मज़ामिन पर बोलना या लिखना जो उनके सुनने वाले या पढ़ने वालों की समझ से परे हो तो वो भी एक फिल्ना माना जाएगा। हमें दूसरों के साथ उनके समझने की सतह तक बोलना चाहिए। कोई मुसलमानों को इबादत के काम करने को नहीं कह सकता जो वो अदा नहीं करते। इसके बजाए, उनको सलाह दी जाती है के वो इबादत अदा करें चाहे अगर वो सलाह फ़िकह के कमज़ोर सबूत पर मुबनी क्यों ना हो। जबकि हम **अमर अल मारूफ़** कर रहे हों तो हमें होशियार रहना चाहिए कि फ़िल्ना ना उभरे। अमर अल मारूफ़ करते वक्त हमें अपने आपको खतरे में डालने का हुकूम नहीं है। ना ही तो हमें मज़हब के मामले में किसी तहरीक का सबब बनना चाहिए ना ही दुनियावी मामलात में दूसरों को नुकसान पहुँचा कर किसी फ़िल्ने का सबब बनना चाहिए। जिस अमर अल मारूफ़ से तुम्हारा दुनियावी नुकसान हो उसकी इजाज़त है;असल में, ये एक जिहाद का काम है। बहरहाल, अगर तुम में ज़रा भी सबर ना हो ज़्यादा दूर तक जाने का तो तुम्हें इसे छोड़ देना चाहिए। फ़िल्ने के वक्त, इस बात की सलाह दी जाती है के घर में रहा जाए और जमाअत को छोड़ा जाए। सबर/तहमुल वाहिद रास्ता है एक बार तुम किसी फ़िल्ने में शामिल हो जाते हो (जो तुम मदद नहीं कर सकते) इससे निकलने का।

इमाम अर रब्बानी रहीमाहुल्लाहु तआला ने अपनी **मकतूबात** की दूसरी जिल्द के **68**वें खत में कहा: ए मेरी जान बेटे! जैसा के मैं वक्त लिख रहा हूँ और दोबारा, हम ऐसे वक्त में जी रहे है के हमें अपने गुनाहों की तौबा कर

लेनी चाहिए और अपने मालिक, अल्लाह से माफ़ी की मिन्नत करनी चाहिए। ऐसे वक्त में जैसे है, जब हर तरह के फ़िले बढ़ रहे हैं, हमें अपने आपको घरों में बंद कर लेना चाहिए और हर तरह के साथी छोड़ देने चाहिए। हाज़िर में, फ़िला एक भारी बारिश की तरह है, और पूरी ज़मीन इससे करीब करीब धूल चूकी है। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**कयामत से पहले फ़िला सब तरफ़ फैलेगा। फ़िले की सख्ती दिन के उजाले को रात के अंधेरे में तबदील कर देगी। उस वक्त, एक शख़्स जो एक ईमान वाले की तरह घर से निकलेगा वो वापिस शाम में अपने घर एक काफ़िर बन कर लोटेगा। वो शख़्स जो ईमान वाला बन कर अपने घर शाम में वापिस आएगा वो सुबह में काफ़िर बन कर उठेगा। उस वक्त में, बैठना खड़े होने से ज़्यादा अच्छा होगा। चलने वाला शख़्स भागने वाले से बेहतर होगा। अपने तीरों को तोड़ दो, अपनी कमानों को काट दो और अपनी तलवारों को उस वक्त पत्थरों पर मारो। उस वक्त जब कोई तुम्हारे घर आए तो आदम के दो अच्छे लड़कों में से बन जाओ।**" ये सब सुनने के बाद, सहावा रज़ी अल्लाहु तआला अन्हुमा अजमईन ने रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' से पूछा, के उस वक्त के मुसलमानों को किस तरह बरताव करना चाहिए। जवाब में आपने कहा, "**अपने घर के साज़ो सामान/फर्नीचर की तरह बन जाओ!**"दूसरी हिकायत में आपने फरमाया, "**ऐसे फ़िले के वक्त में अपने घरों को मत छोड़ो।**" [ये हदीस-शरीफ़अबू दाऊद और तिरमज़ी हदीसों की दो मानी हुई किताबों में मौजूद है।] तुमने शायद उन अज़ियतों और फ़ौजदारियों के बारे में सुना होगा जो दारूल-हर्ब के काफ़िर मुस्लिम मुलकों में मुसलमानों पर करते थे, मिसाल के तौर पर नेगरेकुट के शहर में। वो मुसलमानों को ऐसी बेइज़्ज़तियो का निशाना बनाते थे जिसकी कोई मिसाल नहीं मिलती। ऐसा कम ज़रफ़ी वाला बरताव (**आखिर ज़मान**) के शुरू ज़माने में ग़ालिब था। [**68**वें खत से तर्जुमा यहाँ खत्म होता है।]

मंदरजाज़ेल मालूमात **तज़किर-ए-कुर्तुबी** के खुलासे के तर्जुमे में लिखी हुई है रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमाया, "**तर्ग़ीब 'फ़िला' मत फैलाओ! तकरीर के ज़रिए तर्ग़ीब फैलाना ऐसे है जैसे तलवार के ज़रिए फ़िला। गुनहगारों (फ़ाजिरो) और जाबिरों के ज़रिए चुगली, झूठ, और दूसरों**

को बदनाम करके फ़िला फैलाना तलवार के ज़रिए फ़िला फैलाने से ज़्यादा नुकसानदह है।" ज़्यादातर आलिमों ने एक राए से हमें बताया है के चाहे वो जो ऐसे हालात में शामिल हो जाते हैं क्योंकि उनके पास कोई और रास्ता नहीं होता अपनी जानों को और मालों को बचाने का, तव भी वो हुकूमत और ज़मीन के कानून के खिलाफ़ बग़ावत नहीं कर सकते।इसलिए,हदीस शरीफ़ में हुकूम है के ज़ालिम हुकूमतों के खिलाफ़ सबर रखो।इमाम अल मौहम्मद अश शेबानी रहीमाहुल्लाहु तआला ने हमें बताया के रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम मंदरजाज़ेल दुआ पढ़ते थे **(दुआ), "अल्लाहुम्मा इन्नी अस्सलूका फिल्ल खैरत वा तरकलमुंनकरत वा हुब्वलमसाकिन वइज़्ज़ा अरदन्ता फ़िलातन फि कौमी फा तव्वाफ़नी गैराह मफ़तून।"** इस दुआ का मतलब हे: "ए मेरे रब! मुझे अच्छे काम अदा करने की नेमत से नवाज़ें, बुरे कामों को छोड़ू, और गरीबों के साथ हमदर्दी रखूँ! जब तू मेरी कौम के बीच में फिले बरपा करने का हुकूम दे, तो उस फिले में मेरी शमीलियत से पहले मेरी जान ले ले!" जैसे के इमाम अल कुर्तब्वी रहीमाहुल्लाहु तआला ने निशानदही की, ये हदीस शरीफ़ दिखाती है के ये ज़रूरी है के फ़िले को नज़रअंदाज़ किया जाए इतना ज़्यादा के इस फ़िले में शामिल होने से बेहतर है के मर जाया जाए।

मंदरजाज़ेल हदीस शरीफ़ **मिशकात** नाम की किताब में बयान की गई है: **"फ़िले के वक्त मुसलमानों और उनके रहनुमाओं की तकलदि करो।अगर वहाँ पर सच्चाई के रास्ते पर कोई ना हो, तो फिले और बग़ावत में शामिल लोगों में मत मिलो।जब तक तुम मर नहीं जाते फ़िले में मत शामिल हो!"** और **"तर्ग़ीब (फ़िले) के वक्त के दौरान हुकूमत के एहकाम मानो।चाहो अगर वो तुम्हारे साथ ज़ुल्म करे और चाहे वो तुम्हारी जाएदाद ले ले, तब भी हुकूमत के एहकाम को मानो!"** और **"फ़िले के दौरान इस्लाम को मज़बूती से पकड़ो।अपने आपको बचाओ! दूसरों को पढ़ाने की कोशिश मत करो के वो किस तरह बरताव करें।अपने घरों से बाहर मत निकलो।अपनी ज़ुबानों पर काबू रखो!"** और **"फ़िले के दौरान बहुत सारे लोग कत्ल हो सकते हैं।वो जो फ़ितने में शिरकत नहीं करते वो बच सकते हैं!"** और **"वो लोग जो फ़िला उभारने वालों का साथ नहीं देते उन्हे खुशियाँ हासिल होती हैं।इसी तरह वो भी जो सबर के साथ इस नागरेज़ फ़िले से बच जाते हैं।"** और आखिर में

"इंसाफ़ वाले दिन (कयामत) में अल्लाह तआला किसी से पूछेंगे के तुमने फलाँ गुनहगार को जब गुनाह करते हुए देखा तो उसे रोका क्यों नहीं। वो शख़्स इस तरह कहते हुए जवाब देगा के वो खतरे से डर गया था जोकि उस गुनहगार के ज़रिए उस पर लगाया जाता ओर मज़िद वो कहेगा के वो अल्लाह तआला के 'माफ़ी' वाले उसूल पर यकीन रखता था।" ये हदीस शरीफ़ इस बात की तरफ़ इशारा करती है के जब दुश्मन बहुत ज़्यादा ताकतवर हो तो, **अमर-ए-मारूफ़** और **नही अनील मुंकर** ना करने की इजाज़त है।

सीरात अल इस्लाम किताब की वज़ाहत में लिखा हुआ है के **अमर-ए मारूफ़** और **नहय अनील मुंकर** करना "फर्ज़ अल किफ़ाया" [कुरआन अल-करीम में कोई भी बरताव, सोच या ईमान का खुला हुआ एहकाम **फ़र्ज़** कहलाता है (या फ़र्द, जमा फराईद या फराईज़)। जब ये एहकाम हर एक मुसलमान पर नाफ़िज़ होता है, तो इसे **फ़र्ज़-ए-ऐन** कहते हैं। वरना, यानी अगर सारे मुसलमानों को एक खास इस्लामी एहकाम से मनाही करदी जाए जब सिर्फ़ एक मुसलामन इसे अदा करे, तो ये **फर्ज़-ए-किफ़ाया** कहलाता है। इस्लामी लफज़ों के लिए जैसे के **फ़र्ज़, वाजिब** और सुन्नत के लिए बराए महरबानी हमारी दूसरी इशाअत भी देखिए जैसे के **सआदते-ए-अबदिया,** सुन्नी रास्ता वग़ैरा।] है। दूसरे मुसलमानों को सुन्नत के काम करने की सलाह देना और (कोशिश करना) उन्हें मकरूह काम करने से परे करना ये एक सुन्नत का काम है। एक शख़्स जो ममनुअ काम करता है उसे नसीहत की जाए के जो काम तुमने किया है वो ईमानदारी वाला नहीं है और तुम्हें उसे करने से रोक देना चाहिए। जिस्मानी दखलअंदाज़ी रखने से बाहत है। अगरचे, एक शख़्स जो ममनुअ काम करने का मंसूबा बनाता है उसे जिस्मानी दखलअंदाज़ी के ज़रिए रोका जा सकता है। ज़ुबानी या जिस्मानी दखलअंदाज़ी इस तरह करनी चाहिए के वो फ़ितने और नुकसान से साफ़ हो। पहले से पता होना चाहिए के ये दखलअंदाज़ी फ़ाएदेमंद है। ज़न-ए-ग़ालिब, यानी मज़बूत ईमान ईल्म के बराबर है। हुब्ब-ए-फ़िलाह और बुगद-ए-फ़िलाह के बगैर इबाद के किए गए काम बेकार हैं। अगर अमर-ए-मारूफ़ बग़ैर किसी वाजिब वजह (उज़र) के नज़रअंदाज़ किया जाए ऐसा करने से,दुआ कुबूल नहीं होती, अच्छाई और बरकत मांद पड़ जाती है, और जिहाद और दूसरे मुश्किल काम नाकामी में खत्म

हो जाते हैं। राज़दारी से किया हुआ गुनाह उसी को नुकसान पहुँचाता है जो वो गुनाह करता है। अगर वो गुनाह खुले आम किया जाए तो,वो सबको नुकसान पहुँचाता है। हमें किसी के बारे में ग़लत राए नहीं बनानी चाहिए इस वजह से के कोई उसके बारे में बुरा बोल रहा था। उसके बारे में बुरी बात चुग़ली **(ग़िबत)** भी हो सकती है और उसको सुनना ममनुअ (हराम) हो सकता है। किसी को एक गुनहगार (फ़ासिक) का तमखा लगाना दो आदिल [आदिल का मतलब है एक सुन्नी मुसलमान जो बड़े गुनाहों को छोड़े और जो आदतन काबिले-माफ़ी गुनाह का इरतिकाब नहीं करता।] गवाहों की ज़रूरत पड़ती है जो ये कहें कि उन्होने उसे ये गलत काम करते हुए देखा है या तुमने वो काम खुद अपनी आँखों से होते हुए देखा हो। जब कोई किसी को एक ममनुअ काम करते हुए देखता है और उसे रोकता नहीं है, जबकि उसके पास ताकत है, तो इस भूलने वाले काम को **मुदाहाना** (सुलह नामा) कहते है। एक हदीस शरीफ़ में लिखा हुआ है के वो जो अपने मज़हब के साथ समझौता करते हैं वो दूसरी दुनिया में/कयामतमें अपनी कब्रों से बंदर और सुअर बनकर निकलेंगे। एक शख़्स जो अमर अल मारूफ़ करता है वो अपने दोस्तों के ज़रिए पसंद नहीं किया जाता। वो जो अपने मज़हब के साथ समझौता करते हैं उनके दोस्ता उन्हें पसंद करते हैं। ज़ालिम हुकूमत के ओहदेदारों के साथ अमर अल मारूफ़ करना उन्हें सलाह देने के ज़रिए वो जिहाद की अच्छी किस्म है। ज़ालिम हुकाम को बदलने के मामले में लाचारी, उनकी नाइंसाफ़ी दिलों की नाराज़गी उनके इस जिहाद के काम को बदल देती है। अमर अल-मारूफ़ फिर भी अदा करना चाहिए, हुकूमत के हाकिमों के ज़रिए ताकत के साथ, आलिमों के सलाह के तरीके के ज़रिए, और बाकी सब मुसलमानों के ज़रिए नाराज़ दिल के साथ। अमर अल मारूफ़ सिर्फ अल्लाह तआला की रज़ा के लिए अदा करना चाहिए, और तब तुम इस मामले में तालीम याफ़्ता हो सकते हो, इस तरह तुम अपनी बहसों के लिए पढ़े लिखे हवाले दे सकते हो,उन सारी शर्तो के साथ के तुम कोई फ़िला नहीं उभार रहे। अमर अल मारूफ़ उस शख़्स पर वाजिब नहीं है जो जानता है के उसकी सलाह बेकार है या उससे फ़िला उठ सकता है। असल में, कुछ हालतों में ये हराम है। ऐसी हालतों में, ये ज़रूरी है के मुमकिन फ़िल्ने को नज़रअंदाज़ करने के लिए घर में रहा जाए। अगर एक फ़िला उभरता है या हुकूमत ज़ुल्म के

ज़रिए फ़ित्ना उठाती है, तो फ़ित्ने से मुतासिर मुल्क या शहर को छोड़ देना चाहिए। जबकि ये मुमकिन हो के दूसरे मुल्क में हिजरत की जा सके, हुकूमत उसे एक गुनाह करने पर मजबूर कर रही हो, तो ये उस गुनाह को करने के लिए कोई काबिले कुबूल जवाज़ नहीं है। जब अकल मकानी/हिजरत मुमकिन न हो तो,एक शख़्स को चाहिए के वो अपने आपको दूसरों से अलग रखे और किसी के साथ भी ना मिले। अगर एक शख़्स ये समझ जाए के अमर अल मारूफ़ कोई असर नहीं करेगा बल्कि कोई फ़ित्ने का सबब भी नहीं बनेगा, तो उसे करना ज़रूरी (वाजिब) नहीं है बल्कि "मुस्तहब" है। अगर एक शख़्स को पता हो के उसकी सलाह असरदार होगी बल्कि वो एक फ़ित्ना भी उठा सकती है, तो फ़िर ये ज़रूरी (वाजिब) नहीं है के वो सलाह दी जाए। अगर फ़ित्ना कुछ इतना छोटा हो जैसे मारना, तब सलाह देना "मुस्तहब" है। दूसरी तरफ़, अगर सलाह देना एक बड़े और खतरनाक फितने की वजह बने तो तब सलाह देना ममनुअ कर देना चाहिए। नरमाई से अमर अल-मारूफ़ करना ज़रूरी (वाजिब) है। ऐसा सख़्त तरीके से करना फित्ने को जन्म दे सकता है। इस्लामी रियासत के मुसलमान और काफ़िरों शहरियों को बंदूकों के ज़रिए ज़ुल्म और ज़दकोब नहीं किया जा सकता। [**शिरातुल इस्लाम** किताब से तर्जुमा यहाँ खत्म होता है।]

30- सुलह करना (मुदाहनत) और झूठा दिखावा (मुदारा)

एक शख़्स को जो एक ममनुअ काम कर रहा हो उसे ना रोकना जबकि एक शख़्स इतना ताकतवर और मज़बूत हो के उसे रोक सकता हो तो ये मज़हब से मुदाहनत करना हुआ। एक शख़्स जो ममनुअ काम कर रहा हो उसमें दखलअंदाज़ी ना करना या तो उसके लिए एहतराम रखना या उसके आस पास जो लोग हैं उनके लिए इज़्ज़त रखना या फिर एक शख़्स के कमज़ोर मज़हबी गिरहा के लिए। ये ज़रूरी है के एक शख़्स जो ममनुअ (हराम) काम कर रहा हो या नापसंदीदा हरकात (मकरूह) तो उसे रोका जाए जब वहाँ फ़ित्ना फैलने का कोई खतरा ना हो मिसाल के तौर पर किसी मज़हब को

नुकसान पहुँचने के या दुनियावी फाएदे या दूसरों को नुकसान पहुँचाने के कोई इमकान ना हों। उसको ना रोकना या खामोश रहना मना है। मज़हब में से देना, ("मुदाहनत" करना) ये दिखाता है के एक शख़्स अल्लाह तआला के कानून की खिलाफ़ वरज़ी की तरफ़ वो रज़ामंदी रखता है। ज़्यादातर, खामोश रहना नेकी है। लेकिन, जब वहाँ पर ज़रूरत हो के सही और गलत के बीच या अच्छे और बुरे के दरमियान तमीज़ की जाए, तो एक शख़्स को चूप नहीं रहना चाहिए। जब रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' से पूछा गया, "ए अल्लाह के पैग़म्बर! पुराने लोगों को ज़लज़ले के ज़रिए सज़ा दी जाती थी। वो ज़मीनों के नीचे दफ़न हो जाते थे। लेकिन उनके बीच में पाक **(सालिह)** लोग भी थे," आपने जवाब दिया, "**हाँ, सालिह लोगों को भी उनके साथ तबाह कर दिया गया। इस वजह से, के जबकि दूसरे लोग अल्लाह तआला के खिलाफ़ बग़ावत करते थे तो वो खामोश रहते थे और वो उन गुनहगारों से अलग नहीं रहते थे।**" मंदरजाज़ेल हदीस शरीफ़ के हवाले से, "**मेरी उम्मत (मुसलमानों) में से कुछ अपनी कब्रों से बंदर और सुअर बनकर उठेंगे। ये वो लोग होंगे जो उनके साथ मिल जाते थे जो अल्लाह तआला के खिलाफ़ बग़ावत करते थे और जो उनके साथ खाते और पीते थे।**" और, "**जब अल्लाह तआला एक आलिम को इल्म देते हैं, तो वो उससे वादा लेता है जैसा कि उसने पैग़म्बरों के साथ किया।**" वो (आलिम) वादा करता है कि जब ज़रूरत पड़ेगी तो वो जो कुछ जानता है उसे बताने से रूकेगा नहीं। मंदरजाज़ेल हदीस शरीफ़ और आयत-ए-करीमा ये बात ज़ाहिर करती है कि मज़हब के साथ सुलह करना यानी, **मुदाहनत** करना ममनुअ **(हराम) है:** "**एक शख्स को जो इल्म अल्लाह तआला के ज़रिए मिला है उसे ना बोले जब उसे मौका मिले बोलने का,तो कयामत वाले दिन वो गर्दन में आग का पट्टा/कॉलर लगाएंगे।**" कुरआन अल करीम की सुरह निसा की छत्तीसवीं आयत-ए-करीमा का मतलब, "**क्या वो जो सच्चे इल्म और रहनुमाई से बखशे गए है वो इस अतये को छूपाते हैं, वो नफ़रत में भीग गए हैं अल्लाह तआला और उन सब की तरफ़ से जो खुद अपने आप पर भी नफ़रत के ज़िम्मेदार हो चुके हैं!**" मुदाहना का उलटा **गैरत** या **'सलावत'** है। कुरआन अल करीम की सुरह मैदा की चव्वनवीं आयत-ए-करीमा का मतलब है: "**...लोग अल्लाह तआला की राह में जिहाद करते हैं,और कभी मलामत से नहीं**

डरते जैसे के कोई गलती ढूँढना।..." ये आयत-ए-करीमा हमें बताती है के जो मज़हबी "**गैरत**" और "**सलाबत**" रखते है उनके लिए ज़रूरी है जिहाद करना अपनी जाएदाद, ज़िन्दगी, तकरीर और कलम के ज़ोर को इस्तेमाल करके अल्लाह तआला की रज़ा के लिए। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने एक दूसरी हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**सच्च बता दो चाहे वो कितना भी कढ़वा क्यों ना हो।**" एक ज़ाहिद शख़्स ने एक ग्रुप को चौथे उमय्यद खलीफ़ा मरवान बिन हाकेम की मौजूदगी में गाने के साज़ों को बजाते हुए देखा, और उनके साज़ों को टुकड़े टुकड़े कर दिया। इस पर मरवान को शेरों के बीच में बन्द करने का हुकम दिया गया, शेरों के बीच वो तवज्जोह से नमाज़ अदा करने लगे। शेर उनके पास आए और उन्हें चाटने लगे। इसलिए निगेहबान उन्हें खलीफ़ा के पास वापिस ले गए। जब खलीफ़ा ने उनसे पूछा के क्या वो शेरों से खोफ़ज़दा नहीं थे, उन्होने जवाब दिया, "नहीं, मुझे उनल खौफ़ बिल्कुल भी नहीं आया। मेने पूरी रात ये सोचते हुए बिताई।" "तुम क्या सोच रहे थे?" "जब शेर मुझे चाट रहे थे, मैं ये सोच रहा था कि क्या उनका थूक/राल नजस था, (यानी कानूनी गलती उस इबादत को जिसे नमाज़ कहते हैं उसे मंसूख कर देना) मैं सोच रहा था के क्या अल्लाह तआला मेरी इबादत कुबूल फरमाएगा।" [मरवान बिन हाकेम को **65** हिजरी "**683** ए.डी." में कत्ल कर दिया गया।"]

अगर एक शख़्स अमर अल मारूफ़ और नहय अनील मुनकर करने के लायक नहीं हो क्योंकि उसको डर हो के कही उसकी और दूसरों की हिफ़ाज़त मुश्किल में ना पड़ जाए, फ़िल्ना उठ खड़ा ना हो इस वजह से खामोश रहना इस हालत में "मुदारा करना" कहलाता है, जिसकी इजाज़त है, और बल्कि जितना सवाब खैरात देने पर है उतना बखशा जाएगा, उस वक्त जब उसका दिल हराम काम को होने से रोकने पर आमादा हो। मुदारा आराम से किया जाए और मुसकुराते हुए चेहरे के साथ। मुदारा को तालीम के तरीके से तौर पर भी इस्तेमाल किया जा सकता है। इमाम ग़ज़ाली रहीमाहुल्लाहु तआला ने फरमाया: "वहाँ पर तीन तरह के लोगों की जमाअत है। पहली जमाअत गिज़ायत की तरह है। ये हर वक्त सबके लिए ज़रूरी हैं। दूसरी जमाअत दवाई की तरह है। उनकी हाजत ज़रूरत के वक्त पड़ती है। तीसरी जमाअत एक बीमारी की तरह है। उनकी ज़रूरत नहीं होती लेकिन फिर भी ये लोगों को तंग

करते हैं।ऐसे लोगों को हिफ़ाज़त की मदेनज़र से मुदारा पे काबू करने की ज़रूरत है।" मुदारा एक जाइज़ तरीका है।असल में, कुछ मामलों में ये मुसतहब है।बीवी की तरफ घरेलू मामलाकतो का इंतेज़ाम मुरादा बग़ैर चलाऩ एक आदमी को अमन वाली फैमिली ज़िन्दगी मे लाएगा।कोई रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' के पास मिलने के लिए आया।आपने कहा, "**उसे अंदर आने दो।ये एक आजिज़ शख़्स है।**" जब मुलाकाती अंदर आ गया, आपने उसके साथ नरम और मीठे तरीके से बात की।जब वो चला गया, उन्होने पूछा के आप उस शख़्स से इतनी नरमाई से क्यों बात कर रहे थे।आपने फरमाया, "**एक शख़्स जो दूसरी दुनिया 'आखिरत' में सबसे खराब जगह होगा वो वो शख़्स होगा जो इस दुनिया में अपने आपको उसके नुकसान से बचाने के लिए इज़्ज़तें या तोहफे देता है।**" ये एक हदीस शरीफ़ में बयान है: "**अगरचे जो शख़्स हराम करता है उसके बारे में खुले तौर पर पीठ पीछे बोलना जाईज़ है और बग़ैर किसी शर्म के, फिर भी ये बराबरी से इंसाफ़ वाली बात है के उनके नुकसान से अपने को बचाने के लिए उनके साथ मुदारा का सुलूक किया जाए।बहरहाल,मुदारा को मुदाहाना में मिलाना नहीं चाहिए।**" मुंदारा कुछ दुनियावी मफ़ाद में शामिल हो कर छोड़ती है मज़हबी और दुनियावी कीमतों को किसी भी नुकसान से बचाने के लिए।इसके उलटा, मुदाहाना का मतलब है अपने मज़हबी वसफ़ से सुलह करना दुनियावी फ़ाएदे के लिए।मुदारा जो ज़ालिम के खिलाफ़ नौकर है उसे गंदा नहीं होना चाहिए ज़ालिम की तारीफ़ के साथ या उसकी बरबरियत को अपनी मंज़ूरी देकर।

31- ज़िद (ईनाद) और घमंड (मुकाबारा)

ज़िद **(ईनाद)** और **मुकाबारा** एक शख़्स का इंकार है सच्चाई से जब वो उसे सुन ले।अबु जहल और अबु तालिब दोनों ज़िद्दी थे के वो रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' की नब्बुवत को कुबूल नहीं करते थे।वो मंकिर थे।ज़िद **(ईनाद)** निफ़ाक, जलन **(हिकद)** हसद, या तमा के ज़रिए होती है,

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फरमाया, "**वो शख़्स जिससे अल्लाह तआला सबसे ज़्यादा नाराज़ होंगे वो होगा जो सच्चाई को मानने में बहुत ज़िददी होगा।**" एक और हदीस शरीफ़ में बयान है "**एक ईमान वाला (मोमिन) इज़्ज़त वाला और नरम होगा।**" एक इज़्ज़त वाला शख़्स दुनियावी मामले में आसान रास्ते दिखाता है। वो मज़हब के मामले में एक सख्त चटटान की तरह है। एक पहाड़ वक्त के साथ खराब हो सकता है लेकिन एक ईमान वाले का यकीन कभी खराब नहीं हो सकता।

32- हीला (निफ़ाक)

हीला (**निफ़ाक**) एक शख़्स जो दिखाता है वो अंदरूनी उससे अलग होता है। जब एक शख़्स जो अपने दिल में बेयकीनी रखता हो और वो कहे के अपनी बातों से हरकतों से एक ईमान वाला हूँ तो वो मज़हबी हीला है। अगर एक शख़्स जो अपने दिल में कीना रखता हो और अपने बरताव से दोस्ती ज़ाहिर करे, तो ये दुनियावी हीला है। सबसे बुरी किस्म बेयकीनी की वो है मज़हबी हीला। मदीना शहर के हीलासाज़ो के रहनुमा अब्दुल्लाह बिन सलूल थे। जब उन्होने बदर की जंग में मुसलमानों की जीत देखी तो उन्होने अपने आपको मुसलमान कुबूल कर लिया। लेकिन उन्होने दिलों से ये नहीं माना। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने मंदरजाज़ेल लानत में ये फरमाया: "**वो जो मुसलमानों की तरफ लफ़्ज़ों से दोस्त और बरताव से खतरनाक दुश्मन हैं: उनपे अल्लाह तआला और फरिश्तों की नज़र से लानत हो!**" दूसरी हदीस शरीफ़ इस तरह पढ़ी जाएगी: "**एक हीलासाज़ की तीन अलामतें हैं: वो झूठ बोलता होगा, वो अपने वादे पूरे नहीं करता होगा, और जो भरोसा उस पर किया जाए उसकी खिलाफ़ वरज़ी करता हो।**" इस तरह का शख़्स एक हीलासाज़/बहानेबाज़ है चाह वो ये क्यों ना कहे के वो एक मुसलमान है और वो "सलात" इबादत भी करता है।

33-गहराई से ना सोचना वज़नी ना होना

एक शख़्स को अपने गुनाहों के बारे में सोचना चाहिए और उनपर पछताना चाहिए और अपनी इबादतों के बारे में सोचना चाहिए और उनका शुक्र अदा करना चाहिए। उसे बहुत ज़्यादा खुबसूरत और नफ़ीस कारिगरी/फन और उसके निज़ाम और उन सब के रिश्ते को ना सिर्फ़ अपने ऊपर ले वल्कि दूसरी मखलूक पर भी अल्लाह तआला की बढ़ाई को सराहने के लिए। सब मखलूक और दूसरी तख्लीक को दुनिया (**आलम**) कहते हैं।

[“**आलम**” तीन हिस्सों पर मुशतमिल होता है, **आलम-ए-अजसद**, यानी जिस्मों की दुनिया, जिस्मानी दुनिया या माट्टी दुनिया; **आलम-ए-अरवाह**, यानी रूहों की दुनिया, रूहानी दुनिया; और **आलम-ए-मिथाल** यानी रूहानी और जिस्मानी दुनियाओं की बीच की दुनिया। आलम-ए-मिथाल पाएदारी की दुनिया नहीं है। ये ज़ाहिरदारी की दुनिया है। दूसरी दोनो दुनिया में हर मौजूदगी आलम-ए-मिथाल [बराएमहरबानी **सआदत-ए-अबदिया** के तीसरे हिस्से के छठे बाव को इन तीनो दुनिया की तफ़सीली जानकारी के लिए देखिए, और आलम-ए-मिथाल के लिए पहले हिस्से के छत्तीसवें बाव को भी देखिए।] में ज़ाहिरदारी रखती है। आलम-ए-अरवाह (रूहों की दुनिया) अर्श से परे की मख्लूक (यानी, नौवां आसमान) पर मुश्तमिल है। वो माट्टी माद्दी मख्लूक नहीं है। उनकी दुनिया को **आलम-ए-अमर** भी कहते हैं। आलम-ए-अजसद माद्दी मख्लूक की दुनिया है। इसको **आलम-ए-खलक** भी कहते हैं। ये दो हिस्सों पर मुवनी है। आलिमयाँ के अलावा हर चीज़ आलम-ए-कबीर कहलाती है। हर चीज़ जो आलम-ए-कबीर में मौजूद है वो आलिमयाँ (**आलम-ए-सग़ीर**) में नुमाइन्दगी करता है या उसी तरह है। आदमी का रूहानी दिल रूहों की दुनिया का रास्ता है। काफ़िरों के दिलों में ये दरवाज़ा बंद हो जाता है, खराब हो जाता है। इस वजह से, काफ़िर रूहानी दुनिया के बारे में नहीं जानते वाहिद इमकान, वाहिद नुस्खा जो एक रूहानी दिल को ज़िन्दगी हासिल करने के लिए चाहिए, इसके दरवाज़े रूहानी

दिल के लिए खोलने के लिए पूरा इमान होना चाहिए और एक मुसलमान बनना चाहिए। एक इमान वाले को सख्त मेहनत करनी चाहिए इस रूहानी दिल के ज़रिए रूहानी दुनिया में दाखिल होने के लिए और इसके बाद आखिरत के लिए बढ़ने के लिए। सुफिइस्म **(तसव्वूफ़)** की जानकारी, जो इस्लाम की तालीमात की आठ शाखाओं में से एक है, वो इस किस्म की कोशिश के लिए है। इस तालीम की शाखा के माहिरों को अल्लाह के दोस्त **(वली)** और रोशनी देने वाले **(मुर्शिद)** कहते हैं। इन सब मुर्शिदों में से मशहूर इमाम अर रब्बनी अहमद फ़ारूकी रहीमाहुल्लाहु तआला हैं। उन्होने **1034** हिजरी, **1624** ए.डी. में हिन्दुस्तान में रहलत फरमाई।

ये एक समझदार आदमी के लिए मुमकिन नहीं है के तिब और साइन्सी यूनिवरसिटियों में पढ़कर नाज़ूक फन को जाँचे और मखलूक के आपस के रिश्ते की नज़ाकतों को समझें और उनमें हमवारी कायम करें, अल्लाह तआला की ताकत,इल्म और अफ़ज़लियत को ना समझे। एक शख़्स इन सब चीज़ों को देखने और समझने के बाद अगर यकीन ना करे तो या तो वो पागल है, पीछे हटने वाला,लाईल्म और सरकश बेवकूफ़ है जो अपनी नफ़सपरस्ती की इच्छाओं को पूरा करने के पीछे है,या एक शख़्स जो अपने ही नफ़स का गुलाम है, या अय्याश परस्त ज़ालिम है जो दूसरों को परेशान करके ख़ुशी/सकून हासिल करता है। अगर कोई इन काफ़िरों की कहानियाँ पढ़ेगा, तो ये साफ़ हो जाएगा के वो इनमें से एक तबके से ताल्लुक रखते हैं।]

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: **"तखलीक की गई मखलूक के बीच हुकूम पर ध्यान लगाते हुए अल्लाह तआला पर यकीन रखो।"** ये एक शख्स के यकीन (ईमान) को ठोस करती है फलकियात को पढ़ने के लिए और इस तरह ज़मीन, चाँद, सूरज और दूसरे आसमानी चीज़ों, के निज़ाम की हरकात को देखने के लिए, उनकी गरदीश और चक्करों में, और उनके एक दूसरे से दूरी के नाज़ूक शुमार को देखने के लिए। वहाँ पर पहाड़ों, धातों, नदियों, दरियाओं, जानवरों, नबातात और छोटे छोटे कीड़ों की तखलीक में भी बहुत तरह के फाएदे और इस्तेमाल हैं। इनमें से कोई भी बेफ़ाएदा वजह के वजूद में नहीं आया। बादल, बारिश, बिजली,

कड़क, ज़मीनी पानी, तवानाई माद्दे और हवा, मुख्तसर ये के, हर तखलीक की गई चीज़ कोई ना कोई काम और तकरीब अदा करती है। आलिमयाँ, अब तक,इन बेशुमार खिदमतों को जो इन बेशुमार तखलिकों के ज़रिए की जाती हैं उनके बारे में बहुत कम जानते हैं। क्या ये दिमाग के लिए मुमकिन है, जो मखलूक को समझने से कासिर है, के ख़ालिक को समझ सके? इस्लामी आलिम जो उसकी अज़मत और असबाब को देखते/ग़ोर करते हैं वो परेशान हो जाते हैं और कहते हैं के उन्होने ये जान लिया है के उसको जानना मुमकिन नहीं है। मूसा (मोसिस) अलैहि सलाम के मानने वालों में से एक ने तीस साल इबादत की। एक बादल की परछाई उसके ऊपर चलती है और उसकी सूरज से हिफ़ाज़त करती थी। एक दिन बादल नज़र नहीं आया, जिसकी वजह से उसे सूरज के नीचे रहना पड़ा। जब उसने अपनी माँ से पूछा इसकी वजह क्या हो सकती है, तो उन्होने कहा के शायद उनसे कोई गुनाह किया हुआ है। जब उन्होने कहा के उन्होने कोई गुनाह नहीं किया तो उनकी माँ ने कहा, "क्या तुम आसमानों, या फूलों को नहीं देखते? जब तुम उन्हें देखते हो तो क्या खालिक की अज़मत के बारे में नहीं सोचते?" "मैं उन्हें देखता हूँ," उन्होने कहा, "लेकिन मैं सोचने के कारोबार से ग़ाफिल हो जाता हूँ।" इस पर उन्होने कहा, "क्या यहाँ इससे बड़ा कोई गुनाह है? अभी इसी वक्त तौबा करो।" एक समझदार शख़्स कभी भी अपने सोचने के फर्ज़ को नहीं भूलता। क्या यहाँ पर कोई है जो एक दावा करे के वो कल नहीं मरेगा? अल्लाह तआला ने कोई भी चीज़ बग़ैर इस्तेमाल के नहीं बनाई। वो इस्तेमाल जो आदमी अब तक देखते हैं। सोच चार तरीकों से करनी चाहिए, (इस्लामी) आलिमों के मुताबिक। अल्लाह तआला के खुबसूरत फन के बारे में सोचना जो इंसानों पर ज़ाहिर हो जाती है जो उसको प्यार करने और उसपर यकीन करने की वजह बनती है। उन सवाबों के बारे में सोचना जो उसे इबादतों की वजह से वादा किए गए हैं जो उन इबादतों को करने का सबब बनते हैं। उसने जिन सज़ाओं की जानकारी दी है उनके बारे में सोचना और उससे डरना और इस तरह दूसरों को गलत करने से रोकना। एक शख़्स का अपने नफ़्ज़ का गुलाम बनने के बारे में सोचना और गुनाह करना और लापरवाही की हालत में रहना सारी नेमतों के होने के बावजूद जो उसने निछावर की हैं जो उसे अल्लाह तआला से शर्म दिलाती

है। अल्लाह तआला उनसे प्यार करता है जो ज़मीनी और आसमानी मखलूक को देखता है और उससे सबक हासिल करता है। ये मंदरजाज़ेल एक हदीस शरीफ़ में लिखा है: "**कोई और इबादत का काम इतना कीमती नहीं है जितना के ध्यान लगाना/मराकबे में जाना।**" और दूसरी हदीस शरीफ़ इस तरह पढ़ी जाएगी: "**एक लमहाती मराकबा साठ सालों की इबादत से ज़्यादा फाएदेमंद है।**" **किमया-ए-सआदत** किताब, इमाम ग़ज़ाली रहिमाहुल्लाहु तआला के ज़रिए फ़ारसी की किताब तफ़क्कूर (ध्यान, सोच) पर एक लम्बी गुफ़तगू है।

34-मुसलमानों पर लानत

दो हदीस शरीफ़ मंदरजाज़ेल इस तरह पढ़ी जाएगी: "**अपने ऊपर या अपने बच्चों पर लानत मत भेजो। अल्लाह तआला ने जो पहले से भेजा है उसे तसलीम करो। दुआ करो ताकि वो अपनी रहमत बढ़ादे।**" "**माँ बाप के ज़रिए तुम पर भेजी गई लानत/बददुआ या ज़ालिमों के ऊपर मज़लूमों की बददुआ कभी भी ख़ाली नहीं जाती** (अल्लाह तआला के ज़रिए)।" एक शख़्स जो दुआ मांगता है के फलाँ मुसलमान काफ़िर हो जाए तो वो खुद काफ़िर बन जाता है। एक ज़ालिम शख़्स के लिए ये चाहना के वो काफ़िर होकर मरे ताकि उसे अबदी सज़ा मिले, तो ये कुफ़्र का सबब नहीं है। क़ुरआन अल करीम हमें बताता है के मूसा (मोसिस) अलैहि-सलाम ने इसी तरह की बददुआ माँगी थी। इमाम-ए-आज़म अबू हनीफ़ा रहीमाहुल्लाहु तआला ने कहा के किसी के लिए ये चाहना के वो एक काफ़िर हो जाए तो ये हालत कुफ़्र का सबब बनेगी। किसी के ऊपर लानत भेजना ममनुअ (हराम) है, किसी के ऊपर ज़ुल्म करने वाले को छोड़ कर। कोई शख़्स अपने ऊपर ज़ुल्म करने वाले को बददुआ दे सकता है पूरी संजीदगी और शिददत के साथ जो के नाइंसाफ़ी के जुर्म करने के बराबर है। जो कुछ भी इजाज़त वाला है वो (सिर्फ़) उज़र (यानी, वजह) के मुख़ालिफ़ है, जो के उसे (करार देता है) इजाज़त (यानी, जाइज़) वाला बनाता है। अगर तुम्हारे अंदर इतना सबर है के तुम उस पत लानत नहीं भेजते जिसने तुम्हारे साथ ग़लत किया, तब ये सबसे अच्छा है; और माफ़ कर देना सबसे बेहतर है। ये कहने की इजाज़त नहीं है के "अल्लाह तआला तुम्हें लम्बी

ज़िन्दगी दे" किसी इस्लामी रियास्त के ग़ैर मुस्लिम शहरी को या किसी भी काफ़िर को। मंदरजाज़ेल नियत के साथ ऐसी दुआ करने की इजाज़त है, मिसाल के तौर पर, ये दुआ करना के वो एक मुसलमान बन जाए या वो सारे महसूल अदा करे ताकि मुसलमान ज़्यादा ताकतवर हो जाँए। एक शख़्स जो काफ़िर को अदब के साथ सलाम करता है, (सलामुन अलेकुम कहकर और), वो एक काफ़िर बन जाता है। कोई भी कलाम/लफ़्ज़ कहना एक काफ़िर को अदब के साथ वो कुफ़्र का सबब बन सकता है। मिसाल के तौर पर ये कहना एक काफ़िर को "मेरे आका" वो कुफ़्र का सबब बन सकता है।

फरिश्ते कब्र में सवाल करेंगे,
पूछेंगे, "क्या तुमने सही से इबादत की?
तुमने सोचा एक बार मर गए तो निजात हासिल हो जाएगी?
बिल्कुल नहीं, अज़ाब तुम्हारा इंतेज़ार कर रहा है।"

35-मुसलमानों को नामुनासिब नाम देना

एक मुसलमान को नामुनासिब नाम देना या एक मुसलमान को दूसरों के ज़रिए दिए गए नामुनासिब नामों से पूकारना इस बात की इजाज़त नहीं है। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**एक शख़्स जिसका नाम नामुनासिब हो उसे बदलकर एक अच्छा नाम रख लेना चाहिए।**" मिसाल के तैर पर आसिया को जमीला के साथ बदल देना चाहिए। मुसलमानों को अच्छे नाम देने की इजाज़त है। बच्चों को तारीफ़ वाले नाम नहीं देने चाहिए जैसे राशिद और अमीन। मुहीइददीन या नूरूददीन जैसे नाम नकमी और मंतकी (बिदत) वाले हैं। गुनाहगारों, जाहिलों और बिदअती को इस तरह के नामों जैसे जो तारीफ़ वाले और हमद वाले हों उनसे पुकारना मकरूह है। ना ही उनको अपनी किसी सोच में शकली तौर पर इस्तेमाल करना चाहिए। कुछ (इस्लामी आलिम) ने अपनी इस कमी को सही माना है के अपने बच्चों को ऐसे नाम देना ताकि वो उन नामों में छुपे हुए मतलबों के हिसाब से

नवाज़े जाएँ। इस बात की इजाज़त है और फायदेमंद है ऐसे नामों को उनके लिए इस्तेमाल करना जो आलिम अपनी परहेज़गारी के लिए जाने जाते हैं।

[मशहूर आलिम इबन अल अबिदीन रहीमाहुल्लाहू तआला ने अपनी किताब **रदद ऊल मोहतर** के पाँचवे हिस्से में कहा है के मुसलमान बच्चों के लिए सबसे ज़्यादा मुनासिब और बेहतर नाम अबदुल्लाह है, उसके बाद अबदुररहमान, उसके बाद मौहम्मद, उसके बाद अहमद और उसके बाद इब्राहिम फ़ौकियत के हिसाब से। अल्लाह तआला के नाम देने की भी इजाज़त है जैसे के अली, राशिद, अज़ीज़। अगरचे, इन मरतबे के नामों को पूरे अदब के साथ पुकारा जाए। एक शख्स जानते हुए भी इन नामों को बेअदबी से पुकारे तो वो एक काफ़िर बन जाता है। मिसाल के तौर पर, “अबदुलकोदूर” कहे अबदुलकदीर की जगह या “हस्सो” हसन की जगह, या “इब्बो” इब्राहिम की जगह तो इन नामों को रूतबे से गिराना हुआ। अगरचे इन नामों को कहना कोई बेयकीनी की वजह नहीं है जब कोई इन्हें हकीर ना करने की नियत से कहे, फिर भी ये अच्छा है के इस तरह के लफ़ज़ों को नज़रअंदाज़ किया जाए जोकि कुफ़्र के किनारे पर हों। अगर एक बच्चा पैदा होने के फ़ौरन बाद मर जाए तो उसे बग़ैर नाम दिए दफ़नाना नहीं चाहिए। अगरचे अबदुननबी नाम रखने की इजाज़त है, फिर भी ये अच्छा है के इसे इस्तेमाल ना किया जाए। हज़रत सय्यद अबदुलहकीम अरवसी रहीमाहुल्लाहु तआला पचीस साल तक देर दोपहर की इबादत के बाद हर मंगल, जुम्मेरात और जुमे को तबलीग़ किया करते थे इस्तानबुल में बायाज़ीद मस्जिद में जब तक के वो **1362** हिजरी, कमरी, [**1943** ए.डी.] में रहलत नहीं फरमा गए। अपनी एक तबलीग़ के दौरान उन्होने कहा: “एक बच्चे के अपने माँ बाप पर तीन हुकूक होते हैं:पैदाईश के वक्त मुसलमान नाम देना; उसे पढ़ाना/लिखाना, तालीम (**इल्म**) देना, और शऊर की ऊमर को पहुँचने पर सवारना; और जब वो बालिग हो जाए तो उसकी शादी कर देना।” यूरोप में और अमेरिका में कुछ रज़ील लोग इस तरह ग़ैरमज़हबी और ग़ैर अख़लाकी तरीके से उठाए जाते हैं और झूठे डिपलोमे और आलिमों के ख़िताब देकर इस्लामी मुल्कों में भेज दिए जात हैं। ये लाइल्म काफ़िर हाई स्कूलों में और यूनीवरसिटियों में टीचरों या परोफ़ेसरों के तौर पर रख लिए जाते हैं। वो मुसलमान बच्चों को अपनी हेसियतों में फसाते है और उनको गैर मज़हबी और

गैर मसलकी बनाते हैं। ये बच्चे इन लोगों के जाल में आसानी से फँस जाते हैं और खूनी और जालसाज़ बन जाते हैं। जो माँ बाप अपने लड़के और लड़कियों को इन स्कूलों में भेजते हैं वो अपने हाथों से अपने बच्चों को दोज़ख में फेंक देते है।]

36- माफ़ी से इंकार करना

एक मुसलमान के ज़रिए दिखाई गई माफ़ी से इंकार करना मकरूह [बताव जो पैग़म्बर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के ज़रिए नापसंद किया गया।] है। ये एक हदीस शरीफ़ में लिखा हुआ है: **"तुम्हारे मुसलमान भाई के ज़रिए जो माफ़ी मांगी गई उसे कुबूल ना करना एक गुनाह है।"** माफ़ी को कुबूल करना और गलतियों को नज़रअंदाज़ करना अल्लाह तआला का उसूल है। अल्लाह तआला उन शख़्स की तरफ़ गुस्सा करते हैं जो अपने आपको इन उसूलों में नहीं ढालता, और वो उस अज़ाब देता है। तीन तरीके हैं माफ़ी दिखाने के। पहला तरीका है ग़म करना, कहना, "मेने ऐसा क्यों किया," या खुद से ये कहकर वाज़ेह करे, "मेने ऐसा इस वजह से (या उस)वजह से किया।" दूसरा तरीका है ये कहकर उज़र देना, "काश मैं ऐसा ना करता," या "हाँ, मेने ऐसा किया, लेकिन मैं ऐसा दोबारा नहीं करूँगा।" तीसरा तरीका है जो तुमने किया उससे इंकार करना। ये कहकर, "मेने ये किया लेकिन मैं ऐसा दोबारा नहीं करूँगा," ये तौबा हो सकती है। एक ईमान वाला माफ़ी के लिए इंतेज़ार करना दिखा सकता है गलती करने वाले को माफ़ करने के लिए। हिला साज़/धोकेबाज़ दूसरों की गलतियाँ आम करना चाहते हैं। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने मंदरजाज़ेल हदीस शरीफ़ में फरमाया: **"तुम पारसा हो सकते हो। गंदी चीज़ें मत करो। इसी तरह अपनी बीवियों को पारस बनाओ।"** और **"अगर तुम खुद पारसा हो, तो तुम्हारी बीवियाँ भी पाकिज़ा/पारस होंगी। अगर तुम अपने माँ बाप के लिए रहमदिल हो, तो तुम्हारे बच्चे तुम्हारे लिए इसी तरह रहमदिल होंगे। एक शख़्स जो दूसरेमुसलमान की माफ़ी/उज़र कुबूल नहीं करता तो वो बाद में 'आखिरत' में कौसर झील से पानी नहीं पी सकता।"** ये हदीस शरीफ़ उन मुसलमानों से वास्ता रखती है जो

ये नहीं जानते के उनके मुसलमान भाई ने एक गलत हरकत की है और वो ये भी नहीं जानता के उसका उज़र झूठा है। क्योंकि उसकी माफ़ी/उज़र से इंकार करने का मतलब है दूसरे मुसलमान के लिए सु ए ज़न रखना।" उसके उज़र/माफ़ी को मान लेना अगरचे तुम जानते हो के वो झूठ बोल रहा है इसका मतलब है उसे माफ़ कर देना। ऐसे मामलों में माफ़ करना फ़र्ज़ (वाजिब) नहीं है; ताहम ये गुन वाला काम (मुस्तहब) है, (जो ज़्यादा सवाब कमाता है)।

37- कुरआन अल करीम की गलत वज़ाहत

"तफ़सीर" का मतलब है दरयाफ़्त करना और कहना। ये वज़ाहत और जानकारी देने का अमल है। "तावील" का मतलब है 'तौज़ीह' या 'किसी बात का ऐसा मतलब बताना जो करीब करीब ठीक जान पड़े'। "तफ़सीर" का मतलब है एक मआनी देना। "तावील" का मतलब है बहुत सारे मआनी में से एक को मुंतखीब करना।" तफ़सीर के नाम पर अपनी ज़ाती राए देने की इजाज़त नहीं है। रवायत (खबर देना, तरसील, बयान) नीव है जबकि तफ़सीर बुनियाद है,और तावील में ग़ालिब अंसर दिरायत है (ज़ाती समझ, ज़ाती मक्कारी)। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**एक शख़्स जो कुरआन अल-करीम को अपनी ज़ाती राए से वज़ाहत करता है, वो असलियत में गलती है चाहे अगर उसकी वज़ाहत सही क्यों ना वाकेअ हो**।" अल्लाह तआला के लफ़्ज़ों को गलत तरीके से रवाना करना एक तंग मआनी के मफ़ाद में जो तजवीज़ किए गए एक खास हुनर की ग़ैर मौजूदगी में जैसे के पूरी जानकारी उन खबरो की जो रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' और आपके सहावा रज़ी अल्लाहु अन्हुम और दूसरी बहुत सारी तफ़सीरें जो आलिमों के ज़रिए से हवाला दी गई उन्हें साईन्स की तफ़सीर के उसूल (काएदे) पर और कुरैश बोली पर मास्टरी थी, अदबी वज़ह के माहिर जैसे के ज़वानी और फिकरे की रददोबदल मुजमल (मुखतसर) और मुफ़सिल (वज़ाहत,) साईन्स कावलियत के बयानों के बीच हदवन्दी इसके अलावा आम

और खास मआनी के बीच, असबाब के बारे में आगाही और हर एक आयत-ए करीमा के नुज़ूल के वक्त के लिए और एक गहराई तक की गई तहकीकात नासीख (रद करना) आयत-ए-करीमा यहाँ तक के मंसूख (अलेहदा) भी की गई "तफ़सी" का मतलब है अल्लाह तआला के लफ़्ज़ों को समझने की काबलियत होना और अल्लाह तआला का उस लफ़्ज़ से क्या मतलब है। चाहे अगर एक शख़्स की वज़ाहत की उसकी अपनी राए के मुताबिक सही हो, क्योंकि वो एक बाकाएदा तरीके से नतीजा नहीं निकाली गई, इसलिए वो एक गलती है। अगर एक शख़्स की वज़ाहत उसकी अपनी राए के मुताबिक गलत हो, तो उस हालत में ये कुफ्र का सबब है। इसी अलामत से, हदीस शरीफ़ को बग़ैर जाने हुए के क्या ये सही [बराए महरबानी **सआदत-ए-अबदिया** के पाँचवे और छठे बाबों को तफ़सीर और हदीस शरीफ़ की किताबों के लिए देखिए।] है उन्हें बयान करना गुनाह है, या गलत है, चाहे अगर तुमने इतेफ़ाकन सही क्यों ना बयान करदी हो। एक शख़्स के लिए इस बात की इजाज़त नहीं है के उस गुंजाईश में हदीस शरीफ़ पढ़े। हदीस शरीफ़ की किताबों में से हदीस शरीफ़ें बयान करने के लिए (डिपलोमा जिसे) इजाज़त करत हैं वो एक हदीस के आलिम के ज़रिए चाहिए होता है। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**एक शख़्स जो एक फ़िकरा एजाद करता है और कहे के ये हदीस है, उसे दोज़ख में सज़ा मिलेगी।**" जिन लोगों ने तफ़सीर के आलिमों से डिपलोमा हासिल नहीं किया उन लोगों को आलिमों के ज़रिए लिखी गई तफ़सीर की किताबों को देखकर कुरआन अल करीम की आयतों को बोलने या लिखने की इजाज़त है। वो लोग जो ऊपर बताई गई लियाकत को पूरा करते हैं कुरआन अल करीम की वज़ाहत करने के लिए वो ऐसा कर सकते हैं या बगैर तहरीरी डिपलोमे के वो हदीस शरीफ़ बता सकते हैं। डिपलोमा (इजाज़त) के लिए मुआवज़ा लेने की इजाज़त नहीं है। एक शख़्स जो इसके लायक है उसे इजाज़त देना वाजिब है। जो शख़्स इन सब लयाकतों को पूरा नहीं करता उसे इजाज़त देना हराम है।

एक हदीस शरीफ़ में बयान है: "**अगर लोग बग़ैर ज़रूरत हुनर/लियाकत के कुरआन अल-करीम की वज़ाहत करने की कोशिश करते हैं,तो उन्हें दोज़ख में अज़ाब अता किया जाएगा।**" "**वो लोग जो कुछ भी**

बगैर जाने हुए हदीस के तौर पर बताएंगे, उन्हें दोज़ख में सज़ा मिलेगी,"और "**वो जो अपने निजी खयालात कुरआन अल करीम की वज़ाहत के नाम पर बताएंगे, उन्हें दोज़ख में सज़ा मिलेगी।**" दरहकीकत कुछ बिदअती ग्रुप हदीस शरीफ़ और आयत-ए-करीमा को अपनी गलत राए फ़ैलाने के लिए इस्तेमाल करते हैं।[शिया (शित्ते), वहाबी, बदमाश जो अपने आपको तबलीग़ी जमाअत के बताते हैं, और मौददूदी और सय्यैद कुतुब के मानने वाले इन ग्रुप में से हैं।युसूफ अन नभानी रहीमाहुल्लाहु तआला ने इन भटकाने वाली तफ़सीर को अपनी किताब **शवाहिदुल हक** में वज़ाहत से बताया है।इस वजह से वो लोग जो आयत-ए-करीमा के मआनी को मरोड़ने की कोशिश करते हैं इच्छा से बढ़ा चढ़ा कर लापरवाही के साथ के कुरआन अल करीम एक अदरूनी असल माहियत रखता है साथ में मआनी के एतबार से गलत रहनुमाई भी करता है; वहीं पर जो अपने खयालात को तफ़सीर के नाम पर बंद कर देते हैं समाजी और इलाके और दुनियावी में डालना अपने डरामाई मतलबों को।

ऑटामन/उसमानिया आलिमों में से एक नोह बिन मुस्तफ़ा कोनावी रहीमाहुल्लाहु तआला जो **1070** हिजरी **1660** ए.डी. में काहिरा, मिस्र में चल बसे थे ने **मिलाल व निहाल** किताब के तर्जुमे में राए दी जो के मौहम्मद शिहरिस्तानी रहीमाहुल्लाहु तआला के ज़रिए लिखी गई थी: लोग जो "इस्माई लिया" ग्रुप में है उनको इस तरह इस लिए कहा जाता है क्योंकि वो कहते हैं के वो इस्माईल रहीमाहुल्लाहु तआला के मानने वाले हैं, जो के ज़ाफ़र अस सादिक रहीमाहुल्लाहु तआला के बड़े बेटे थे।उनको "बतिनिया" ग्रुप का कहा जाता है, क्योंकि वो कहते हैं के कुरआन अल करीम का एक अंदरूनी मआनी (**बातिन**) साथ में लफ़ज़ी मआनी भी है।वो कहते हैं कुरआन अल करीम में लफ़ज़ी मआनी महदूद मआनी हैं जो फ़िकह के आलिमों के ज़रिए क़यास किए गए हैं और कुरआन अल करीम के अंदरूनी मआनी एक खत्म ना होने वाले समुंद्र की तरह है।वो अंदरूनी मआनी के नाम में अपने ही बनाए गए झूठ में यकीन रखते हैं बजाए कुरआन अल करीम के लफ़ज़ी मआनी की तकलीद करने के।हकीकत के नज़रिए से, अल्लाह के पैग़म्बर 'सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम' ने लफ़ज़ी मआनी की तालीम दी।लफ़ज़ी मआनी को एक तरफ़ रखकर झूठे अंदरूनी मआनी की तकलीद करना कुफ़्र का सबब बनता

है। उनका ये झूठ इस इरादे पर मुबनी होता है के इस्लाम को अंदर से बरबाद किया जाए। आग को पूजने वाले (**मजूसी**) खासतौर पर उनके रहनुमा हमदान कुरमुत, ने इस्लाम को फ़ैलाने से रोकने के लिए, इन जालसाज़ियों को खोजा और करामुता रियास्त कायम की। वो उन लोगों को मारता था जो ज़ियारत (**हज**) करने "काबा" जाते थे और "हजर-अल-अस्वत" को "काबा"से बसरा ले गया। वो इस तरह की झूठी बातें फ़ैलाते थे जैसे के, "जन्नत का मतलब है दुनियावी खुशियों को हासिल करना और दोज़ख का मतलब है इस्लाम के उसूलों को मानना।" उन्होने इस्लाम की मुमानिअत को फ़नी हुनर का नाम दिया। इस्लाम जिसे बदअखलाकियत और ना शाइस्तगी कहता है और उन्हें झूठ बोलकर नया मोहज़ब तरीका बना दिया,वो नौजवानों को तबाही के रास्ते पर रहनुमाई करते थे। जो नुकसान उनकी रियास्त ने इस्लाम को पहुँचाया वो मरम्मत के लायक नहीं है। जो सज़ा उन्हें आसमानी गुस्से की वजह से मिली **372** हिजरी (**983** ए.डी.) में, और उसकी वजह से एक बार ही हमेशा के लिए ग़ायब हो गए।]

तफ़सीर तफ़सील के उसूलों के मुताबिक (**नक़ल**) करनी चाहिए। तफ़सीर अदा करने के लिए, एक शख़्स को मंदरजाज़ेल पंद्रह इस्लामी साईन्स में आलिम होना चाहिए: लुग़त (शब्दकोश); नहु और सर्फ़ (कवाईद और तरकीब); इश्तीक़ाक (तारिखीरददोबदल ज़बान में, नतीजा); मआनी (मतलब, मआनी के करीब); बयान (वज़ाहत, फ़िकरा); बदी (बोलने की शक्ल); किराअत (कुरआन अल करीम को पढ़ना या किरअत करना); उसूल-ए-दीन (मज़हबी असलूब); फ़िकह (मज़हबी कामों और तरीको की जानकारी); असबाब-ए नुज़ूज (वाक्य और वजूहात जो आयत-ए करीमा के इज़हार का सबब थे); नसीख और मंसूख (वो आयतें जो दूसरों को नाकारा करें और दूसरी वो जो नाकारा करें); उसूल-ए-फ़िकह (सांईस की फ़िकह में असलूब लाना) हदीस; और इल्म-ए-कल्ब (रूहानी दिल से सुलूक करने वाली साईन्स)। जो इन साईन्सों में आलिम नहीं है उसे कुरआन अल करीम की तफ़सीर करने की इजाज़त नहीं है। रूहानी दिल (**कलब**) या "**मोहिबा**" की तालीम इस किस्म की तालीम है जो अल्लाह तआला बग़ैर किसी दममियान के पास आलिमों को भेजता है जो इस्लाम को बहुत बारिकी के साथ मानते हैं। रसूलुल्लाह

'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में फरमाया: "**अगर एक शख़्स जो जानता है उस पर अमल करता है तो, अल्लाह तआला उसे वो सिखाता है जो वो नहीं जानता।**" तफ़सीर की उस शख़्स को इजाज़त नहीं दी गई जो ऊपर बताई गई पन्द्रह साईन्सों को नहीं सीखता। आयत-ए-करीमा की वज़ाहत करने की कोशिश करना बगैर किसी बुनयादी इल्म के इन साईन्सों में तो वो कुछ निजी राए का सबब बनते हैं तफ़सीर की आड़ में, जो के बदले में दोज़ख की आग का निशाना बनते हैं। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस शरीफ़ में इर्शाद फरमाया: "**अगर एक शख़्स चालीस दिन (भागते हुए) इस हालत में गुज़ारे के वो इस्लाम के उसूलों को परे इखलास के साथ फरमाबरदारी करे, तो अल्लाह तआला उसका दिल हिकमत से भर देगा और वो कहेगा (इस पौशिदा इल्म को कहते हैं) हिकमत।**" मुताशबीह आयत-ए-करीमा की वज़ाहत करना उसके बराबर है मानो एक शख़्स तफ़सीर के नाम पर अपने निजी खयालात पेश कर रहा हो। ये इस किस्म की तफ़सीर है जो बिदत रखने वाला ये दावा करता है के उसने कामयाबी हासिल करली।

कुरआन अल करीम तीन तरह के इल्म रखता है। पहली किस्म की जानकारी जो अल्लाह तआला ने अपने किसी बंदे को नहीं दी। उसकी ज़ात (शख्सी) की असली माहियत और उसके असलूब, और जानकारी (जिसे हम कहते हैं) ग़ैब वो इस ज़मरे में आते हैं। दूसरी किस्म पौशिदा इल्म/जानकारी है जो उसने अपने पैग़म्बरों पर ज़ाहिर किया। पैग़म्बर अलैहिस सलावातुल तसलीमात इस जानकारी को उन पर ज़ाहिर करते थे जिन्हें अल्लाह तआला ने मुंतखिब किया हो। उसने तीसरे किस्म की जानकारी अपने पैग़म्बर अलैहिम सलावातुल तसलीमात को पढ़ाई और उन्हें हुकूम दिया के वो ये जानकारी अपनी पूरी **उम्मत** को सिखाएँ (तीसरी किस्म दो हिस्सों में बाँट दी गई। पहली सिर्फ़ सुनकर याद हो सकती है। दूसरी मुशाहदा करके, सवाल करके, पढ़के और उसके मआनी याद करके की जा सकती है। इस्लाम और यकीन के बारे में जानकारी इस ज़मरे में आती है। (जो इस्लामी आलिम फ़ाज़िल हैं जिन्हें कहते हैं) मुजतहिद इमाम वो भी इस ज़मरे में शरीअत की तालीमात को समझने में नाकाम रहते हैं जो 'नास' में साफ़ तौर पर मवासलात नहीं की गई और जो अपने मआनी में एक दूसरे से मुखतलीफ़ हैं, जो कई मसलकों को जन्म देने का

सबब बनीं अमल करने के मामले में। जो लोग ऊपर बताई गई पन्द्रह साईन्सों में माहिर होते है उनके ज़रिए मआनी निकाले गए ताविल कहलाए जाते हैं ताकि तफ़सीर उन मआनी के लिए जो बज़ाहत करने वाले की अपनी निजी पसंद होती है; दूसरे लफ़्ज़ों में,वो उन मआनी से पसंद करता है जो उसने नतिजा निकाले होते हैं। अगर जो मआनी उसने मुनतखिब किए हैं वो लफ़्ज़ी और साफ़ मआनी में नही होते कुरआन की आयतों और हदीस के मुताबिक या आलिमों (इजमा) की एक राए/हमखयाली के मुताबिक नहीं है तो, तब ये बातिल (**फ़ासिद**) है। **बेरिका** किताब, जबके ये बताती है के नाचना ममनुअ है, इसकी अलामत है: "हमें इस बात का हुकूम नहीं दिया गया है के हम अपने मज़हब को तफ़सीर की किताबों के मुताबिक गुज़ारें। हमें हुकूम दिया गया है के अपने आपको फ़िकह की किताबों के मुताबिक ढ़ालें।"

38- ममनुअ (हराम) कामों को करने की ज़िद करना

गुनाह करने का इरादा गुनाह करने की ज़िद करना है, चाहे जो गुनाह किया गया है वो तादाद में काबिले माफ़ी ही क्यों ना हो। इरादतन गुनाह करने का मतलब है के जानबूझकर, मर्ज़ी से, और ते शुदा गुनाह करना। एक बार एक शख़्स फ़ैसला कर लेता है और एक गुनाह का इरतेकाब करता है, तो वो पहले से ऐसा करने की ज़िद कर लेता है हाँलाकि, एक गुनाह जो अदा नहीं किया गया वो एक मुसतकिल गुनाह की तरह नहीं है चाहे अगरचे एक शख़्स उसे जारी ही क्यों ना रखे। अगर एक शख़्स एक गुनाह जारी रखे और उसे करता रहे और फिर पछताए और उसे करना बंद करदे, तो ये ज़िद नहीं है। अगर वो उसे दोबारा करे और फिर पछताए, तो ये ज़िद नहीं होगी। ना ही ये ज़िद है एक दिन में एक गुनाह को कई बार करना, और हर वक्त के बाद जो गुनाह किया गया है उसकी तौबा करना ज़िद नहीं है। बहरहाल, तौबा जो की जाए वो पूरे पछतावे के साथ और दुखे दिल के साथ मांगी जाए और गुनहगार गुनाह करना छोड़ दे और ये तजवीज़ करे के वो ऐसा दोबारा नहीं

करेगा।इन तीनों हालतों को पूरा किए बगैर ज़ुबान से तौबा करना सिर्फ़ एक मुकम्मल झूठ है।मुस्तकिल काबिले माफ़ी गुनाह करना एक बहुत बड़ा गुनाह है।ये उस बड़े गुनाह से बड़ा गुनाह है जो एक बार किया जाए।जब गुनहागार तौबा करता है तो, बड़ा गुनाह भी माफ़ कर दिया जाता है।एक काबिले माफ़ी गुनाह को कुछ अहमियत के लायक ना समझना एक बड़ा गुनाह है।काबिले माफ़ी गुनाह को करके शैखी मारना भी एक बड़ा गुनाह है।ये भी एक बड़ा गुनाह है के जिसने काबिले माफ़ी गुनाह किया हो उसे एक पढ़े लिखे (आलिम) और पाक (सालिह) शख़्स की तरह देखे।एक शख़्स को अल्लाह तआला के डर और उसके अज़ाब से कापना चाहिए चाहे अगर उसने जो गुनाह किया है वो काबिले माफ़ी ही क्यों ना हो।ये बहुत बड़ा गुनाह है अगर एक शख़्स अल्लाह तआला से शर्मिन्दा नहीं होता और ना ये सोचे के वो उसे सज़ा देगा।

39- चुग़ली (ग़ीबत)

ग़ीबत का मतलब है एक ईमान वाले या एक (ग़ैर मुस्लिम जिसे कहते हैं) ज़िम्मी की (कोई एक) गलती उन्हें बदनाम/ज़लील करने के लिए बताई जाए।ग़ीबत हराम है।अगर सुनने वाला चुग़ली लगाए हुए शख़्स को नहीं जानता तो ये ग़ीबत नहीं होगी।अगर जिस शख़्स की चुग़ली की गई है वो उसे सुन लेता है और उदास होता है, तब ये ग़ीबत होगी।जब एक शख़्स की ग़ैर हाज़िरी में उसके बारे में, उसकी फ़ैमिली के बारे में, उसके अखलाकियत के बारे में, उसके काम, उसकी बोली, उसके ईमान, उसकी दुनियावी ज़िन्दगी, उसके कपड़े, या उसके जानवर, के बारे में बात की जाए उसको नुकसान पहुँचाने के लिए अगर वो उन्हें सुनले तो,ये ग़ीबत है।छुपी हुई चुग़ली, साथ ही वो जो अलामतों, निशानियों या तहरीरों के ज़रिए की जाए, वो उसी तरह गुनाह से भरी हुई है जैसे के खुली हुई मुंह ज़ुबानी ग़ीबत।ग़लीज़ किस्म की ग़ीबत वो है जो, मिसाल के तौर पर, एक मज़हबी या पाक शख़्स कहे, "अल हम्दु लिल्लाहि (सब तारीफ़ें अल्लाह के लिए हैं), हम इसकी तरह नहीं हैं," जब एक मुसलमान का गुनाह या गल्तियाँ उसके पीठ पीछे बताई जाएँ।[एकहाफ़िज़ वो है जो पूरा कुरआन अल करीम अपने हाफ़ज़े में याद करले।] दूसरा सरासर नागवार

बोहतान ये कहना है, मिसाल के तौर पर, "अलहम्दु लिल्लहि, अल्लाह तआला ने हमें उसकी तरह बेर्शम नहीं बनाया," इस बातचीत के बीच में जो किसी ना किसी तरह एक खास शख़्स के मुतलक है। यही हाली गैर यकीनी चुग़ली की है,मिसाल के तौर पर, एक शख़्स के बारे में कहना, "वो बहुत अच्छा आदमी है, वरना...।" सुरतहुजूरात की बारवीं आयत के मआनी हैं: "...एक दूसरे के बारे में उनकी पीठ पीछे बुरा मत बोलो..." ग़ीबत का मतलब है चुग़ली, जो एक मरे हुए शख़्स के गोश्त खाने के बराबर है। ये एक हदीस शरीफ़ में बयान है: "**कयामत वाले दिन, एक शख़्स की इनाम की किताब खोली जाएगी। वो कहेगा, ए मेरे मालिक!जैसा के में दुनिया में था मेने फलाँ फलाँ इबादत के काम किए लेकिन वो पन्नों में मौजूद नहीं है। उसे इस तरह जवाब मिलेगा:वो तुम्हारी किताब में से मिटा दिए गए और उन लोगों की किताबों में लिख दिए गए जिनके बारे में तुम बुरा बोलते थे।**" दूसरी हदीस शरीफ इस तरह पढ़ी जाएगी:"**हिसाब वाले दिन, वो किताब जो एक शख़्स के अच्छे काम 'हसानात' रखती है उसे खोला जाएगा वो वहाँ देखेगा वो इबादतें जो उसने कभी अदा नहीं करीं। वो उसे बताएंगे के ये वो 'सवाब' इनाम हैं उन लोगों के जो उसके बारे में बुरा बोला करते थे।**" अवु हुरेरा रज़ी अल्लाहु तआला अन्ह ने मंदरजाज़ेल वाक्या बताया:हम लोग रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' के साथ बैठे थे। हम में से एक खड़ा हुआ और चला गया। हम में से एक ने उस पर फिकरा कसा के वो क्यों चला गया। इसपर रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने कहा, "**तुमने अपने दोस्त की चुग़ली की। तुमने उसका गोश्त खाया।**" आएशा रज़ी अल्लाहु अन्हा ने मंदरजाज़ेल वाक्या बयान किया: एक दिन रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' की मौजूदगी में, मैं एक खास औरत के बारे में बात कर रही थी, के वो बहुत लंबी है। अल्लाह के मुबारक पैग़म्बर ने ज़ाहिर किया: "**जो कुछ तुम्हारे मुंह में है उसे थूक दो!**" मेने थूक दिया। एक गोश्त का टुकड़ा मेरे मुंह से बाहर आ गया। अल्लाह तआला ज़ाहिर करने के असलूब पर कादिर है और मादी शए को ज़ाहिर करने पर कादिर है। ग़ीबत का मतलब है एक मुसलमान भाई या एक गैर मुसलमान शहरी (ज़िम्मी) की गलतियों को उनकी गैर हाज़री में बताना और इस तरह बताना के अगर वो उसे सुन लें तो उन्हें सदमा लगे। अल्लाह तआला ने मूसा अलैहि

सलाम पर मंदरजाज़ेल वही भेजी "अफवाह/गपशप करने वाले को जिसने (पछताताप किया और) तौबा की उसके बाद वो आखिरी शख़्स होगा जन्नत में दाखिल होने वाला, जबके वो गपशप करने वाला जिसने (पछताताप) तौबा नहीं की अपनी अफ़वाह के लिए वो सबसे पहला दोज़ख में जाने वाला होगा।" इब्राहिम आज़म रहीमाहुल्लाहु तआला, (अल्लाह तआला के प्यारे बंदे) एक दावत में बुलाए गए। खाने के दौरान एक गैर हाज़िर बंदा, जो दावत में ताखिर कर चुका था, उसके पीछे उसकी सुस्ती पर नुक्ताचीनी की जा रही थी। इसपर इब्राहिम आज़म रहीमाहुल्लाहु तआला ने कहा, "इस जगह पर ग़ीबत की जा चुकी है," और उसी वक्त चले गए। ये एक हदीस शरीफ़ में बयान है: "**अगर एक शख़्स को (पीठ पीछे) नुक्ता चीनी की जाती है उस गलती के लिए जो उसे मंसूब है तब ये ग़ीबत करने का इरतिकाब करता है। दूसरी तरफ़ ये बोहतान** (बदनामी) **का मामला है।**" ये गीबत है के एक शख़्स को (गैर मौजूदगी) उसकी मज़हबी गलतियों जैसे के (रोज़ाना की पाँच वक्त की इबादत) नमाज़ की लापरवाही, शराब पीना, चोरी, किस्से सुनाना साथ के साथ दुनियावी नुक्स जैसे के बहरापन और आँखों का भेंगापन के लिए नुक्ता चीनी करना। मज़हबी गल्तियों के लिए नुक्ता चीनी करना बदनाम करने की नियत से तो वो ग़ीबत है और अगर वो उस खास शख़्स की अच्छाई के लिए है तो वो ग़ीबत नहीं है। एक बयान के मुताबिक, ये किसी भी तरह ग़ीबत नहीं है, अगर नुक्ता चीनी उस (जाँचने) के निजी रहम से निकला हो। ना ही ये कहना ग़ीबत है, मिसाल के तौर पर, "वहाँ पर एक चोर है, (या एक शख़्स जो अपनी रोज़ाना की इबादतों में गफ़लत बरतता है, या एक इशतराकी) इस गाँव में। इसलिए, इस मामले में, ये इलज़ाम किसी एक खास शख़्स की तरफ़ नहीं जाता।

मान लो एक शख़्स अपनी रोज़ाना की इबादतें रोज़ा अदा कर रहा है, लेकिन जिस्मानी तौर पर वो दूसरे लोगों को नुकसान पहुँचा रहा है। मिसाल के तौर पर, वो मोंचे, वसूली या चोरी में माहिर है, या जुबानी शर का इरतिकाबे जैसे के खुले तौर पर गाली गलोच करना, तोहमत लगाना, चुग़ली, किस्से कहानियाँ करके जुर्म का इरतिकाब करना। पूरे तौर पर गुनाह, हराम और बिदअत करने का दिखावा ग़ीबत नहीं है। ना ही हुकाम को ऐसी नाराज़गियों के

बारे में इतलाह देना तोहमतों को बचाने में मदद करना कोई गुनाह नहीं है।जब एक शख़्स अपने बाप से छुपाकर कोई हराम करे, तो जो शख़्स अकलमंद होता है वो अगर ये जानता है के उसका बाप अगर इसके बारे में जान जाएगा तो वो अपने बेटे को ऐसा करने से रोक सकता है तो वो उसे ज़ुबानी या लिखकर उसे बता सकता है।लेकिन अगर वो इस बात पर यकीन नहीं रखता के वो अपने बेटे को रोक सकता है तो इस बात की इजाज़त नहीं है के वो उसे इतलाह दे।इस मामले में उसे इतलाह देना उन दोनो के बीच में अदावत पैदा कर सकता है।अगर कोई अपनी हरकात से दूसरों को नुकसान पहुँचा रहा हो तो दूसरो को उसके बारे में बताना चुग़ली नहीं है क्योंकि उसका इरादा दूसरों को उसके नुकसान से बचाना है।इस तरह, ये कोई चुग़ली नहीं है अगर एक शख़्स उसके नुकसान दूसरों को बताए क्योंकि एक शख़्स के लिए रहम रखे और उसके लिए ग़मज़दा हो जाए।उसके नुकसानदह बरताव को दूसरों पर ज़ाहिर करना उसे बुरा बनाने के लिए तो ये चुग़ली है।छ:मिसालों में एक शख़्स की कमियाँ और गलतियाँ उसकी ग़ैर मौजूदगी में दूसरों को बताना चुग़ली नहीं है।वो इसलिए उसके बारे में बताता है क्योंकि वो ग़मज़दा होता है और रहम महसूस करता है।वो दूसरों को इसलिए बताता है ताकि वो उसे रोकें।कानूनी फ़ैसला (फ़तवा) लेने के लिए बताना।दूसरे लोगों को उसके नुकसान (**शर**) से बचाने के लिए बताना।अगर उसकी कमी उस शख़्स की उरफ़ियत बन जाए, तो एक शख़्स मजबूर होता है के उसका ज़िकर करने के लिए उसे उसके बिगडे हुए नाम से पूकारे।उसके ज़ुल्म, गुनाह जिसे आमतौर पर कहा जाता है "फ़िस्क" या बिदा उसके बारे में बताना।दूसरों को किना वरी या ज़िल्लत की वजह से बताना भी ग़ीबत है।किसी को उस चीज़ के ऐब के बारे में खबरदार करना जो वो खरीदने का सोच रहा है इसका मतलब ये नहीं है के वो बेचने वाले के बारे में बुरा बोल रहा है।और इन दोनों में से कोई भी ग़ीबत नहीं है,किसी आदमी को उस लड़की की कमियाँ या नुक्स बताना जिससे वो शादी का इरादा कर रहा हो;वो एक सलाह का हिस्सा है।एक शख़्स को उस चीज़ के बारे में बताना जो वो नहीं जानता वाजिब है।अगर एक शख़्स बिदअत का काम करे या ज़ुल्म करने का ज़ुर्म करे, तो उसकी गलतियों के बारे में अगर वो खुली हुई नहीं हैं दूसरों को बताना ग़ीबत है।ये एक हदीस शरीफ़ में बयान है:

"**बताना** (दूसरों) **कोई ग़ीबत नहीं है** (बेइंसाफ़ियों के बारे में) **उस शख़्स की जिसने शर्म में हिजाब उतार फैंका हो।**" जिलबाब एक चौड़ी चादर होती है जो औरतें अपना सिर ढकने के लिए पहनती हैं।इस बयान में 'शर्म का जिलबाब उतारने' का मतलब है, खुले तौर पर गुनाह करना।ये हदीस शरीफ़ इस असलियत की तरफ़ निशानदही करती है के ऐसे लोग शर्म की कोई हिस नहीं रखते।इमाम ग़ज़ाली और कुछ दूसरे इस्लामी रहनुमाओं रहीमाहुमल्लाहु तआला के मुताबिक,"वो ये के ये ग़ीबत है के एक खुले हुए गुनहागारया किसी और की गलतियों को ज़ाहिर करना, ये उस हालत के असर पज़ीर नहीं है के कोई ज़िल्लत से भरा सबब हो।इसलिए, ग़ीबत असल में बुरी है जिसे हर हाल में परे रखना चाहिए।

बहुत सारी वजूहात हैं जो एक शख़्स को ग़ीबत करने पर उकसाती हैं।हम इस नुकते पर उनमें से ग्यारह की वज़ाहत करते हैं: मुतलक शख़्स की तरफ़ कीना रखना;आम जज़बे में शामिल होने की रग़बत रखना; एक मशहूर नापसंदीदा शख़्स को इल्ज़ाम लगाने की खसलत; अपने आपको एक खास गुनाह से अलग रखने का लालच; बरतरी का दिखावा; हसद; मसखरेपन का एहसास; हाज़िर जवाबी; और नकल; एक शख़्स के गुनाह पर जिस से ये करने की उम्मीद ना हो निजी हैरत, अफ़सोस, सदमा, या नारज़ामंदी ज़ाहिर करना।

चुग़ली एक शख़्स के इनाम **(सवाबों)** को घटाने का सबब बनता है और दूसरे के गुनाह भी इस चुग़ली करने वाले के गुनाहों में शामिल हो जाते हैं।इन सबके बारे में हर वक्त सोचना एक शख़्स को चुग़ली करने से रोकता है।

चुग़ली तीन किस्म की होती है: पहली मिसाल में चुग़लखोर ग़ीबत करने से इंकार करता है और ये दावा करता है के वो सिर्फ़ उस शख़्स के बारे में हकीकत बयान कर रहा था।ये इंकार कुफ़्र (बेयकीनी) का सबब बनता है, इस वास्ते ये कहना 'हलाल' इस्लाम की किसी चीज़ के बारे में वो ममनुअ (हराम) है।दूसरे मामले में नियत एक शख़्स को जिसके बारे में चुग़ली की जा रही है वो अपने आप पर नुक्ताचीनी करते हुए सुनता है, जो असल में हराम और एक बड़ा गुनाह है।इस तरह की चुग़ली सिर्फ़ तौबा से माफ़ नहीं की जा

सकती। ये भी ज़रूरी है के उस शख़्स को जिसके बारे में चुग़ली की जा रही है उसकी माफ़ी देखी जाए। तीसरे मामले में, जिस शख़्स की चुग़ली की जा रही हो वो उसके बारे में जानता ना हो। इस तरह की चुग़ली तौबा के ज़रिए माफ़ की जा सकती है और उस शख़्स पर जिस पर चुग़ली की जाए उस पर रहमत भेजी जाए।

एक शख़्स को जब ये पता चले के उसके सामने किसी की चुग़ली की जा रही है तो उसे चाहिए वो उसे फ़ौरन मना करदे। ये हदीस शरीफ़ में बयान है: "**अल्लाह तआला एक शख़्स की इस दुनिया में और दूसरी दुनिया 'आखिरत' में मदद करेगा अगर वो एक मुसलमान भाई की उसकी ग़ैर हाज़िरी में मदद करे**"और "**जब एक शख़्स के मुसलमान भाई की उसकी मौजूदगी में चुग़ली की जाए, अगर वो अपने भाई को सहारा नहीं देता जबकि वो ऐसा कर सकता था, उसका ये गुनाह इस दुनिया के लिए और दूसरी दुनिया के लिए काफ़ी है।**" और "**अगर एक शख़्स इस दुनिया में अपने मुसलमान भाई की इज़्ज़त बचाता है, तो अल्लाह तआला उसे एक फरिश्ता भेजेगा और इस तरह उसे दोज़ख के अज़ाब से बचाता है।**" और "**अगर एक शख़्स अपने मुसलमान भाई का एज़ाज़ बचाता है, तो अल्लाह तआला उसे दोज़ख की आग से बचाएगा।**" जबकि चुग़ली की जाए, एक शख़्स जो वहाँ मौजूद हो उसे चाहिए वो अपने लफ़्ज़ों से उसे रोके अगर वो इस चुग़लखोर से नहीं डरता। अगर वो उससे डरता हो तब वो अपने दिल से उसे मना करे; वरना वो चुग़ली के गुनाह में शामिल होगा। अगर ये मुमकिन हो के वो चुग़लखोर को रोक सकता हो या छोड़ सकता हो, तो उसे एक को या दूसरे को कर लेना चाहिए। अलामत ज़ुबान मिसाल के तौर पर सिर का या हाथ का या आँखो के इशारे का इस्तेमाल करना काफ़ी नहीं है। ये ज़रूरी है के उसे बताया जाए के उसे चुग़ली करना बंद कर देनी चाहिए।

चुग़ली करने का इतमिनान (**कफ़्फ़ारा**) अफ़सोस करने का एहसास, तौबा करना, और जिस शख़्स की चुग़ली की जाए उससे माफ़ी मांगी जाए। बग़ैर अफ़सोस के एहसास के माफ़ी माँगना कुछ और नहीं धोखा है,जोकि एक और गुनाह है। [ये इबने अबिदिन की किताब राद-अल मोहतर

के, पाँचवे हिस्से के सफ़ा नंबर **263** में लिखा है के मरे हुए शख़्स बल्कि एक गैर मुस्लिम शहरी (ज़िम्मी) की भी चुग़ली करना ममनुअ है।]

40- तौबा ना करना

तौबा का मतलब है एक ममनुअ काम करने के बाद पछतावे/अफ़सोस का एहसास होना और तब अल्लाह का डर होना और एक मज़बूत इरादा/अहद करना के उसे दोबारा नहीं करेगा।दुनियावी नुकसान के डर से पछतावा बरदाश्त करना तौबा नहीं है।जब तक एक शख़्स कई गुनाह करता है, तो उस शख़्स की कुछ गुनाह के लिए तौबा बातिल **(सही)** है जबकि एक शख़्स दूसरे गुनाह करने पर बज़िद हो।तौबा करने के बाद, एक शख़्स दोबारा उस गुनाह को करे और फिर दोबारा पछताए तो ये सही है।इस पछतावे की कड़ी को दोहराना और दोबारा गुनाह करना, फिर कई बार तौबा करना सही है।एक बड़े गुनाह की माफ़ी के लिए बेशक तौबा की ज़रूरत है।रोज़ाना पाँच इबादतें "सलावत" जुमें की "सलावत" इबादत, रमज़ान के महीने के दौरान रोज़े, ज़ियारत ए **(हज)** के लिए जाना, तौबा करना,बड़े गुनाहों को नज़रअंदाज़ करना और सारे इसी तरह के इबादतों के काम जो काबिले माफ़ी गुनाहों को माफ़ करने का सबब बनते हैं।कुफ़्र के लिए और दूसरे किस्म के गुनाहों के लिए तौबा करना, जब उनकी हालतों के देखते हुए किए जाएँ, तो बेशक वो कुबूल किए जाते हैं।एक ज़ियारत जो पूरी दीयानतदारी के साथ और उसकी पूरी हालतों को देखते हुए की जाए उसे "हज अल मबरूर" कहते हैं। "हज अल मबरूर" हर तरह के गुनाहों को माफ़ करने का सबब बनता है सिर्फ़ उन गुनाहों को छोड़कर जो फर्ज़ की गई इबादतों को छोड़ने की वजह से बरदाश्त किए जाते हैं जिसमें दूसरों के हुकूक की पामाली भी शामिल हो।इन दोनों गुनाहों को माफ़ कराने के लिए, एक शख़्स को इन छोड़ी हुई फराईज़ को पूरा करना होगा और एक शख़्स को उसके सही मालिक/हकदार के पामाल हुकूम का मुआवज़ा देना होगा। "हज अल मबरूर" उन गुनाहों को माफ़ करने का सबब नहीं बनती जो ज़रूरी (फ़र्ज़) की गई डयूटी को छोड़ने की वजह से सहनी पड़ी,ताहम ये उन गुनाहों को माफ़ करने का सबब बनती है जो ज़रूरी फराईज़

उसके बताए गए वक्त में अदा ना किए गए हों। हज के बाद,अगर एक शख़्स फ़ौरन अपनी छोड़ी हुई ज़रूरी फ़राईज़ करने शुरू नहीं करता, तो ज़रूरी फ़राई ज़ को मुल्तवी करने का गुनाह दोबारा शुरू हो जाता है और जैसे वक्त गुज़रता है इसके कई मोड़ शुरू हो जाते हैं। अदाएगी को मुल्तवी करना एक बड़ा गुनाह है। सबको ये बात साफ़ समझ लेनी चाहिए। इस हदीस शरीफ़, "**जिस शख़्स ने "हज अल मबरूर" अदा किया, उसके गुनाह माफ़ हो जाते हैं। वो एक पैदा हुए नए बच्चे के समान हो जाता है।**" में उस गुनाह के अलावा भी गुनाह शामिल हैं जो ज़रूरी फ़राईज़ को छोड़ने की वजह से होते हैं और वो गुनाह जो दूसरों के हुकूक मारने की वजह से होते हैं। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने जो दुआ दी (उस पाक ज़मीन पर जिसे कहते हैं) मुज़लफ़ाह के मकाम पर अरफ़ा की रात (कुरवानी की ईद से पहले दिन) (मुसलमान ज़ियारत करने वालों को) हज्जाज को माफ़ करने के लिए वो इसी तरह की बताई जाती है। यहाँ ऐसे भी आलिम हैं जो कहते हैं के वो गुनाह जो इन ज़रूरी फ़राईज़ को अदा ना करने की वजह से होते हैं और वो गुनाह जो दूसरों के हुकूक मारने की वजह से होते हैं वो भी इस माफ़ी में शामिल हैं। उनका बयान उनसे तअल्लुक रखता है जो तौबा करते हैं लेकिन जो जिसमानी तौर पर उन फ़र्ज़ को अदा करने में नाकाम हैं या दूसरों के पामाल हुकूक का मुआवज़ा देने के लायक नहीं हैं। कुरआन अल करीम की सुरह हूद की एक सौ चौदहवी आयत-ए-करीमा का मतलब है: "**... उन चीज़ों के लिए जो अच्छी हैं** (हसनात)**उनका खात्मा कर दो जो बुरी हैं: ...**"(**11-114**)आलिमों ने इस आयत-ए-करीमा की इस तरह वज़ाहत की:"जब अदा ना किए गए ज़रूरी फ़र्ज़ की अदाएगी करदी जाए तब उसका गुनाह माफ़ कर दिया जाता है।" जब एक शख़्स सुने के किसी शख़्स ने उसकी चुग़ली की है, अगर वो अपने पीठ पीछे कही गई बात से उदास हो जाए, तब ये चुग़लखोर का ज़ायद गुनाह बन जाता है। अच्छा काम (**हसनात**) जो माफ़ी का सबब बने उस बड़े गुनाह के लिए वो है चुग़ली किए गए शख़्स की माफ़ी हासिल करना।

एक गुनाह करने के बाद फ़ौरन तौबा माँगना फर्ज़ हो जाता है। तौबा को टालना एक दूसरा गुनाह है। और इस मामले में ये ज़रूरी हो जाता है के एक इज़ाफ़ी तौबा मांगी जाए। अपने फ़राईज़ को अदा ना करने की वजह से

जो गुनाह हासिल होता है वो सिर्फ़ उस वक्त माफ़ होगा जब वो खास फ़र्ज़ अदा कर दिया जाए। जो भी गुनाह किया गया हो उसकी तौबा ग़मग़ीम दिल के साथ की गई हो (एक खास दुआ) अस्तग्फ़ार [माँगने के लिए जो दुआ बताई गई है: "**अस्तग्फ़िरूल्लाह अल अज़ीम अल लज़ी ला इल्लाहा इल्लल्लाह अन्ता हुवा-ल हय्युल कयूम वा अतूबोह अलैहि।**"] पढ़ना मुंह ज़ुबानी, और एक जिस्मानी मुआवज़ा (जब ज़रूरत पड़े)। ये कहना, "**सुब्हानल्लाहि इल अज़ीम व बेहमदेही** सौ बारः एक दिन के लिए रोज़ा रखना और खैरात देना बहुत फ़ायदेमंद है।

कुरआन-अल-करीम की सूरह नूर की इकत्तीसवीं आयत-ए-करीमा का मतलब है: "**...ऐ ईमान वालों! सब अल्लाह तआला की तरफ़ मतवज्जेह हो जाओ** (तौबा करो)**...**" **(14-31)**। और सूरह तहरीम की आठवीं आयत-ए-करीमा का मतलब है: "**अल्लाह तआला की तरफ़ रूजअ करो सच्चे पछतावे के साथ** (तौबा-ए-नासूख)**...**" **(66-8)**। इस आयत-ए-करीमा में लफ़्ज़ "नासूख" को तेईस मुख़तलीफ़ तरीकों से वाज़ेह किया गया है। सबसे मशहूर वज़ाहत है के माफ़ी का एहसास रखना ज़ुबान से तौबा करना और सख्ती से ये फ़ैसला करना के ऐसा दोबारा नहीं होगा। सूरह बक़राह की दो सौ बाईसवीं आयत-ए-करीमा का मतलब है: "**...अल्लाह तआला के लिए उनसे प्यार करो जो वफ़ादारी के साथ उसकी तरफ़ रूजअ करते हैं...**" **(2-222)**।

एक हदीस शरीफ़ के मुताबिक: "**तुम में से सबसे अच्छा वो है जो एक गुनाह करने के बाद फ़ौरन उसकी तौबा करले।**" सबसे बड़ा गुनाह कुफ़्र,धोखेबाज़ी,और एक शख़्स के भरोसे को छोड़ना या तर्क-ए-दीन **(इरतीदाद)** है।

[एक शख़्स जो मुसलमान नहीं बनता, या वो जो बनने से मना करता है, वो के मुश्रिक (काफ़िर) कहलाता है। एक काफ़िर जो मुसलमान होने का ढोंग करता है मुसलमानों को धोखा देने के लिए वो एक हिला बाज़ **(मुनाफ़िक)** और **(ज़िंदिक)** कहलाता है। एक शख़्स जो एक काफ़िर बन जाता है जबकि वो एक मुसलमान था उसने इलहाद **(ईतिदाद)** का जुर्म किया। एक शख़्स जो इलहाद का जुर्म करता है वो एक इलहादी **(मुर्तद/मुरतद)** कहलाता है। अगर ये

तीनों शख़्स फरमाबरदारी के साथ अपने दिल से यकीन रखें, तो यह बेशक मुसलमान बन सकते हैं।

मंदरजाज़ेल जाँच **बरीका** और **हदीका** नाम की किताबों, के उस सबक में है जो बातों के ज़रिए अज़ाब के मुतअल्लक है, साथ में **मजमाऊल-अनहुर** में भी है: "अगर एक मुसलमान चाहे आदमी हो या औरत, एक बयान देते हैं या एक जुर्म का इरतिकाब करते हैं [वाकिफ़ होते हुए और बग़ैर किसी क़ैद के] जिसे वो जानते हैं कि इस्लामी आलिमों ने एक राए होकर एक ऐसा बयान या काम बताया है जिससे एक शख़्स काफ़िर बन सकता है, वो अपना ईमान खो सकते हैं और एक (इलहादी) **मुर्तदिद/मुरतदिद** बन सकते हैं, चाहे अगर ये बयान या काम मसखरेपन के मक़सद से ही क्यों ना किया गया हो या इसके मआनी सोचे बग़ैर किया गया हो।इस तरह का **कुफ़्र-ए-इनादी** कहलाता है।ऐसा जान बुझकर करना, एक शख़्स को इलूहादी बनाने का सबब बनती है, चाहे अगर उसे इस बयान का या काम का पता ना हो के ये कुफ़्र का सबब बन सकता है।इस सिलसिले में कुफ़्र की हालत में भूल हो सकती है जिसे **कुफ़्र-ए-जाहली** कहते हैं।इस वजह से, ये हर एक मुसलमान शख़्स पर फ़र्ज़ हो जाता है के वो उन इस्लामी हकीकतों को सीखें जो वो जानने के लिए तजवीज़ करें।उसको ना जानना, इसलिए एक बड़ा गुनाह है, बजाए एक उज़्र के।लोग जो कुफ़्र-ए-इनादी या कुफ़्र-ए-जाहली के ज़रिए अपना ईमान खो देते हैं वो अपना निकाह (इस्लाम के बाकायदा ज़ाबते के मुताबिक शादी की हालत) भी खो देते हैं।एक मुसलमान मर्द जो इस तरीके से अपना निकाह खो देता है उसे पहले अपनी बीवी से ज़ुबान रहनुमाई लेनी पड़ती है, अपने निकाह को **तजदीद-ए-निकाह** के ज़रिए बदलना पड़ता है, और ये दो (मुसलमान आदमियों) गवाहों की मौजूदगी में या मुस्जिद में जमाअत में करना पड़ता है।**हुल्ला** [बराएमहरबानी सआदते अबदिया के पाँचवे हिस्से के बारहवें सबक को इस्लाम में शादी के लिए देखिए।] तजदीद-ए-निकाह के लिए ज़रूरी नहीं है (निकाह को दोहराना) जो एक मुसलमान को दो बार से ज़्यादा करना पड़ता है।अगर एक मुसलमान एक बयान देता है जो बेयकीनी का सबब बनता है गलती से या वज़ाहत के तरीके से या ज़बरदस्ती से, वो ना तो इलहादी बनता है और ना ही अपना निकाह खोता है।अगर एक शख़्स जान बुझकर ये बयान दे जो

नारज़ामंद का मामला हो इस्लामी आलिमों के बीच में आया ये उस फ़हरिस्त में शामिल होंगे जो इलहाद का सबब बनेंगे, वो एक इलहादी नहीं हो जाएगा अगरचे ज़रूरी है के वो तौबा करे, अस्तिगफ़ार बोले, और हिफ़ाज़त हाशिए के लिए तजदीद-ए-निकाह अदा करना" एक मस्जिद जाने वाले मुसलमान से इलहादी में चूक होने की कुफ्र-ए-इनादी या कुफ्र-ए-जाहली के ज़रिए कोई उम्मीद नहीं होती।हाँलाकि,पहले से बताए गए इमकान में सिर्फ़ इंसान हैं, और एक मुसलमान किसी भी वक्त अपने आपको इलहाद की उलझन में पाएँ, (लोग जो आम इबादतें करवाते हैं, जिन्हें कहते हैं) इमाम मस्जिदों में खास दुआएँ पढ़ते हैं, जमाअत का होना (यानी, मुसलमानों की (जमाअत) जिनके पूछे वो पढ़े, इस तरह हदीस शरीफ़ में एहकाम की तजवीज़ है, "**तजदीद-ए-ईमान अदा करो ये पढ़ते हुए, "लाईला-ह-इल्लल्लाह।"** दुआ मंदरजाज़ेल तरीके से पढ़ी जाएगी: "**अल्ला हुम-म इन-नी उरीदो अन उजददीद-अल-ईमाना वा-न-निकाहू तजदीदन बीकावली लाइला-ह इल्लल्लाह मुहम्मदुर रसूलुल्लाह।**"

कोई भी यकीन जो "अहल-अस-सुन्नत" के आलिमों के ज़रिए पढ़ाए गए यकीन की तरह पक्के ना हों उन्हें अपने सही रास्ते गुमराह ("**बिदअत**" या "**दलालत**") कहा जाता है।एक बिदअत रखना बेएतमादी/बेयकीनी के बाद दूसरा बड़ा गुनाह है।एक हरकत जो इस बड़े गुनाह को बड़ा देती है बहुत सारे हिस्से इसमें बिदअत को फैलाते हैं और मुसलमानों को इससे और तहरीक मिलती है।हुकूमत क्या ज़िम्मेदारी बनती है के ऐसी ग़लीज़ हरकत के खिलाफ़ उन इलहादियों पर जो बेइंसाफ़ी करने के मुर्जिम हैं उनपर सख़्त सज़ा आईद करे, अकली दाएरे पर हिफ़ाज़ती राए दे, और ख़िलकत पर उन्हें एक किनारे पर रखे और उनकी इशाअत को पढ़ना छोड़ दें।एक शख़्स को बहुत खबरदार रहना चाहिए के उनके झूठ, तोहमतों और भड़काने वाली तकरीरों के फरेब में ना आएँ।अभी, "ला मज़हबी," मौदुदी के माने वाले,सय्यैद कुतूब, और जाहिल इलहादी जिन्हें तबलीग़ अल जमाअत कहा जाता है, और आखिर में झूठे सूफ़ी रहनुमा और झूठे शैख़ जो मुख़तलीफ़ वज़अ में ज़ाहिर होते हैं वो हर तरह के हथकंडे/ज़राए इस्तेमाल करते हैं अपने खराब और गुमराह यकीन को फैलाते हैं।वो हर तरह के ग़ैर तसववुराती और सोच से परे दाओ पैच और जाल तैयार करते हैं मुसलमनों को धोखा देने के लिए और "अहल-अस- सुन्नत" को

उनके अपने नफ़ज़ और शैतान की मदद के ज़रिए तोड़ने और बरबाद करने के लिए। वो अपनी निजी दौलत और लाखों डालरों को बड़ा कर "अहल-अस सुन्नत" के खिलाफ़ अपनी सर्द जंग को लेकर चल रहे हैं। जवान लोगों को चाहिए के वो इस्लाम को सीखें और सही रास्ते **(हक़)** को "अहल-अस सुन्नत के आलिमों" की किताबों से सीखें। जो लोग सीखते नहीं हैं वो बिदअत (इलहाद) और दलालत (भटक जाते हैं) के सैलाब में घिर कर डूब जाते हैं,दुनिया में बरबादियों में और आने वाली दुनिया में मलामतों पर खात्मा होगा। बिदअत के रहनुमा क़ुरआन अल करीम के ग़लत मआनी बता रहे हैं,इरादतन अपनी इलहादी राए को सहारा देने के लिए वो "आयात और हदीसों की रोशनी में सच्चाई को खोलने" के नाम पर मआनी की शक्ल बिगाड़ कर आगे अपनी दलीलों में ला रहे हैं। गुमराही **(बिदअत)** के रहनुमाओं के ग्रुप क़ुरआन के ग़लत और खराब मआनी बता रहे हैं। इनको बेईन्साफ़ी के ज़रिए इस्तेमाल करके मआनी देकर वो ये बयान दे रहे हैं के वो अपने गुमराह खयालों को क़ुरआन की आयत और हदीस के ज़रिए साबित कर रहे हैं। सिर्फ़ वो जो सच्चाई **(हक़)** जानते हैं वो अपने आपको इन लोगों से महफ़ूज़ रखने में कामयाब हैं। जो सच्चाई नहीं जानते उनके लिए इस गुमराही और इलहाद के जाल और भंवर में गिरने से बच पाना बिलकुल नामुमकिन है। बिदअती यकीन के ये लोग काफ़िर बन जाते हैं अगर उनका बिदअती यकीन क़ुरआन अल करीम और हदीस-ए-शरीफ़ के खिलाफ़ जाए,जिसे एक राए से (उन इस्लामी आलिमों जिन्हें कहते हैं) मुजतहीद इमामों के ज़रिए बताया गया और (जो) आमतौर पर मुसलमानों के ज़रिए भी जाना जाता है। इस तरह का कुफ़्र "इलहाद" कहलाता है और जो इस हालत में गिर जाते हैं उन्हें "मुलहिद" कहते हैं। किताबें जो इन भरोसे के मामलों की तालीमात देती हैं उनका बयान है के "मुलहिद" काफ़िरों कि तरह समझे जाते हैं जिनकी कोई आसमानी किताबें **(मुश्रिक)** नहीं हैं।]

अल्लाह बिदअत रखने वालों की तौबा भी कुबूल करता है। तौबा करने के लिए, ऐसे लोगों को (इस्लाम की सच्ची भरोसे वाली तालीमात जिन्हें कहते हैं)अहल-अस सुन्नत को जामे तौर पर याद करना होगा, इसके मुताबिक

अपने मज़हबी यकीन के तरीकों को बदलना होगा, और अपनी साबका मज़हबी उसूलों की खिलाफ़ वर्ज़ी को सच्चे पछतावे के साथ छोड़ना होगा।

एक शख़्स जो ज़रूरी फ़राईज़ की (जिन्हें, हम पिछले मज़मून में इस तरह वाज़ेह कर चुके हैं, जिन्हें कहते हैं फ़र्ज़, जमा, फ़राईज़) एहमियत पर यकीन रखता है, लेकिन अपनी सुस्ती की वजह से उन्हें अदा नहीं करता, वो एक बिदअती नहीं बन जाता और अपना यकीन/ईमान भी नहीं खोता। बहरहाल, एक मुसलमान जो इस ज़रूरी फ़र्ज़ को अदा नहीं करता वो अपनी इस लापरवाही की वजह से दो बड़े गुनाह का जुर्म करता है। पहला वो गुनाह जो वो पाबंद की गई इबादत के वक्त को बग़ैर इबादत किए गुज़ारे, यानी फ़र्ज़ नमाज़ में देरी करे इस गुनाह की माफ़ी के लिए, उसके लिए ज़रूरी है के तौबा करे, यानी पछताए और माफ़ी महसूस करे ये फ़ैसला करे के इसे दोबारा नहीं टालेगा या देरी नहीं करेगा। दूसरा गुनाह है ज़रूरी फर्ज़ को अदा ना करना। इस तरह के गुनाह को माफ़ कराने के लिए, उसे "कज़ा" अदा करनी होगी, मिसाल के तौर पर, छोड़े हुए ज़रूरी फ़र्ज़ को जितनी जल्दी मुमकिन हो सके अदा करे। दूसरी तरफ़, कोई (बग़ैर उज़र के) भी देरी इस गुनाह में दूसरे बड़े गुनाह का इज़ाफ़ा कर सकती है।

[सय्यैद अबदुलहकीम एफ़ंदी रहीमाउल्लाहु तआला, एक बड़े इस्लामी आलिम, मुजदिद (इस्लाम की असली, कदीमी पाक को वापिस लाने वाले) चौदहवीं (इस्लामी) सदी में; एक माहिर इस्लाम की बातिनी (रूहानी) साईन्स, ज़ाहिरी, (माददी, बाहरी) साईन्स के भी; (अकैडमी ऑफ इस्लामिक साईन्सिस) मदरसा त-उल मुताखासिन के एक प्रोफ़ेसर, और तसव्वुफ़ महकमे के चेअरमेन, ने (इस्तानबुल में) मसाजिद में (सुहबत) वाअज़ों में और अपने खुतबों में और अपनी तकरीरों में मंदरजाज़ेल बयान में दोहराया: "ये एक बहुत बड़ा गुनाह है के बताए गए वक्त में एक ज़रूरी किए गए फ़र्ज़ की अदाएगी ना करना बग़ैर किसी उज़रके।" इस्लामी किताबों में लिखा हुआ है के छोड़ी हुई नमाज़ की कज़ा जल्द से जल्द अदा ना करना भी एक बड़ा गुनाह है। ये हकीकत पिछले पैराग्राफ़ में लिखी हुई है। एक बार जो वक्त इस्लाम ने एक खास ज़रूरी फ़र्ज़ को अदा करने के लिए बताया है वो गुज़र जाए, तो उस फ़र्ज़ के साथ जो

बग़ैर किए रह गया, हर वक्त की इकाई चाहे बड़ी ही क्यों ना उस फर्ज़ को अदा करने के लिए और फिर भी वो गुज़ार दे बग़ैर उसे अदा किए हुए तो उस गुनाह को एक हिस्सा बड़ा देगा और उस गुनाह की हालत को और बड़ा देगा। इस तरह,एक ज़रूरी फर्ज़ की "कज़ा" अदा ना करना गुनाह के कई हिस्से/मोड़ बढ़ा देता है। मिसाल के तौर पर, रोज़ाना की पाँच "सलात" की इबादत के मामले में, सलात की इबादत जो अदा नहीं की गई वो एक दिन में पाँच मोड़ बढ़ा सकती है। एक शख़्स को उस आदमी की खराब हालत का अंदाज़ा होना चाहिए जिसने महीनों या सालों से पाँच वक्त की रोज़ाना की फर्ज़ "सलात" इबादतें अदा ना की हों। एक शख़्स को अपने आपको इस खौफ़नाक और पत्थर में बदल देने वाले गुनाह से बचाने के लिए हर तरह के ज़राए को देखना चाहिए। इस फ़र्ज़ सलात की इबादतों को अदा ना करने की वजह से अपने आपको दोज़ख में सज़ा से बचाने के लिए, कोई भी सच्चे यकीन और आम हिस के साथ कज़ा अदा करे अपनी छोड़ी हुई इबादतों की सलात दिन और रात में। हमें बताया गया है के एक शख़्स को "सलात" इबादत जो के उसने अपनी सुस्ती और बग़ैर उज़र के अदा नहीं की उसके लिए उसे दोज़ख में सत्तर हज़ार सालों तक सज़ा मिलेगी। जब एक मुसलमान उस सज़ा की मिक़दार के बारे में सोचता है जो वो दोज़ख में सहेगा उन बेशुमार "सलात" इबादतों को अदा ना करने के लिए जैसे के ऊपर बताया गया है, वो अपनी नींद खो देगा, खाना और पीना बंद कर देगा, और बहुत तकलीफ़ महसूस करेगा। हाँ, कोई भी जो इस "सल्लात" इबादतों पाबंदी और फ़राईज़ नहीं समझेगा वो एक काफ़िर और इलहादी बन जाएगा। एक इलहादी दोज़ख में हमेशा के लिए सज़ा पाएगा। लापरवाह, ऐसा शख़्स दोज़ख या सज़ा या फ़र्ज़ "सलात" इबादत की एहमियत में यकीन नहीं रखता। वो इस दुनिया में वहशी ज़िन्दगी गुज़ारता है। वो किसी और चीज़ के बारे में नहीं सोचता सिवाए अपनी खुशियों के और पैसा इकट्ठा करने जो उसे मज़ा दिलाए। उसकी ज़िन्दगी का उसूल होता है पैसा हासिल करना बिला लिहाज़ चाहे दूसरे कितने भी उससे मुतासिर हों या सहें। अगर उसकी ख़ुशी इस पूरी इंसानियत की कुरबानी पर हासिल हो रही हो तो भी वो परवाह नहीं करेगा। उसके पास ना तो ईमान है और ना ही अक़ल। इस तरह के शख़्स के पास कोई रहम नहीं होता। वो वहशियों से और

सबसे खतरनाक जानवरों से ज़्यादा खतरनाक होता है। उसकी इंसानियत, रहम और सच्चाई के बारे में बातें हवा में लिखने के बराबर है। वो दूसरों के लिए फरेब है अपनी भूख को मिटाने के लिए और दुनियावी फ़ायदे उठाने के लिए।

"कज़ा" अदा करना उस "सलात" इबादतों की जिन्हें सालों से अदा नहीं किया गया वो करीबन पूरी करनी नामुमकिन हो जाती हैं। दुनिया में अब कोई रहमतें **(बराकात)** नहीं रह गई हैं क्योंकि इंसान शरीअत से परे हो गए है। दूसरे लफ़्ज़ों में, उन्होने एहकाम मानने छोड़ दिए हैं और हराम करने में डूब गए हैं। वो उस रास्ते से हट गए हैं जो इस्लाम ने पढ़ाया है और जो खुबसूरती और अमन की तरफ़ ले जाता है। ज़राए (रिज़क) थोड़ा हो गया है। सूरह ताहा की एक सौ चौबीसवीं आयत-ए-करीमा का मतलब है: **"लेकिन जो कोई भी मुझसे (मेरे पैग़ाम) से परे हो जाएगा, हकीकत में उसके लिए ज़िन्दगी तंग हो जाएगी,..." (20-124)** दरहकीकत, वहाँ पर सारी किस्मों में कमी हो जाएगी जैसे के ईमान का ज़रिया, सहत का ज़रिया, रिज़क का ज़रिया,इंसानियत का ज़रिया, और रहम का ज़रिया। इस तरह कहा जाता है, "हूदा (अल्लाह तआला) अपने बंदों को कभी तकलीफ़ नहीं देता। हर कोई जो सहता है वो उसकी अपनी सज़ाएँ होती हैं," ये आयत-एकरीमा सूरह नहल [आयत-ए-करीमा का आखिरी हिस्सा इस तरह पढ़ा जाएगा: **"...लेकिन अल्लाह तआला ने उन पर कोई ज़्यादती नहीं की: नहीं, उन्होने अपने नफ़ज़ पर खुद जुल्म किया है।"(16-33)**] एक खानदान अब बमुश्किल ही उसके तमाम अरकान के मर्दो और औरतों के साथ एक बका वजूद हासिल कर सकते हैं, इस्लाम की तरफ़, उसके पैग़म्बर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की तरफ़, कुफ्र की मौजूद साफ़तरीकी और अल्लाह तआला की तरफ़ एक आम बेहिसी पर कमी और मुसिबत के नतीजे में बड़े पैमाने पर नुकसान के दरम्यान चौबीस घंटे यकसाँ काम करता है। जब तक लोग अल्लाह तआला में ईमान (अकीदा) रखेंगे, अपने आपको इस्लामी मज़हब के मुताबिक रखेंगे, जो के अपने इंसानियत को हुकूम दिया है, और अपने पैग़म्बर पर खुबसूरत अखलाकी खासियत को छोटा करके उन्हें खुदका सहारा बनाया, इस रिआयत और कवाईफ़ नामें के सैलाव को बंद करना सवाल से परे है। ऊपर बताई गई मुश्किल हालतों के नीचे, सुबह की नमाज़/इबादत के अलावा रोज़ाना की पाँच सुन्नतों में से चार के बजाए, उन

पिछली "सलात" इबादतों की "क़ज़ा" लौटाने के लिए एक शख़्स को रोज़ाना "क़ज़ा सलात" अदा करनी होगी। ऐसा करने के लिए, एक शख़्स को अपनी सबसे पहली सलात जो उसने उसके मुकर्रर वक्त में अदा नहीं की उसको अदा करने का इरादा करना होगा। रोज़ाना, ये तरीकाकार इस्तेमाल करके, एक शख़्स अपनी एक दिन की "क़ज़ा सलात" की इबादतें अदा कर सकता है और एक शख़्स अपनी "**सुन्नत**-सलात" इबादतें भी अदा कर सकता है। ये मामला आगे इस सबक में वाज़ेह होगा। और, बराएमहरबानी **सआदते अबदिया/लामहदूद खुशियों के चौथे** हिस्से में भी इसे देखिए।

सदियों पहले जब "फ़िकह" की किताबें लिखी गई, मुसलमानों के दिलों में अल्लाह तआला का खौफ़ दोज़ख के अज़ाब का डर था और पक्का ई मान था। कोई कभी सोच भी नहीं सकता था के "सलात" इबादतों को उनके बताए गए वक्त पर अदा नहीं किया जाएगा। ये सोच से परे था के ऐसा भी कोई शख़्स होगा जो जानबुझकर "सलात" इबादतें अदा नहीं करेगा। उस वक्त में, सिर्फ़ कुछ "सलात" इबादतें किसी उज़र की वजह से छोड़ी हों। ये एक शख़्स के लिए मुसिबतों और परेशानियों का बाईस जिसने "सलात" इबादतें छोड़ी। मंदरजाज़ेल वज़ूहात हैं "सलात" इबादतों को छोड़ने के लिए: नींद से आँख नाक खुलने में नाकाम; भूल जाना,सफ़र के या जंग के दौरान चाहे बैठे हों क्योंकि ना हो "सलात" इबादत को अदा करने का मौका। एक सलात की इबादत को इनमें से किसी एक वजह से ना पढ़ पाना कोई गुनाह नहीं है। बहरहाल, जैसे ही वजह (उज़र) खत्म होने लगे तो ये फ़र्ज़ हो जाता है के जल्द से जल्द छोड़ी हुई "सलात" इबादत अदा करली जाए। एक शख़्स अपने कुंबे को सहारा देने के लायक पैसा कमाने के लिए छोड़ी हुई "सलात" इबादत की क़ज़ा अदा करने में देरी कर सकता है इसकी इजाज़त है। "**मुअक्किद सुन्नत**" इबादतों की जगह पर,ये ज़रूरी नहीं है के "क़ज़ा" इबादत को अदा किया जाए जो एक कुबूल किए हुए असबाब की वजह से छोड़ी गई। ये बयान, "ये अच्छा है के जो इबादतें सुन्नत मुअक्किद [सलात की इबादतें जिन्हें हमारे नवाज़े गए पैग़म्बर 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने रोज़ाना की ज़रूरी (फ़र्ज़) पाँच इबादतों के साथ इज़ाफ़ी अदा किया जिन्हें 'सुन्नत' कहते हैं। इस्लामी आलिमों ने सुन्नतों को दो किस्मों में किया है: सुन्नत मुअक्किदा, जिसका

मतलब है, 'सुन्नत जिसपर ज़ोर दिया गया है और जो फ़र्ज़ (ज़रूरी) की तरह है; और सुन्नत ग़ैर मुअक्किदा' जिसका मतलब है सुन्नत जिसपर ज़ोर नहीं दिया गया।] हैं उनके बजाए (छोड़ी हुई फ़र्ज़ इबादतों) का अदा ना किया जाए," फ़िकह की किताबों में है,जिसका मतलब है, "फ़र्ज़ इबादतें छोड़ी गई (उन अज़बाब के लिए जिन्हें इस्लाम कुबूल करता है और पुकारता है) उज़र की वजह से।" अगर एक सलात की इबादत (जो के फर्ज़ है) बग़ैर उज़र के छोड़ी गई, तो ये फर्ज़ है के उसे फौरन अदा किया जाए।इस तरह की इबादतों को अदा किया जाना चाहिए बजाए उन इबादतों के जो सुन्नत हैं।इमाम-ए-रब्बानी कुदसिया सिरोह ने एक सौ तेईसवें खत में बयान दिया: "अगर फाज़िल (नफ़िली) इबादत एक इबादत के काम जो के फर्ज़ है उसे रोकती है, तो वो कोई इबादत नहीं रह जाती;वो एक नुकसानदह शुग़ल (म-ला-यानी) बन जाती है।"]

[अज़ीम इस्लामी आलिम इबनी अबिदीन रहमतुल्लाही अलैहि ने कहा, जब तुम मस्जिद में दाखिल हो तो दो रकाअत सलात की अदा करना सुन्नत का काम है।इसको तहैयतुल मस्जिद कहते हैं।सलात की कोई भी किस्म, मिसाल के तौर पर, फर्ज़,सुन्नत,या कज़ा, जिन्हें तुमने मस्जिद में दाखिल होने पर पढ़ा, तो वो भी तहैयतुल मस्जिद की तरह ठहराया गया।जैसे के तुम इन सलात की किस्मों में से कोई एक भी अदा करते हो, तो तुम्हें ये नियत (इरादा) भी करने की ज़रूरत नहीं है के तुम तहैयतुल मस्जिद अदा कर रहे हो।उस सलात के साथ ऐसा नहीं है जो (मुकर्रर वक्तमें और) दोहरी नियत के साथ अदा की जाए, यानी दोनो उस वक्त की फर्ज़ की तरह और सुन्नत की तरह,इस मामले में सिर्फ़ वोसलात जो फर्ज़ है वो सही (जाईज़) है। इस वजह से, एक सलात जो फ़र्ज़ (ज़रूरी) है और वो जो नफ़ली (फ़ाज़िल) है वो दोनो नमाज़ (सलात) की दो अलग किस्में हैं।चूँकि कोई भी तरह की सलात (मस्जिद में दाखिल होने पर) तहैयतुल मस्जिद बताए गए हैं, तो तहैयतुल मस्जिद कही गई सलात उस सलात की खासियत ले लेती है जो उसकी जगह पर अदा की जाए।कोई भी सलात जो अदा की गई वो इसी तरह से दूसरे के लिए कयाम की गई बग़ैर किसी ज़ाइद नियत के।बहरहाल, एक ज़ाइद नियत की ज़रूरत पड़ती है सवाब (आखिरत में ईनाम), हासिल करने के लिए; क्योंकि उस इबादत के काम के

लिए जो बग़ैर नियत के किया गया कोई सवाब नहीं मिलेगा।" सलात जो सुन्नत है-उसका मतलब है, एक सलात जो उस सलात में ज़ाइद अदा की जाए जो फर्ज़ है।क्योंकि एक कज़ा की सलात जो सलात के पहले या बाद में अदा की जाए जो के फर्ज़ हो वो उस सलात की वज़ाहत में फिर आती है जो के सुन्नत है, कज़ा की सलात और वो जो सुन्नत हैं वो यकसाँ किस्म में आती हैं।हज़रत इबनी अबिदीन के मुताबिक जब एक कज़ा की सलात अदा की जाए तो (उस वक्त की) सुन्नत भी अदा की जाती है इस लिए, कज़ा की सलात अदा करना बजाए सुन्नत की सलात का मतलब ये नहीं हैं के सुन्नतों को छोड़ दिया।जब नियत की जाए दोनो के लिए कज़ा के लिए और सुन्नत के लिए, तो सुन्नत के लिए भी सवाब हासिल किया जाएगा।]

अगर एक शख़्स नियत करता है छोड़ी हुई सलात इबादतों को जैसे के ऊपर बताया गया है अदा करने की और ऐसा करना शुरू कर देता है और तब बहुत सख्त बीमार हो जाता है, तो वो ये ख्वाहिश (**वसीयत**) करता है के उसके मरने के बाद "सलात कफ़्फ़ारत" उसके लिए अदा की जाए। [बराएमहरबानी तफ़सीली जानकारी के लिए **सआदते अबदिया** के पाँचवे हिस्से के इकीसवें सबक को देखें;और छोड़ी हुई सलात की इबादतों की कज़ा किस तरह अदा करते हैं वो चौथे हिस्से के तेईसवें सबक में पूरी तरह से वाज़ेह किया गया है।] उसकी वसीयत को वली अमल में लाकर आगे बढ़ाता है।आमिल (**वली**) या तो खुद वसीयत करता है या फिर वो उसके वारिसों में से एक होता है।उस सिलसिले में जबके एक शख़्स सलात इबादत के दौरान सलात इबादत की एक वाजिब छोड़ दे या कोई नापसंदीदा अमल (**मकरूह**) करता है तो ये ज़रूरी (वाजिब) हो जाता है के मुकर्रर वक्त के अंदर उसे दोबारा अदा किया जाए। "नफ़ली सलात" भी दोबारा अदा करना ज़रूरी है उसके मुकर्रर वक्त में अगर "सलात" इबादत को अदा करते वक्त "सलात" इबादत को रोकने के लिए कुछ हो जाए।ये हमेशा ज़रूरी होता है के "कज़ा" अदा की जाए, यानी फर्ज़ की गई ख़ैरात (**ज़कात**) को अदा करना, "सदका-ए-फ़ितर",और जो "नज़र" अदा नहीं की गई और "कुरबानी" (जानवरों की कुरबानी) को अदा करना।एक शख़्स जो ग़रीब हो जाता है वो बाद में उसकी "कज़ा" अदा करे उस तरीके के ज़रिए जिसे "हिलाल-ए-शरीअत" कहते

है। अगर वो ग़रीब नहीं होता, तो उसके लिए "हिलाल-ए-शरीअत" का तरीका इस्तेमाल करना "मकरूह" है। [हिलाल-ए-शरीअ एक तरीका है जो इस्लामी आलिमों के ज़रिए पढ़ाया गया और जिसे एक मुसलमान एक उलझन के मामले में बहरामंद हो सकते हैं मिसाल के तौर पर, अपने आपको एक मुश्किल हालत से बचाने के लिए उसके लिए एक मज़हबी फर्ज़ को अंजाम देने में उसकी अदाएगी को नामुमकिन बनाना या मज़हबी मुमानिअत को नज़र-अंदाज़ करना। ये तुर्की किताब **सआदते अबदिया** के तीन सौ उन्सठवें सफ़ों पर तफ़सील से वाज़ेह है।]

अल्लाह तआला और बंदों के बीच गुनाह यानी, वो जो दूसरों के हुकूक की पामाली में शामिल नहीं हैं, उन्हें सिर्फ़ खुफ़िया तरीके से की गई एक तौबा चाहिए होती है। ये ज़रूरी नहीं है के एक तीसरे शख़्स मिसाल के तौर पर उस खित्ते के इमाम को बताना। रिहाई, यानी एक पादरी से गुनाहों से खुलासी को खरीदना, ये इसाइयों का अमल है। इस्लाम ऐसी किसी खसलत को अपने अंदर जगह नहीं देता। उन गुनाहों की मिसालें जिनमें दूसरों के हुकूक की पामाली शामिल नहीं है वो हैं: कुरआन अल करीम ऐसी हालत में पढ़ना (या तिलावत) करना (जिसमें खुद को धोने क र्शत करार दिया गया है) जुनूब की हालत में;(ऐसी हालत में) एक मस्जिद में बैठना; दुनियावी अमर की बातें करने के लिए या खाने और पीने के लिए या एक मस्जिद में सोने के लिए;बगैर पाकी (वुज़ू)के कुरआन-अल-करीम को पकड़ना; आलाते मौसिकी बजाने के लिए; शराब पीने के लिए; ज़िना का इरतिकाब करने के लिए; उन औरतों के लिए जो (अपने जिस्मों के उन हिस्सों को जिन्हें इस्लाम ने 'अवरत' कहा है,और उन्हें ढाकने का हुकूम दिया है, जैसे के) उनके सिर, बाज़ू, टागें और बालों को बग़ैर ढांके हुए बाहर जाती हैं। जानवरों के हुकूक की खिलाफ़ वरज़ी के गुनाहों से रिहाई पाना निहायत ही मुश्किल है। किसी जानवर को बे वजह कत्ल करना, मारना, उसके चेहरे पर मारना, उसकी ताकत से ज़्यादा उसे चलाना,उसपर सामान लाद देना, और/या उसे खाना ना देना या पानी ना देना जब उसे ज़रूरत हो यह सब गुनाह से भरा हुआ है (ऐसे गुनाहों के लिए तौबा और इस्तिग़फार दोनो की ज़रूरत है, और तकलीफ़दह पछताताप और मातम करने की भी ज़रूरत है।

वहाँ पर दूसरों के हुकूक की खिलाफ़ वरज़ी की पाँच किस्में हैं: माली (जाएदाद, पैसे के मुतअल्लिक नफ़सी (नफ़स के मुतअल्लिक); इरज़ी (इज़्ज़त के मुतअल्लिक); महरमी (महरमों के मुतअल्लिक) दीनी (मज़हबी)।इंसानी जाएदाद के हुकूक की खिलाफ़ वरज़ी के मुतअल्लिक मिसाले हैं:चोरी, ज़बरदस्ती छीननी; किसी चीज़ को धोके या झूठ तरीके से बेचना; जाली रकम की अदाएगी करना;किसी की जाएदाद को नुकसान पहुँचाना; झूठी गवाही; ख्यानत करना; रिश्वतखोरी।उस शख़्स से जिसके साथ ग़लत किया है तौबा करना और माफ़ी मांगना ज़रूरी है इस तरह की खिलाफ़ वरज़ी के लिए चाहे वो एक फ़ीसद या एक अनाज के दाने बराबर ही क्यों ना हो।जाएदाद के मुतअल्लिक खिलाफ़ वरज़ी, (अगर उन्हें उसका मुआवज़ा नहीं मिला है,) उन्हें मुआवज़ा दिया जाए (उस गलत काम करने वाले के ज़रिए)बच्चों के ज़रिए (जो उसके वारिस हैं) अगर दुनियावी ज़िन्दगी मुआवज़ा देने से पहले खत्म हो जाए (या किसी भी तरीके से मज़लूम से माफ़ी हासिल करले),जो नुकसान उसने (दुनिया में) किए उनके बदले गलत काम करने वाले के सवाबों को (यानी, ईनाम जो उसे आखिरत में मिलते दुनिया में नेक काम करने की वजह से) आने वाली दुनिया (आखिरत) में अमल में लाया जाएगा अगर मज़लूम आदमी/शख़्स मर जाए तो उसके वारिसों को अदाएगी करदी जाए।अगर उसके कोई वारिस ना हो या मज़लूम शख़्स को कोई नहीं जानता हो तो इस सिलसिले में अदाएगी एक गरीब शख़्स को तोहफ़े के तौर पर करदी जाए उसे तौहफ़ा देने की वजह से जो सवाब हासिल हो उसे उस मज़लूम शख़्स की रूह को पहुँचा दिया जाए।अगर वहाँ पर कोई गरीब शख़्स और नेक मुसलमान ना हो,तब अदाएगी ऐसी खैराती तंज़ीम को कर देनी चाहिए जो मुसलमानों या नेक तंज़ीमो (वक़्फ़)के लिए काम कर रही हों।इस बात की भी इजाज़त है के अदाएगी एक शख़्स के नेक रिश्तेदारों, यानी माँ बाप या बच्चों को कर देनी चाहिए जो ग़रीब हों।कोई चीज़ जो एक ग़रीब शख़्स को तोहफ़े में दी जाए वो ज़कात/खैरात देने के ज़मरे में आती है और जो खैरात देने का सवाब अदा करती है।अगर ऊपर बताए गए दोनो तरीकों में से कोई भी एक कारआमद नहीं हो तो उस सिलसिले में, तब उस खिलाफ़ वरज़ी करने वाले को उस सताए गए शख़्स के (गुनाहों की) लिए माफ़ी मांगनी चाहिए और अपने गुनाहों की माफ़ी के लिए

भी।चाहे सताया गया शख़्स काफ़िर ही क्यों ना हो, ये ज़रूरी है के अपने आपको माफ़ कराने के लिए उसे किसी भी तरह (मुआवज़ा या) ख़ुश किया जाए।वरना,आने वाली दुनिया में बड़ी मुसिबतें तुम्हारी राह देख रही होगीं।

दूसरे किस्म की खिलाफ़ वरज़ी, नफ़सी या ज़िन्दगी के मुतअल्लिक, में कतले नफ़स या नाकुस कर देना शामिल है।इस गुनाह से छुटकारा पाने के लिए तौबा चाहिए और गुनहागार शख़्स को अपने आपको कत्ल किए गए या नाकुस किए गए के (अमल में लाने वाला) वली के सपरूद कर देना चाहिए।वली के पास इखतियार है के वो माफ़ करदे, जाएदाद के बदले अमन करे,या फिर उसके खिलाफ़ कानूनी कारवाई करे और उसकी सज़ा के लिए मुकदमा करदे।बहरहाल, इस बात की इजाज़त नहीं है के वो अपने आप बदला ले।[इस्लाम में किसी भी तरह की दुश्मनी के लिए कोई जगह नहीं है।]इरज़ी खिलाफ़ वरज़ी का हक (यानी, इज़्ज़त की खिलाफ़ वरज़ी,) में ग़ीवत बदनामी, तमसखर और कोसने वाले काम शामिल हैं।इस गुनाह की माफ़ी के लिए तौबा चाहिए और मज़लूम के साथ सुलह (चाहे मुआवज़ा देकर या माफ़ी के ज़रिए या उसको ख़ुश करने के किसी भी एक या दूसरे तरीके से)करके।इस तरह की खिलाफ़ वरज़ी (मज़लूम शख़्स के) वारिसों के साथ किसी भी तरह से सुलह करके ठीक नहीं हो सकती।

एक महरमी खिलाफ़ वरज़ी के हक में एक शख़्स के खिलाफ़ उसके बीवी और बच्चों के ज़रिए बेईमानी का जुर्म करना शामिल है।नाराज़ करने वाले शख़्स को तौबा करनी होगी और इसतिग़फ़ार कहना होगा।अगर फ़ितना उठने का इमकान ना हो तो, उस मज़लूम शख़्स से अपने आपको माफ़,करवा सकता है।फ़ितना उठने की सुरत में,उसे उस मज़लूम शख़्स की गैर हाजिरी में रहमतें भेजनी होगीं या उसके बदले खैरात देनाी होगी, बजाए इसके के उसके सामने रूबरू होने की कोशिश करे।मज़हबी हक़ की खिलाफ़ वरज़ी, मिसाल के तौर पर, अपने रिश्तेदारों या घर वालों को उनकी मज़हबी ज़िम्मेदारियों से ग़ाफ़िल होना, या उन्हें या दूसरे लोगों को मज़हबी तालिमात हासिल करने या इबादत करने से रोकना, या दूसरे लोगों को काफ़िर या गुनहागार बुलाना।उनकी माफ़ी हासिल करने के लिए, इस बात की इजाज़त है के सिर्फ़

माफ़ी मांग ली जाए बजाए इसके के जो खिलाफ़ वरज़ी की गई है उसके जुर्म को खिसियत से बताना।

ये बहुत गुन वाला काम है (जो बहुत ज़्यादा सवाब दिलाता है) के एक ग़रीब शख़्स के कर्ज़ को माफ़ कर देना।

ये एक हदीस शरीफ़ में बयान है: "**एक शख़्स जो तौबा करता है वो बिल्कुल ऐसे (साफ़) हो जाता है जैसे उसने कभी कोई गुनाह नहीं किया हो।**" और दूसरी में, "**एक शख़्स जो अपनी बातों से इस्तिग़फ़ार करता हो लेकिन कभी अपने किए हुए गुनाह पर शर्मिन्दा ना हुआ हो वो ऐसा शख़्स है जो लगातार गुनाह कर रहा हो।वो अल्लाह तआला को दुख दे रहा है।**" इस्तिग़फ़ार करने का मतलब है "असतग़फ़िरूल्लाह" का लफ़्ज़ कहना।मौहम्मद उस्मान हिंदी कुदसिया सिरोह [मौहम्मद उस्मान **1314** हिजरी [**1896** ए.डी.] में रहलत फरमा गए।] ने अपनी किताब **फवाइद-ए-उस्मानिया** में फ़ारसी ज़ुबान में मंदरजाज़ेल हवाला दिया है: "तुम चाहते हो के मैं तुम्हारी सेहत के लिए कोई खास दुआ लिखूँ।सेहत के लिए, (हरवक्त तौबा करो और) इसतग़फ़ार की दुआ पढ़ो हर पल (वो है, पढ़ो असतग़फ़िरूल्लाह वा अतूबोह इलैहि]! ये हर फ़िकर और मुसिबत के खिलाफ़ बहुत असरदार है।सुरह हूद की बावनवीं आयत का मतलब है: "**कहो** (दुआ को) **इसतग़फ़ार!** (अगर तुम ऐसा करते हो) **तो मैं तुम्हारे बचाव के लिए आऊँगा।**" इसतग़फ़ार एक शख़्स को हर तरह की इच्छाएँ साथ के साथ अच्छी सेहत भी हासिल करवाता है।

एक हदीस शरीफ़ में बयान है: "**अगर एक बंदा गुनाह करने का जुर्म करता है और फिर पछताता है, अल्लाह तआला उसे इसतग़फ़ार** (की दुआ) **पढ़ने से पहले ही माफ़ कर देता है।**" और दूसरी में, "**तौबा करो चाहे अगर तुम्हारे गुनाह** (अंबार क्यों ना बन गए हों जो) **आसमान की ऊँचाइयों को छू गए हों।अल्लाह तआला तुम्हारी तौबा कुबूल करेगा।**" ये हदीस शरीफ़ उन गुनाहों के मुतअल्लिक हैं जिसमें दूसरों के हुकूक की खिलाफ़ वरज़ी शामिल नहीं है।ये एक हदीस शरीफ़ में बयान है: **तीन तरह के गुनाह ये हैं**: "**वो गुनाह जो इंसाफ़ किए जाने वाले आखिरी दिन (कयामत) में माफ़ नहीं किया जाएगा**;वो गुनाह जिसे छोड़ा नहीं गया; और वो गुनाह जो अगर अल्लाह

तआला चाहे तो माफ़ करदे।" गुनाह जो बिल्कुल भी माफ़ नहीं किया जाएगा आखिरी इंसाफ़ के दिन वो है "शिर्क"।इस ज़मरे में "शिर्क" में हर तरह का कुफ़्र आ गया।गुनाह जिन्हें छोड़ा नहीं गया वो गुनाह हैं जिसमें दूसरो के हुकूक की खिलाफ़ वरज़ी के गुनाह शामिल हैं।वो गुनाह जिन्हें अगर अल्लाह तआला चाहे तो माफ़ करदे वो गुनाह हैं जिनमें दूसरो के हुकुक की खिलाफ़ वरज़ी शामिल नहीं हैं।

दूसरा हिस्सा

पहला सबक

इस्लाम की अखलाकियात की साईन्स तीन ज़मरों में पढ़ी जाएगी, जो के सिर्फ़ उसकी पहली माहतेहत साईन्सों को याद करने के बाद ही समझ आएगा।अपनी इस किताब में हम तीनों हिस्सों के पूरे मामले को छूएगें, सिर्फ़ पहले हिस्से को ज़्यादा बड़ा करेंगे।

तमहीद

अखलाक़ी साईन्स को पढ़ना/सीखना एक शख़्स की अपनी खवाहिश पर मुनहसिर है।इसको नाफ़िज़ करना बेकार है।हर लाज़मी (इखतियारी) हरकत/अमल उसके माहतेहत जानकारी में दो दर्जो में दरयाफ़त होकर हासिल हो सकती है।पहली, उसकी मामले की असल माहियत को समझना।दूसरी, पहले से इल्म होना के उसको करने के बाद क्या हासिल होगा।ताहम वहाँ पर एक तीसरा दर्जा भी, जिसमें ये एक माना हुआ तरीका बन जाता है इसके पहले से माहतेहत जानकारी को हासिल करने के लिए जो एक खास साईन्स को सीखने में मदद करती है।हम इस तरीके की तकलीद करेंगे और इस तमहीद में इस मज़मून की तीनों शाखाओं को वाज़ेह करेंगे, साथ में दोनों इज़ाफ़ी हिस्से भी लाएगें।

पहला दर्जा: इस्लाम के अखलाक को हम तीन ज़मरो में बाँटते हैं।

1- अखलाक की जानकारी, **(इल्म अल अख़लाक)**, ना बदलने वाले शख्सी बरताव के साथ सुलूक करती है, जो के अच्छा भी हो सकता है या बुरी भी, ये इस बात पर मुनहसिर नहीं करता के आया एक शख़्स अकेला है या दूसरों के साथ है, बल्कि उसकी शखसियत पर करता है। मिसाल के तौर पर, एक शख्स जिसकी खसलत नरम है, या जो फय्यज़ है, या जिसे शर्म हो, वो ऐसा अकेले भी है और जब वो दूसरों के साथ होता है तब भी ऐसा है। इल्म अल अखलाक हमें इन शख्सी खसलतों के बारे में पढ़ाता है जो कभी तबदील नहीं हो सकतीं।

2- अखलाक की दूसरी किस्म उससे सुलूक करती है के एक शख्स का अपने खानदान के अफ़राद के साथ उसके घर में कैसा बरताव है। इसको खानदान के इंताज़ाम का ढ़ग **(तदबीर-अल-मंज़ील)** कहते हैं।

3- इल्म अल अखलाक की तीसरी किस्म एक शख़्स की समाजी ज़िम्मेदारियाँ, बरताव के उसूलों का ज़ाबता, और दूसरों के लिए किस तरह फ़ायदेमंद हो इसके बारे में पढ़ाती है। इसको **सियासत-ए-मदीना** या **समाजी अखलाक** कहते हैं।

जैसा के अखलाक-ए-नसीरी की किताब में बयान है जो के नसिर उददीन मौहम्मद तूसी के ज़रिए लिखी गई, जब एक शख़्स कुछ करता है,चाहे वो अच्छा हो या बुरा,वो एक वजह से होता है। ये वजह चाहे कुछ कुदरती या एक एहकाम या कानूनी भी हो सकती है। जो कुछ भी वो करता है अपनी खसलत की वजह से वो सब उसके दिमाग़, सोच और अनुभव का नतीजा है। उसका इस तरह का करना वक्त के साथ नहीं बदलता, ना ही वो उसके समाजी माहोल पर मुनहीसर करते हैं। दूसरी किस्म की वजह, एक कानून या एक एहकाम, कोई भी नतीजा जो एक आम सोच से एक जमाअत के ज़रिए बाँटा जाए या एक पूरी कौम के ज़रिए,किसी भी मामले में हो उसे **रसम** या एक **आदत** (रिवाज) कहा जाता है; या फिर ये आलिम, हाकिमी या अनुभवी शख़्स, जैसे के एक पैग़म्बर, एक वली, एक बादशाह, या एक डिकटेटर के ज़रिए रख

लेना। अगर ये अल्लाह तआला के एहकाम हैं, जो पैग़म्बर अलैहिम उस सलावाततो व तसलीमात के ज़रिए बताए गए और औलिया या इस्लामी आलिम के ज़रिए वाज़ेह किए गए, तो ये मंदरजाज़ेल तीन ग्रुपों में से कोई भी एक हो सकता है। पहले ग्रुप में वो एहकाम है जो हर मुफ़रिद शख़्स के ज़रिए माना जाए। उन्हें **एहकाम** (उसूल), या **इबादत** (बंदगी) कहा जाता है। दूसरा ग्रुप समाजी और कारूबारी लेन देन जैसे के **मुनाकहात** यानी शादियों के मामले,और **मआमलात** यानी बेचने और खरीदने के मसलें को एक कानूनी के अंदर लाते हैं। तीसरे ग्रुप में वो एहकामात हैं जो मुल्कों और मआशरों को घेरते हैं कानूनी और सियासी मामलों (हुदूद) के मुतअल्लिक। साईन्सी जो इन एहकाम और उसूलों के तीन ग्रुपों के साथ सुलूक को **फ़िकह** कहते हैं। फ़िकह के मामलों के मुतअल्लिक सीखना, साथ में उन मामलों के उसूलों को तरतीब देना और उन्हें अमल में लाना, वो वक्त के साथ बदल जाता है और जिस मुल्क और कौम में अमल में लाया जाता है उसी पर मुनहसिर करता है। अल्लाह तआला वाहिद हाकिम है जो बदलने का हुकूम देता है। अल्लाह तआला ने जो अलग किया और तबदिलियाँ की माज़ी में अपनी मर्ज़ी से वो इस एहाकामात वाले ग्रुप में आती हैं। मिसाल के तौर पर, जिस वक्त में आदम अलैहि-सलाम रहते थे वो इंसानियत के लिए बारावर थी। इस वजह से ये कानून के हिसाब से और इजाज़त थी के एक आदमी अपनी बहन से शादी कर सकता था। वक्त के साथ आबादी बढ़ने से इसकी ज़रूरत से बच गया, इस वजह से पादरी कानून ने इसे वापिस लिया।

दूसरा दर्जा: इस हिस्से में हम इल्म-अल अखलाक के फाएदे और इस्तेमाल को वाज़ेह करेंगे।

जब एक शख़्स अपने माहोल, जैसे के ज़मीन और आसमानों, या काएनात में हमवारी और हुकूम पर ग़ौर करता है,के किस तरह सेकड़ो सितारे ख़ला में अपने महवर पर लगातार चक्कर लगाते रहते हैं सदियों से बग़ैर एक दूसरे से टकराते हुए, या किस तरह हवा का दबाव,दरजए हरारत, हवा और पानी का बनाना हरकत और मिकदार किस तरह ज़मीन पर बराबरी के साथ ज़िन्दगी को चला रहे हैं, या जब वो ग़ौर करता है इंसानों, जानवरों, पौधों,

बेजान चीज़ों, ज़र्रो, या खलियों या, मुखतसिर ये, बेशुमार मखलूकें जो साईन्स के मज़मूनों में पढ़ाए जाते हैं हाई स्कूलों और यूनिर्वसिटियों में इन सबको बनाने में, तो वो सबसे ज़्यादा ताकतवर और सबसे ज़्यादा जानने वाले तखलीक करने वाले पर यकीन करने पर मजबूर हो जाता है, जिसने बाकाएदा एक निज़ाम बनाया और मखलूक को बनाया। एक शख़्स इतनी अकल के साथ ये समझ जाता है और इस आला, नाज़ूक बराबरी और काएनात में हुकूम को समझता है और मुस्तैदी से अल्लाह तआला के वजूद पर यकीन करता है और एक मुसलमान बन जाता है। जब सुविटज़रलैंड के फ़िलास्फ़ी के प्रोफ़ेसर ने **1966** में इस्लाम कुबूल किया तो उनसे एक खबर वाले ने इस मज़हब तबदीली के बारे में पूछा,उन्होने जवाब दिया: "इस्लामी किताबें पढ़ने के बाद मेने इस्लामी आलिमों के सही (हक़) रास्ते और अफज़लियत को समझा। अगर इस्लामी मज़हब सही तरीके से वाज़ेह/खोला किया जाए, तो पूरी दुनिया में हर कोई जो समझदार है वो इसे प्यार से और अपनी मरज़ी से कुबूल करेगा।"

जब एक शख़्स फितरत और उसके बारे में पढ़कर एक मुसलमान बनता है और तब इस्लामी आलिमों के ज़रिए लिखी गई किताबें पढ़ता है और मौहम्मद अलैहि सलाम की ज़िन्दगी की कहानी और खुबसूरत अखलाकी बरताव के बारे में सीखता है, तो उसका ईमान और पक्का हो जाता है। इसके अलावा, इल्म-अल अखलाक को पढ़ने के बाद वो अच्छे और बुरे मिज़ाज को, फ़ायदे और नुकसान वाले मामलों को समझता है। अच्छे काम करके, दुनिया में वो एक समझदार और कीमती इंसान बन जाता है। उसके दुनियावी मामलात पाबंद से होते हैं और आसानी के साथ अमल में आ जाते हैं। वो आराम और अमन से रहता है। हर कोई उसे प्यार करता है। अल्लाह तआला उससे खुश होता है। वो उसके साथ हमदर्दी का सुलूक करता है और आखिरत में उसे बहुत सारे इनाम देता है। हम एक बार फिर यहाँ इस बात पर ज़ोर देना चाहेंगे के एक शख़्स को खुशियाँ हासिल करने के लिए दो चीज़ों की ज़रूरत है। इन दोनों में से एक है के वो सही इल्म और ईमान रखाता हो जो के साईन्स इल्म हासिल करके और मौहम्मद अलैहि सलाम की ज़िन्दगी की कहानी और अखलाकी बरताव पढ़कर हासिल हो सकता है। दूसरी ये है के वो नरम खसलत वाला शख़्स हो अच्छे बरताव वाला। ये चीज़ें "फिकहा" का इल्म और

“अखलाक” को सीखने और अमल करने से हासिल हो सकती है। जो कोई इन दोनों चीज़ों को हासिल कर लेगा वो अल्लाह तआला की रज़ा और मौहब्बत हासिल कर लेगा क्योंकि अल्लाह तआला अपने लामहदूद इल्म से सब कुछ जान लेता है। उसने फरिश्तों और पैग़म्बरों को ज़्यादा इल्म से नवाज़ा। फरिश्ते और पैग़म्बर कोई भी शर्मनाक,ऐब वाली या बदसूरत चीज़ नहीं रखते। इसके बरअक्स, इंसानों, (पैग़मबरों को छोड़कर) को बहुत थोड़ा इल्म है और उनका इमान या बुरे चाल चलन से उस पर धब्बा लग चुका है। इस सबब की वजह से, इंसान अल्लाह तआला, फरिश्तों और पैग़मबरों से बहुत दूर हैं। उनके कमाल की इज़्जत/शौहरत में शामिल होने से उनको महरूम रखा गया। अगर एक शख्स अपने सच्चे ईमान के नतीजे को हासिल करने में नाकाम रहे अपने साईन्सी इल्म को पढ़ने और फितरत पर ध्यान देने की कमी की वजह से,जिसका मतलब है लाइल्मी की हालत में ग़लती करना; और अगर वो मौहम्मद अलैहि सलाम के बारे में असली इल्म हासिल करके अपने ईमान को मज़बूत नहीं करता, तो वो उन लोगों में शामिल हो जाएगा जो लाज़वाल तबाही और परेशानियों के पाबंद हो जाते हैं। इसके उलट, अगर वो सच्चा ईमान हासिल करने में कामयाब हो जाए और नफ़स की तकलीद करने से मना करदे और अल्लाह तआला के एहकामात की फरमाबरदारी करे और ममनुआत को छोड़ दे जो वो मज़े कर रहा था,तब वो अल्लाह तआला की शफ़कत और माफ़ी से महरूम नहीं रहेगा। वो खुशियों से महरूम नहीं रखा जाएगा। हो सकता है जो उसने बेईन्साफ़ियाँ की हैं,वो बहरहाल थोड़े अरसे के लिए हो सकता है उसे अल्लाह तआला की शफ़कत हासिल होने से मौकूफ़/मंसूख करदे और उसे मजबूर करदे थोड़े अरसे के लिए आरज़ी तौर पर दोज़ख में रखा जाए उसकी आग में चाबूक लगाने के लिए। आखिरकार, अपने ईमान की वजह से वो अल्लाह तआला की इनायत फिर हासिल कर लेता है। दोज़ख की आग गंदे कामों की गिलाज़त को धो देता है और उसको पाक कर देता है ताकि वो जन्नत में जाने के लायक हो।

ये ज़ाहिर है के सारी इनाएतों और आराम में मुकम्मल ईमान रखना है। हर कोई अपने दिल को गलत ईमान और शकूक से साफ़ रखता है। अगर एक शख़्स सही ईमान हासिल करले और अच्छी शखसियत रखता हो और

अच्छे काम करता हो,उसे अल्लाह तआला के पैग़म्बर, औलिया और फरिश्तों की आला रूहों से मुशाबहत रखेंगे।वो उनके करीब होगें और वो उसे ऊँचे मरतबों की तरफ़ राग़िब करेंगे जो के बिलकुल कशिशे सक़ल की ताकत के कानून की तरह है।वो उसकी तरफ़ बिलकुल इसी तरह मुतासिर होते हैं जैसे के एक छोटा पिन बहुत ज़्यादा ताकत वाले बरकी चुंबक की तरफ़ खींचता है या एक छोटा पिन एक बड़े चुंबक जो के एक पहाड़ की तरह बड़ा हो उसकी तरफ़ खिचें।उसके बाद, वो "**पुल सिरात**" को बिजली की सी तेज़ी के साथ पार करेगा और उन खुशकिस्मत लोगों में शामिल होगा जो जन्नत के बाग़ों में गरमाई ले रहे हों,अपने रूहानी दिल और रूह के लिए वो पहले से तख़लीक की गई इनाएतों का मज़ा ले रहा हो।

नज़्म:

आलिम जो वो जानते हैं उस पर अमल करते हैं, वो सख्त सजा को नहीं भूगतते,जन्नत की इनाएतें वो हासिल करते हैं, वही सबसे आला कामयाबी है!

इल्म-अल अखलाक वो शाखा है जो रूहानी दिल (**कल्ब**) और नफ़सा (**रूह**) की पाकिज़गी को पढ़ता है।ये उसी तरह मुशाबहत रखती है जैसे दवाई के इल्म का जिस्म के लिए उसूले सहत की साईन्स।बुराइयाँ कल्ब और रूह की बीमारियाँ हैं।बुरे काम इन बीमारियों की अलामतें और निशानियाँ हैं।इल्म-अल-अखलाक एक इज़्ज़तदार, कीमती और ज़रूरी इल्म है।बुराइयाँ कल्ब और रूह को तकलीफ़ देती हैं वो सिर्फ़ इस इल्म से छाँटी जा सकती हैं।ये सिर्फ़ अकेला इल्म है जो कल्ब और रूह को आराम पहुँचाता है और मज़बूती की चढ़ाई नापता है अच्छे अखलाकी खासियत के साथ,दिलों को और रूहों को खुबसूरत बनाता है इसकी वजह से और ज़्यादा खुबसूरत अखलाकी खासियतों के साथ मज़बूती और आराम देता है; और दिलों में और रूहों में एक मुसतकिल हालत पाकिज़गी की कायम करता है मुनासिब और साफ़ कमाल के लिए हमेशा बेहतरी हासिल करने की आदत डालना।

[कल्ब और रूह दोनों मुखतलीफ़ असलियतें हैं अगरचे वो एक दूसरे के बराबर हैं।इस किताब में, जब रूह का अकेले ज़िकर किया जाए तो ये समझ लिया जाए के हमारा मतलब दोनों से है।]

क्या एक शख़्स का चाल चलन बदल सकता है?क्या एक इंसान के मुमकिन है के वो अपने चाल चलन को छोड़ दे और दूसरे को अपना ले?यहाँ पर बहुत सारी मुखतलीफ़ राए हैं लेकिन वो खास तौर पर तीन गुप में बाँटी जा सकती हैं:

1- चाल चलन कभी नहीं बदलता क्योंकि ये एक इंसान की असलियत होती है जो बदलने के काबिल नहीं होता।

2- चाल चलन दो किस्मों के होते हैं: पहला पैदाईश के वक्त तखलीक किया जाता है जो कभी नहीं बदलता।दूसरा आदतों पर मुबनी होता है जो बाद में हासिल होता है।ये हासिल किया हुआ चाल चलन तरमीम भी हो सकता है या बदला भी जा सकता है।

3- चाल चलन पूरे तौर पर पैदाइश के बाद हासिल होता है और बाहरी असरात की वजह से तबदील हो सकता है।

4- इस्लामी उल्लेमा की अकसरियत तीसरे नज़रिए परए क राए रखती है।पाक कानून **(शरीअत)** जो पैग़म्बर लेकर आए वो इस तीसरे नज़रिए को साबित करता है के सही है।तालिबे इल्मों को सीखने के तरीके जो मज़हबी उल्लेमाओं और तसव्वूफ़ के मासटरों ने कायम किए हैं वो इस तीसरे ख्याल की रोशनी में काम करता है।

किसमुनासिब खसलत के मुताबिक इंसान इस दुनिया में आए हैं? ये एक दूसरा सवाल है जो अभी तक हल नहीं हुआ।उल्लेमाओं की अकसरियत की राए ये है के इंसान अच्छाइयों के लिए मुनासिब पैदा हुए हैं और तरक्की करने के लिए।बाद में, बुरी आदतें नफ़स की तसकीन में उसे खुश करने में, अच्छे अखलाक सीखने में लफ़्ज़ों का इस्तेमाल और बुरी सोहबत सब उसका नती बनती हैं।ये एक हदीस शरीफ़ में बयान है: "**हर एक वाहिद शख़्स ऐसी**

खसलत में पैदा होता है जो इस्लाम के लायक है। बाद में, बहरहाल, वो अपने माँ बाप के ज़रिए इसाई, यहूदी या बिदअती बनते हैं।"

दोहा/नज़म

तुम अपने हाथ से अपने आपको खराब कर रहे हो
हांलाकि तखलीककार ने तुम्हें खुबसूरती से तखलीक किया।

कुछ उल्लेमाओं के मुताबिक, इंसानी रूह इस दुनिया में एक नापाक असलियत की तरह आई है। रूह अपने आप में पाक होती है लेकिन जब एक बार ये जिस्म से मिल जाती है, तो जिस्म की माद्दी ज़रूरत इसे रज़ील कर देती है। बहरहाल, वो जिन्हें अल्लाह तआला मुंतखिब करे हिफ़ाज़त करने के लिए और हुकूम दे अच्छाई का तो वो जिस तरह पैदा हुए हैं नापाक ऐसे नहीं रह पाते वो अच्छाई की तरफ़ लौट जाते हैं।

कुछ दूसरे उल्लैमा कहते हैं के पैदाइश से ना तो रूह अच्छी होती है ना ही बुरी। ये गैर-जानिबदार वाली हालत होता है। ये किसी भी तरफ़ मूड़ सकता है। एक शख़्स जो अच्छाई सीखता है वो समझदारी/बुर्दबारी और खुशियाँ हासिल करता है। वो कहते हैं के जो शख़्स बुरे लोगों के साथ वाबस्ता होता है और बुरी और गंदी चीज़े सीखता हे वो कमबख्त और बुरा शख़्स है।

गालेन [कलोडियस गालेन [**130-200** ए.डी.], ग्रीक हकीम और माहिरे तिब।]ने कहा, "रूहानी तौर पर,आलिमयाँ/लोगों की तीन किस्में हैं। पहला अच्छे लोगों का ग्रुप है, और दूसरा ग्रुप बुरे लोगों का है। तीसरे ग्रुप में वो लोग हैं जो पैदाइशी ना तो अच्छे है और ना ही बुरे। ये लोग बाद में किसी भी मुकाबले ग्रुप में शामिल हो जाते हैं। थोड़े लोगों की अच्छी तखलीक होती है। एक अच्छी अकसरियत लोगों तखलीकी/पैदाइशी बुरी होती है और जो हमेशा बुरा करते रहते हैं। कुछ लोग जो अच्छे या बुरे होते हैं वो उन लोगों पर मुनहसिर होते हैं जिनके साथ वो रहते है, उन दोनो साबका ग्रुप के बीच में एक बस्ती मकाम रखते हैं।" इस नज़रिए के मुताबिक, थोड़े लोग अपनी आदतें बदलते हैं। [पूरे तौर पर दिल से बेखबर,ग्रीक फ़लसफ़ियों ने सिर्फ़ रूह

के साथ लेन देन किया, और कुछ मुसलमान अदव के मुसंनिफ़ों ने अखलाक पर उनकी मिसालों की तकलीद करी।]

आलिमों की अकसरियत के मुताबिक, हर किसी की आदत बदलती है।किसी की खसलत जिस तरह तखलीक की गई वो उस तरह नहीं रहती।अगर फितरतें ना बदलें, तो मज़हब जो पैग़म्बरों के ज़रिए बताए गए वो नाकारा और ग़ैर ज़रूरी हो जाते।पढ़ाई और सज़ा देने के तरीके जो एक राए से आलिमों के ज़रिए कायम किए गए वो बिल्कुल बेमानी हैं।सब आलिम अपने बच्चों को इल्म और आदतें सीखाते हैं और ये हमेशा पाया गया है के तालीम और मस्क फाएदेमंद नतीजे देते हैं।इन वजूहात की वजह से ये साफ़ ज़ाहिर है जैसे के चमकता हुआ सूरज के इंसानी फ़ितरत बदलने वाली है।बहरहाल, कुछ आदतें इतनी गहरी मिली होती हैं,- दरहकीकत, उनमें से कुछ इतनी ज़्यादा होती हैं के वो रूह के लिए एक ज़रूरी जुज़्ब बन जाती हैं- के ये बेइंतेहा मुश्किल हो जाता है के उसे बदला जाए या छोड़ा जाए।वो आदतें ज़्यादातर लाइल्म और बदकार लोगों में देखी जाती हैं।उनको बदलना रियाज़त और बहुत सख्त मुजाहदा की ज़रूरत है।**रियाज़त** का मतलब है नफ़स की इच्छाओं/चाहतों की बेईन्साफियों और नुकसान के खिलाफ़ रूकावटें, और **मुजाहदा** का मतलब है फाएदेमंद और समझदार बरताव में तेज़ी से मज़बूती जो नफ़स के लिए नाखुशगवार है।लाइल्म और बेवकूफ़ लोग अपने फ़ैसलाकुन मज़बूती से जमे हुए चाल चलन की खसलतों का साथ देते हुए उसकी नाराज़गी के लिए रियाज़त और मुजाहदा को चलाने के लिए नफ़स के खिलाफ़ इस तरह वो अपनी मस्ती को दलीलों के ज़रिए कोशिश करते हैं अपने आपको बुराई की सवारी कराने के लिए।अगर हम उनकी बहस को कुबूल करलें और हर किसी को उनके नफ़स की इच्छाओं **(हवा)** की तकलीद करने के लिए और मुर्जिम को सज़ा ना दे, तो इंसानियत बेईन्साफ़ी की तरफ़ धकेल दी जाएगी।हकीकत में, अपनी हमदर्दी की वजह से इंसानी मख़लूक के लिए,उसने पैग़म्बर भेजे लोगों को अच्छी और बुरी खसलतों के बारे में सीखाने और पढ़ाने के लिए।उसने सारे आला उस्तादों में से अपने प्यारे पैग़म्बर **मौहम्मद** अलैहि सलाम को चुना।आपने पिछले सारे पाक कानून अपने पाक कानून **(शरीअत, मज़हब)**, यानी, "**शरीअत अल मौहम्मद**" से बदल दिया।आपका मज़हब आखिरी

मज़हब बन गया। इस तरह, आपके चमकदार मज़हब में सारी अच्छाइयों और सीखने के तरीके शामिल हैं। वो जिनके पास अकल है और अच्छे और बुरे में तमीज़ कर सकते हैं उन्हें अखलाक की किताबें पढ़नी चाहिए जो इस मज़हब से निकाली गई हैं और उन्हें याद करो। वो अपने कारोबार को इसके खाके के मुताबिक बनाएगा ताकि वो आराम, अमन, खुशी और इस दुनिया में और आने वाली में निजात पा सके और अपने खानदान और समाजी ज़िन्दगी को तरतीब देने में मदद कर सके। ये इंसान का सबसे खास/अहम फर्ज़ है। हर किसी को इस किताब को बहुत ध्यान से पढ़ना और याद रखना चाहिए, जिसे हमने **इल्म अल अखलाक** का नाम दिया है क्योंकि, अल्लाह तआला की मदद से, हमने सारी जानकारी इकट्ठा की जो के इस बुनियादी मक़सद को हासिल करने में मददगार साबित होगी।

तीसरा दर्जा: हमने "इल्म अल अखलाक" को तीन हिस्सों में बाँट दिया है। इनको अच्छे तरीके से समझने के लिए, हमने इज़ाफ़ी जानकारी दी है। हर इल्म की शाखा और साईन्स कुछ मददगार शाखाएँ भी रखती हैं। वसा औकात सारी शाखाएँ कुछ बातों पर मुतफ़िक हो जाती हैं। इन नुकतों पर, साई न्स की सारी शाखाएँ एक बन जाती हैं। ये एक नुकता उस साईन्स का मज़मून बन जाता है। मिसाल के तौर पर, तीब की साईन्स की बहुत सारी शाखाएँ हैं लेकिन जिस्म की बीमारी और सेहत के बारे में पढ़ते वक्त हर शाखा एक हो जाती है और यही तीब का उनवान है। एक साईन्स को आसानी से समझने के लिए, पहले हमें उसके मैज़ूअ को समझना चाहिए। इल्म अल अखलाक का मौज़ूअ इंसानी रूह है। ये हमें पढ़ाती है के किस तरह हम अपनी रूह की बुरी खासियतों को साफ़ कर सकते हैं और किस तरह उसे पाकिज़गी से भर सकते हैं। पहले, हमें रूह के बारे में पढ़ना चाहिए और बाद में बुराई और अच्छाई के बारे में। इमाम शाफ़ीई ने मंदरजाज़ेल दोहे कहा है:

मैंने बुराई सीखी, एक बुरा शख्स बनने के लिए नहीं,जिसे ये पता ना हो के बुराई क्या है, वो इसमें घिर जाता है,जानो यकीन के लिए!

हम तीन मरहलों में मौज़ूअ को वाज़ेह करेंगे ताकि कल्ब और रूह को जितना ज़्यादा मुमकिन हो सके पहचाने और इसकी ज़ाहिर और छुपी हुई

ताकतों को वाज़ेह कर सकें, साथ में उन चीज़ों को भी जो खुशियों का सबब बनती हैं।

पहला मरहला/दर्जा: रूहानी दिल (**कल्ब**) और नफ़स (**रूह**) क्या होती हैं? ग्रीक फ़लसफ़ी/फ़िलासफरों और उनके मानने वाले इन दोनो असलियतों को **नफ़स-ए-नतीका** या, मुखतसिर तौर पर,**नफ़स** कहते हैं।[अगरचे, इमाम अर रब्वानी रहीमाहुल्लाहु तआला, जो के एक बड़े आलिम थे और "**तसववुफ़**" की साईन्स और अखलाक के माहिर, ने कहा के नफ़स, रूह और रूहानी कलब अलग असलियतें हैं।] कुरआन अल करीम की सुरह इसरा की पीचयासी आयत ए करीमा का मतलब है: "**वो तुमसे रूह के बारे में पूछेंगे।उन्हें जवाब देना के रूह भी और दूसरी बशर की तरह जो अल्लाह तआला ने तखलीक की हैं उनके बीच एक असलीयत है।**" ये आयत-ए-करीमा कोई भी ऐसी कोशिश जो रूह की तारीफ़ करे उसे मना करती है।दरहकीकत, ज़्यादातर तुरूक-ए-आलिया और इस्लामी आलिमों के (तसव्वुफ का खुशियाँ मनाने वाला रास्ता जिसे कहते हैं) शैखों ने रूह के बारे में बात करने का नज़रअंदाज़।जैसा के कुरआन अल करीम से ज़ाहिर/समझा गया है, के रूह की ज़रूरी खसलत के बारे में बात करने से मना किया गया है, ना के उसकी खासियतों या जुज़ब से।असल में, ज़्यादातर आलिमों ने अपने शार्गिदों, साथ के साथ इस मामले को जानने वालो को वज़ाहत दी है कि,दिल और रूह माददी मकसद नहीं हैं, और वो (गैर माददी वजूद, जिसे उन्होने कहा है) **जवाहर-ए-बासित** हैं।ये दो मरकज़ हैं जो इंसानी वजह की वाज़ेह जानकारी हैं, और जो जिस्म के अंदर की सारी ताकतों और हरकतों को काबू करती हैं और बनाती हैं।ये तारीफ़ तसववूफ़ के आला रहनुमा और (साईन्स जिसे कहते हैं) कलाम के आलिमों के ज़रिए दी गई है।[वो जोरूहानी कलब और रूह के बारे में तफ़सीली जानकारी चाहते हैं उन्हें शैख शिहाबऊददीन उमर सोहरावरदी (**539 [1145** ए.डी.]-**632 [1234]**, बग़दाद), शाफ़ई मसलक के एक आलिम,और खुशकिस्मत लोगों में से एक जिन्होने अब्दुलकादिर जिलानी से फ़ैज़ हासिल किया की लिखी हुई **अवारिफ़-उल-मारीफ़** किताबें और इमाम रब्वानी अहमद फ़ारूकी सरहिंदी (**971 [1563** ए.डी.], सरहिंद, इंडिया- **1034 [1624]**, सरहिंद) रहीमा हुल्लाहु तआला।] की **मकतूबात** को पढ़ना चाहिए।

हम अब आगे छः पैराग्राफ़ में रूहानी कलब और रूह के बारे में जानकारी देंगे।

1- रूहानी दिल और रूह की मौजूदगी:रूह की मौजूदगी साफ है। कोई भी चीज़ जो अपने आप में साफ हो उसे अपनी मौजूदगी साबित करने के लिए किसी ज़ाईद शहादत की ज़रूरत नहीं है। सबसे ज़्यादा साफ़ और ज़ाहिर चीज़ इंसानी बशर के लिए उसकी मौजूदगी है। एक इंसान एक थोड़े से लम्हे/सैकेण्ड के लिए भी अपने बारे में नहीं भूलता। रूह भी चाहे सो रही हो या पी हुई हो कभी अपने बारे में नहीं भूलती। ये साबित करने के लिए के अपनी मौजूदगी को खुद ही पहचानता है इसकी कोई वजह नहीं है। ताहम इस बात की इजाज़त है के बातचीत की जाए और साबित किया जाए के क्या रूह माददी है या नहीं,या क्या ये अपने आप या किसी और चीज़ के साथ मौजूद हुई है या दूसरी इस जैसी किसी खासियत को रखने वाली के साथ मौजूद हुई है। उनमें से ज़्यादातर जाहिर हैं, उनको नीचे बताए गए पाँच पेराग्राफ़ों में नज़रसानी किया जाएगा:

2- रूहानी दिल/कल्ब और रूह असली हैं,जिसका मतलब है वो मौजूद हैं। फारसी में रूह को "**जान**" कहा जाता है। जब एक जानवर मर जाता है, हम कहते हैं इसकी "जान" निकल गई। इसका मतलब है इसके जिस्म से रूह निकल गई। हर तखलीकी चीज़ या तो असली **(जौहर)** है या एक खासियत **(अराज़)**। अगर कोई चीज़ जौहर है, तो उसे अपनी मौजूदगी की नीव के लिए किसी और की मौजूदगी की ज़रूरत नहीं है। वो अपनी मौजूदगी में खुद कायम रहती है। अगर कोई चीज़ खासियत **(सिफ़त, अराज़)** है, तो ये अपने आप में मौजूद नहीं रह सकती। इसको कायम रखने के लिए किसी और चीज़ की ज़रूरत होगी। काम और मकसद जौहर है। उनका रंग, खुशबू और साखत उसकी खासियतें/सिफ़ात हैं। जौहर पर रंग मौजूद होता है। लियाकत के लिए जौहर के बगैर रंग मौजूद नहीं हो सकता। यहाँ पर दो तरह के जौहर हैं। पहला है **मुजर्रद**, यानी ग़ैर माददी वजूद। इसका कोई वज़न, साख्त या रंग नहीं होता, और ये हवासे खमसा पर कोई असर नहीं डालता। दूसरा माददी शए है। गैर माददी जौहर हवासे खमसा को महसूस नहीं कर पाता और ना ही तकसीम हो

सकता है। समझदारी (**अकल**) और रूह इस तरह की मिसाले हैं। इसके बरअक्स, जौहर हवासे खमसा को महसूस करता है और तकसीम भी हो सकता है। जब जौहर एक खास साख्त/शक्ल ले लेता है, तो इसे मकसद (**जिस्म**) कहा जाता है। मुखतलीफ़ वाक्यात के ज़रिए ये साबित हो गया के रूह एक जौहर है। सबसे आसान वाकया इसको साबित करने के लिए ये है: सिफ़ात जौहर पर कायम होते हैं। दूसरे लफ़्ज़ों में, जौहर सिफ़ात बरदाशत करते हैं। रूह हर चीज़ जो महसूस और सोचने के काबिल है उसे कुबूल करता है और सहन करता है। इस लिए, दिल और रूह जौहर हैं, ना के खासियतें। ये बहस, हाँलाकि, कुछ नाहमवार मिसालों की बुनियाद पर माना किए जाते हैं, जैसे के सिफ़ात की हस्ती दूसरी सिफ़ात पर; हरकत, मिसाल के तौर पर, वो हरकत की सिफ़त है, जो के एक जौहर नहीं है।

3- रूहानी दिल और रूह इबतिदाई हैं: कोई चीज़ जो दो हिस्सों में ना बटे वो इबतिदाई है। इबतिदाई/असलका उलटा मरकब या बहुत सी चीज़ों से बना हुआ है। इस तारीफ़ के मुताबिक, किमयाई जुज़्व को जिन्हें असल माना जाता है, वो असल में मुरकब हैं क्योंकि वो ज़र्रों में या छोटे गैसियस ज़र्रों में तोड़ देता है। रूह असल है ये अपने आपको इस हकीकत से साबित कर रहा है के वो कुछ चीज़ पकड़ रहा है जो के असल कहा जाता है। अगर रूहानी दिल और रूह दोनो मुरकब थे, यानी अगर इन दोनो को हिस्सों में बाँट देना मुमकिन हो जो के असल हो यानी, जिसे तकसीम ना किया जाए,तो वो उनको पकड़ने में नाकाम रह सकता है। इसलिए, जब रूह, मिसाल के तौर पर, हिस्सों में तोड़ दिया जाए,तो कोई भी चीज़ जो असल हो तो वो उसके साथ टूट जाएगी। और वो, इस तरह,सवाल से परे है, क्योंकि कोई भी असल चीज़ टूट नहीं सकती।

4- रूहानी दिल और रूह जिस्म नहीं हैं: एक जौहर जिसकी साख्त हो जैसे के ऊँचाई, गहराई और लम्बाई वो जिस्म है। इसे हम माददी शए की तरह भी वाज़ेह कर सकते हैं जिसकी शक्ल हो या साख्त हो। चीज़ें जो माददी हिस्ती (**जिस्मों**) में होती हैं उन्हें **जिस्मानी** माददी शए कहते हैं। चूँकि खासियत जिस्मों में वजूद रखती हैं, इसलिए उनको माददी कहा जाता है।

5- रूहानी दिल और रूह महसूस करना और बनाना:वो खुद को जानते हैं।वो ये खुद भी जानते हैं के वो अपने आपको जानते हैं।वो रंगों को देखने के ज़रिए और आवाज़ों को सुनने के ज़रिए महसूस करते हैं।वो असाबी निज़ाम को बनाते हैं और नसों को चलाते हैं, इस तरह जिस्म को खास हरकात की अदाएगी करवाते हैं।ये हरकात रज़ाकाराना हरकात हैं।

6- रूह को हवासे खमसा के ज़रिए महसूस नहीं किया जा सकता:माददी वजूद महसूस किया जा सकता है।चूँकि रूह एक जिस्म नहीं है या एक माददी वजूद नहीं है, तो इसे महसूस नहीं किया जा सकता।

दूसरा दर्जा: जब एक शख़्स मर जाता है तो रूह के साथ क्या होता है?जब एक शख़्स मर जाता है और उसका जिस्म सढ़ जाता है,तो उसका रूहानी दिल और रूह नहीं मिटती।मौत उनको जिस्म से अलग कर देती है।जब वो अपना जिस्म छोड़ देते हैं, तो वो मुजरर्द, यानी गैर माददी दुनिया में चले जाते हैं।वो [फना होने के दिन तक (**कयामत**) मिटते नहीं हैं।मज़हबी उल्लेमा, फ़िलास्फर और ग़ैर मिलानी साईन्सदानों का यही ईमान है।सिर्फ़ कुछ फ़ितरियों ने इस मुतफ़िक राए से इखतिलाफ़ किया और सही रास्ते से हट गए।वो इंसानी वजूद का मवाज़ना उस घास से करते हैं जो एक रैगिस्तान में उगती है।वो कहते हैं के इंसानी मखलूक घास की तरह है,जो वजूद में आती है, बढ़ती है और ग़ायब हो जाती है; उसकी रूह हमेशा के लिए वजूद में नहीं रहती।इस वजह से, इस फ़ितरतियों के ग्रुप को "हशाशिस" या "घास का सैदागर" कहा जाता है।फ़िलासफ़रों और मज़हबी आलिमों ने उनकी इस बेइमान फ़िलासफ़ी को मुखतलीफ़ सबूतों से खारिज किया है।

[अल्लाह तआला ने बहुत सारे जुज़्व तखलीक किए, उनमें से एक सौ पाँच अभी तक खोजे जा चुके हैं सबकी अपनी मुखतलिफ और ख़ास खुसुसीयात हैं।हर अंसर ज़र्रो से बना हुआ है।उसने हर ज़र्रे को, एक छोटे जैनरेटर की तरह बनाया है, जो के तवानाई का एक बड़ा ज़रिया है।उसने ज़र्रो को मिलाकर छोटे अनासिर और बरकी ज़र्रो की तखलीक करी।तब, उसने फितरी और ग़ैर फितरी मुरकब, खलिए, मुखतलिफ़ रेशे और निज़ाम तकलीक किए।उनमें से हर किसी में उमदा, कुदरती कानून और हम आहंगी थी उनकी

तखलीक में दिमाग उसकी हैरतअगैज़ियों में घिर जाता है। मिसाल के तौर पर, एक खलिया जिसे हम सिर्फ़ खुर्दबीन से देख सकते हैं, वो एक बड़े कारखाने की तरह है जिसमें बहुत सारे शोबे हैं। अभी तक इंसानी दिमाग सिर्फ मशीनरी का एक बेपरवाह हिस्सा देखा है जो इस देअ हैकल मशीनरी में मौजूद होता है। सेकड़ों खलिए जो इन्सानी जिस्म को बनाते हैं उसकी मौजूदगी के लिए हज़ारों मुकम्मल हालात जिस्म के अंदर और बाहर चाहिए होती हैं। अगर इनह ज़ारों शर्तो में से और हमआहंग निज़ामों में कोई एक भी रूक जाए, तो पूरा जिस्म रूक जाता है। अल्लाह तआला सबसे ज़्यादा ताकत वाला और जानने वाला इस जिस्म की मशीनरी को अपने आप चलाता है मुनासबत और तरतीबवार लातादाद निज़ामों की तखलीक के ज़रिए रूहानी दिल और रूह जैसा के बोला जाता है, इस मशीन की बरकी ताकत है। जब एक जैनरेटर में कोई खराबी हो जाती है तो, बरकी ताकत चली जाती है। इसी तरह, जिस्म के अंदर और बाहर मौजूद तरतीब और मुनासबत नाकाम हो जाती है तो रूह जिस्म से निकल जाती है और इस तरह इंसान मर जाता है। दुनिया में कोई भी मशीन या मोटर और गैर यकीनी काम नहीं करती। वे सब अपने वक्त पर खत्म हो जाती हैं और सढ़ जाती है। जब एक इंसान का जिस्म कब्र में सढ़ जाता है तो उसका कोई भी खलिया या अनसर अदम मौजूदगी नहीं होता। जिस्म के छोटे ज़र्रो में जैसे के कार्बन डाएऑक्साइड, अमोनिया, पानी और फ्री नाइट्रोजन ज़मीन के और एनएरोबीट छोटे अज़ा के असर के साथ सढ़ने लगे। ये सढ़ना तबई किमयाई वाक्या है। आज, ये सच्चाई से माना जाता है के माददा किमयाई और तबई हरकात के दौरान मौजूद होने से बंद नहीं किया जाता सकता। फ्रेंच कौमिस्ट/दवासाज़ (और तबीब) लवोइसियर, जो **16**वीं सदी में थे, उन्होने ये साबित किया अपने तजुर्बो से के माददा ना तो खत्म किया जा सकता है ना ही किमाई हरकात के दौरान किसी चीज़ से तखलीक नहीं किया जा सकता। वो ये मानते थे के हर चीज़ किमयाई हरकात और किमयाई कानून के ज़रिए मरहले में आती है और इसलिए उन्होने कहा, "कुदरत में, कुछ भी तखलीक नहीं होता और कुछ भी खत्म नहीं होता।" आज/मौजूदा दौर में, नई खोज की गई जानकारी के मुताबिक नयूकलीअस और न्यूकलीअर हरकात ये बताती हैं के माददा तवानाई में तबदील हो जाता है और ग़ायब हो जाता है, इस तरह इस

बात को साबित किया के लवोइसिअर गलत था। आज, साइंसदा साफ़ देखते हैं के साइंस में और ज़्यादा तरक्की, नई खोजें और दरयाफ़्तों ने इस्लामी मज़हब को नई ताकत बख़्शी है और इस्लाम के दुश्मनों के इल्ज़ामों को खारिज किया है और बिदअतियों को बरबाद और ज़लील किया है जो माददों की इबादत करते थे। बदकिस्मती से, बहरहाल, अभी भी युनिवर्सिटी के कुछ मज़हबी लाइल्म सनदयाफ़्ता जो अपनी मशकूक हल्की साइंसी जानकारी को एक औज़ार के तौर पर इस्तेमाल कर रही थी और मुस्लिम दुनिया में मौजूदा साइंसी रोक को बुनियाद बनाया इस्लाम के खिलाफ़ जो जारहाना मारका बुलंद किया था। ये बच्चे इन डिपलोमों के साथ नौजवान नसल को गुमराह करने की कोशिश कर रही थी ये झूठ बोलकर जैसे के, "इस्लाम पिछड़ा हुआ है। ये तरक्की को रोकता है। ईसाई तरक्की कर रहे हैं। उन्होने हर तरह के साइंसी और टेकनालोजिकल गाड़ियों की एजाद की है। दवाइयों, दिफ़ाई और ज़राए अवलाग में नई एजादों ने हमारी आँखे चमका/ के हेरान करदीं हैं। मुसलमान साइंस और टेकनालॉजी की किसी भी तरक्की के बारे में खबरदार नहीं हैं। हमें ईसाइयों की तकलीद करनी चाहिए।" वे नौजवानों को उकसाते हैं के वे इस्लाम के खूबसूरत अखलाक को और मुस्लिम भाईचारे को छोड़ दें और यूरोपियन और अमेरिकन की तकलीद करें। वे कहते हैं के उनकी तखलीद करने का मतलब है तरक्की करना। वे कोशिश करते हैं के नौजवानों को ग़ैर मज़हबी और इस्लाम का दुश्मन बनाएँ अपनी तरह और इस तरह उन्हे तबाही के तरफ ले जाते हैं। असल में, इस्लाम ने हमें साइंस और टेकनालॉजी में तरक्की करने के लिए हुकूम दिया है। ईसाई और बाकी काफिरों ने वही किया जो उन्होने अपने आबाओ अजदाद और मास्टरों से सीखा। उन्होने अपने बाप दादाओं से जो सीखा उसमें थोड़ा बहुत तरमीम करके उसे दोबारा किया। अगर उनके बाप दादाओं ने कुछ नहीं किया होता तो, आज ये नसल कुछ भी करने के काबिल नहीं होती। ये कहावत, "तकमील अल सनाअत तलाहुक-ए-अफ़कार के ज़रिए होती है बहुत सदीयों पहले कही गई थी। ये कहावत बयान करती है के टेकनालॉजी में कमाल उसमें इज़ाफा करके और सोचों को मिलाकर ही मुकम्मल हो सकता है। तारीख गवाह है के मुसलमान हर तरह की साइंसी और टेनालॉजी बहाली की वाहिद चैमपियन थे। ये वही थे जिन्होने साइंसी

फ़ज़िलत को सवांरा और साइंसी लहर को अच्छा बनाया पिछली सदी में। ये सब पूरा हो पाया इस्लामी मज़हब और हुकूमतों और रियास्तों के ज़रिए जिन्होने इस्लामी एहकाम नाफ़िज़ किए। ईसाईयों ने देखा के वे सलीबी जंग के ज़रिए इस्लामी रियास्तों को बरबाद नहीं कर सकते। उन्होने अपना मकसद अंदरूनी तौर पर पूरा किया सियासी साज़िशों, झूठ और धोखे के ज़रिए। उन्होने मज़हबी तौर से गैर जानिबदार और बेमज़हबी लोगों के नीचे उनकी ज़मीन पर हुकूमतें कायम कीं। लेकिन वो इस्लाम को ख़त्म नही कर पाए। साइंसी खोजे जो मुसलमानों ने अपने पीछे छोड़ी उनमें कुछ तरमीहात करके, इन गैर जानिबदार और बेमज़हबी लोगों ने मौजूदा तरक्की आफ़ता रियास्त के लिए इसका रसूख हासिल किया। इनकी मुखालफ़त करने के लिए इस्लाम में उनके बुरे इरादों को खोला, लोग जिनकी सिर्फ वाहिद फ़िकर अपनी नफस परस्ती की इच्छाएँ, राहतें और फायेदे थे वो लोगों के दिमागों को तारिक कर देते थे इस्लाम को पीछे हटने वाला निज़ाम बताकर और इस हकीकत को छुपाते थे के इसने फन और साइंस के एहकामात दिए हैं। सारे यहूदी, इसाई और ताहम बुत परस्त, दुनियाभर के लोग जो जन्नत और दोज़ख में यकीन रखने वाले, और गिरजाघर और मजलिसे उल्मा सब तोहीद परस्तों के साथ ग़र्क हो जाएंगे। चूँकि इन मुजतहिदों ने उन ईमान वालों को बदनाम नहीं किया जो तंजूली के साथ थे, उन के नज़रिए में जो जदीदयत थी वो साइंस और फनून के अलावा बेहयाई और बदअखलाकी थी। इस्लाम जिस बदनामी के सख्त हमले का मुस्तहीक नहीं था उसको बनाने वाले अंग्रेज़ थे। बराएमहरबानी **एक अंग्रेज़ जासूस का एतराफ़** देखिए, जो हमारी इशाअतों में से एक है! आज के मुसलमानों क्या ज़िम्मेदारी बनती है के वो इकट्ठे हों इस्लामी और साइंसी तालीम पर अपनी पकड़ दोबारा मज़बूत करें, जिसका इस्लाम ने हुकूम दिया है, अपनी बड़ी सनअतें दोबारा कायम करें और ऐसी रियास्त का कयाम करें जो फनूनी निज़ाम और सारे आलात से भरी हो, ईसाईयों को हर मकाम पर बाहर करें, और इस तरह पूरी इन्सानियत की फ़लाह की तरफ़ रहनुमाई करें।

वो माददा जो इन्सानी जिस्म को बनाता है वो ज़मीन, पानी और हवा से आता है। जानदार चीज़ों को इन तीनों ज़रियों की ज़रूरत है। जब मरने के बाद जिस्म सढ़ जाता है, तो ये इन तीनों ज़रियों में दोबारा गल जाती है। मरने

के बाद इन तीनों गुप के माददे या इन तीनों गुप की तरह के कुछ माददों से मिलकर ज़िन्दगी मुमकिन है।

ना ही तो रूहानी दिल या रूह और ना ही फरिश्तें इतने ऊँचे मकाम या ऊँचे मरतबे हासिल कर पाए। वो जिस हालत में तखलीक किए गए हैं उसी हालत में रहते हैं। जब रूहानी दिल या रूह जिस्म के साथ मिलते हैं तो वो ऐसे उसूल हासिल कर सकते हैं जो उनको या तो तरक्की करवा दे या उन्हें एक काफ़िर या एक गुनहागार बना दे, इस हालत में जो शख़्स मुबतला होता है वो पस्ती की तरफ़ चला जाता है और तबाही के दहाने पर पहुँच जाता है।

मवाद जागीर में हर चीज़ उसकी मिआरी सिफ़ात की तरफ़ से जानी जाती है। हर चीज़ अनासिर और अनू की साखत है। अनासिर एक अनू से दूसरे में तबदील होते हैं और इस तरह उनकी यकसॉ साखत खो देते हैं और मुखतलीफ़ सिफ़ाती सिफात के साथ दूसरी चीज़ों में तबदील हो जाती हैं। अगरचे, तबदीलियों की इन इक़साम में वजूद खत्म नहीं होता, वक्त के साथ अशया बदल जाती हैं। वो नाबूद हो जाती हैं और दूसरी किस्म की अशया उनके वुजूद की जगह ले लेती हैं। इबतिदाई उमर में मामले को "हैयूला"/हयूला कहते थे। एक माददे को शक्ल के साथ आदादो शुमार **(सूरत)** बताया गया था।

चूँकि रूहानी कल्ब और रूह टूकड़ों में तहलील नहीं होते और ना ही ऐसे हिस्सों से बनते हैं जो कभी तबदील, ख़राब नहीं हो सकते। उन तबई /जिस्मानी वाक्यात में अशया अपनी शक्ल था साखत को ज़रूर बदलते हैं। मिसाल के तौर पर, जब पानी ज़ाइद गरमी हासिल करता है, तो वो भॉप में तबदील हो जाता है। वो बहने वाली शए से एक गैसिसी हालत में बदल जाता है। पानी की बहने वाली शक्ल ग़ायब हो जाती है और गैसिसी शक्ल पानी की वुजूद में आ जाती है। किमयाई रददेअमल में, एक माददे की तशकील/साखत या आईन तबदील होती है। एक साखत जो एक माददा बनाती है वो नाबूद हो जाती है जबकि दूसरा माददा मुखतलीफ साखत के साथ वुजूद में आता है। तबई मज़ाहिर में अशया अपनी शक्ल या साखत बदलती हैं लेकिन माददे जो इन साखत या आईन को बनाते हैं वो नहीं बदलते। किमयाई रददेअमल

में,एक अशया एक शक्ल में नाबूद हो सकती है और उसकी साख़्त बदल सकती है। इसलिए, माददा तबदील हो सकता है लेकिन ये कभी नाबूद नही हो सकता। एटमी रददेअमल में, ताहम माददा भी नाबूद हो जाता है और तवानाई में बदल जाता है।]

तीसरा कदम: रूहानी कलब और रूह की ताकत है। ये ताकतें/इखतियारात पौधों या जानवरों की ताकतों की तरह नहीं हैं। पौधों और जानवरों के भी रूहें होती हैं जो उनके आईन के लिए मुनासिब हैं। अभी तक रूहानी दिल सिर्फ इन्सानों में मौजूद हैं। हर ज़िन्दा मखलूक के पास एक **प्लांट/पौधे की रूह** है जो अफआल अंजाम देता है जैसे के पैदाईश, वढ़ना, खाना खिलाना, बेकार मादंदे का बाहर निकलना, मौत दोबारा पैदा होना। ये अफआल इंसानों जानवरों और साथ में पौधों में भी किए जाते हैं। इन अफआल की तफ़सील और ये किस तरह अदा किए जाते हैं ये सब हयातियात की किलासों/जमाअतों में बताते हैं। इन जानदार में बढ़ोतरी लगातार/मुसलसल नहीं है उनकी ज़िन्दगी की पूरी मुददत भर में। ये एक पहले से मुकर्रर की गई सतह तक पहुँचने के बाद बंद हो जाता है। ये सतह इंसानों में ओसतन **24**साल है। मोटे होना वढ़ना/नमो नहीं है। ज़िन्दगी भी खाना खिलाना चलता रहता है, चूँकी जिन्दगी बग़ैर ज़रूरी ग़िज़ाईयत के बराबर नहीं रह सकती।

एक पौधे की रूह के अलावा, इंसानों और जानवरों में एक जानवर की रूह भी होती है। इसकी जगह सीने में है। ये जानवर की रूह रज़ाकाराना तहरीकों का ज़रिया हैं। इंसानों में, ये इस तरह रूहानी कलब के काबू के तले करती है।

इंसानों की एक दूसरी रूह भी है। जब हम इंसानों में रूह की बात करते है तो हम खुदबखुद रूहानी दिल और रूह की बात करते हैं। ये रूह तर्क, सोचना और हँसना जैसी चीज़ें करता है। जानवरों की रूह की दो इकसाम हैं। फहम की कुव्वत एक ताकत है जो चीज़ों को समझती है। ये समझ दो तरीकों से खुद इज़हार करती है। सबसे पहला जिस्मानी एहसासे अज़ा के ज़रिए है। दूसरा फहम ग़ैब-ए-अज़ा या अंदरूनी सलाहियतों के ज़रिए है। पाँच जिस्मानी/तबई एहसासे अज़ा हैं। सबसे पहला जिस्मानी एहसासे अज़ू खाल

है। खाल के ज़रिए गरमाई, ठंडक, गीलापन, सूखापन, नरमी और सख्ती महसूस/एहसास की जाती है। जब एक अशया खाल को छूती है, तो जानवर की रूह एहसास करती है के आया ये अशया गरम है। ये छूने का एहसास हाथ (हथेली) के अंदर बहुत तेज़ है। दूसरा एहसास अज़ू सूँगना है, जो नाक के ज़रिए किया जाता है। तीसरा मज़ा/ज़ाएका है, जो असानी निज़ाम के ज़रिए ज़ुबान पर पूरा किया जाता है। चौथा सुनना है, जो कान में असाब के ज़रिए किया जाता है, और आखिरी, पाँचवा देखना है, और ये आँखों में मौजूद असाब के ज़रिए किया जाता है।

पाँच अंदरूनी ग़ैब एहसासे अज़ा हैं:

1- आम हिस (**हिस अल मुशतरक**): ये दिमाग़ के सामने वाले हिस्से में मौजूद होता है। बाहरी महसूसात जो एहसासे अज़ू से दिमाग़ के अपने हिस्सों की तरफ़ आते हैं, वो इस हिस्से में जमा होते हैं।

2- सोच (**खयाल**): इसकी जगह दिमाग़ के सामने पहीली खला में होती है। महसूसात जो समझे और फहम किए जाते हैं वो खयाल में जमा किए जाते हैं। जब एक शख़्स एक अशया को देखता है, तो वो अशया दिमाग़ के हवासे खमसा वाले हिस्से में हिस जगा देती है। जब अशया नज़र से ग़ायब हो जाती है, तो हिस भी आम हवासे खमसा को छोड़ देती है लेकिन उसका अक्स ख़्याल में तहवील हो जाता है, जहाँ वो बड़े लम्बे अरसे तक अपना अक्स कायम रखता है। अगर ख़्याल वुजूद में नहीं आता, तो लोग एक दूसरे को भूल जाते और कोई भी किसी को भी पहचान नहीं पाता।

3- बसीरत एहसास (**वहीमा**): इस फहम का मतलब है जिसको हवा से खमसा के ज़रिए महसूस नहीं किया जा सकता और जो हकीकी तजुर्बो से हासिल किया जा सकता है महसूस के तरिके के ज़रिए। मिसाल के तौर पर, ये ख़्याल जैसे के मुखालफत और एक करना किसी भी हवासे खमसा के एहसास से परे है। हनूज़ तुम एक शख़्स की दोस्ती या दुश्मनी महसूस करोगे। अंदरूनी ताकत जो तुम्हे दोस्ती या दुश्मनी महसूस कराते हैं उसे वहीमा कहते हैं। क्या इस बसीरत की ताकत के लिए भेड़ भेड़िये को नज़रअंदाज़ नहीं कर देता

क्योंकि वो उसकी बिसयार खोरी महसूस नहीं कर पाता। ना ही वो अपने बच्चों की बचाने की कोशिश करती है।

4- याददाशत **(हाफिज़ा)** जो कुछ महसूस करके समझा जाता है वो सब जमा हो जाता है।

5- **(मुतासरीफ़ा)**: ये दिमाग़ का शोबा है जो हासिल किए गए हिस को और महसूसात का मवाज़ना करती है और नए मुरकब में तबदील कर देती है। मिसाल के तौर पर, एक सबज़ कीमती पत्थर के पहाड़ को रखना। शायर इस शोबे से अफरात में हिस्से का मज़ा लेते हैं।

हरकत की ताकत की भी दो किस्में हैं; जोके वहशी रूह की दूसरी ताकत है: पहली उसमें से भूख या निफसानी की ताकत (**शहवानी**) है। इस जिस्मानी ताकत के ज़रिए इंसान और जानवर अपनी कुदरती ज़रूरतों को और जो कुछ भी उनके मिज़ाज को राग़िब करता है उसकी लालसा करते हैं। इस ताकत को **बहमी** (वहशी) ताकत भी कहते हैं। दूसरी किस्म को **ग़ज़बी** (गुस्से का, गुस्से से तअल्लुक) ताकत कहते हैं। इस ताकत के ज़रिए वो अपने आपकी उन चीज़ों से दिफ़ाह करते हैं जो उन्हें खतरे में मौजूद करवाएँ। इन दोनों ताकतों को "वहशी ताकतें" भी कहते हैं।

वो ताकतें जो हरकात को जारी करती हैं उन्हे फ़हम की ताकत की ज़रूरत पड़ती है। चीज़ों को पहले हिस कर लेना चाहिए हवासे खमसा के ज़रिए ताकि उन्हें अच्छा या बुरा बताया जा सके और तब उसे कुबूल करना या मना करना फ़ैसले के ऊपर मुनहसिर करता है। इस समझने और अदाकारी के तरीकाएकार मरकज़ी असाबी निज़ाम के मुताबिक काम करता है। इंसानी दिल और रूह सिर्फ इंसानों में मौजूद होता है। इस रूह की भी दो ताकतें हैं। ये दो ताकतें हैं जिसकी वजह से इंसानी मखलूक वहशियों जानवरों से मुखतलिफ है इन ताकतों में से पहली ताकत जानने की ताकत और समझने (**कुव्वत-ए-अलिमा**) या (**कुव्वत-ए-मुदरीका**) है; और दूसरी उसमें से वजह और असरदार ताकत (**कुव्वत-ए-अमीला**) है। जानने और पहचानने की ताकत को **नुतक** या **अक्ल** दानिशमंदी, सबब) भी कहते हैं। ये ताकत दो खास ताकत के हिस्सों पर

मुबनी होती हैं:**हिकमत-ए-नज़री** (नज़रयाती इल्म) को **तजुर्बाती**, या साइंसी, तालिम के साथ ज़िम्मेदारी के साथ हासिल करना है; और दूसरा, **हिकमत-ए-अमली** (अमली तालीम) **अखलाकियात** की तालीम के लिए ज़िम्मदार है। हिकमत-ए-नज़री जो साइंसी तालीम के ज़रिए हासिल होती है वो माददी दुनिया की असलियत या सच्चाई को समझने में फायदेमंद है। दूसरी तरफ, हिकमत-ए-अमली जो अखलाकी तालीम को हासिल करती है, वो बुराई और बुरे कामों से अच्छाई अच्छे कामों में तफ़रीक करती है।

रूह की असबाबी ताकत फ़ाएदेमंद और कामयाब कामों को पूरा करने पर असर डालती है। ये उस जानकारी पर काम करती है जो इल्म की ताकत के ज़रिए हासिल की जाती है। जबके वहशी रूह में हरकत की ताकतें अच्छा समझती हैं और जो नारज़ामंद होता है उसे मना करते हैं; इंसानी रूह की अज़बाबी ताकत अपनी अक्ल के इन्साफ पर अपनी अदाएगी की बुनयाद बनाते हैं। ये कुछ करता है अगर ःहिकमत इसे अच्छा और फायदेमंद समझती है और करने से मना करती है, या किसी चीज़ को मना करती है जो वो समझती है (हिकमत के ज़रिए) के ये एक ग़ैर सेहतमंद या नुकसानदायक नतिजे को जन्म देगी। इस काम के साथ, ये वहशी रूह की गज़बी ताकतों को शहवानी की रूहानी दिल के ज़रिए, निगरानी भी करता है।

कुछ लोग अपने नफ़ज़ या वेहशी रूह के इशारों के तले काम करते हैं। दूसरे लफ़्ज़ों में, ज़्यादातर वो अपने "वहम" और "ख़्याल" की मौज के मातहत होते हैं।

इमाम मौहम्मद अल गज़ाली रहमतुल्लाही अलैह और दूसरे तसव्वूफ़ के आला मासटरों/उस्तादों ने कहा, "ये रूह की ताकतें, दरअसल हकीकत में, फरिश्तें हैं। इंसानी बंदों की अपनी शुजाअ और रहमदिल नरमाई के तौर पर अल्लाह तआला ने रूहों के हुकूम के मातहत फरिश्तों को नाफ़िज़ किया। वो रूहों के हुकूम में तब तक रहेगें जब तक छोटा रोज़े कयामत न टूटे यानी जब रूह जिस्म से खारिज हो जाए। ये हकीकत हदीस शरीफ में दलील है। इसने कुछ और वाक्यों में एतबार पाया है जैसे कभी कभी आम आदमी ऐसे ग़ैर मामूली महारत दिखाते हैं के वो आम तौर पर उनकी काबलियत के बाहर होता

है और जिसे महारती लोग तआजुब करते हैं।ये रूह की दो ताकतें होती हैं जिनपर इंसानियत कमाल हासिल करती है।

कई जगह कुरान में, हके बआला ने तालीम और हिदायत की सिफारिश की;सीखने की तरफ हौसला अफ़ज़ाई करना, सबसे प्यारे नबी ने हिदायत की।

इसको जानलोः लाइल्मी इस्लाम की दुश्मन है, और सबसे ज़्यादा खतरनाक, इस बीमारी के लिए इसके वाएरस/जरासिम का फैलना एक तबाही है जो काबिले रहम है!

"जहाँ कहीं भी जहालत आएगी, वहीं पर इस्लाम छोड़ जाएगी," पैग़मबर ने कहा वो जो इस्लाम को चाहता है उसे चाहिए इल्म से प्यार करे और साइंस को सीखने वाला बने!

"जन्नत तलवारों की छाओं में है" ये कोई हदीस नहीं है जो ऐसा कहती है?एटमीक बमों और जैट जहाज़ों की पेशानगोई की, और एक मुखतसर और जामे हुकूम भी दिया!

*जहालत सिर्फ एक बीमारी है जिसके ज़रिए इस्लाम को बेईज़्ज़ती सेहनी पड़ती है!ए तुम, **nescience** की खस्ता हालत, कितनी शर्म की बात है, ये कौम अंधेरे में गिर चुकी है!*

तुम हमें इतनी ख़राब हालत की तरफ ले जा चुके है, ना ही ईमान ना ही पाकिज़्गी बची! ए तुम, खराब माल, मुसलामानों की ज़िन्दगियों पर उनका ज़ुल्म इतना ग़मनाक है!

ऐ तुम, कदीमी दुश्मन, तुझको कत्ल करने के लिए सब पर तरजीह दी जाएगी;

ये अकेले तूने हमपे काफ़िरों को बरतारी बना दिया!

जाग जाओ, ऐ तुम, कौम, वरना तुम अपनी कभी न खत्म होने वाली गुमनामी का शिकार हो जाओगे!

नुकसान पहुँचाने के सिवा आपको रूसवाई दी जा रही है सौदे में छुपाकर बाँधने के तौर पर!

अल्लाह के सामने शर्म करा, और इस्लाम से चले जा, 'दुसरो को दुख़ देने वाले! मौजी लाश की तरह, मिट्टी में डूब जा, क्यों वो खतरे में तेरा साथ शामिल हो!

मेरे इस तेज़ाबी तवसरे पर, ताहम, नवाकिफ़/लाइल्म अपने कान बंद कर लेगा;

"अल्लाह के सामने शर्म" के लिए, एक कहावत है जिसमें सुनने के लिए सीखने की ज़रूरत है।

दिबाचे के लिए पहला ज़मीमा

इस हिस्से में हम दूसरी मखलूक पर इंसानों की बरतरी को वाज़ेह करेंगे: हर अशया अपनी बनावट के मामले में एक जैसी हैं यानी, वो सब माददे से बनी हैं और सबका वज़न और हजम है। इंसान और जानवर भी इन बेजान अशयाओं के बराबर हैं। लेकिन अशयाओं को उनकी खसूसी सिफ़ात की बिना पर एक दूसरे से फर्क किया जा सकता है।

[हर अशया ज़र्रों से बनी हैं। धूल का एक धब्बा भी सेंकड़ों ज़र्रों से बना है। बाज़ थोड़े ज़र्रे आपस में मिले हैं छोटा ज़र्रे बनाने के लिए। दो किस्म के माद्दे कहलाते हैं। जैसे के तांबे की तार और बारिश का पानी खालिस माद्दे हैं क्योंकि वो हर वक्त एक जैसी खासियत रखते हैं, चाहे वो ज़मीन पर कहीं भी हों। उनको उबलने और पिघलने के दरजाए हरारत पर जाना जाता है और कभी तबदील नहीं होता। अशया जो मुस्तहकम खुसूसियत नहीं रखतीं उन्हें आमिज़ा कहा जाता है। दूध, लकड़ी, पेट्रोल, समुंद्र पानी आमिज़े हैं। उनकी खुसूसियत मुखतलिफ़ हो सकती हैं ये उनकी इस हालत पर मुनहसिर करता है जिसमें वो हैं। वो मज़बूत उबलते और पीघले हुए दरजाए हरारत नहीं रखते। मिसाल के तौर पर, गाय का दूध भेड़ का दूध से मुफतलिफ़ होगा

जबकि बहे असवद का पानी बहे रोम से मुफतलिफ है। बहे असवत का पानी बहे रोम के पानी से कम नमकीन है।

खालिस माद्दे भी दो ग्रुप के ज़मरों में आते हैं। उन्हे अनासिर कहा जाता है अगर वो आगे दूसरे हिस्सों में ना बाँटे जाएँ जिनकी मुख़तलिफ़ खासियते हों। सोना, गंधक, आयोडीन, और ऑकसीजन अनासिर हैं। आज के हम एक सौ पाँच अनासिर जानते हैं। खालिस माद्दे जो अजज़ाए तरकीबे के कई हिस्सों में टूट जाते हैं मुखतलिफ़ खुसूसियात के साथ वो जामे माद्दे कहलाते हैं। मिसाल के तौर पर, चीनी, बारिश का पानी और शराब जामे माद्दे हैं। अगर चीनी को आग की तरफ किया जाए तो, वो कॉर्बन, पानी और कुछ दूसरे अजज़ाए तरकीबी में बदल जाता है। इसी तरह, पानी हाईड्रोजन और ऑकसीजन गैसों में बंट जाता है जब ये एक जानकर तरीके से बरकी तवानाई में मिलता है। आज हम सेंकड़ों जामे अशया जानते है। जामे अशया दो या ज़्यादा अनासिर के ज़र्रो का मुरकब है।

हर एक माद्दा मंदरजाज़ेल तीन शकलों में से किसी एक में हो सकता है: ठोस, माए/तरल चीज़ और गैसीय शकल में। मिसल के तौर पर पानी ठोस शकल में होता है जब वो मुंजमिद होता है; माए शकल में जब पानी होता है; और गैसीय शकल में जब वो बुखारात हो। गैसीय शकल का मतलब है के वो हवा की तरह है और उसका कोई खास हजम या शकल ना हो। सादी अशया या अनासिर को तीन ग्रुप में बाँटा गया है:

1- असली मअदिनयात (जिन्हें धातें भी कहते हैं)

2- ग़ैर मआदिनयात (जिन्हें ग़ैर धात भी कहते हैं)

3- निस्फ़ मआदिनयात (नीम धातें)

यहाँ पर अठत्तर असली मआदिनयात हैं। उनमें से सत्तर कमरे के दरजाए हरारत में ठोस शकल में हैं, पारे के अलावा, जोकि कमरे के दरजाए हरारत में माए शकल में होता है। इसका उबलने वाला दरजाए हरारत **357.3** डिग्री सेलसियस है और ये **-39.4** डिग्री सेलसियस पर ठोस हो जाता है। जब

ठोस असली मआदिनयात पर एक हथौड़ी से मार पड़ती है, तो वो एक धात की चादर की शकल ले लेती है। वो भुर भुरी बर्फ़ की तरह नहीं होते। जब धात के ज़र्रे दूसरे ज़र्रो के साथ मिलते हैं, तो वो अपने साथ मुसबिद बरकी रौ लाता है। वो अपने साथ मंफ़ी बरकी रौ लेकर नहीं आता। इसलिए, धातें कभी भी एक दूसरे के साथ नहीं मिलती क्योंकि दो धातें जिनके पास मुसबित बरकी रौ हैं वो एक दूसरे को मुतासिर नहीं कर सकते। इसके बरअक्स, वो एक दूसरे को पीछे हटाते हैं।

सतरोहे ग़ैर धातें हैं। उनमें से एक माए/तरल शकल में है; पाँच उनमें से ठोस शकल में हैं और उनमें से ग्यारह गैसीयें शकल में हैं। जब गैर धात को गारे में एक हथौड़े के साथ मारा जाता है, तो वो भुर भुरी बर्फ की तरह हो जाते हैं बजाए एक चादर की शकल लेने के। असली चारकोल एक गैर धात है और इसे केमिस्ट्री में कार्बन कहते हैं। जब गैर धाती ज़र्रे जामे शकल ले लेते हैं दूसरों के साथ मिलकर, तब वो अपने साथ मुसबित और साथ में मंफ़ी बिजली लाते हैं। इसलिए, कुछ गैर धाती ज़र्रे एक छोटे अनसर को बनाने के लिए एक साथ मिल जाते हैं।

माए अशया को दो ग्रुपों में बाँटा जाता है। वो जो कार्बन और हाएडरोजन ज़र्रो को एक ही वक्त में बना कर रखते हैं उन्हे फ़ितरी माल बोलते हैं। वो आग वाले है और जानदार चीज़ों में मौजूद होते हैं। हाल ही में, इनमें से कुछ सामान पौधों और तजुर्बागहों मे मिलाए गए। चिकानाई, शुगर, सिरका, कूनीन फ़ितरी माददों माल की मिसाले हैं। अशया जो कार्बन और हाई ड्रोजन एक ही वक्त में (तथा हाएड्रोकार्बन) अपनी बनावट में नहीं रखता उन्हें गैर फ़ितरी अशया कहते हैं। वो ज़मीन के छिलके में मौजूद होते हैं और समुंद्र में पिघली हुई शकल में मौजूद होते हैं। खाने में इस्तेमाल होने वाला नमक, पानी, चूना, सिलिका और रेत सब इसी तरह के हैं।

ये सारी बेजान अशया एक खास तरीके में मखलूत होती हैं और मिलती हैं जानदार खतियों के बुनियादी इमारती बलॉक को शकल देने के लिए। खलिए जानदार चीज़ें हैं। जानवरों के खलिए पौधों के खलियों से मुखतलिफ़ होते हैं, और इंसानी खलिए जानवरों के खलियों की तरह

हैं। जानदार खलिए रेशों को बनाने के लिए मिलाए जाते हैं जबकि मुखतलिफ़ किस्म के रेशे अज़ू को बनाने के लिए मिलाए जाते हैं। मुखतलिफ़ अज़ू को निज़ाम कायम करने के लिए एक साथ मिलाया जाता है। इस तरह खलियों-रेशों-अज़ू-निज़ामों की पूरे तौर पर एक कड़ी बनती है एक साथ मिलाए जाते हैं पौधों, जानवरों और इंसानों के शरीरों को बनाने के लिए।]

सारी मौजूद चीज़ें इस सामान की तहवील में तीन ग्रुप में तकसीम की जाती हैं: बेज़बान चीजें, और पौधें, और जानवर। जानवरों में, इंसानी नसल सबसे ज़्यादा कीमती और इज़्ज़त वाली है। हर जमाअत की मुखतलिफ़ जिंस में, एक बरतरी का हुकूम है। दूसरे लफ़्ज़ों में इन जिंस में से एक को दूसरे पर फ़ौकियत हासिल है। एक जमाअत की सबसे आला जिंस एक ऊँची जमाअत की नीचली जिंस की कुर्बत बरदाश्त करती है। असल में, उनके ज़्यादातर उसूल एक दूसरे से मिलते हुए हैं। मिसाल के तौर पर एक मूँगा पत्थर की तरह लगता है जो के एक बेजान अशया है लेकिन ये ज़्यादा होता है और जानदार मखलूक की तरह बढ़ता है। खजूर का पेड़ और उड़ने वाले कीड़े पकड़ने वाला (dionaea muscicapa) एक जानवर की तरह हिस रखते हैं और हरकत करते हैं। कुछ खजूर के पेड़ मुज़क्कर और दूसरे मुअन्नस होते हैं। मुज़क्कर पेड़ मुअन्नस पेड़ों के ऊपर झूके हुए होते हैं। जबतक कुछ मादे मुज़क्कर खजूर के पेड़ की तरफ से मुअन्नस तक ना जाएँ, वो अपने फल पैदा नहीं कर सकती। फिर भी अगरचे सारे पोधों में दोबारा पैदा करने के अज़ा होते हैं और हमल ठहरता है, ये तारीखी खजूरों में ज़्यादा वाज़ेह है और जानवरों की तरह मिलता हुआ होता है। दरहकीकत, खजूर की चौटी पर एक सफ़ेद हिस्सा होता है जो एक जानवर के दिल की तरह काम करता है। अगर ये सफ़ेद हिस्सा ज़ख्मी हो जाता है या थोड़ी देर के लिए पानी में डूब जाता है, तो खजूर मुरझा जाती है। ये एक हदीस शरीफ़ में बयान किया जाता है: "**अपनी फूफ़ी खजूर के लिए एहतराम दिखाइए! सबसे पहले खजूर के लिए जो इस मिट्टी की बाकयात में से तखलीक किया जिसे आदम अलैहिस्सलाम के लिए इस्तेमाल किया गया था (तखलीक के लिए)**।" ये हदीस शरीफ इस हकीकत को बताती है के ये बाबरकत दरखत सब पौधों में ऊँचा है। जानवरों की नसल में से सबसे नीची जिंस स्पंज/समुंद्री जानवर की है। इसका रंग सफ़ेद होता है और ये समुंद्र

में रहता है।वो अपनी मरज़ी से और खबरदार चलता है।हज़ारों तारीखी जानवर पानी में रहते थे।हर जिंस में एक बेहतर और ज़्यादा तखकीयाफ़ता जिंस तखलीक की गई।इल्मे हयात की किताबों में इनके बीच में बरतरी की तरतीब वाज़ेह की गई है।हर जिंस के खिलाने के और अपने दिफ़ा के अज़ा मुखतलिफ़ होते हैं।मिसाल के तौर पर, उनमें से कुछ के पास अपने आपको बचाने के लिए तीर होते हैं कुछ के पास दाँत, पंजे, सींग या पंख होते हैं।उनमें से कुछ अपनी रफ़तार पर मुनहसिर होते हैं और कुछ दूसरे चालाकी पर जैसे के लोमड़ी।हर जिंस दोनो तरह से अकेले भी और जिंस के तौर पर भी बचाई जाती है।बहुत सारी चीज़ें जो इंसानी दिमाग़ को गुमराह करती हैं वो उन्हें बचाने की काबलियत के तौर पर दी जाती हैं।मिसाल के तौर पर, शहद की मक्खियाँ एक माहिर इंजिनियर की तरह आठ जिलई शहद का छत्ता बनाती हैं।अगर वो अपना शहद का छत्ता एक सिलिंडरिक्ल शकल का बनाती हैं, तो वहाँ पर हर छत्ते के बीच में ज़ाएद जगह हो, जो कि बदले में एक बरबादी है।जबकि मसमन फ़िरम की शकल में कोई जगह की बरबादी नहीं होती।अगर वो मुस्तकील शकल में होता, तो उसका हज़म और जगह छोटे होते।लोग इन हक़ीकतों को पढ़कर और सीखकर जान गए हैं।वो बग़ैर सीखे नहीं जाना जा सकता।उन्हें शहद की मक्खी का किसने बताया? अल्लाह तआला ने, **इल्हाम** (जोश) के ज़रिए जिसे आज **जबलत** के तौर पर जानते हैं।

अगर हम बरतरी की बिना पर जानवरों के बीच जानकारी लें, तो हम इस नतिजे पर पहुँचेगे के जानवरों की ऊँची जमाअतें और इस तरह जो इंसानियत के सबसे नज़दीक हैं वो है घोड़ा, बंदर, हाथी और चिड़ियों में से, तोता।वहाँ पर बहुत सारे इंसान हैं जिनकी समझ बंदर या एक हाथी की है जो कभी मुकाबले से नहीं हारती।डॉरवीन जो महिरे जिंस था उसने जानवरों की मुखतलीफ़ खानदानों को तकसीम किया उनकी एक दूसरे पर बरतरी को देखते हुए और मशहूर किया के बंदर सब जानवरों के खानदानों में सबसे आला हैं।कोई जल्दी में नहीं ये फ़ितरी इस्लाम के दुश्मन इस ज़मरे के नज़रिए को सुनेंगे तब वो कहानी बुनना शुरू करेंगे के डॉरवीन ने लिखा था के जानवर नसलों के ऊपर ऊँची जमअतों में तरक्की करेंगे, जो के "पहले की इंसानी जिंस" में कमाले उरूज पर पहुँची होंगी।कुछ खिंज़िर के जैसे सिर वाले, जदीद

झूठे साइंसदाँ इस बात का फ़ाएदा उठाने में कोई वक्त नहीं गवाएँगे और मुसलमान बच्चों को गुमराह करेंगे अपनी पूरानी भूख को ठंडा करने के लिए और इस हकीकत से इंकार करेंगे के आदम अलैह सलाम (सबसे पहले आदमी और पहले पैग़म्बर) की तखलीक मिट्टी से की गई थी। ये एक चीज़ के लिए सवाल करता है, क्या डॉरवीन ने कभी अपनी किताब में इस नज़रिए की सलाह दी के आहिस्ता आहिस्ता जानवर ऊँची जमाअतों में तरक्की कर जाएंगे। उसने जो कहा था वो ये था: "जानवारों की जमाअत में रफ़ता रफ़ता बरतरी की तरतीब आई।" उसने लिखा के एक जो तखलीक में नीचले सतह पर था वो ऊँचों के लिए चारा बन गया। इस हकीकत को पहले भी इस्लामी आलिम ग़ौर कर चुके हैं और समझ चुके हैं और अपनी किताबों में लिख चुके हैं। मिसाल के तौर पर, अली बिन अमरूल्लाह रहीमाहुल्लाह तआला ने अपनी किताब में जानवरों के दरमियान बरतरी की तरतीब के बारे में लिखा है। वो **916** ए-एच में पैदा हुए थे डॉरवीन से सदियों पहले, और **979** हिजरी [**1570** ए.डी.] में इंतेकाल फरमा गए। ये साफ ज़ाहिर है के डॉरवीन (**1224** [**1809** ए.डी.]-**1299** [**1882** ए.डी.] ने अपने ख्याल इन इस्लामी किताबों से चुने हैं जो उसने पढ़ी हैं।

जानवरों के ऊपर वहाँ इंसानों की सबसे कम सतह वुजूद में हैं। रेगिस्तानों और जंगलों में रहने वाले लोग इस किस्म के हैं। सबसे बरतर इंसान **23-66** अरज़ बल्द के दरमियान वाकेअ शहरों में रहते हैं। इसके अलावा, माद्दे और अखलाकी मिआर में एहतराम के साथ इंसानों के दरमियान फर्क नहीं हैं तखलीक और बरतरी के हुकूम में। कुछ लोग नए आलात और मशीनरी की एजाद में जदीद टेकनालोजी की तरक्की में अपनी कोशिशें और अकलमंद लगाते हैं। दूसरे, इस इसतलाहात के अलावा, वजह के इल्म में और मंतिक में इसके साथ साथ साइंस और इस्तलाहात में तरक्की करते हैं। आला लोग साइंस और टेकनालोजी में साथ में अखलाक और अखलाकियात में तरक्की करते हैं। वो सबसे ऊँचे रूतबे वाले इंसानों तक पहुँच गया। ये रूतबा "अल्लाह तआला से कुरबत का रुतबा" कहा जाता है। लोग जो ऊँचे मरतबे तक पहुँच जाते हैं वो कम सतह वाले लोगों को रोशन करने की कोशिश करते हैं और उन्हें ऊँचे सतह तक बुलंद करते हैं। इन सब ऊँचे मरतबे वाले लोगों में

पैग़मबर अलैहिम उस सलावात तसलीमात हैं। उन्हें इज़्ज़त बख़्शी गई अल्लाह तआला की तरफ़ से पैग़ामात और एहकामात पहुँचाकर फरिश्ते जिबराईल अलैहसलाम के ज़रिए। जो पैग़ामात और एहकामात हज़रत जिब्रईल के ज़रिए आए उन्हें **वही** (पैग़ाम) कहते हैं। पैग़म्बर इंसानों को तरक्की के रास्ते पर रहनुमाई करते थे और उनकी इंसानियत की सतह को ऊँचा उठाते थे उस वही के ज़रिए जो उन्हें हासिल होती थीं। ये तरक्की का रास्ता जो पैग़म्बरों के ज़रिए दिखाया गया उसे **दीन** (मज़हब, ईमान) कहते हैं। जो ऊँचे मरतबे इंसानों के ज़रिए हासिल किए गए जिन्होने मज़हब में तरक्की करी वो उन रूतबों से ऊँचे हैं जो फरिश्तों पर आएद किए गए।

रिसालत के चार मरतबे हैं। पहला मरतबा **नबी** का है: दूसरा मरतबा उन पैग़म्बरों का है जिन्हें **रसूल** कहते हैं; और तीसरा उन पैग़म्बरों का ग्रुप का है जिन्हें **उलूलअज़म** कहते हैं। पैग़म्बर **आदम,नूह** (नोहा), **इब्राहीम** (अब्रहम), **मूसा** (मोसेस), **ईसा** (जिसस) **और मौहम्मद** अलैहिस्सलाम इस मरतबे पर फ़ाइज़ हैं। चौथा मरतबा, और सबसे आला नब्बुवत के आखिरत (खातिम उल-नब्बिया) और जो सिर्फ मौहम्मद अलैहिस्सलाम को हासिल है। आपकी इस ताज़िम के साथ इज़्ज़त अफ़ज़ाई की गई है, "**अगर ये तुम्हारे लिए नहीं होता, (हाँ) अगर ये तुम्हारे लिए नहीं होता, मैं किसी की भी तखलीक नहीं करता!**" अल्लाह तआला ने आपको फरिश्तों के ऊपर इंसानों की बरतरी की गवाही दी।

सारी तखलीक के बीच में इंसानियत हूबहू दरमियानी जगह रखती है। लोग जो अपने आपको इस्लाम के काबिल बनाते हैं वो फरिश्तों से ज़्यादा ऊँचा मरतबा हासिल करते हैं, जबकि वो जो इस्लाम से परे हो गए अपनी नफ़स के लालच के नतीजे में या बुरी कम्पनी की गुमराही में, अपने कुदरती मकाम से भी नीचली सतह तक जिला वतन हो गए। इसके वास्ते, जैसे के हमने वाज़ेह किया अपने पिछले मतन में, के रूह ग़ैर माद्दी है, जबके जिस्म एक जौहर का ढेर है जिसकी खासियतें एक दूसरे से मिलती जुलती नहीं हैं। आदमी रूहानी तौर पर और ज़्यादा जानवर जिस्मानी तौर पर करीबन फरिश्तों की तरह हैं। एक शख़्स को जो तकवियत देता है अपने रूहानी खदोखाल को वो

बुलंदी में फरिश्तों को पीछे छोड़ देगा। इसके लिए उन्होने इसके जिस्म के तबई मिलान के ख़िलाफ मज़ाहमत की है और उनकी नीच निसफ़ हासिल करने के लिए हरा दिया इस रस्सा कशी में वो अपने अकेले दुश्मन से मुकाबला करने के लिए एक सख्त टीम को काबू करना होगा, इसके बरअकस फरिश्ते बात करने के लिए जिस्म के तारीक हुदूद को उनके नीचे करने की खुसूसियात रखतें हैं। उनकी अच्छाई एक फितरी हिस्से की तरह कुदरती तौर पर तखलीक की गई है।

अगर एक शख्स अपनी पसंद को जिस्म के हक में ज़ाया करता है और अपने नफ़स की आबयारी करता है, तो वो दरिंदां से भी कमतर सतह पर गिरा दिया जाएगा। अल्लाह तआला ने सुरह अराफ़ की **179** वीं आयत और सुरह फुरकान की **44** वीं आयत में वाज़ेह किया: **"... वो मवेशियों की तरह हैं- नहीं, (वो हैं) ज़्यादा गुमराहः ..."** हकीकत में, जानवरों में अकल नहीं होती। ना ही वो मलकूती रूहें रखते हैं। ये गुनाह है, इसलिए, उनको अपनी इच्छाओं की पैरवीं करनी है। क्योंकि आदमियों को एक रोशनी दी गई है जिसे हिकमत कहा गया है, ये उनके लिए नफ़रत अगैज़ है बात है के अपने नफ़स की पैरवीं करे और सही रास्ते से हट जाए।

मुरकब आदम के बेटे हैं,
फरिश्तों और जानवरों से बने हुए।

जो अपने फरिश्तों की तकलीद करता है,
अपने फरिश्ते के मुकाबले ऊँचा हो जाता है।

वो लोग जो जानवरों के मिज़ाज के बन जाते हैं,
तमाम मखलूक के मुकाबले कमतर हो जाते हैं।

हवा, खाना, पानी, कपड़े, पनाहगाह और साथी जो जानवरों को ज़िन्दा रहने के लिए ज़रूरत है, तमाम पैदा की जाती हैं ताकि उनके लिए वो तय्यार हो सकें।

[इन ज़रूरतों के बीच में सबसे ज़्यादा ज़रूरी हवा है।वो कुछ मिनट/लम्हों से ज़्यादा उसके बग़ैर नहीं रह सकते।वो सीधे मर जाएगें।अगर हवा ऐसी चीज़ होती जो ढूँढने पर मिलती, तो वो इतने लम्बे अरसे तक ज़िन्दा नहीं रह पाते ढूँढने के लिए।कोई चीज़ जो इतनी जल्दी चाहिए हो उसे अल्लाह तआला ने इतनी ज़्यादा मिकदार में बनाया चारों तरफ ताकि वो अपने फ़ेफ़ड़े कुदरती ज़रूरत नहीं है जैसे के हवा उनके ज़िन्दा रहने के लिए।इंसान और जानवर इसके बग़ैर इतना लम्बा अरसा ज़िन्दा रह सकते हैं जितना के वो उसे ढूँढ लें।इस तरह, इसके लिए ये ज़रूरी हो गया के उसे ढूँढने की कोशिश की जाए।चूँकि जानवरों में हिकमत नहीं होती और वो एक दूसरे के साथ तआवुन नहीं करते।ना तो वो खाना तैयार करते हैं ना ही वो अपने कपड़े बनाते, ना ही वो खाना पकाते हैं।नतिजे के तौर पर, वो या तो घास या लाश खाते हैं।वो परों, पूंछ और बालों के ज़रिए अपने आप को गरम रखते हैं।उनके ज़िन्दा रहने के ज़राए उनके जिस्म के हिस्सों की तरह तखलीक किए गए हैं।इसलिए, उन्हें एक दूसरे की ज़रूरत नहीं होती।

इंसानों को उन सब चीज़ों को सोचना होगा और उन्हे तैयार करना होगा।वो फसल उगाते हैं और रोटी बनाते हैं, वरना वो अपनी भूख को मिटा नहीं सकते।वो धागा घुमाते हैं, बुनते हैं और सिजते हैं, वरना वो अपने आपको कपड़े नहीं दे पाएँ।इसी तरह, उन्हे अपनी अकल को बढ़ाना होगा, साइंसी इल्म को सीखना होगा और कारखाने लगाने होंगे और अपने आपको महफ़ूज़ करने के लिए इस्तलाहात को इस्तेमाल करना होगा।आदमी सब बरतर खासियतों का खज़ाना है इनमें से हर एक मुखतलिफ जानवरों की नसल के पास है।उसे बहुत महनत से काम करना होगा और अपना दिमाग़ और समझ इस्तेमाल करते हैं छूपी हुई बरतर खासियतों को हुकूक बख्शने के लिए।वो चाबी जिससे खुशियों का दरवाज़ा खुले और साथ के साथ तबाही के लिए भी वो उसको दे दी जाती है।अगर वो अपने दिमाग़ और समझ का इस्तेमाल करता है खुशियों का रास्ता तलाश करने के लिए और इस रास्ते के मुताबिक चले तो वो ऊँचे और अच्छे अखलाक को अपनी फ़ितरत में शामिल कर लेता है, एक उफ़क से दूसरे तक, वो फरिश्तों की दुनिया में शामिल हो जाते हैं, और आखिरकार अपनी मंज़िल यानी अल्लाह तआला का प्यार हासिल करते

हैं। वरना, यानी अगर वो अपनी नफस की इच्छाओं की तकलीद करते हैं, तो वो जिस तरह तखलीक किए गए थे उसी तरह रहते हैं, जानवरों की नीचली सतह मे। एक ऐसी मंज़िल की तरफ रवाना होना, दूसरे तरीके से, तो वो एक नीचले सतह पर गिर जाएगा, जो के उसे आहिस्ता से एक तबाही से दूसरी तबाही तक ले जाएगा, और आखिरकार वो अपने आपको दोज़ख़ के एक गहरे गड़े में पाएगा।

आदमी की तख़लीक दो रूखी है। उसे ऐसी रहनुमाई की ज़रूरत है जो उसे सीखा सके के अपनी अंदरूनी काबलियत को वो कैसे पहचाने और उसे किस तरह मज़बूत बनाए ताकि ऊँचा उठ सके और तरक्की कर सके। कुछ बच्चों को सलाह नरम बात और तोहफ़ों के ज़रिए सिखाया जा सकता है जबकि दूसरों को सख्त बरताव और सज़ाओं के ज़रिए सिखाया जा सकता है। रहनुमा को इतना अच्छा होना चाहिए के बच्चे की फ़ितरत को समझ सके और उसी के मुताबिक उससे बरताव करे, चाहे नरम या सख्त बात के ज़रिए उसे सही उठाने के लिए। एक बच्चा इल्म हासिल नहीं कर सकता और कोई तरक्की हासिल नहीं कर सकता, जब तक के वहाँ कोई काबिल रहनुमा न हो। रहनुमा जो उन्हें इल्म और अखलाक देता है वो बच्चे को सारी मुसिबतों से बचाता है और उसे एक खुशहाल शख्स बनाता है]

सुनो ये,ए तुम, गहरी मदहोशी में;
प्यार साफ़ और रोशन है;
एक दिल बगैर प्यार के
चट्टान और पत्थर की तरह होता है।

नफ़ज़ की मस्ती कुछ नहीं होती
आम में दिल की मोहब्बत के साथ;
खाना बग़ैर नमक की तरह,
बेमज़ा बग़ैर भूक के।

अगर ये प्यार है, तो दिल जलेगा;
ताहम इस तशवीश में नफ़ज़;

ठंडे तूफ़ान के दरमियान,
एक गंदे, दूध का मटका।

एक बार एक दिल जो प्यार का मज़ा चख ले,
अपने रब के साथ प्यार में पड़ता है,
जिस्म एक पिंजरा, और खुद एक परिंदा,
मोहब्बत के साथ फड़फड़ाना।

कुछ है मौहब्बत काफ़ी मकददस;
हवस को ऐसा वाकई बुलाने के लिए;
बगैर बाल के एक सिर पर और अंधे,
सोने के चमकदार, ताज की तरह।

दिबाचे के लिए दूसरा ज़मीमा

इस हिस्से में, हम वाज़ेह करेंगे के रूह के लिए तरक्की करने का मतलव क्या है ऊपर की बुलंदियों की तरफ़ जाने के या गहराई में डूबने का।

हम पहले मतन में ज़िकर कर चुके हैं रूह की ऊँचाइयो और गिरने के अज़बाव का।इस हिस्से में, हम इन मामलात की तोसीह और वज़ाहत करेंगे।हर माद्दे में बअज़ खुसूसियात हैं जो के दूसरे माद्दों में आम हैं।वज़न और हजम इस किस्म के हैं।इन आम खुसूसियात के अलावा हर माद्दे में अजीव मखसूस खुसूसियात है और जिसके तहत इसे दूसरों से अलग मुमताज़ किया जाता है।मिसाल के तौर पर, हर माद्दे के अन्दर एक मखसूस कसाफ़त है, जबकि माएआत एक दूसरे से मुखतलिफ़ हैं अपने उबलते हुए और मंजमद दरजाए हरारत के लिए, मुखतलिफ़ ठोस मुखतलिफ़ दरजाए हरारत में पीघल जाता है, और किरणे इसकी लहरों से किसी हद तक मुखतलिफ़ होती हैं।इसी तरह की अलामत के ज़रिए, इंसानी मखलूक उनमें से हर एक में मुखतलिफ़ है उसकी मखसूस खासियतें, सिफ़ातें और खूबियाँ हैं।मिसाल के तौर पर, लोमडी के दस्ताने नवाताती तौर पर नंबरी एड़ लगाने वाला कहा जाता है, जो दिल पर

असर डालने के लिए जाना जाता है। घौड़े को उसके घुड़सवार के साथ तालमेल के लिए पहचाना जाता है और वो भागने की तरफ़ खयाल रखता है जो के एक दफ़ीने की खुसूसियत की तरह इस्तेमाल होता है खास तौर से एक मठरी वाले जानवर जैसे के गधे की तरह।

इंसानी मखलूक बहुत सारी चीज़ों में जानवरों की तरह हैं और दूसरे लिहाज़ से नबातात और बेजान चीज़ों की तरह हैं। इसके अलावा हमारे पास बहुत सारी इंसानी सिफ़ात हैं जो हमें उनसे अलग करती हैं। इंसान होने का शर्फ़ हमें इन्ही सिफ़ात से मिलता है। इन सिफ़ात में सबसे एहमफहम समझे या सोचने **(नूतक)** की ताकत है। "नुतक" का मतलब बोलने की ताकत भी है, लेकिन हम इस मज़मून में इसके मतलब नहीं लिख रहे। एक शख़्स बग़ैर ज़ुबान के बोल नहीं सकता लेकिन वो अभी भी इंसान है क्योंकि वो समझ और फ़हम रखता है और सोच भी सकता है। तोते बोल सकते हैं लेकिन वो इंसान नहीं होते क्योंकि वो समझ फहम, सोचने की काबलियत या अकल नहीं रखते। ये इस नुत्क की ताकत ही है सिर्फ़ जो अच्छी आदतें और बुरे कामों को पहचानने के अनमोल तोहफ़े में अपने बुरे मुख़ालिफ से फ़ायदा देती हैं। अल्लाह तआला ने ये महकमा इंसानी मखलूक को दिया है ताकि वो अपने खालिक को पहचान सकें। उनके रूहानी दिल और रूह, इस ताकत का इस्तेमाल करके काएनात, ज़मीन, आसमानों, [साथ में मादयात, कीमिया के उसूल, और दूसरी हरकात जो इंसानी ज़िंदगी से तआल्लुक रखती है], की पढ़ाई करना, और इस तरह अल्लाह तआला की मौजूदगी और उसकी बरतर सिफ़ात को पहचानना। इस तरह, एहकाम को मानना और जो बातें इस्लाम ने ममनुअ करार दी हैं उन्हें छोड़ना तो रूहानी दिल और का मालिक इस दुनिया में और आखिरत में खुशियाँ हासिल करेगा, और अपने आपको तबाही से बचाएगा। सुरह ज़ारियात की छप्पनवीं आयत का मतलब है: "**मेने जिन्न और आदमियों को सिर्फ़ इसलिए तखलीक किया ताकि वो मेरी इबादत कर सकें।**" इस आयत-ए-करिमा में जो 'इबादत' का लफ़ज़ इस्तेमाल हुआ उसके मआनी 'जानने' के लेने चाहिए। असल में हमें तखलीक किया गया अपने बनाने वाले अल्लाह तआला को जानने और ईमान रखने के लिए।

इंसानी मखलूक में जानवरों वाली सिफ़ात मिसाल के तौर पर, भूख और गुस्सा जो उन्हें जानवरों से मिलाता है उनकी जानवर वाली रूह की वजह से। ये जानवर की सिफ़ात इंसानी रूह के लिए कोई कीमत नहीं रखतीं। जानवरों में भी ये ताकते होती हैं; असल में, ये इंसानों की बनिसबत जानवरों में ज़्यादा क़वी होती हैं। मिसाल के तौर पर, गाय और गधे इंसानों से ज़्यादा खाते और पीते हैं। खिंज़िरो और चिड़ियों में ज़्यादा जनसी चुस्ती होती है। शेर, पानी के भैंसे, और हाथी ज़्यादा ताकतवर हैं। भेड़िये और चीते बेहतर और खतरनाक लड़ाकू हैं। चूहे, कुत्ते और बिल्लियाँ रात में देख सकते है और दूर से सूंघ सकते है। ये सारी खुसूसियात इंसानों के लिए एक इज़्ज़त का बाइज़ होतीं, तो ऊपर बताए गए जानवर ज़्यादा इज़्ज़त वाले बताए जाते और इंसानों से बरतर होते। इंसानों की इज़्ज़त उनके रूह की दो ताकतों की वजह से है, नाम के तौर पर, रूहानी दिल और रूह। रूहानी दिल और रूह, नुत्क की ताकत इस्तेमाल करके नेकी और बुलंद नकियों को पहचान सकते हैं, और इस मसअने के लिए, उन्हें बेइंसाफी को छोड़ना होगा।

अल्लाह तआला में यकीन और उसकी मारिफ़त (नज़दीकी इल्म) कुछ ऐसी चीज़ है जो करने से ज़्यादा कहने में आसान है ये ईमान के छः बुनयादी उसूलों (आमन्तु) के मआनी पर यकीन रखने पर पूरा होता है। इन उसूलों में से पाँचवा कयामत के दिन और मरने के बाद उठने पर यकीन रखने वाला है।

बेअकलों का कहना है, "ये बताया जाता रहा है के परिंदों का गोश्त, फल, दूध, खालिस शहद, विला, जन्नत की हूरें और इसी तरह की दूसरी चीज़ें जो माददी जिस्म को मज़ा देती हैं वो जन्नत की नेअमतें हैं। ये चीज़ें भूख और वहशी इच्छाओं को मतमईन करती हैं। चूँकि रूह की खुशी अल्लाह तआला के ईल्म और उन चीज़ों पर मुबनी है जो अकल के ज़रिए मानी गई, रूह की मस्ती मांद पड़ गई, वहशी मज़ों ने फ़ौकियत ले ली। इस लिए, इससे साफ़ ज़ाहिर है और बरहक है इस नतीजे पर पहुँचना के दुनिया के सबसे ज़्यादा ऊँचे लोग जैसे के पैग़म्बर अलैहिम-उस-सलावात ऊ वात तसलीमात, औलिया, और आलिम रहीमाहुल्लाहु तआला, आखिरत में, नरम लोगों के लायक ज़िंदगी गुज़ारेगें, उनको सबसे ज़्यादा नुकसान देने वाले लफ़्ज़ 'वहशी' से दया दिलाने

के लिए? इसके अलावा, जन्नत के मज़े उठाने के लिए तबई जिस्म को, पहले अपने आपको तकलीफ़ पहुँचानी होगी। तबई जिस्म को किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं होती, जब तक के वो उसकी बहुत ज़्यादा ज़रूरत महसूस न करे। मिसाल के तौर पर, जब तक भूख महसूस न हो, तो खाने और पीने के मज़े की कदरतानी नहीं की जा सकती। बग़ैर थके हुए या नींद के, एक शख़्स नींद के मज़े और आराम नहीं ले सकता। इस वास्ते क्योंकि जन्नत में कोई बेअरामी नहीं है इसलिए, तबई जिस्म मुमकिना तौर पर उन मज़ों का सुकून नहीं ले सकते।" अबीसेना एक मशहूर फ़िलोस्फ़र जो मुस्लिम तहज़ीब में पले, उन्होने अपनी किताब **शीफ़ा** और **निजात** में इंसाफ़ वाले दिन का इक़बाल किया है लेकिन अपनी दूसरी किताब जिसका नाम **मुआद** है उसमें उन्होने अपनी बात वापिस ले ली। दूसरे आलिम, नसिरऊददीन अल तोसी ने अपनी किताब **तेजरीद** के कुछ हिस्सों में मरने के बाद उठने के बारे में लिखा; लेकिन दूसरे हिस्सों में उन्होने में अपनी बातों से मुकर बाए जो उन्होने पहले कही थीं।

सब ईमान वालों का एक राए से मानना है के इंसाफ़ वाले दीन तबई जिस्म मौजूद होगा। क्या गलत है, हाँलाकि इसमें ये मानना के जन्नत की रहमतें सिर्फ़ जिस्म के लिए हैं। एक बार एक रूह दुनिया में हरकत करना शुरू कर दे, तो वो अपनी हरकत जारी रखता चाहे वो अपना जिस्म ही क्यों न छोड़ दे और बल्कि इंसाफ़ वाले दिन तक हरकत करती है। जन्नत में, जिस्म को दुबारा बनाया जाता है ऐसे के वो अबदी ज़िंदगी गुज़ार सके और दुनिया में जो उसने गुज़ार सके और दुनिया में जो उसने गज़ारी उससे मुखतलिफ़। मरने के बाद की ज़िंदगी रूह का उसके तबई जिस्म के साथ मिलन पर शुरू होती है और अमर होने के लिए सही होती है। जिस ख़ुशी और ऐश के मज़े रूह उठाती है वो उनसे मुखतलिफ़ होते है जो जिस्म में मौजूद होते हैं अपने आपको राहत देने के लिए आखिरत में। लोग जो रूहानी बुलंदी की बारिकबिनी के साथ होते हैं वो रूह की ख़ुशियों को ज़्यादा फ़ौकियत देते हैं रूह का आराम जिस्म के मज़े से लासानी तौर पर उमदा है। जन्नत की रहमतों के बीच, अल्लाह तआला को देखने का मज़ा रूह के लिए बुनयादी और सबसे मिठी ख़ुशी है। इस्लामी आलिमों के मुताबिक, कुछ चुने हुए लोगों के ज़रिए ये मुमकिन हैं के वो मिसाल के तौर पर (वो जिन्हे रूहानी मरतबा हासिल हुआ जो उन्हे अल्लाह तआला को

जानने के काबिल बनाता है अच्छे तरीके से इंसानों के लिए, और इसलिए जिन्हे कहा जाता है) आरिफ़, रूह की जन्नत में दाखिल होने के लिए और जन्नत के कुछ मज़े चखने के लिए जबकि वो यहाँ पर तबई जिस्म के लिए कोई आसमानी मज़े नहीं हैं जबतक के हम इस दुनिया में रहते हैं। जन्नत की खुशियाँ ज़मीन की खुशियों से मुख्तलिफ़ हैं। वो दुनियावी खुशियों से मुख्तलिफ हैं। अल्लाह तआला ने ज़मीन पर कुछ खुशियाँ ऐसी तखलीक की हैं जो जन्नत की खुशियों की तरह लगती हैं ताकि हमे आसमानी आरामों का मज़ा या आइडिया हो जाए मुशाबहत के ज़रिए। इसलिए, उसने हमें एहकाम दिया काम करने के लिए और उन खुशियों को हासिल करने के लिए जदोजहद करने के लिए। जन्नत में आराम का मज़ा लेने के लिए ज़रूरी नहीं है के पहले से मुसिबतों को झेला जाए। जन्नत में जिस्म का बनाना ज़मीनी तबई जिस्म बनाने जैसा नहीं है। ज़मीनी जिस्म इस तरह बनाया जाता है जो आरज़ी ज़िंदगी के लिए अच्छा हो। ये एक सौ साल तक कायम रहती है। जो जिस्म हमें जन्नत में मिलता है उसको हमेशा के लिए बनाया जाता है। दोनो के बीच में जो मुशाबहत होती है वो बिल्कुल उसी तरह है जिस तरह एक आदमी की परछाई है। एक शीशे में इंसान का दिमाग़ आखिरत में इस मखलूकों को देखने के बारे में सोच नही सकता। दिमाग़ सिर्फ़ उन चीज़ों को समझ सकता है जो वो अपनी हिस के अज़ा के ज़रिए महसूस करता है और उन्हीं चीज़ों को देखता है जो उनसे मिलती हुई होती हैं। ये बहुत मायूसकुन गुमराही है के जन्नत की राहतों और ज़ाएकों के बारे में फैसला सुनाना, जो हम बिल्कुल भी नहीं जानते, उनको दुनियावी आरामों से मिलाना, जो के हम जानते हैं मज़े के नाम पर।

कुछ बड़े तसव्वुफ़ के रेहनुमाओं और इस्लामी आलिमों रहीमाहुमल्लाहु तआला के मुताबिक, हमारी इस दुनिया में एक तीसरी दुनिया भी मौजूद है जिसे मुशाबहत वाली दुनिया (**आलम-ए-मिथाल**) कहते हैं। इस **माददी दुनिया** के आसमान, ये माददे/जौहर से नहीं बना है। ना ही ये रूहानी दुनिया की तरह अबदी नहीं है। दूसरे लफ़्ज़ों में, ना ही ये गैर माददी है। ये दोनो के बीच कुछ चीज़ है। उस दुनिया के मखलूक इस दुनिया के मखलूक से मिलते हुए हैं इसमें उनकी बनावट उन चीज़ों से बनती हैं जो छोटी चीज़ों में बंट जाती हैं। और जो उनको गैर मुशाहबी बनाते हैं वो है के उनका वज़न नहीं है और वो कोई जगह

भी नहीं लेता। सारी माददी चीज़ें और मआनी जो इस दुनिया में मौजूद होते हैं वो उस दुनिया से मुशाहबहत रखते हैं। पानी में वहाँ पर मुशाबहत ऐसी ही है जैसे यहाँ के पानी में। यहाँ के दुनिया का इल्म उस दुनिया के दूध को ज़ाहिर करता है। अच्छी आदतें और अच्छे काम इस दुनिया में तरबूज़ों, फूलों, और ज़ाएकेदार फलों की शक्ल में मुशाबहत दुनिया में ज़ाहिर होते हैं। गैर मुतफिक खसलत और बुरे कामों से इस दुनिया में अंधेरे से मिलती हुई सापों की तरह, बिच्छू और चीज़ें जो इंसानी मखलूक को मुश्किलों और परेशानियों में डालती हैं वो इस दुनिया में तअल्लुक रखते हैं। जो सपने लोगों के ज़रिए देखे जाते है वो उस दुनिया से होते हैं। तसव्वुफ़ के आला रहनुमा रहीमाहुमल्लाहू तआला के मुताबिक, वो दुनिया आगे और दो मुखतलिफ दुनियाओं में बंटी हुई है। अगर ये तसव्वुफ के आला रहनुमा उस दुनिया में ख्याल के महकमे के ज़रिए घुसते तो इसे हम कहते समानता की दुनिया जो "**कयास पर मुबनी**" है अगर उस दुनिया में जाना कयास पर या दूसरे अंदरूनी हिस के अज़ा के ज़रिए वाकेअ नहीं होते, किसी भी मामले में ये असल में हो, इसे हम "**मुशाबहत की मुकम्मल दुनिया**" कहेंगे। [अलम-ए-मिथाल का मज़मून इमाम रब्बानी कुदसिया सिरोह के ज़रिए लिखी गई किताब मकतूबात के दूसरे हिस्से में अठठावनवें खत में तफ़सील से लिखा हुआ है। इस लंबे खत का तुर्की तर्जुमा तुर्की के उमदा शाहकार की एक किताब **सआदत-ए-अबदिया** के पहले हिस्से के उन्तालिसवें सबक में दस्तयाब है। (ये खत अंग्रेज़ी में भी तर्जुमा किया गया है और **सआदत-ए-अबदिया** के पहले हिस्से के उन्तालिसवें सबक में है, ये इस्तानबुल तुर्की की हकीकत किताबवी की इशाअतों में से एक है।)]

तसव्वुफ़ के कुछ बड़े आलिमों का बयान है के वो उस दुनिया में घुसे खुद के नज़मो ज़बत के तरीकों जिन्हें **रियाज़त** और **मुजाहदा** (जिसे हम पिछले मतन में समझा चूके हैं) को नाफिज़ करके, और उस दुनिया के अपने असरात/तासूरात को बताकर। मज़हबी आलिमों ने भी इस तीसरी दुनिया की मौजूदगी की तसदीक की है और उसके कुछ राज़ भी बताए हैं। अब्दुल्लाह इबन अब्बास रज़ी अल्लाहु अन्हुमा ने कहा, "जिस दुनिया को हम जानते हैं उसके अलावा भी वहाँ दूसरी दुनिया मौजूद है। इस दुनिया में सब चीज़ों में उस

दुनिया से समानता है। दरहकीकत, उस दुनिया में मेरी तरह एक दूसरा अब्बास भी है।"

तसव्वुफ़ के अलावा माहीरीन रहीमाहुमल्लाहू तआला ने कहा जब एक शख़्स मर जाता है तो उसकी रूह ज़िस्म से अलग हो जाती है। जो अच्छे काम उसने किए जब वो ज़िंदा था और उसकी अच्छी खसलत/आदत अपने आप को तबदील कर लेती हैं और रोशनी, फूलों, हूरों, महलों और सच्चे मोतियों में ज़ाहिर करती हैं। उसकी लाइल्मी, गुमराही और नारज़ामंद खसलत अपने आपको तबदील कर लेती है और अंधेरे, बिच्छुओं और साँपों की तरह ज़ाहिर होती हैं। एक ईमान वाली रूह जो अच्छे काम करती है और अच्छी आदत रखती है वो उन खुशियों को तैयार करते हैं जो वो जन्नत में मज़े करने वाले हैं और उन्हें वहाँ ले जाने वाले हैं। काफ़िर और गुनहगार दोज़ख की आग और सज़ाएँ तैयार करते हैं और उन्हें वहाँ साथ लेकर जाते हैं। रूह, जबकि यहाँ दुनिया में रहती है तो उस वज़न को नहीं सोचती जो उसे लेकर जाना है। तबई जिस्म से उसका लगाओ और उसका दुनिया में दखल/कबज़ा उसे इस हालत को समझने से बाज़ रखते हैं। जब तक रूह जिस्म का हिस्सा होती है तब तक ये रूकावटें कोई मौजूदगी नहीं रखती। उसके बात ये ऊपर कही गई अच्छे और बुरे वज़नों की नुमाइंदगी समझते हैं। ज़मीन पर इंसानी ज़िंदगी एक शराबी आदमी की हालत जैसी है, और मौत एक शराबी आदमी को होश में लाने जैसा है। जबकि एक आदमी शराबी होता है, लोग जो उससे प्यार करते हैं उसे चीज़ें बताते हैं या उसे तोहफ़े देते हैं या मुमकिना तौर पर बुरी चीज़ें उस पर अयान होती हैं। वो कुछ भी महसूस नहीं कर पाता चाहे उसकी कमीज़ के नीचे अगर बिच्छु और साँप रींग जाएँ, उसकी इस दिमाग़ी हालत की वजह से। लेकिन, एक बार वो होश में आ जाए, उसे हर चीज़ समझ आ जाती है। ये मौका मुशाबहत वाली दुनिया की हालातों से मिलता हुआ है। साददीन-ए-तफ़ताज़ानी रहीमाहुल्लाहू तआला ने अपनी किताब **शारह-ए-मकासिद** में, मुशाबीह दुनिया की वज़ाहत करने के बाद, कहा के क्योंकि इस सब चीज़ों को साबित करने के लिए कोई दलील मौजूद नहीं है, सही आलिम इसकी तरफ़ ज़्यादा ध्यान नहीं देते। 'सही आलिमों' से उनकी मुराद है के आलिम जो अपने दिमाग़ों को कोशिश करते हैं उन चीज़ों को मनवाने की जिन्हें इंसानी दिमाग़ समझने के

काबिल होता है। क्या ज़ैब देगा एक दिमाग़ के तकलीद करने वाले को, हॉलाकि, हम किसी चीज़ को मना नहीं कर सकते के वो मुश्किल है, सिर्फ़ इसलिए क्योंकि वो उसकी पहुँच से बाहर है। दरअसल, इबने सिना (अवीसेना) दिमाग़ के मुकददम रहनुमा, का बयान है, "अगर कोई चीज़ नामुमकिन साबित ना की जा सके, तो उसे इस तरह नहीं कहना चाहिए। इस वास्ते, के किसी चीज़ को बग़ैर साबित किए मना करना के ये नामुमकिन वो ऐसा ही है जैसे, किसी चीज़ से इंकार करना जो तुम समझ नहीं पा रहे, एक साइंस बेइज़्ज़ती।"

शीहाबऊददीन अल सोहरावरदी रहीमाहुल्लहू तआला उनके साथ कहा, "माहिरे फ़लाकियात ने कहा के सेंकड़ों सितारे एक साथ आए और एक निज़ाम कायम किया। हर खला में बग़ैर किसी रूकावट के घूम रहा है। लोगों ने अपनी जानकारी को माना अगरचे उन्होने इस वाक्ये को नहीं देखा। इसी तरह, तसव्वुफ़ से आला रहनुमाओं के ज़रिए मुशावहत की दुनिया और रूहो के बारे में जानकारी दी बगैर उसे देखे हुए मान लिया, क्योंकि ये ऐसी चीज़ है जिसे उन आला रूहानी माहिरों ने (एक तरीका जो वो अपने पाक दिलों के साथ लेकर चले और जिसे कहा जाता है) कश्फ़ के ज़रिए खोजा।" ये एक अकलमंदाना ग़ैव जूई होगी के उन लोगों पर ईमान रखना जिन्होने कुछ चीज़ों के बारे में बताया, बजाए इसके के इंकार करने वालों की अंधी तकलीद करना। [एक आदमी जो सबब और साइंसी इल्म रखता है वो फ़ौरन समझ जाएगा और अल्लाह तआला के बुजूद और वहदानियत को साबित कर देगा। दूसरी दुनिया (आखिरत) में ईमान रखना एक अलग मामला है। हम आखिरत में ईमान रखते हैं क्योंकि ये हमें अल्लाह तआला के ज़रिए बताया गया है।]

अखलाक का इल्म और इस्लाम में मोहज़ब की तालीमात

इल्म जो हमें रूहानी दिल (**कलब**) और जान (**रूह**) की हालतों और हरकतों के बारे में बताता है उसे "इल्में अखलाक" कहते हैं। आलिमों ने नौ

हिस्सों में एक शख़्स की हालत और हरकात के बारे में बताया है जब वो अकेला होता है। इस किताब में हम उनमें से सिर्फ छ: की वज़ाहत करेंगे।

पहला हिस्सा

इस हिस्से में, आदतें सात के सात अच्छी और बुरी चीज़ें भी वज़ाहत के साथ बयान करेंगे। आदत **(हुए)** रूहानी दिल और रूह का असली जौहर **(मलाका)** है। वो, इस लियाकत के ज़रिए, इखतियारी तौर पर हरकात अदा करते है जानबूझकर बग़ैर सोचे हुए। आदतें जो मुस्तकिल कायम हों, वो असली जौहर कहलाती है, जबकि, एक आरज़ी आदत हालत **(हाल)** कहलाती है। मिसाल के तौर पर, हँसना या शर्मिन्दगी महसूस करना हालात (हाल) हैं। सखावत और बहादुरी लियाकत हैं। जब हम आदतों का हवाला देते हैं, तो ये समझा जाए के हमारा मतलब लियाकत है। कभी कभी अच्छे काम करना एक आदत को कायम नहीं करता, लेकिन उन्हें बार बार करना कायम करता है। अगर कोई अकसर खैराती काम करे, तो उसे एक सखावत वाला आदमी समझा जाता है। बहरहाल, अगर एक शख़्स अपने आप पर जबर करके लगातार अच्छे काम करे, तो उसे एक सखी आदमी नहीं समझा जाए। अगर वो अच्छे काम कुदरती तौर पर करता है, इखतियारी रूप से, लगातार, और प्यार से, तब वो एक सखी शख़्स है।

आदत अच्छे या बुरे कामों/हरकात को अखलाकी तौर पर करने का ज़रिया है। कभी ये ऐसी हरकात का सबब बनती हैं जो ना तो अच्छी हैं ना ही बुरी। पहले मामले में इसे अच्छी आदत या पाकीज़गी **(फज़िलत)** कहा जाएगा। फय्याज़ी, बहादुरी और नरमाई इसकी अच्छी मिसाले हैं। दूसरे मामले में ये बुराई, तोहमती बरताव, बुरी खसलत, या ग़ैर रज़ामंद आदत, जैसे के तंगदिली और बुज़दिली बन जाता है। तीसरे में, ना तो ये पाकिज़ा रहता है ना ही बुराई; तब इसे हुनरमंदी और दसतकारी कहा जाता है। जैसे के सिलाई और काश्तकारी। इस किताब में, हम पहले और दूसरे मामले की वज़ाहत करेंगे।

जैसे के हमने इस दिबाचे के आखिर में लिखा, के रूहानी दिल और रूह की दो ताकतें हैं। पहली ताकत फहम की है **(कुव्वत अ़ल-आलिमा या मुददिका)**। ये ताकत सबब और इल्म **(अकल, नुत्क)**की तरह कहलाती है। कल्ब और रूह उन चीज़ों को समझते हैं जो असबाब के ज़रिए बराहेरास्त इस ताकत को समझते हैं। दूसरी वो ताकत है जो चीज़ों के वाकअ होने की वजह बनती हैं- वजह की कुव्वत/ताकत- **(कुव्वत अल-आमिला)**। हर कुव्वत के दो पहलू हैं। फहम की कुव्वत की पहली खासियत, जिसे सबब की तरह जाना गया, वो है नज़रिए का इल्म **(हिकमत अल-नज़ारी)**, और दूसरी खासियत को अमली इल्म **(हिकमत अल अमली)** कहते हैं। वजह की कुव्वत **(कुव्वत अल आमीला)** की पहली खासियत भूख **(शहूत)** है,एक ताकत जो खुशी और मज़े देने वाली चीज़ों की इच्छाएँ रखती है। वजह की कुव्वत की दूसरी खासियत **(ग़ज़ब)** है, एक ताकत जो एक शख़्स को उन चीज़ों से दूर रखती है जिसे वो नहीं चाहता। ये चारों कुव्वते मुखतलिफ हरकात और कामों को निकालती है/पैदा करती है। अगर हरकात और काम मअकुल, नफीस और ज़्यादती और नाकाफ़ी से फ्री हो, तो आदत जो इन हरकात को अदा करती हैं वो पाकिज़ा **फ़ज़ीलत** कहलाती हैं। आदत जो उन हरकात को करती हैं जो नाकाफ़ी हों या ज़्यादा हों तो वो बुराई **(रज़ालत)** कहलाती है। अगर हिकमत अल नज़ारी सही तरीके से पनप जाए तो यह आदत अकलमंदी **(हिकमत)** कहलाती है। अगर दूसरी कुव्वत यानी के हिकमत अल अमाली सही तरीके से पनप जाए, तो इस आदत को इंसाफ **(अदल)** कहेंगे। अगर रूहानी दिल की और रूह की अज़बाब की कुव्वत शहूत सही तरीके से पनप जाए, तो ये आदत पाकिज़गी या मयानारवी कहलाती है। अगर गज़ब सही तरीके से पनप जाए, तो ये आदत बहादुरी **(शुजाअत)** कहलाती है। ये चारों आदतें अच्छे कामों की खुशबू हैं। अदल ज़्यादती में या नाकाफ़ी नहीं हो सकता, लेकिन दूसरे तीनो ज़्यादा या नाकाफ़ी हो सकते हैं। अगर वो ऐसे हैं। तो ये बुराई होगी। अगर हिकमत अल-नज़रिया ज़्यादा हो, तो इसे फुज़ूलगोई **(जरबज़ा)** कहेंगे। अगर ये नाकाफी होगा, तो इसे बेवकूफ़ी **(बलादत)** कहेंगे। जैसे के हमने पहले भी बयान दिया है, अदल ज़्यादती में या अधूरे बराबरी हिस्से में नहीं हो सकता; ताहम इसका एक उल्टा लफ़्ज़ भी है, जिसे ज़बर **(जुल्म)** कहते हैं। पाकिज़गी जो ज़्यादा तनासुब

से है उसे अय्याशी (**फुजर**) कहेंगे। अगर ये कम है, तो इसी सुस्तीपन (**हुमूद**) कहेंगे। बहादुरी का ज़यादा तनासुब जल्दबाज़ी (**तहाव्वुर**) कहलाता है जबकि अधूरा तनासुब बुज़दिली (**जुबन**) कहलाता है। ये आदत की किस्मों की तशरीह **अहया उल ऊलूम अद दीन** किताब हज़रत इमाम ग़ज़ाली के ज़रिए लिखी गई किताब से लिए गए हैं। ये **हदीकत उन नादिया** किताब जो के अबद उल ग़नी नबलूसी (डी.**1143** [**1731** ए.डी.], दमशकश) के ज़रिए लिखी गई है उसमें भी लिखे हुए हैं। बाद की किताब अरबी में है और जो दोबारा हकीकत किताबवी, इस्तांबुल के ज़रिए छापी गई। कुछ आलिमों के मुताबिक,

पाकिज़गी, अकल और बहादुरी का सही मिलान अदल को पैदा करता है।

एक शख्स जो फुजूल गौ आदत रखता है, वो अपना दिमाग़, अपनी रूह की ताकत को धोखेबाज़ी, ग़ीबत, और मसखरेपन में इस्तेमाल करता है। एक शख्स जो बेवकूफ़ी की आदत रखता है वो अच्छाई और बुराई की असनियत नहीं समझ सकता या उनके बीच फ़र्क नहीं कर सकता। एक शख्स जे जल्दबाज़ी (**तहाव्वुर**) की आदत रखता है वो अपने आपको खतरे में डालता है उससे ज़्यादा ताकतवर दुश्मन के खिलाफ़ लड़ाई करने की कोशिश की वजह से। एक शख्स जो बुज़दिल होता है उसके अंदर सबर और कुव्वते बरदाश्त नहीं होती, और इसलिए वो अपने हुकूक की हिफ़ाज़त नहीं कर सकता। एक शख़्स जो अय्याशी की आदत रखता है, वो ऐसे काम करता है जो मज़हब में नापसंद (**मकरूह**) हैं या ममनुअ (**हराम**) काम हैं खाने में, पीने में और शादी में, और जो गंदे और रज़ील कामों से खुशियाँ हासिल करें। एक शख़्स जो सुस्त पने की आदत रखे वो जाईज़ खुशियों और चलन को नज़र अंदाज़ करता है, वो या तो उसकी अपनी तबाही या उसके कुंबे के पेड़ के उखड़ने का नतीजा बनता है।

ऊपर बताई गई चार एहम आदतें (पाकिज़गियाँ) इंसानी मखलूक के ज़रिए रखी गई बाकी सारी पाकिज़गियों की खुशबू है। हर कोई इन चार अहम पाकिज़गियों को रखकर फ़खर करता है। वो भी जो अपने बुज़र्गों की शराफत

पर फ़खर करते हैं वो भी इस हकीकत का हवाला देते हैं के उनके बड़े इन चारों अहम पाकिज़गियों को रखते थे।

दूसरा हिस्सा

हम इस हिस्से में चार अहम आदतों की नीचली किस्में वाज़ेह करेंगे। जो बरताव इन चार अहम आदतों से निकलता है वो इतना ज़्यादा है के उसे मिलाना लगभग नामुमकिन है, ताहम उसे अकेले वाज़ेह करेंगे। हम सिर्फ़ कुछ जाने मानो के बारे में बताएंगे जोके इस्लामी आलिमो के ज़रिए जो इल्म ए अखलाक के माहिरीन थे उन्होने उसका मुशहदा किया।

सात नेकियाँ अकलमंदी (**हिकमत**) से निकलीं।

1- पहली अकल है। ये एक लियाकत, एक आदत (मलाका) है। इसकी मदद के ज़रिए, एक शख़्स जानकार चीज़ों से अनजान चीज़ें हासिल कर सकता है। एक शख़्स सबूतों इकठठा करता है और तब एक नतीजे पर पहुँचता है जिस उनवान पर बहस हो रही हो। इस लियाकत को उबाहरने के लिए उस मज़मून को पढ़ना ज़रूरी जो हमें ये बताता है के एक नतीजे पर किस तरह पहुँचे इन ना मालूम हकीकतो की मुशाबहत को जानने वालियों से, उस काबिलियत के इज़ाफ़े में जो हिसाब और जीऔमिट्री के मुशकलात हल कर सकता है।

इंसानी मखलूक अकलमंदी की मुखतलिफ़ सनद रखती है। सबसे ऊँची अकलमंदी की सनद अकलमंद कहलाती है हौशियारी इम्तेहान के ज़रिए नांपी जाती है। बीसवीं सदी के मशहूर महिरे नफ़सियात में से एक, अमेरिकन टरमन [टरमन जबतक ज़िंदा थे जबके ये किताब लिखी जा रही थी **1380** हिजरी, **1960** ए.डी. में] ने कहा के तारीखी तौर पर सबसे पहले टेस्ट अकलमंदी को नांपने के लिए उस्मानिया तुर्क के ज़रिए किए गए। आटॉमन फ़ौजें यूरोप के बज़रिए घूम रही थीं एक मुल्क के बाद दूसरे पर फ़तह हासिल करती जा रही थीं। वो विआना के दरवाज़े पर पहुँच चुकी थीं। वो जानते थे के अगर विआना पर फ़तह हासिल करली तो बाकी के यूरोप पर कबज़ा करना

आसान हो जाएगा। आटॉमन इस्लामी तहज़ीब यूरोप लेकर आए। इल्म सीखना, और अखलाक की रोशनियाँ उन मुल्कों को जगमगा रही थीं जो ईसाईयत से अंधेरे में डूबी हुई थीं, और उन्होने कुव्वत, इंसानियत, अमन और खुशियाँ फैलाई। सदीयों से यूरोप के जाबिर हाकिमों, सरमायादारों, और पादरियों के गुलाम रहे थे वो वहशी बन चुके थे। इस्लामी ईसाफ़, इल्म, और अखलाक के तआरूफ़ के साथ यूरोपियनस आज़ाद हो गए और इंसानी हुकूक के मज़े लेने लगे। लेकिन जाबिर हाकिम और खासतौर से ईसाई पादरियों ने अपनी आखिरी कोशिश आटॉमन फ़ौजों के खिलाफ़ कर डाली। एक रात, इस्तानबुल में ब्रीटेन के आला चाँसलर ने लंदन में एक तारीखी खत भेजा। अपने इस खत में उसने लिखा यूरेका!... यूरेका!...! मेने आटॉमन फ़ौजों की कामयाबी का राज़ ढूँढ लिया। मेने उनकी फ़ौजों की चढ़ाई को रोकने का रास्ता ढूँढ लिया। उसने मंदरजाज़ेल तरीके से भी लिखा:

"मफ़तूह इलाकों में उसमानियों ने बग़ैर कौमियत, या मज़हब के हवाले से मुंतखिब किए हुए बच्चों की अकलमंदी जाँच करके और उनका इंतेखाब करके जो आला IQS रखे हुए हैं और उन्हें स्कूलों (मदरसों) में तालीम दे रहे हैं इस्लामी अखलाक के मुताबिक। वो मज़ीद उन स्कूलों [मदरसों] के बच्चों के बीच में से सबसे ज़्यादा हौशियार तालिबे इल्म मुंतखिब कर रहे हैं और उन्हें अपने वक्त की आला साइंस और फुनून की तालीम "ANDARUN" कॉलेज में दे रहे हैं, जोकि एक खास स्कूल है सुल्तान की रिहाईशगाह पर। फ़ौजी रहनुमा सब इस खास स्कूल से सनदयाफ़ता हैं और सारे ऊँची ज़ी फहम रखते हैं। सोकूलस और कॉपरूलस, वो नामवर और कामयाब वज़ीरे आज़म को इस तरीके से तालीम दी गई। सिर्फ़ एक वाहिद रास्ता उस्मानिया फ़ौजों को चढ़ाई से रोकने का और ईसाईयत को बचाने का वो है इन खास स्कूलों में तालीम के मयार को जड़ से उखाड़ना और उसे रज़ील करना परेद के पीछे रहकर खुफ़िया तरीके से काम करके।" इस खत के बाद अंग्रेज़ों ने एक नई वज़ारती रियासत कायम की कोलोनियन महकमे के लिए। जासूस जो इस महकमे में काम कर रहे थे। और ईसाई तबलीग़ी जमाअत और पादरियों ने अपनी कोशिशों पर ध्यान लगाया और कुछ सिपाहियों को झूठ, धोखे और उस्मानिया रियास्त में खुशहाल ज़िंदगी के वादे के ज़रिए उनको

नीचे रखने की कोशिशें कीं। उन्होने अपने रसूख का इस्तेमाल ऊँचे हुकाम पर किया ताकि ये किराए के सिफ़ाही असरदार और अहम इंतेज़ामी ओहदों पर फाईज़ हो जाएँ इन नीच कठपुतलियों के ज़रिए उन्होने कोशिश की के कुछ ज़्यादा खतरनाक और अहम कोंसिस जैसे के साइंस, इल्में अखलाक और तरीक्की याफ़ता मज़हबी इल्म को तबाह और खत्म किया जाए इन स्कूलों में ताकि इन स्कूलों के सनदयाफ़ता ज़रूरी तालीम में पिछड़ जाएँ सरकारी इंतेज़ाम को कामयाबी से चलाने में। उन्होने अपना मकसद **1839** में सियासी इसलाह के असर में आने के बाद पूरा किया। जिसके नतीजे में, इस्लामी रियासत तबाह हो गई और खुशियों और अमन की रोशनियाँ जो इस्लाम ने रोशन की थीं वो बुझ गई।

2- तेज़ हाज़िर जवाबी (सुरत-ए-फहम, जिसे **सुरत-ए-इंतेकाल** भी कहते हैं): सोचने में जल्दी और हंगामी हालत में हरकत करने में चुस्ती, एक बातचीत या मुबाहिसे के मुकाबले के जवाब में। ये लियाकत इस बात को समझने में मदद करती है के जब भी हालत की ज़रूरत हो तो किस तरह अच्छे से और जल्दी से किस तरह इस मामले का जवाब दिया जाए। जब एक शख़्स जो इस लियाकत से वाकिफ़ होता है कुछ सुनता है, तो वो जल्दी से अपने मुखालिफ़ पर भी पकड़ कर लेता है। अकल सोच और जाँच से तअल्लुक रखती है। ये जाने हुए मामले बारीके के साथ जाँचती है और कुछ अजनबी नतीजे इसमें से निकालती है। तेज़ हाज़िर जवाबी सोचने और जाँचने के अलावा दूसरी चीज़ों का हवाला देती है मिसाल के तौर पर, हाथ में जो मामला है उसके मुताबिक चीज़ों पर उसके तअल्लकु से पकड़ रखने में तेज़ी करना।

3- दिमाग़ का साफ होना (**सफा अज़-ज़हन**): जिस नतीज़ों की इच्छा है उन्हे समझने ने में जल्दी करना और उन्हे हासिल करना।

4- सिखने की आसानी (**सहूलात अल तआलुम**): सोच पर गहरा दिमाग़ रखना बार बार ध्यान हटने के बावजूद।

5- हुदूद को ध्यान से देखना (**हुस्न अल-तअककुल**): हदो और बंदिशो में रहना जबकि ज़रूरी चीज़ों को सीख रहे हो; ना की चीज़ों को हद से

ज़्यादा करना। एक शख़्स जो इस लियाकत से नवाज़ा गया वो ज़रूरी चीज़ें नहीं छोड़ता, वो अपने आप को ग़ैर ज़रूरी चीज़ों में नहीं बाँधता, ना ही वो अपने वक्त को ज़ाया करता।

6- हाफ़िज़ा (**तहाफ़ूज़**): चीज़ों को ना भूलना। रूह फहम और समझी हुई चीज़ों को कभी नहीं भूलता।

7- याद करना (**तज़क्कुर**): इखतियारी काबलियत चीज़ों को याद रखने की जो हाफ़ज़े में जमा हैं।

हिम्मत ग्यारह नेकियाँ देती है

1- संजीदा फ़हमी: जज़बाती झुकाओ की काबलियत न होना जैसे के जब तारीफ़ किया जाए खुशी से फुल जाए और जब तंकीद की जाए तो उदास हो जाए। एक शख़्स जो इस तोहफ़े पर कबज़ा रखता है वो अमीर और गरीब को बराबर रखता है और खुशी और ग़म में कोई फर्क नहीं रखता। उसके काम और कोशिशे डरे हुए हालात में या मुश्किल में या माहौल में तबदीली लाने से वो नहीं हिलता।

2- बहादुर (**नजदात**) मुश्किल वाक्यात और खौफ़नाक हालात में सबरो तहमुल और बरदाश्त करना और उन हालात में शिकायत नहीं करना और ना ही नामुनासिब अदाकारी करते हैं।

3- ग़ैरत और कोशिश रखना (**हिम्मत होना**): एक शख़्स इस फज़ीलत के तोहफ़े के साथ दुनियावी मरतबों, रूतबों, तरक्की या तनाजुल की परवाह नहीं करता।

4- साबित कदमी (**ज़बत**): एक शख़्स के मकसद के रास्ते की तरफ़ की मुश्किलात डालना; कामयाबी के रास्ते पर तबाहकुन अफ़वाज़ या एजंसियों की खिलाफ़ मज़ाहमत करना।

5- नरमी (**हिल्म**): रूह का सुकून; नरम और नेक होना और गुस्से से गुरेज़ करना।

6- पुरसुकून (**सुकून**): दुश्मन के खिलाफ जंग के दोरान मुल्क का, मज़हब का और कौम का दिफ़ाअ करते हुए ज़रूरी ताकत, सावित कदमी और मज़ाहमत रखना और दुश्मन के लिए सिर्फ़ मज़ाक/हँसी का जखीरा ना बनना।

7- हुनरमंद होना (**शहामत**): अच्छे काम करने की और ऊँचे मरतबे हासिल करने की मज़बूत इच्छा होना; अच्छे नाम से याद रखा जाना और अच्छे काम करने पर इबादत की तरह बने रहना भी मज़बूत इच्छा होती है सवाब हासिल करने के लिए (आखिरत में ईनाम)

8-मुश्किले बरदाशत करना (**तहममुल**): बेखौफ़ सावित कदमी अच्छी आदतें पैदा करने में और अच्छे काम करने में।

9- आजिज़ी (**तवददो**): उन लोगों की तरफ़ जो दुनियावी मआनो में कमतर हैं उनकी तरफ़ गैर मग़रूरियत वाला बरताव बनाकर रखना।इसके लिए, चाहे एक शख्स ने अच्छाई के नाम पर कुछ भी हासिल किया हो लेकिन वो सिर्फ़ अल्लाह तआला की महरबानी है।वो महज़ कुछ नहीं है।वो जिन्होने दुनियावी मरतबे हासिल किए हैं और दौलतें उन्हें आजिज़ी दिखानी चाहिए और इस तरह ईनाम (**सवाब**) कमाना चाहिए।दुनियावी फ़ाएदे हासिल करने के लिए या दुनियावी मुश्किल नज़रअंदाज़ करने के लिए आजिज़ी दिखाने को महरबानी दिखाना (**तबसबस**) कहते हैं।इसकी एक मिसाल भिखारी का आजिज़ी दिखाने का अंदाज़ है, जोकि एक गुनाह है।

10- इज़्ज़त की हिस (**हम्मीयत**): अपनी कौम, मज़हब और इज़्ज़त की हिफाज़त करने में कमज़ोर ना पढ़ना, अपनी सारी काबिलियत, ताकत और कोशिश इस फ़र्ज़ पर लगा देना।

11-**रिक्कत**: इंसानी मखलूक के ज़रिए जो मुश्किले वजह बनी उनसे परेशान ना होना।दूसरे लोगों की वजह जो परेशानियाँ हुई उनकी वजह से अपना बरताओ और तरीका ना बदलना।एक शख्स जो दूसरों की वजह से

परेशानियाँ और नुकसान भूगत रहा हो उसे उनकी वजह से अच्छे काम करने से रूक नहीं जाना चाहिए।

पकिज़गी(इफ़फ़त) बारह नेकियाँ पैदा करती है

1- शर्म (**हया**): जब एक शख्स बुराई के काम करके शर्म महसूस करे।

2- हलीम (**रिफ़क**): इस लफ़्ज़ के लुग़वी मआनी रहम करना और दूसरों की मदद करना है, लेकिन इल्म-ए-अखलाक में इसके खास मआनी हैं इस्लाम के उसूलों की फरमाबरदारी करना।

3-सही रास्ते पर रहनुमाई (**हिदायत**): अच्छी खसलत का मुसलमान बनने की कोशिश करना।

4- अमन में होना (**मुसलामात**): बदलने और तकलीफ़ के वक्त, एक मुसलमान इस नेकी के साथ रज़ामंद रहना चाहता है और भहस नहीं करना चाहता या सख्त नहीं होना चाहता।

5-तसकीन: नफ़स पर काबू होना; नफ़स की इच्छाओं पर काबू होना जब वो भूख के साथ बहने लगे।

6- इस्तकलाल (**सबर**): ममनुअ (**हराम**) कामों और नफ़स की बुनयादी इच्छाओं से बचना, जो ऐसे चाल चलन से बचाती जिसकी वजह से बेइज़्ज़ती हो।दो तरह के सबर हैं पहला गुनाह करने के खिलाफ़ सबर रखना।शैतान, बुरी सोहबत, और इंसानी नफ़स इंसानी मखलूक को गुनाह करने के लिए उकसाती है।ये एक बहुत रहमतों वाला काम है, के अपने लालच का सबर से मुकाबला करे, जोकि उसे बहुत सवाब दिलाएगा।इस हालत में जो सबर खा रखा गया वो इस किस्म का है।दूसरी किस्म का सबर है के जब तबाही नाज़िल हो तो खामोश रहें और शोर/वावीला ना मचाएँ।ज़्यादातर लोग इस किस्म के सबर को समझते हैं जब सबर का ज़िकर होता है।इस किस्म का सबर भी बहुत

सारे सवाब का सबब बनता है। ये ज़रूरी **(फ़र्ज़)** है दोनो तरह के सबर पर मशककत करना।

7- तसल्ली **(कनाअत)**: ज़रूरयाते ज़िंदगी **(नफ़का)** के मामले में थोड़े पर कनाअत करना जैसे के खाना, पीना, कपड़े और रिहाईश और ज़्यादा ना मागना। हमारा कहने का मतलब ये नहीं है कि दी हुई मिलकियत को कुबूल न करना। उसे **(तकतीर)** कहते हैं और ये एक बुराई है। ना ही अकल ना ही इस्लाम इसे पसंद करता है। इस्तलाल एक अच्छी नेकी या आदत है। [वो चीज़ जो ज़िंदा रहने के लिए ज़रूरी हैं, मिसाल के तौर पर, मौत से बचना या अपने अज़ा को तबाह होने से बचाना, ये "ज़रूरत" कहलाता है। बारी बारी, जो चीज़ें ज़्यादती में हैं कायम रहने के लिए लेकिन उसके बावजूद सहारे के लिए और जिस्म को तकलीफ से बचाने के लिए ज़रूरी है उसे "**एहतियाज**" कहते हैं। वो चीज़ें जो "एहतियाज" से परे हैं, मिसाल के तौर पर, चीज़ें जो मज़े के लिए या खुशी के लिए या अपनी इज़्ज़त बचाने के लिए और कीमत के लिए उसे ज़ैवरात **(ज़ीनत)** कहते हैं। शैखी बाज़ी के लिए ज़ैवरात का इस्तेमाल करना, एक नुमाईश लगाना या दूसरों पर फौकियत जताना घमंड **(तफ़ाहुर)** कहलाता है। ये ज़रूरी है के "ज़रूरत" और "नफ़का" को पूरा करने के लिए ज़रूरी रकम का बंदुबस्त किया जाए। ये सुन्नत है जो "नफ़का" की चीज़ें ज़ाएद हैं उनको हासिल करने के लिए काम किया जाए लेकिन अभी भी ज़रूरी हों, मिसाल के तौर पर, दवाई या डॉकटर की फ़ीस देने के लिए रक्म हासिल करना। ज़ैवरात **(ज़ीनत)** को हासिल करने की इजाज़त है। घमंड करना बड़ा गुनाह है।]

8- शान-व-शौकत **(वकार)**: संजिदगी, सुकून के साथ काम करना और जल्दी में काम ना करना जबकि ज़रूरयात **(एहतीयाज)** और दूसरे औसाफ़ को हासिल करने की कोशिश की जा रही हो। इसका मतलब है शान-व-शौकत वाला बरताव। इसका मतलब ये नहीं है के इतने ज़्यादा धीरे काम किया जाए के वो मौका या काम रह जाए इस तरीके के दूसरे उसके फाएदे या मौके को छीन लें।

9- परहेज़गारी (**वराअ**): इसका मतलब ममनुअ कामों को करने से परे रहना साथ में उन चीज़ों से जो शकूक वाली हों, यानी, चीज़ें जो हराम हों। ये अच्छे काम करना भी और हरकात भी करना है जो दूसरों के लिए फ़ाएदेमंद हों। ग़ैर मुतमईन और लापरवाह अंदाज़ को छोड़ना चाहिए।

10- असलूब (**इंतिज़ाम**): एक शख्स को अपने काम को तरीके से या नज़मो-ज़बत या सलीके से करना चाहिए।

11- आज़ादी (**हुर्रियत**): इसका मतलब है जाइज़ तरीके से पैसा कमाना और अच्छे कामों पर खर्च करना। ये दूसरों के हुकूक का ध्यान रखने के लिए है। आज़ादी का मतलब ये नहीं है के एक शख्स जो इच्छा रखता है या चाहता है वो कर सकता है।

12- फैयाज़ी (**सखावत**): इसका मतलब है के अच्छे असबाब के लिए पैसा खर्च करके इससे सुकून हासिल करना। इसलाम ने जो बताया है उन असबाब के लिए प्यार से खर्च करना। फैयाज़ी का मतलब है सखी। ये सबसे ज़्यादा अच्छी नेकियों में से एक है, और इसकी आयत-ए-करीमा और हदीस-ए-शरीफ़ में सिफ़ारिश की गई है। फैयाज़ी कई नेकियों को पैदा करती है। उनमें से आठ दूर दूर तक मशहूर हैं।

1- कुशादादिली (**करम**): ये है के दूसरों के लिए ऐसे काम कर के खुश होना जो उनके लिए फ़ाएदेमंद हैं और दूसरों को मआशी तंगी से बाहर निकालना।

2-ईसार, का मतलब है इंकार, यानी, दूसरो को वो चीज़ें दे देना जो तुम अपने लिए चाहते हो। इसके लिए सबर की ज़रूरत है और इस लिए वो सब नेकियों में से सबसे कीमती है। इसकी आयत-ए-करीमा में तारीफ़ की गई है।

3- माफ़ कर देना (**अफ़ूअ**): मुखालिफ़ से ज़बरदस्ती बदला ना लो या किसी से जिसने तुम्हें नुकसान पहुँचाया हो; अगरचे तुम अगर ऐसा चाहो तो

कर सकते हो।एक जवाब देना माफ़ी से ज़्यादा अच्छा है वो बुग़ज़ के बदले नरमाई हो सकती है।

शेर/दोहा:

बदखुवाही के मुकाबले बदला लेना ज़्यादा आसान है।
अदावत के लिए महरबानी एहसान और मरदाना है।

4- सख़ावत (**मुरव्वत**): ये दूसरों की मदद करने का शौक है और जो ज़रूरतमंद हों उनको चीज़ें देना।

5- वफ़ादारी (**वफ़ा**): अपने दोस्तों और जानने वालों को उनके रोज़गार में मदद करना।

6- भलाई (**मुआवज़ात**): अपनी मिलकियत दोस्तों और जानने वालों के साथ बाँटना।उनके साथ अच्छा रहना।

7- इंतेहाई सख़ावत (**समाहत**): अपनी प्यारी चीज़ें जो ज़रूरी (वाजिब) नहीं हैं उन्हें देना।

8- माफ़ कर देना (**मुसामहा**): अपने हुकूक को छोड़ना ताकि दूसरे उनसे फ़ाएदा उठा सकें, अगरचे तुम ऐसा नहीं करना चाहते, और दूसरों की गलतियों पर निगाह रखते हो।

अदल (अदालत) बारह आदात को पैदा करती है।

1-सदाकत (सच्चाई): अपने दोस्त से प्यार करना, उनकी खुशी और आराम की इच्छा रखना, उन्हें खतरे से बचाने की कोशिश करना, और उन्हें खुश करने की कोशिश करना।

2- दोस्ती (**उलफ़त**): ये एक ग्रुप के रूकान के बीच की हम आहंगी और यगानत है उनके ईमान और दुनियावी मामलात और सोचों के लिए।

3- वफ़ादारी (**वफ़ा**): दूसरों के साथ चलना और एक दूसरे की मदद करना। एक दूसरा मआनी "वफ़ा" का है के अपने वादे को निभाना और दूसरों के हुकूक की इज़्ज़त करना।

4-हमदर्दी (**शफ़कत**): दूसरों की मुश्किलों के लिए फ़िकर करना और परेशान होना। उनको उनकी मुश्किलों से बचाने के लिए काम करना और जदोजहद करना।

5- रिश्तेदारों की देखभाल (**सिला अर-रहम**): अपने रिश्तेदारों और करीबी दोस्तों को देखना और उनके पास जाना और उनकी मदद करना। ये एक हदीस-ए-शरीफ में बयान है: "**मैं बुतपरस्ती को नेस्त-व-नाबूद करने के लिए भेजा गया था और अपने रिश्तेदारों की मदद करने के लिए।**"

6- तलाफ़ी (**मुकाफ़ात**): ये अच्छाई के बदले अच्छाई करना है।

7- अच्छे साथी (**हुसन अल शिरकत**): समाजी कानून की फ़रमाबरदारी करना और साफ़ और जज़बात से आज़ाद बरताव करना।

8- साफ़ इंसाफ़ (**हुसन-अल-कज़ा**): सब मामलात में और समाजी मामलात में इंसाफ़ के साथ काम करना; तुमने जो दूसरों के साथ हिमायत की उसे साफ़ नहीं करना, और अफ़सोस वाले बरताव से बचना चाहिए।

9- तवद्दूद: इसका मतलब है प्यार और लगाव। अपने दोस्तों को चाहना और ऐसा इसलिए करना ताकि उनका प्यार/लगाव हासिल हो सके।

10- मुकम्मल फ़रमाबरदारी (तसलीम): इस्लाम के एहकाम को मामना और कुबूल करना, मुमनुअ कामों को करने से रूकना और अपने आपको इस्लाम के इल्मे अखलाक के मुताबिक ढालना चाहे अगर वो ऐसा करने में खुशी महसूस ना कर रहा हो।

11- भरोसा (**तवक्कुल**): नागहानी आफ़ात से परेशान ना होना जोकि की इंसानी ताकत से ऊपर है ये मानते हुए के ये सब अल्लाह तआला के ज़रिए

नाफ़िज़ होता है पहले से बताए वक्त पर और इसलिए उन्हें अच्छे रोहजान के साथ कुबूल करना चाहिए।

12- वक़्फ़ (**इबादत**): अल्लाह तआला की एहकाम की अदाएगी करना, जिसने सारी मखलूक को कुछ नहीं से बनाया।जो लगातार ज़िंदा मखलूक को हर किस्म के हादसों और तबाहियों से बचाता है, और जो उन्हें बढ़ाता है लगातार मुख्तलिफ़ बरकतें और मुनाफ़ें देकर, और अपनी ममनुआत से परे रखकर; जितना अच्छा तुम उसकी खिदमत करने की कोशिश कर सकते हो करो, और लोगों के साथ बराबरी की कोशिश करना जो अल्लाह तआला का प्यार हासिल कर चुके हों, जैसे के रसूल (पैग़म्बर एक नई तकदीर के साथ, जिसने इसके मज़हब के पिछले निज़ाम को मंसूख किया), नबी (पैग़म्बर जो इंसानियत को भेजे गए मज़हबी निज़ाम को जो उनसे पहले थे उसको कायम करने के मकसद से) अलैहिम उस सलावात व तसलीमात, इस्लामी आलिम, और औलिया रहीमाहुमल्लाहू तआला।

[मुसलमान दो किस्म के हैं: आलिम या ऊँचे (**खवास**) और मशहूर या आम लोग (**अवाम**) तुर्की में **दुर्र-ए-यकता**किताब, मंदरजाज़ेल जानकारी देती है: आम लोग वो होते हैं जो कोई इल्म नहीं रखते तरीका-ए-कार और अरबी की ग्रामर के उसूलों और अदब के बारे में जैसे के “सर्फ़” और “नहू”।ये लोग “फ़तवा” (मज़हबी कानूनी फैसला) की किताबों को समझ नहीं सकते।

ये इन लोगों के लिए ज़रूरी (**फ़र्ज़**) है के ईमान के इल्म और बंदगी (इबादत) के बारे में पूछकर इसे सीखें।ये भी ज़रूरी (**फ़र्ज़**) है आलिमों के लिए के लैकचर, बातचीत (**सोहबत**) और तहरीरों के ज़रिए पढ़ाएँ, पहली जानकारी ईमान के बारे में हो और दूसरी जानकारी पाँच फ़र्ज़ इबादतों के तआल्लुक से हो जो इस्लाम मज़हब की बुनयाद है।**ज़ाहिरा** और **तातारहनिया** किताबों में लिखा है के हर मुसलमान के लिए सबसे पहले ज़रूरी है **अहल-अस-सुन्नत** के बारे में सीखना/जानना, यानी ईमान का यकीन और उसूल।इस वजह से, फ़ाज़िल आलिम सय्यैद अब्दुलहकीम-अल-अरवासी रहमतुल्लाही अलैह ने कहा,अपने रहलत के नज़दीक वक्त: “मैं तीस साल सिर्फ़ खासतौर से **अहल-अस-सुन्नत ईमान** और इस्लाम के खुबसूरत अखलाक की तालीमात इस्तानबुल

की मस्जिदों में दे रहा हुं। अहल-अस-सुन्नत के आलिम ने इन तालीमात को सहाबा से हासिल किया, जिन्होने ये हमारे पाक नबी 'सल्लालाहु अलैहि वसल्लम' से सीखा।"

ईमान तालीमात को "**अकाईद**" या "**एतेक़ाद**" कहते हैं। पुरानी रस्म को कायम रखते हुए हमने अपनी सारी किताबें अहले-अस-सुन्नत के ईमान की फ़हम वज़ाहत पर वक्फ़ करदीं अपनी वज़ाहत को इस्लाम की अखलाक के ऊपर खुबसूरत तालीमात से मिला दिया और, इसी मामले के लिए, हमने दूसरों के साथ चालाक कदम उठाया उनके साथ अच्छा रिश्ता बनाया और खुबसूरत इक़दाम उठाए इस मामले हुकूमत को अपने साथ मिलाते हुए। ताहम इसके सबसे दूर खात्मे के लिए, हमने अपनी नारज़ामंदी के तासूरात मज़हबी जाहिलों, पादरियों और तफ़रका डालने वाले लोग जैसे के सय्यैद कुतूब और मौदुदी, जो चार सही मसालिक में से किसी एक से भी तअल्लुक नहीं रखते जिनकी तहरीरें कायम हुकूमतों के खिलाफ़ भड़काती हैं और भाईयों के बीच में दुश्मनी घोलती हैं उनके खिलाफ़ अपने ख्याल वक्तन फ़वकतन देते रहे हैं। हमारे पैग़म्बर मौहम्मद 'सल्लाल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमाया, "**मज़हब तलवारों के साए में है;**" जिसका मतलब है के मुसलमान हुकूमत के ज़रिए दिए गए कानून और उसूलों की हिफ़ाज़त के नीचे आराम की ज़िन्दगी जी सकते हैं। जब हुकूमत मज़बूत, और ताकतवर होती है तो, अमन और खुशहाली आती है। मुसलमान, जो ग़ैर-मुस्लिम मुमालिक में रहते हैं यूरोप और अमेरिका में, उन्हें इन मुमालिक के कानून की नाफरमानी नहीं करनी चाहिए। इस वजह से, उन मुमालिक में, हुकूमत मज़हबी आज़ादी कानून के ज़रिए देती हैं। इसलिए, हर मुसलमान अपने मज़हब को अज़ादी के साथ अमल कर सकता है। इस तरह से, मुसलमान जो एक आरामदह ज़िन्दगी गुज़ारें और मज़हबी आज़ादी हो हुकूमत के खिलाफ़ कोई मुश्किल खड़ी नहीं कर सकते जो उन्हें ये सब मौके फ़राहम करती है, और उन्हें खबरदार रहना चाहिए नहीं तो वो बग़ावत या इंतेशार जैसी हरकार में फ़ंस सकते हैं। इस हिकमत अमली की हमें अहले-अस सुन्नत के आलिमों रहीमाहुमल्लाहू तआला ने हमें सलाह दी है के हम अपनाएँ। सबसे ज़्यादा इज़्ज़त अफ़ज़ाई वाला इबादत का काम है **अहले-अस सुन्नत के ईमान** के उसूलों को सीखना और अपने बरताव को इन उसूलों के मुताबिक अपनाना, बजाए इसके

फ़ितना परस्ती और बग़ावत के इस्तेहान से ख़ुश होना या बाग़ियों और अलैहदगियों के मकासिद को पूरा करना। बाद में इस तरह अपने ईमान को सही करें और अपने आपको बाहत्तर मिज़र के खिलाफ़ और ईमान के इलहादी निज़ामो से हिफ़ाज़त करें, जिन्हें **अहल-ए-बिदअत** कहा जाता है, अगला दरजा अंदर घुसने का वो है **इबादत के कामों में बिदअत** को नकारना, जिसका मतलब है इबादत के नाम पर करना अगरचे वो इस्लाम के एहकाम नहीं हैं। अल्लाह तआला के एहकाम और ममनुआत एक दूसरे के मुशाबही **शरीअत** कहलाते हैं। इबादत करने का मतलब है शरीअत को मानना। चार मसालिक बिल्कुल सही ज़रिया हैं जो साफ़ जानकारी देते हैं के जिस तरह इबादत के काम अदा किए जाएँ उनमें से चारों सही और सच्चे हैं। वो हैं, नाम के हिसाब से, हनफ़ी, शाफ़िई, मालिकी और हंबली। हर मुसलमान को एक किताब पढ़नी चाहिए जो इन चारों मसालिक में से एक की तालीम देती हों (और उसे **इल्म-ए-हाल** की किताब कहते हैं) और अपने इबादत के काम उस किताब के मुताबिक अदा करते हों। इस तरह से वो उस मसलक में शामिल हो जाता है। एक शख़्स जो इन चारों मसलकों में से किसी एक में भी शामिल नहीं होता वो एक **ला मज़हबी** (या एक ग़ैर मज़हब वाला) कहलाता है। एक ला मज़हवी अहले-अस-सुन्नत (सच्चा मुसलमानों का गुप जिसे कहते हैं) में नहीं आता। और एक शख़्स जो अहल-अस-सुन्नत के गुप में नहीं आता वो या तो बिदअत का मानने वाला है (यानी एक इलहादी), या एक काफ़िर है।

हज़रत अली करम अल्लाहु वजहा ने कहा के अगर तुम एक शख़्स को देखो जो मरने के बाद उठने पर यकीन नहीं रखता उससे कहो: "मैं मरने के बाद उठने पर यकीन रखता हूँ। अगर जो तुम कह रहे हो वो सही हुआ, मैं कुछ नहीं खोऊँगा लेकिन क्योंकि जो मैं कह रहा हूँ वो सही हुआ तो तुम हमेशा तक दोज़ख़ की आग में जलोगे!" ज़्यातर साइन्सदाँ, सरकारी औहदेदार, युनिवर्सिटी के प्रोफ़ेसर और फ़ौजी कमांडर यूरोप अमेरिका में रहने वाले आख़िरत में यकीन रखते हैं और मरने के बाद उठने पर भी और इबादत के लिए गिरजाघरों में जाते हैं। यहूदी, ब्रामिन, बुध्धिस्त, आग को पूजने वाले, बूतो को पूजने वाले, मौहज़जब लोग और मौहज़्ज़ब लोग सब मामने वाले हैं (मरने के बाद ज़िन्दगी में)। कुछ काफ़िर झूठे, ज़ालिम और सरकश हाकिम जो बचे

हुए इशतराकियों की निज़ामे हुकूमत की सदारत करते हैं और पादरी उनके आस पास या बाहर। क्या हम कभी निशानदही कर सकते हैं एक जाहिल बेवकूफ़ों का जोड़ा जो ग़ैर फ़याज़ाना दुशमनी मज़हब के खिलाफ़ अदल बदल करते हैं एक आसान कारोबारे ज़िन्दगी के लिए या एक थोड़े से ग़ायब हो जाने वाले खुशी के लमहों के लिए हो सकता बरताव की ज़्यादा मंतकी लाईन की तकलीद करे बनिस्बत बाकी बची हुई नब्बे फ़ीसद दुनिया की आबादी से? मरने के बाद एक दहरिया तबाह होता है अपने ही नज़रिए के मुताबिक और ईमान वाले के मुताबिक लाज़वाल तौर पर दोज़ख़ में सजा पाता है। ईमान वाले के लिए; एक दहरिए की नज़र में वो भी तबाह होगा, जब वो अपने लिए ये ईमान रखता है के वो एक खुशी और मज़े की लाज़वाल ज़िन्दगी गुज़ारेगा। इन दोनो मुखालिफ़ों में से कौनसा एक अकलमंद और आलिम शख़्स है मुंतखिब करो? दूसरा, पक्के तौर पर, क्या वो नहीं है? एक तेज़ तरीका इस दुनियावी ज़िन्दगी में और माददी दुनिया में अकलमंदी के मालिकों को अल्लाह तआला की मौजूदगी के बारे में बताना है। और अल्लाह तआला आने वाली दुनिया के बारे में एलान करता है। तब, एक शख़्स आम हिस के साथ और जानकारी के साथ अल्लाह तआला की मौजूदगी और एकता में ईमान रखता है। इस से इंकार करना बेवकूफ़ी और जहालत है। अल्लाह तआला में यकीन रखने का मतलब है उसकी **उलूहिय्यत** (खुदाई) की सिफ़ात यानी, उसकी सिफ़ात जिन्हें **सिफ़त-ए-दातिया** और **सिफ़ात एयुबूतिया** कहते हैं, इस हकीकत पर ईमान रखने के लिए उसने एलान किया और अपने आपको उसकी शरीअत के मुताबिक बनाना। एक शख़्स जो अपने आपको इन शरीअत की मुनास्बत से कर लेता है वो एक अमन भरी और खुशहाल ज़िन्दगी गुज़ारता है इस दुनिया में भी। वो एक के साथ नरम होता है।]

तीसरा हिस्सा

इस हिस्से में बदकारियों से निपटा जाएगा। जैसा के हमने पिछले हिस्सों में वाज़ेह किया अच्छी खसलत की खुशबू चार खास नेकियों पर मुबनी है। इसी तरह, बुरी खसलत की खुशबू चार खास बदकारियों पर मुबनी है।

1-बदनामी (**रजालत**) दानाई की मुतजाद है।

2-बुज़दिली (**जुबन**) बहादुरी (**शुजाअत**) की मुतज़ाद है।

3- अय्याशी (**फुजर**) नफ़स की इच्छाओं की तकलीद और गुनाह करना है। ये पाकिज़गी (**इफ़्फ़त**) का मुतज़ाद है।

4-बेईन्साफ़ी (ज़बर, जुल्म) अदल का मुतज़ाद है।

वहाँ पर कहने में बहुत सारे बेगिनती बुराइयाँ हैं हर नेकि के लिए। इस वास्ते, अच्छाई को बीच की हेसियत हासिल है। बीच के सीधे और उलटी तरफ़ होने का मतलब है अच्छाई से हट जाना। बीच के रास्ते से ज़्यादा फ़ासले पर अच्छाई से ज़्यादा फ़ासले पर। वहाँ सिर्फ़ एक सही रास्ता है लेकिन वहाँ कई भटके हुए रास्ते हैं। हमने बल्कि ये भी कहा है के वहाँ लातादाद भटके हुए रास्ते हैं। सही रास्ते को ढूँढने के बाद उस पर से कभी अलग ना हो और इस रास्ते पर हमेशा के लिए रहना बहुत मुश्किल है। सुरह हूद की एक सौ बारहवीं आयत के मआनी हैं: "**इसलिए कायम खड़े रहो (सीधे रास्ते पर) जैसे के तुम्हें हुकूम किया गया,- ...**" **(11-12)** जब ये आयत-ए-करीमा नाज़िल हुई, रसूलुल्लाह 'सल्ललाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमाया: "सुरह हूद मेरी दाढ़ी को सफ़ेद करने का सबब बनी।" जैसा के आयत-ए-करीमा में हुकूम आया के सीधे रास्ते पर मज़बूत रहो, पैग़म्बर अलैहिम उस सलावात-ओ-व-तसलीमात, औलिया और सिदिक्क रहीमाहुमल्लाहू तआला ने अपनी ज़िन्दगियाँ बहुत परेशानियों में गुज़ारीं। ये इसका खौफ़ था जिसने सारी मखलूक से आला (अफ़ज़ाल-ए-काएनात) 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' की दाढ़ी सफ़ेद/बुज़ुर्ग हो गई थी। इस वजह से, दोबारा, ये कहा गया: "**सिरात का पुल एक बाल से भी ज़्यादा बारीक और एक तलवार से भी ज़्यादा धार दार है।**" सुरह फ़ातिहा की एक आयत-ए-करीमा के मआनी हैं: "**अल्लाह तआला से दुआ करो के तुम्हारी सीधे रास्ते पर रहनुमाई करे!**" बुनयादी तौर पर एक ईमान (मोमिन) वाले पर इस दुनिया में सीधे रास्ते को मज़बूती से पकड़ना वाजिब है। कयामत वाले दिन पुल सिरात को पार करने के लिए ज़रूरी है के इस दुनियावी ज़िन्दगी में सही रास्ते पर कायम रहें।

जैसा के आला औलिया रहीमाहुमल्लाहू तआला ने निशानदही करी के सारी बरकतें और आज़ाब जो मुखबिर-ए-सादिक [यानी- हमेशा सच्चे,] ने बताया वो आने वाली दुनिया में मुंतज़िर हैं, वो अकसी अनदाज़ और आदात की एलान, अखलाकी सिफ़ात और काम जो आलमियत अपने कबज़े में करती है और अदा करती है इस दुनिया में। सही रास्ते के पाबंद रहते हुए इस दुनिया में अखलाकी बरताव और काम के मामले में, उन आला मासरों का कहना है, आखिरत में सिरात के पुल की तरह ज़ाहिर है। वो जो सीधे रास्ते पर चलते रहते है और इस्लाम से परे नहीं होते दुनिया में, वो सिरात का पुल तेज़ी से पार कर लेते हैं। माअरिफ़त और कामिल के जन्नत हासिल करने के लिए और अच्छे कामों के बाग़ों में घुसने के लिए। लोग जो अपनी मज़हबी ज़िम्मेदारियों में सुस्त हैं वो पुल सिरात पर डगमगा जाते हैं और बहुत मुश्किल से उसे पार करते हैं। और वो लोग जो इस्लाम के बताए हुए अकीदे और कामों के मुताबिक चलने में नाकाम रहते हैं और जो किसी भी सिमत में चले जाते हैं वो सिरात को पार करने में नाकाम रहते हैं वो दोज़ख़ की आग में गिर जाते हैं।

सुरह ज़ुख़रफ़ की छत्तीसवी आयत का मतलब है: "**अगर कोई (अपने नफ़्स की तकलीद करता है और) अपने आपको सबसे ज़्यादा महरबान अल्लाह तआला की खिदमत करने से परे हटाता है, हम उसके लिए एक शैतान रख देते हैं,जोकि उसका एक नज़दिकी साथी बन जाता है।**" **(43-36)** कुछ इस्लामी आलिमों ने इस आयत-ए-करीमा की रोशनी में मंदरजाज़ेल वज़ाहत की है: वो लियाकत जो चुस्तचि से नेक और अच्छे कामो को करती है वो एक फरिश्ते के ज़रिए पैदा की जाती है, और वो जो बीच रास्ते से भटकाती है और बुरे कामों में फंसाती है वो एक शैतान के ज़रिए पैदा होती है। कयामत वाले दिन हर शख़्स अपने इन दोनों मखलूकों में से एक के साथ होगा। इसके मुवाफिक, हर कोई उठाए जाने वाले दिन अपने साथियों को देखेगा अपने खुद के दुनियावी आदात और कामों का जाएज़ा लेते हुए।

बीच रास्ते से दो मतलब समझ में आते हैं। पहला मआनी है, जैसे के सब समझते हैं, किसी चीज़ का दुरूस्त मरकज़, गोले के मरकज़ की तरह। दूसरा मआनी है किसी चीज़ का मुतअल्लिक मरकज़। दूसरे लफ़्ज़ों में, ये

एक खास चीज़ का मरकज़ है। यानी वो किसी जानी हुई चीज़ का मरकज़ हो। इसका मतलब ये नहीं के ये हर चीज़ का मरकज़ है। बीच या मरकज़ जो अखलाक की साइन्स में इस्तेमाल होता है वो दूसरा मआनी है। इसलिए नेकियाँ मुखतलिफ़ हैं, लोगों, जगहों और वक्त पर मुबनी। कोई चीज़ जो एक फ़िरके के ज़रिए नेकी समझी जाए वो हो सकता है दूसरी के मुताबिक ऐसे ना समझी जाए। एक आदत जो एक वक्त में एक नेकी की तरह पहचानी जाती है वो कुछ बाद के वक्त में किसी और चीज़ की तरह पहचानी जाए। इसलिए, नेकी बिल्कुल बीच में नहीं समझी जाती; इसका मतलब है औस्त पर होना, और बुराई का मतलब है इस औस्त से किसी भी सिम्त में मुड़ जाना। एक हदीस-ए-शरीफ़ इस तरह पढ़ी जाएगी, "**हर चीज़ में मयानाखी सारे कामों में बेहतरीन है,**" जो हम वाज़ेह करने की कोशिश कर रहे हैं उसपर इखतीसार करो। इस वाक्य में, वहाँ हर नेकी के लिए दो बुराई है, जो आठ खास बुराइयों में शामिल होती हैं चार खास नेकियों के वज़न का मुकाबला करने के लिए:

1- फरेबी (**जरबज़ा**): ये दानाई (**हिकमत**) की ज़्यादती है। ये एक शख्स की आदत का फ़ायदा उठाना है और मामलों को गहराई से जाँचने की गुंजाईश गलत जगहों पर गैर ज़रूरी, मिसाल के तौर पर, उनको दूसरों को फ़रेब देने के लिए इस्तेमाल करना या तदबीर, मंसूबे बाज़ी या ममनुअ कामों की अदाएगी करना। साइन्सी ताकत की "अकलमंदी" रूह की एक ज़ाएद तरीके से इस्तेमाल करना एक बुराई या फरेब नहीं है। अपनी जाँच करने की कुव्वत को साइन्सी या मज़हबी जानकारी हासिल करने के लिए या हिसाब में सुधार करने के लिए एक अच्छा काम है।

2- बेवकूफ़ीपन (**बलादत**): इसका मतलब है कुंद ज़हनियत या अपने दिमाग़ का इस्तेमाल ना करना। इसको सुस्तदिमाग़ भी कहते हैं। एक शख़्स जो इस आदत को रखता है वो सही और गलत के बीच तमीज़ नहीं कर पाता। उसका याद करना और असर बहुत धीमा और खराब होता है।

3- जल्दबाज़ी (**तहाव्वुर**): एक शख़्स इस आदत के साथ बहुत तेज़ मिज़ाज रखता है। ये बहादुरी (**शुजाअत**)की ज़्यादती से वुजूद में आता है। अपनी बनावट में। एक शख़्स इस आदत के साथ ऐसे काम करने की

कोशिश करता है जो अकलमंद के ज़रिए मंज़ूर नहीं किए जाते और उसकी रूह और जिस्म पर मुफ़त का ज़ोर लगाते हैं।

4- बुज़दिली **(जुबन)**: ये नाकाफ़ी बहादुरी का नतीजा है।एक शख़्स इस नुक्स के साथ ऐसी हालतों में जहाँ हिम्मत चाहिए हो वहाँ बुज़दिली से काम करते हैं।

5- अय्याशी **(फुजर)** एक किस्म की ज़्यादती है जबकि पाकिज़गी **(इफ्फ़त)** की हुदूद बढ़ गई हैं।

6- एक शख़्स इस ज़्यादती के साथ दुनियावी मस्तियों की लत में पड़ जाता है और ऐसे काम करता है जो इस्लाम और दानाई के ज़रिए तसदीक नहीं किए गए।

7- सुस्ती **(हुमूद)** पीछा करता है नाकाफ़ी कुव्वत से जो पाकिज़गी में इस्तेमाल हुआ।एक शख़्स इस कमी के साथ इल्म और हिकमत के ज़रिए जो खुशियों की इजाज़त है उसे छोड़ देता है इसलिए, वो जिस्मानी ताकत खो देता है, वो बीमार पड़ता है और उसका खानदानी- पेड़ उसके साथ है खत्म हो सकता है।

8- बेईन्साफ़ी **(जुल्म)** है दूसरों के हुकूक और आज़ादी की पामाली करना।एक शख़्स इस आदत के साथ दूसरों के हुकूक की पामाली करता है उसकी मिलकियत चुरा कर या उन्हें जिस्मानी तौर पर चोट पहुँचाकर या जन्सी तौर पर तंग करके।

9- बेईज़्ज़ती: एक शख़्स इस कमी के साथ सारे ज़लालत वाले बरताव और जुल्म कुबूल करता है।ये उसकी बनावट में अदल की सही मिकदार ना होने की वजह से होता है।क्योंकि अदल हर तरह की अच्छाई के लिए मज़मूआ है।इसी तरह जबर (जुल्म) भी सारी बुराइयाँ रखता है।इस वजह से, कुछ आलिमों ने कहा के वो चीज़ें जो किसी का दिल ना तोड़ें वो गुनाह नहीं हैं।मिसाल के तौर पर, अबदुल्लाह अंसारी कुददीसी सिरोह ने कहा,

शेर/दोहा:

कभी किसी का दिल ना दुखाओ अगर हक के रास्ते पर हो तुम एक राहगीर का फन हो;

नहीं तो, सब गलती करने वालों में से तुम लंगड़े बन जाओगे सबसे ज़्यादा खराब दिलगीर।

अवदुल्लाह-ए-अंसारी आला आलिमों में से एक थे "सुफ़िया अल औलिया" [एक आला इस्लामी आलिमों की कढ़ी]। वो अपने वक्त के शैख़ुल इस्लाम थे। वो **396** (हिजरी) हैरात में पैदा हुए और **481** (हिजरी) [**1088** ए.डी.] में अपनी जाए पैदाईश पर चल बसे। कुछ गुमराह लोगों ने ऊपर के शेर को गलत समझ लिया। उन्होने इस के मआनी एक लाएसेंस के तौर पर ले लिए तुम्हारे शख़्सी चाल चलन में आज़ादी लेने के लिए वरना तुम दूसरों को नुकसान पहुँचाओ, जोकि बदले में उनको लुभाते हैं इबादत से रोकने के लिए और हर तरह के गुनाह करने के लिए और, अच्छी पैमाईश के लिए, किसी और को नुकसान ना पहुँचाने के लिए शैखी मारने के लिए।

दरहकीकत, ये कहकर,

"आगे जाओ और अपने यकीन पर मुंकर हो जाओ या काबा पर आग लगादो,

या फिर शराब पीने वाला हो जाओ; ताहम, ऐसे एक दिल को नुकसान पहुँचाकर; ओह कभी नहीं!"

उन्होने इस्लाम को छोड़ दिया। हकीकत ये है, बहरहाल, वो ये के इस्लाम की सारी ममनुआत ज़ुल्म के मआनी में है, (जिसे अंग्रेज़ी में तर्जुमा किया गया है इन लफ़्ज़ों में जैसे ज़ुल्म, जदकोब, वग़ैरा)। जब तुम कुछ करते हो जिसे इस्लाम ने ममनुअ करार दिया है, इससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता के ऐसा करने से तुमने सिर्फ़ अपने आपको नुकसान पहुँचाया है या साथ में दूसरों को भी; हर चीज़ जो हराम है वो उस वक्त ज़ुल्म है। ज़ालिम ज़्यादातर अच्छी

ज़िंदगी गुज़ारते हैं और ऊँचे रूतबों पर काबिज़ होते हैं। ज़्यादातर मज़लूम, उसके उलट, गरीब लोग होते हैं। लोग जो वस्ती रास्ता चुनते हैं वो होते हैं जो अदल करने की कोशिश करते हैं।

सारी नेकियाँ औस्त मिकदार में होती हैं। हर आदत जो ज़्यादती में हो या कम मिकदार में हो एक बुराई बन जाती है। शायद बहुत सी ज़ुबाने ऐसे लफ़्ज़ नहीं रखतीं जो बदकारी/बुराई को वाज़ह कर सकें। लेकिन, अगर एक शख़्स ग़ोर करे और उन पर भारी पड़ जाए तो उनके मआनी साफ़ हो सकते हैं।

बहुत सारी नेकियाँ हैं जो इंसानी मखलूक के लिए अपने कबज़े में रखना ज़रूरी हैं। लोग मान लेते हैं के जितनी ज़्यादा तादाद में वो होगीं तुम्हारे पास तो तुम अच्छाई में हो सकते हो। हाँलाकि, ऐसा बिल्कुल भी नहीं है। हर नेकी की कुछ हुदूद हैं और उन हुदूद से परे नेकियाँ बदी में बदल जाती हैं। तो क्या ये एक बुराई है के जितनी तादाद इस्लाम ने बताई है उससे कम नेकी रखना इसको समझने के लिए थोड़ा सा सोचना होगा। इसकी मिसाले हैं शुजाअत (बहादुरी) और सखावत (फ़ैयाज़ी)। इन दोनो आदतों का मिकदार में होना जल्दबाज़ी **(तहव्वुर)** है और बेकार तरीके से खर्च करना **(इसराफ़)** है। जाहिल लोग और खासतौर से वो लोग जो इस्लाम के अखलाक से नावाकिफ़ हैं वो सोचते हैं के खुले तरीके से खर्च करना सखावत से मुंसलिक है और इस लिए वो उनकी तारीफ़ करते हैं जो ऐसा करते हैं। उनकी नज़र में लोग जो तेज़ और शदीद होते हैं वो बहादुर और हिम्मत वाले होते हैं। दूसरी तरफ़, कोई भी एक बुज़दिल शख़्स को बहादुर या एक सख्त दिल को सखी नहीं समझेगा।

वहाँ पर दूसरी आदत भी हैं जिन्हें एक शख़्स रख सकता है जिसे लोग सोचते हैं के चाहे वो इतनी मिकदार में हैं जो औस्त से भी नीचे है तो वो इसे रखना बेहतर समझते हैं। जब वो ज़्यादा हों, हाँलाकि, उनकी बदकारी शौलाज़न हो जाती है। एक अच्छी मिसाल उसकी आजिज़ी है, जिसका मतलब है गमंद **(किब्र)** ना होना। अगर ये ज़रूरत से कम मिकदार में मौजूद होता है, तो ये ज़्यादा आजिज़ी **(तज़ल्लूल)** रखता है। बढ़ी हुई आजिज़ी (तज़ल्लूल) को

आजिज़ी से फर्क करना बहुत मुश्किल है। दरअसल, बहुत सारे लोग भिखारी की आजिज़ी को एक **(आलिम)** फ़ाज़िल की आजिज़ी से मिला देते हैं क्योंकि तकब्बुर से आज़ादी उनका आम बरताव है। ये मुशावहत लोगों की अच्छी बातों की उम्मीद को धोखा देती हैं भिखारियों की आज़िज़ी के तअल्लुक से।

चौथा हिस्सा

इस हिस्से में बुराइयाँ जो नेकियों की तरह लगती हैं उनकी वज़ाहत करेंगे। हम ये भी दिखाएगें के वो एक दूसरे से किस तरह मुखतलिफ़ हैं।

बहुत सारे लोग सोने और पीतल में कोई फर्क नहीं कर पाते क्योंकि वो दोनों रंग में पीले हैं। कुछ सोचते हैं के नीला पत्थर बहुत कीमती होता है। इसी तरह, वो सोचते हैं के एक बुराई नेकी है। इसलिए, ये ज़रूरी के इल्मे-अखलाक सीखा जाए और माहिर बना जाए के कामों छुपी कमियों को अच्छे कामों से अलग किया जाए, और आमतौर से बुराई को अच्छाई से अलग पहचाना जाए।

1- पहले हम बुराई के बारे में वाज़ह करेंगे जो दानाई की तरह लगती है। बहुत सारे लोग ऐसे हैं जो एक साइंसी लफ़्ज़ या कुछ दानाई की बातें या रूहानी इल्म दूसरों से या अख़बारों से, रिसालों से या रेडियो प्रोग्राम में मुंतख़िब करते हैं और उन्हे ऐसे लोगों के सामने दोहराते हैं जो उनसे कम जानकार हों या बहसो मुबाहसों में सामिल होते हैं दूसरों के साथ और इस तरह दूसरों को अपने बारे में गलत तासीर देते हैं। उनके झूठे बहाने से, बहुत सारे लोग उनको जानकार और अकलमंद लोग समझते हैं, जैसे के साइंसदा, माहिर या (आला रूहानी रहनुमा जिन्हें कहते हैं) मुर्शीद। असल में इस तरह के लोग साइंसी शौने में मुश्किलों को हल करने में नाकाबिल होते हैं। जिसके बारे में वो गहरे इल्म का इकरार करते हैं और तसव्वुफ की साइंस में मारिफत के मआनी से बिल्कुल अंजान होते हैं जिसपर वो महारत रखने का दावा करते हैं। उनके और आलिमों, मुर्शीदों और साइंसदानों जिनके भेस में वो तमाशे को चुराने की कोशिश करते हैं उनके बीच में जो मुशाबहत होना। इस वास्ते, एक लियाकत

जिसे हिकमत (दानाई) कहते हैं वो आदमी के सिर और रूह में कायम हैं। इसके काम और रोशनियाँ (नूर) समझ की पहुँच से बाहर हैं। वहाँ पर कई soidisant आला शख़्सियते हैं जो हिकमत और कदर में इलाके में मुकम्मल अजनबी हैं। इस तरह के लोग अदना जाहिल और मग़लूब नाज़िब मज़ाह वाले होते हैं। उनका इल्म और अख़लाकियात के साथ कोई लेना देना नहीं है। वो एक नफ़्ज़ भी सूदमंद आवाज़ वाला नहीं बोलते। चालाकी से कपड़े पहने हुए और ज़लील पने के कारोबार के साथ वो हमेशा ख़लकी आरामदह रहते हैं। वो रक्सो सुरूर और मशरूबात की आमदोरफ़त रखते है, और ज़िन्दादिल पार्टियों में शराब पैश करते हैं, और आख़िरकार एक चीफ़ या एक कमेटी के रूकन या एक कोंसिलर की हेसियत हासिल करता है।

2- बुराई जो पाकिज़गी की तरह लगती है: लोग इस बुराई में फंस जाते हैं बुरे काम नहीं करते और अपनी भूख मिटाने के पीछे नहीं भागो। बज़ाहि वो समझदार और नेक लोग लगते हैं जो इल्म और अच्छे अख़लाक रखते हैं। इसलिए, हरतरफ और सब के ज़रिए उनकी तारीफ और इज़्ज़त की जाती है। वो उन लोगों के ज़रिए अच्छी तरह सुलूक किए जाते हैं जिनके पास दौलत और रूतबा होता है। उनपर तौहफों के साथ, और जो आमदनी (जाईज़ ख़ेरात जिसे कहते हैं) ज़कात से वायदा की पैशकशों की बम्बारी से अपने बटुओं को भरते हैं। जब वो अकेले होते हैं, तो वो (ज़रूरी इबादत के कामों को करने में जिन्हे कहते हैं) फर्ज़ उन्हे अदा करते वक्त सात के सात (वो पाक और रहमत वाले इबादत के काम जिन्हे कहते हैं) सुन्नत उन्हे अदा करने में भी वो ग़ाफिल होते हैं। और जब साथ में, वो नफली इबादतें अदा करते हैं तो उनके जिस्म मेहनत से पक्के तौर पर दुबले/कमज़ोर हो जाते हैं। उनकी मतीअ खुदी **(नफ़्ज़-अल-अम्मारा)**इंतहाई चुस्तचि वाली है। वो लोगों की नज़र में सच्चे हैं, लेकिन अल्लाह तआला की नज़र में वो बेईमान हैं। तसव्वुफ़ के झूठे शैख़ और मज़हबी आदमी दुनियावी फ़ायदों को उठाते हुए मौजूदा मिसालें हैं।

कुछ गाँव वाले शहरी मरकज़ों में पके खानो से अलग रहते हैं, और दूसरे अपनी कंजूसी पने से अच्छा खाना नहीं खरीद पाते। लोग जो उन्हे देख

रहे होते हैं सोचते हैं के वो दरवेश हैं, जबकि हकीकत में वो तसकीन के भेस में बहुत भूके, बदकार और ऊँची आवाज़ से झूठ बोलने वाले होते हैं।

3- बुराई जो सखावत की तरह लगती है: एक शख़्स जिसकी यह आदत होती है वो अपनी मिलकियत विरासत में या चोरी से ले जाकर या खुफ़िया तौर पर या कुरआ अंदाज़ी या किस्मत से आसानी से हासिल कर लेता है, बजाए इसके लिए पसीना बहाकर।इसलिए, वो इस चीज़ की कभी भी सराहना नही करेगा के जाईज़ तरीकों के ज़रिए दौलत कमाना कितना मुश्किल है इसलिए वो अपनी रकम या तो ममनुअ **(हराम)** मकासिद में या ग़ैर ज़रूरी चीज़ों पर खर्च करेगा।वो अपनी रकम उन चीज़ों पर खर्च करता है जो इल्म या इस्लाम के ज़रिए तसदीक नहीं की गई।बेवकूफ लोग उसे इस तरह खुला खर्च करते हुए देखकर सोचते हैं के वो एक सखी आदमी है।असल में वो पाक सखावत नहीं रखता।कमाना और रकम को या माल को बचाना ऐसा ही है जैसे अपनी कमर पर भारी वज़न लादकर मुश्किल से चढ़ना।रकम को खर्च करना ऐसा है जैसे एक गोल पत्थर को पहाड़ की चोटी से गोलाई में फैंकना।गरीब बहुत सारे लोगों को अच्छा/बेहतर आदमी बनने से पीछे रखती है।बहुत सारे लोग गरीबी की वजह से अपना ईमान खो देते हैं और काफिर **(मुर्तद)** बन जाते है ये हदीस शरीफ में बयान है: "**मुफ़लिसी/गरीबी मेरे सहाबा के लिए रहमत है अमीर होना उन मुसलमानों के लिए रहमत है जो बाद के वक्त में कयामत के नज़दीक में रहेंगे।**"

लम्बें तजुरबे के बाद, मुझे यह अच्छी तरह पता चला:
इल्म आदमी की कीमत तए करता है,
दौलत रखना इल्म को तए करता है!

इस्लाम के उसूलों के मुताबिक तिजारत के ज़रिए दौलत कमाना बहुत मुश्किल है।आमतौर पर बहुत थोड़े लोग इस्लामी कानून के उसूलों की रहनूमाई में अपनी दौलत कमाते हैं।जाईज़ दौलत कतरों में आती है।इसके बरअकस ममनुअ दौलत एक तेज़ सैलाब की तरह होती है।ये एक नेकी है माल को बाटँना, जवकि फुज़ूल खर्ची एक बुराई और एक ममनुअ काम है।फैयाज़ी

(सख़ावत) का मतलब है सखावत की आदत को डालना बाँटने की शक्ल में और कंजूज़ी की आदत से बचना। ये कोई सखावत नहीं है के किसी दुनियावी चीज़ को हासिल करने की गर्ज़ से या अपनी नफ़ज की किसी खास इच्छा को पूरा करने के लिए खर्च करना।

4- बुराई जो हिम्मत (शुजाअत) की तरह लगती है: एक शख़्स इस नकली हिम्मत के साथ शुजाअत दिखाता है, असल में, नेक शुजाअत हासिल करने के मकसद से नहीं और बुराई की तेज़ी **(तहव्वुर)** और बुज़दिली **(जुबान)** से बचने के लिए नहीं। बल्कि, वो ऐसा या तो नाम कमाने के लिए या दुनियावी रूतबा या कब्ज़ा हासिल करने के लिए करता है। वो मुसलमानों के कबज़े चुराता है, उनको रोज़गार से लुटता है, और अपनी जान खतरे में डालकर घरों में घुसता है ज़्यादा से ज़्यादा माल हासिल करने के लिए। कुछ मामलों में इस तरह के लोग इतने ज़्यादा बेवकुफ़ साबित होते हैं के इसे वो शुजाअत समझते हैं के उनके साथी गुनहागारों के खिलाफ़ इतलाअ नहीं देते ज़दकोब और अपने माल या जानों की कीमत के एवज़ अगर वो ऐसा करते हुए पकड़े जाएँ तब भी। ताहम, वो शुजाअत की बू तक नहीं रखते एक शख़्स बहादुरी के साथ आगे आता है बेहतर मकसद के साथ कुछ करता है जो फहम और इस्लाम ने मंज़ूर किया हो। उसका बुनियादी मकसद है के अपनी हुकूमत अपनी कौम की खिदमत करना और इसतरह सवाब कमाया जाए। वो शुजाअत की खुबसूरत लियकत को हासिल करने के लिए बेचैन रहता है, जो बदले में उसे अल्लाह तआला की रज़ामंदी दिलाता है। एक भेड़िया या चीता अपने शिकार पर हमला करता है वो एक दिलेराना काम की तरह लगता है, हाँलाकि उसका बहादुरी से कुछ लेना देना नहीं है। ताकत और जबलत ख़्याल हमला करने के लिए और खत्म करने लिए इन खतरनाक जानवरों में विरसे में हैं। इसलिए उनके हमले अच्छे असबाब जैसे के भलाई और रहमदिली से महरूम हैं। वो आराम से कमज़ोरों पर हमला करते हैं जो उनके साथ कोई मेल नहीं खाते। इसी तरह का मामला हथियार से लैस और ताकतवर शख़्स के साथ है के जो ऐसे शख़्स पर हमला करता है जो बग़ैर हथियार के, नंगा और भूखा हो इसे बिल्कुल भी शुजाअत नहीं कहेंगे। एक फ़ेसला जो एक राए और सबब के बाद पहुँचा जोकि हमले की हिमायत में, दानाई, सोच और इल्म पर मुबनी है, एक खालिस इरादा

दुनियावी मफ़ाद से आज़ाद, और दूसरों की फलाह की मंशा जैसे के अपनी रूह को बहादुरी से सजाना और खुद को बुराईयों से आज़ाद करना जैसे के सख़्ती और बुज़दिली से, ये जुज़्व हैं जो बहादुरी के मआनी के लिए ज़रूरी हैं। एक शख़्स इन इरादों के साथ कभी भी कोई बुरा काम नहीं करना चाहेगा। वो बुरे काम करने के बदले मरना पसंद करेगा। वो इज़्ज़त के साथ मरने को ज़िल्लत के साथ ज़िंदा रहने से बरतर समझता है। वो इज़्ज़त के साथ याद किए जाने को ज़्यादा फ़ौकियत देगा बनिस्बत इसके के वो एक कलंक ज़दा चेहरे के साथ ज़िन्दा रहे। क्योंकि बहादुरी ज़खमी होने या मरने का ख़तरा रखती है, ये शुरू में इतना मज़ा नहीं देती लेकिन आख़िर में ये लातादाद मिठास देती है उस ख़ुशी के ज़रिए जो जीत से हासिल हुई, जोकि असल में, इतेफ़ाकी तौर पर साबित होगा उन फलों के साथ मवाज़ना करने में जोकि वो इस दुनिया में और दुसरी में कमाएगा। सब से अफ़ज़ल, जो ख़ुशी महसूस की जाएगी वो है अपनी ज़िंदगी को इस्लाम को बचाने के लिए और रसूलुल्लाह के जगमगाते हुए यकीन को मशहूर करना ये सब खास ज़ाएकों के हैं जो सारे ज़ाएकों पर भारी हैं जिसका इस दुनिया में और दूसरी दुनिया में मज़ा लिया जाएगा। दर हकीकत, सुरह अल-ए-इमरान की एक सौ उन्सठवीं आयत का मतलब हैं: "**उनके बारे में मत सोचो जो अल्लाह की राह में कत्ल हो कर मर गए, नहीं, वो ज़िन्दा हैं, अपना सहारा उन्होने अपने रब (अल्लाह तआला) की मौजूदगी में ढूँढ लिया।**" **(3-1699)** बहुत सारी हदीस-ए-शरीफ हैं जो बहादुरी की कीमत की तारीफ करती हैं। न ही तो जिहाद से भागना किसी को मौत से बचा सकता है या एक शख़्स की ज़िन्दगी को बड़ा सकता है। न ही रूकना और दुश्मन का सामना करना मौत का सबब बन सकता है। मौत की घड़ी जल्दी नहीं आ सकती या टल नहीं सकती और एक शख़्स की ज़िन्दगी का वक्फ़ा बदल नहीं सकता। कई मामलों में, जंग से भागना एक शख़्स की अचानक मौत का सबब बन सकता है और मुकाबला करना और दूश्मन के ख़िलाफ लड़ना एक शख़्स के लिए जीत की ख़ुशी का सबब बन सकती है। हज़रत मुआविया रज़ी अल्लाहू अन्ह ने बयान किया: "मैं सिफ़फ़ीन की जंग को छोड़ने की तदबीर कर रहा था, तभी मुझे हदीस-ए-शरीफ याद आई, '**सबर एक शख़्स को तबाही से बचाता है।**' इस लिए मेने इस्तकलाल मुनासिब समझा, जिसका शुक्र है अल्लाह तआला को,के

उसने मुझे नुकस से बचा लिया। ये मेरा वही तहमुल/सबर या जिसने मुझे खिलाफ़त तक पहुँचाया।"

बहादुरी की बुनियाद रज़ामंदी है अल्लाह तआला की इच्छा में, और भारोसा है उसके कामों और फ़ैसलों में। हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्ह, (जिनकी बहादुरी ने उन्हे एज़ाज़ से जितवाया) अल्लाह के शेर, और जो विलायत के बाग़ के गुलाब थे, सिफ्फ़िन की जंग में हमले के दौरान आगे भाग रहे थे और मंदरजाज़ेल तहरीरें बयान कर रहे थे:

वहाँ पर दो दिन हैं जिसपर मौत से भागना बेकार है:
उस दिन जिस दिन तुम मरने वाले हो, और वो जो तुम्हारे लिए मरने का दिन मुकर्र नहीं है।
अगर ये तुम्हारे लिए वक्त है मरने का, तो भागना अच्छा नहीं है;
अगर हनूज़ अभी वक्त नहीं आया है, तो कोई वजह नहीं है भागने की!

बेवकूफ़ जिन्होने खुदकुशी की क्योंकि उन्होने अपना माल या रूतबा या वो जंगी कैदी बनाए गए, तो उन्होने बहादुरी की जगह अपनी बुज़दिली साबित की। बहादुर लोग मुश्किल और तकलीफ के वक्त अपना इस्तकलाल दिखाते हैं। वो बेवकूफ़, दूसरी तरफ, ये सोचते है के मरने के ज़रिए वो किसी मुश्किल या तबाही का सामना नहीं करेंगे। दरअसल, वो बहुत ज़्यादा जाहिल हैं। वो नहीं समझते के बड़ी मुश्किलें और तबाहियाँ तो उनका दूसरी दुनिया में इंतज़ार कर रही हैं। इस्लाम के मुताबिक, खुदकुशी कत्ले नफ़्ज़ से ज़्यादा बड़ा गुनाह है। वो बहुत शदीद सज़ा पाएंगे। वो जो पागलपंदी की हालत में खुदकुशी करते हैं वो इस ज़मरे में नहीं आते। अगर और जब एक शख़्स अपने आपको ऐसे मुश्किल हालात में पाए, तो उस शख़्स को अल्लाह तआला से सेहत और रहम की इलतिजा करनी चाहिए।

5- बुराई जो अदल की तरह लगती हैं: ये आदत उस बुराई की तरह है जो पाकिज़गी **(इफ़फ़त)** की तरह लगती है। एक ख़राब शख़्स जो अदल की नेकी से महरूम है अपने ऑफ़िस या घर की दिवारों को ऐसे जड़े हुए नकाशों

से जिसमें अदल की तारीफ़ की गई हो सजाता है या अदल के बारे में बोलता है या उस मज़मून पर तहरीरें लिखता है। इससे भी ख़राब, वो ऐसा रूतबा हासिल करता है जो अदल से मुनसजिक हो और अपने आपको ऐसे लोगों के साथ मिलाता है जो सही अदल रखते हैं सिर्फ यह ज़ाहिर करने के लिए के वो उनमें से एक है। उसकी अंदरूनी फितरत ज़ुल्म, नफरत और बदले से भरी होती है। अदल का असली मतलब है के किसी शख़्स की आदात और काम जो के इल्म और मज़हब के मुताबिक हों या एक शख़्स का ईमानदार होना जिसकी अंदरूनी फितरत उसके कामों में झलकती हो। दूसरे लफ़्ज़ों में, एक शख़्स का बरताव जमात में बिल्कुल वैसा ही होगा जैसा के जब वो अकेला हो। दो मुखा बरताव धोकेबाज़ी की अलामत है, जो अदल की मुख़ालिफ़ है।

एक दोहा/शेर

इबादत पाक इरादे के साथ अदा करनी चाहिए;
वरना,ये बेकार है, एक बीज के दरमियाने खोखले हिस्से की तरह।

पाँचवा हिस्सा

इस हिस्से में अदल के मअनी की वज़ाहत करेंगे। अदल सब नेकियों में सबसे ज़्यादा इज़्ज़त वाला है। एक आदिल आदमी सब आदमियों से बेहतर है। अदल का मतलब है मुनाज़बत और बराबरी। दो मुख़्तलिफ़ पहचानों की मसावत या तो उनकी महक से आती है या उनकी सिफ़ात की वजह से वो एक जैसे खदोखाल रखते हैं। इस लिए, अदल एकता, वहदत के पीछे से आती है। वहदत सबसे ज़्यादा इज़्ज़त वाला सिफ़त है और सबसे ज़्यादा इज़्ज़त वाली हालत क्योंकि सारी तख़लीक एक ही से हुई है। काएनात में जो वहदत मौजूद है वो सिर्फ एक ही ख़ालिक को याद कराती है। क्योंकि हर वुजूद पाएदार बना है उस एक वहदत से, इसी तरह, हर किस्म की यगानगत उस हस्ती की वहदत है। नापने और मवाज़ना करने के कारोबार में सबसे ज़्यादा इज़्ज़त वाला और कीमती नतीजा मसावत है। असल में, इस मामले को ज़्यादा तफसील से और फैलाकर मौसिकी में पढ़ा जाता है। इसलिए, अदल हर तरह की अच्छाईयों में

सबसे ज़्यादा इज़्ज़त वाला है।अदल का मतलब है बीच में रहना।ये गलत है के किसी को आदिल मानना अगर वो बीच से हट गया है।अदल पहले से लाज़मी तीन तफसीलात में है:

1) किसी माल का या नेमत की तकसीम बटवारे के लिए अदल के साथ होनी चाहिए।

2) तिजारती लेन देन जैसे के ख़रीदना और बेचना में भी इंसाफ चाहिए होता है।

3) सज़ा को भी इस्तेमाल करने में इंसाफ करना चाहिए।मिसाल के तौर पर, अगर एक शख़्स किसी को डराए या हमला करे, तो उसे उसी किसम की सज़ा दी जाए।[लेकिन ये सज़ा हुकूमत की ज़िम्मेदारी है।इसलिए गलती भूगतने वाला हिफ़ज़ती या इंसाफ की अदालत में अरज़ी दाखिल करे बजाए इसके के खुद बदला ले।एक मुसलमान गुनाह को नज़र अंदाज़ करके इस्लाम की फरमाबरदारी करता है और जुर्म को नज़रअंदाज़ करता है कानून को नज़र में रखते हुए यानी दोनो को मानता है।] जब इंसाफ होता है तो लोग बगैर परेशानियों के रहते हैं।इंसाफ़/अदल का मतलब है ऐसी हालत जो परेशानियों से अज़ाद हो।

अदल/इन्साफ क्या है? इंसाफ के दिमाग़ का दाएरा इतना महदूद है के वो इसके नज़रिए के मतलब को समझ नहीं सकता।इस वजह से अल्लाह तआला ने अपनी इंसानी मख़लूक पर रहम किया, उन्हे उनके कानूनी निज़ाम के लिए तदाबीर भेंजी ताकि वो अपने मुल्कों की हिफाज़त कर सकें।ये रूहानी तदाबीर ने अदल को नापना आसान कर दिया।यह रहनुमाई मज़हबी ज़हूर था पैगम्बर अलैहिम उस-सलावात-ओ-व-तसलीमात को।इस्लाम को नामूस-ए-इलाही (पाक इज़्ज़त) भी कहते हैं।पाक तदाबीर जो आज की इंसानियत मज़े लेती है और जो अपना कयाम इस दुनिया के खत्म होने तक रखेगा वो शरिअत में नकश है जोकी मौहम्मद अलैहिस्सलाम पर ज़हूर हुआ।इन तदाबीर के बाद, एक दूसरा नापने का ज़रिया इंसानियत को दिया: एक जज हाकमियत के साथ।आदमी को मोहज़्ज़ब बनाकर तखलीक किया गया।दूसरे लफ़्ज़ों में,

इंसानी मख़्लूक प्यारी समाजी तख्लीक है जो एक दूसरे के साथ मिलते हैं, साथ रहते हैं, और एक दूसरे की मदद करते हैं। जानवरों की तख्लीक मोहज़्ज़ब मख़्लूक की तरह नहीं की गई। उन्हे समाजी, शहरी तरीको की ज़िन्दगी नहीं गुज़ारी होता। आदमियों को नाज़ुक फ़ितरत की तरह तख्लीक किया गया है, वो बगैर पके खाना नहीं खा सकता। उसकी ग़िज़ा, कपड़ें और रहन सहन मराहिल से गुज़ारता है उसके लिए तैयार होने से पहले, बदले में वो हुनर और दस्तकारी को शामिल करता है, और इन चीज़ों के लिए छानबीन, सोच, तर्जुबों और काम की ज़रूरत पड़ती है।

[इस्लाम साइंस, तकनीक, काम और ख़ूबसूरत अख़लाकी बरताव को बड़ावा और तजवीज़ करता है। अंग्रेज़ और इश्तकारी spinmeisters ने इस्लाम के खिलाफ़ रूसवाई के दाग़ लगाकर मुहिम चलाई। उन्होने ऐसे फासिद झूठ बुने जैसे, "इस्लाम ने इंसानियत को नींद से तसकीन के दी है और काम से रोक दिया है।" अपने किचड़ फंड में से एक बड़ा हिस्सा वो इन subnoring जाहिल और कमज़र्फ लोगों को देते हैं जो मुसलमान मुल्कों में रह रहे हैं, वो उन बदबखत सिपाहियों को अपनी तेज़ अवाज़ की तरह इस्तेमाल करते हैं अपनी तौहमतों को फैलाने के लिए प्यार में पागल वाली हालत की तरह जिसमें वो उनको उस पैसे के ज़रिए लुभाते हैं और उनके सामने मकामों की किस्मों ने भी लुभाया है। बहुत सारी आयत-ए-करीमा और हदीस-ए-शरीफ के साथ और साइंस, इल्म और काम की शमूलियत के साथ और जो काम करते हैं उनकी तारीफ़ के साथ और जो सारी इन्सानियत के लिए खुला पड़ा है के, किस तरह ये झूठे और बेशर्म बोहतान मिट्टी के तरह इस्तेमाल होते हैं जो एक मज़ाकिया कोशिश है सूरज को प्लास्तर करने की। अंग्रेज़ों की इस्लाम के ख़िलाफ़ लूट खसूट सबसे खुफ़िया सावित हुई। उनकी हिकमत-ए-अमली इस बात पर मुबनी है के इस्लाम को अंदरूनी ख़त्म करें। पहले से अपने बदकारी के तरीकों को अपने प्लान में शामिल करके नौजवान नशल को गुमहार किया, उन्होने इस्लामी तालिमात और इस्लामी किताबों को पामाल किया। **कालोनियों के मुहकमें** जो उन्होने लंदन में कायम किए, वो अकेले इरादे को इस्लाम के ख़िलाफ़ अपने शैतानी लूट खसूट को बुनियाद बनाया। इस शोबे में वो सबसे ज़्यादा जालसाज़ी के नमूने तैयार करते थे और हज़ारों जासूसों को तेज़ धार की तरह

बनाया।उनकी महंती कोशिशों ने मौहम्मद बिन अवदुल वहाव नजद के वो और बेरिया के अमीर मौहम्मद बिन सूऊद को कमाले अरूज पर पहुँचाया, वो इतने ज़्यादा जाहिल और बेइमान थे के उनके साथ एक इल्हादी तवका वहाविइ्ज़्म को कायम किया, जिसके लिए अंग्रज़ों ने सेंकड़ों पाऊंड निछावर कर दिए और ताकतवर मसला फौज के साथ हिस्सा लिया, और सारी दुनिया के मुसलमान की हिफाज़त करने वाली उसमानिया सलतनत को अंदरूनी तौर पर तवाह किया।बराए महरबानी **एक अंग्रेज़ जासूस का इकरार नामा** पढ़िए, जोकि हमारी इशाअतों में से एक है।

अवदुररशीद इब्राहिम एफ़ंदी रहीमाहुल्लाहु तआला ने अपने तुर्की की किताव **आलम-ए-इस्लाम** की दूसरी जिल्द के एक सवक में जिसका उन्वान है "इस्लाम के खिलाफ़ अंग्रज़ों की दुश्मनी" जो इस्तानवुल में [**1328 1910** ए.डी.] में छपी में मंदरजाज़ेल में वयान किया: अंग्रज़ों की खारजा पॉलीसी में सवसे अहम फ़ौकियत खिलाफ़त-ए-इस्लामिया (आलमगिर इस्लामी रियास्त) का लाज़मी खात्मा था।उन्होने crimean जंग शुरू करदी और पूरी जंग में तुर्को की मदद की।ऐसा उन्होने चाल के तौर पर किया मज़हवी रियासत "**खिलाफ़त**" को तवाह करने के लिए।पेरीस का अमन मुहाएदा उनकी मंशा का खुलासा था।[Lausanne के अमन मुहाएदे के खुफ़िया मज़ामिन, जो **1923** में दस्तखत हुए, उनके अदावत की वेवफ़ाई कर गई।] सारी तवाहियाँ जो पूरी तारीख में मुसलमानों पर ज़हूर पज़ीर हुई, चाहे कोई भी चौग़ा पहनकर उनका भेस वदला गया हो, वो सव अंग्रेज़ साज़शी मंसुवावदों की तरफ निशानदही किया गया।सवसे वुनयादी मकसद अंग्रेज़ी पॉलिसी का इस्लाम को तवाह करने का है।इस पॉलिसी की वजह इस्लाम के लिए उनका डर है।मुसलमानों को धोखा देने के लिए वो लोगों को लालची वरताव के साथ इस्तेहसाल करते हैं।वो ऐसे लोगों को इस्लामी आलिम और वड़ी शखसियतें कहकर मिलवाते हैं।मुखतसिर तौर पर और असल माहियत में सवसे ज़्यादा नागवार इस्लाम का दुश्मन अंग्रेज़ी शहरियत का अवदुररशीर इब्राहिम एफ़ंदी है जो **1363** हिजरी [**1944** ए.डी.] में जापान में फौत हो गए।

इस्लाम में साइंस, तकनीक और काम की तरक्की में देर क्यों करी? हर चीज़ जो इन्सानियत को चाहिए वो तैयारी के मरहले से गुज़रती हैं, जिसे बदले में साइंस, दस्तकारी और काम की ज़रूरत पड़ती है। ये हर एक शख़्स के लिए नामुमकिन है कि हुनर और दस्तकारी की हर शाखा को सीखे। मुखतलिफ शाखाएँ मुखतलिफ लोगों के ज़रिए सीखी और अमल की जाती हैं। हर पेशा कारोबार के लेन देन को जन्म देता है और हर कोई दूसरे पेशों के लोगों पर अपनी ज़रूरयात के लिए मुनहसिर करता है। ये दो तरफा ज़रूरयात की मांग का घुमाओ कुदरती अमल है। इसलिए, इन्सानी मखलूक के लिए ग़ैरअमली है अकेला रहना। इस वजह से, और तहज़ीब का मतलब है उनका एक साथ रहना शहरी फलाह को बेहतर बनाने के लिए और हालात के अच्छा होने के लिए।]

जब इन्सानी मखलूक एक साथ रहती थी, तो चालाक लोग दूसरों की मिलकियत और हुकूक पर हमला करने की कोशिश करते हैं। दूसरे कमज़ोर को दबाने की कोशिश करते हैं क्योंकि हर नफ़स जो चाहती है या इच्छा रखती है उसे हासिल करने की कोशिश करती है। जब वहाँ उनमें से एक जैसी चीज़ चाहते हैं, तो वो आपस में कुत्तों की तरह लड़ना शुरू कर देते हैं एक हडडी के तुकड़े के चारों तरफ भौंकते हुए और एक दूसरे पर दाँत निकालते हुए। एक जज मज़बूत ताकत के साथ ज़रूरी है के इन लड़ाकूओं के दरमियान कानून और नज़मो ज़ब्त कायम करें। हर कारोबारी यह कहता है के उसकी पैदावार दूसरी पैदावारों से लायक हैं। इसलिए ज़रूरी है कि उन पैदावारों मवाज़ने वाली कीमतें इन्साफ के साथ बता दी जाएँ। जो नापना चीज़ों की कीमतों का मवाज़ना करके हद बाँधता है वो सोना और चाँदी है, यानि पैसा सोने ओर चाँदी को **नकदैन** (पैसे की दो इकाई, नकद की दो इकाईयाँ) कहते हैं। काग़ज़ी बिल हर मुल्क में इस्तेमाल होती है जो सोने के बराबर है, जिसका मतलब है हुकूमतें जो सोने के मामले में दौलतमंद हैं वो ज़्यादा काग़ज़ी बिल जारी कर सकते हैं। इसके मुताबिक, अगर हुकूमतें सोने के ज़रए में गरीब हो तो वो काग़ज़ी बिल ज़्यादा जारी करेगी, काग़ज़ी बिल को ज़्यादती में जारी होते है वो अपनी किमत खो देते हैं। अल्लाह तआला ने सोने और चाँदी को पैसे की तरह तखलीक किया है। कोई भी चीज़ सोने की जगह नहीं ले सकती। इस वजह से हमने हुकूम दिया के ज़रूरी ख़ैरात (**ज़कात**) सोने और चाँदी में अदा की

जाए। इसलिए चीज़ों की कीमतें, इन्साफ़ के साथ नापी जाएँ और सोने और चाँदी में एक अदल पसंद जज की कयादत में। ये जज हाकीमयत के साथ हुकूमत है। एक आदिल हुकूमत जुल्म और तश्ददुद को रोकती है और इन्साफ मुहय्या कराती है अल्लाह तआला के ज़रिए एहकाम का और चीज़ों की कीमतों की हद मुकर्रर करवाती हैं।

इखतिताम में, वहाँ पर तीन पहले से लाज़मी हैं लोगों के बीच में इंसाफ कायम करने के लिए: नमूस-ए-रब्बानी, हाकिम-ए-इंसानी, और दिनार-ए-मिज़ानी। इन तीनों में से नमूस-ए-रब्बानी, यानी इस्लाम सबसे ज़्यादा ज़रूरी और बेहद खूसूसियत वाला है। मज़ाहिब कानून हैं जो अल्लाह तआला ने इन्सानियत को उनके बीच में इंसाफ कायम करने के लिए भेजे उसने ये पाक कानून भेजे ताकि जज इन्साफ़ पर अमल कर सकें। सूरह हदीद की पच्चीसवीं आयत का मतलब है: **"हमने वक्त से पहले अपने नबी साफ़ निशानों के साथ भेजे और उनके साथ नीचे भेजे। किताब और मीज़ान (सही और गलत का), जो इन्साफ में आगे खड़े हों..."** **(57-25)**। इस आयत-ए-करीमा में, "किताब"का मतलब है मज़हब, क्योंकि मज़हब कुरान अलकरीम में एहकाम और मुमानियत का नाम है मीज़ान लफ़्ज़ सोने को फंसाता है क्योंकि सोने का वज़न मीज़ान/तराज़ू में तोला जाता है। वो जो कुरआन अल करीम के एहकाम और मुमानियत को हकीर जानते हैं वो काफ़िर और हिल्या साज़ **(मुनाफ़िक)** होते हैं। कोई भी जो जज को या हुकूमत की नाफ़रमानी करता है वो एक बाग़ी है। [मुसलमान इस्लामी रियास्तों के बाहर मुल्कों **(दार-ऊल-हरब)** के कानून के खिलाफ़ बग़ावत नहीं करते और कोई भी जुर्म उनके खिलाफ़ नहीं करते।] एक शख़्स जो सोने की कीमत से इन्कार करता है वो एक बाग़ी और एक चोर होता है।

एक अहम नोट:सबसे पहले, एक शख़्स को खुद पर इन्साफ को कायम करना चाहिए, अपने बरताव पर, और अपने अज़ा पर इन्साफ करना चाहिए। दूसरी बात, एक शख़्स को खुद के घरबार पर, अपने पड़ोसियों पर और जानकारों पर इन्साफ करना चाहिए। इसी तरह अदलिया के रूकन और सनसद के रूकन को भी लोगों के लिए इन्साफ को मापना चाहिए। इसलिए, इंसाफ की पाकी को रखने के लिए, एक शख़्स को पहले अपनी हरकात और

अज़ा पर इन्साफ रखना चाहिए। वो अपनी सारी ताकतें अपने शरीर और सारे अज़ा पर इस तरीके से इस्तेमाल करता है अपनी तखलीक के मकसद के मुताबिक, बजाए इसके के इन्हे उन मकासिद के लिए इस्तेमाल करे जो सबब और इस्लाम के मुखुताफी सिम्त में हो और इस लिए अल्लाह तआला के ज़रिए नाफिज़ किए गए पाक कानून की खिलाफ वरज़ी करना। अगर उसकी एक फैमिली और बच्चें हों तो उसे उन्हें सबब और इस्लाम के मुनाफिक बग़ैर किसी भटकाओ के जो इस्लाम ने ख़ूबसूरत अखलाकी वज़फ़ बताए हैं उनकी कुर्बानी करके उसे अपनी शखसियत को ख़ूबसूरत आदात के साथ सुधारना चाहिए। अगर वो एक जज, या एक गर्वनर या एक कमांडर या एक इदारे का डाएरेक्टर है, तो उसे अपने मातहतों के सामने अपनी मिसाल कायम करनी चाहिए उन्हें रोज़ाना के मज़हवी अमाल के साथ साबित कदम रहने के लिए हौसला देना चाहिए। एक शख़्स ऐसी खुसुसियात के साथ दुनिया में अल्लाह तआला का खलीफ़ा बन जाता है। और आख़िरत में वो सारी नेमतें उसे हासिल होती हैं जो इन्साफ के लोगों से वादा की गई हैं। इसलिए नेक साअत और बरकती लोग वो है जो इन सारी खुसुसियात को पूरे करते हैं के उसकी अच्छाई का रूहानी नूर का हाला और बरकत जो उस खुशकिस्मत वक्त में बरसेगा और जिस बरकती जगह में वो रहते हैं, जो खुशकिस्मत लोग उस वक्त में वहाँ रहते हैं, और बल्कि सारे फूल, जानवर और पेबूजा। अगर, ताहम, सरकारी हुक्काम एक ख़ास जगह के रहमदिली से खाते पीते और अदल से दूर हों, और अगर, अल्लाह तआला हमे ऐसे किसी बाग़ी उभार के खिलाफ़ महफूज़ रखे – वो लोगों के हुकूक की पामाली करते हैं और जुल्म जैसे जुर्म करने का इरतिकाब करते हैं, लूट मार करते हैं और तश्ददुद करते हैं, अदल के लोगों को, साथियों को और शैतानों के दोस्त और बुरी रूहों को अकेले छोड़ देते हैं।

एक शेर:

बड़ी रिहाईश गाहों और हाकिमों के कपड़ों से फरेब मत खाओ,
उनकी रिहाईश गाहों को मज़लूमों के आँसूओं से पानी दिया जाता है!

लोग जो दूसरे लोगों पर जुल्म के साथ हुकूमत करते हैं वो इन्साफ़ वाले दिन अल्लाह तआला के ज़रिए बेरहमी से सुलूक किए जाएगें। यहाँ एक कहावत है:

मन, ला यरहम, ला युरयम!

जिसका मतलब है, बेरहम लोगों को कोई रहम नही मिलेगा! जब ऐसे ज़ालिम एक साथ गिरोह बनाता है, वो गैंग बनाते हैं, कोई हुकूमत नही बनाते। ऐसे लोग सेकड़ों तकलीदी लोगों पर ग़लीज़ मफाद के साथ जुल्म करते हैं अपनी छोटी सी ज़िन्दगी के थोड़े सालों के आराम के लिए, जो कभी ख़त्म नहीं होता उनकी अपनी सज़ा को पहुँचने से पहले। सारी ज़ाहिर फला और आमदों रफ़त के बीच में जिसमें वो तप रहे हैं, शदीद तकलीफें और अदालतें उन्हे कभी जाने नहीं देंगी। दुनियावी कुलमाल की सिर्फ एक चीज़ जो उनको पहली बार हमेशा के लिए छोड़ जाती है वो है उनकी सबसे प्यारी खुदमुखतारी, जोकि, आखिर में, वो अकसर अपने दुश्मनों के हाथों में देखते हैं। कैसा नातका बन्द बेईज़्ज़ती वाला तजुरबा है। दर हकीकत, सूरह मरयम की 81वीं आयत का मतलब है: "**हमारे पास वो सब वापिस आ जाएगा जो वो बातें करता है, और वो हमारे सामने नंगा और अकेला आएगा।**"(19-80) जैसा के इस आयत-ए-करीमा से निशानदही की गई है, ऐसे लोगों में से हर कोई आखिरत में इंसाफ़ की अदालत में चेहरे पर एक काले धब्बे के साथ अल्लाह तआला के सामने आएगा उसने जो जुल्म करके जुर्म किए वो इस काबिल नहीं होगा कि उनसे इंकार कर सके, और उनके लिए उसे शख़्त सज़ा दी जाएगी। सारे जुल्म और ज़्यादतियाँ जो उसने किए वो अपने आप को अंधेरे की तरह वाज़ेह करेंगे और उसे ढक लेंगे जिसकी वजह से वो कुछ भी देख नहीं पाएगा की वो कहा जा रहा है। वो उन फरिश्तों के ज़रिए जो दोज़ख़ के इंचार्ज हैं दोज़ख़ में फैंक दिया जाता है और वहाँ पर उन सज़ाओं और तकलीफों से भी ज़्यादा सज़ा पाता है जबकि वो इक्तेदार में था। वो अल्लाह तआला की माफी हासिल करने के काबिल नहीं होता क्योंकि उसने इस्लामी कानून और उसूलों को 'रेगिस्तानी कानून' कहा था और इस्लामी मज़हब से मुंकर हुआ था।

छठा हिस्सा

अखलाक-ए-अलाई किताब, (अली बिन अमरूल्लाह 'रहीमाहुल्लाहु तआला' [**916-979 (1571** ए.डी.), एडिरने तुर्की, के ज़रिए लिखी गई] ने पाकिज़गी की बहुत सारी किस्मों को फैलाया, और उसके छठे सबक में अहम मज़मून ने जगह ली। हमारी इस किताबचे में, हमने सिर्फ उन पेराग्राफ को लिया है जो इंसाफ को मिले हुए हैं। इंसाफ़/अदल को तीन दरर्जो में दिखाया गया है:

पहला दर्जा अल्लाह तआला के मानने वाले फरमाबरदार को मिला होगा। अल्लाह तआला की रहमतें और साथ हर वक्त सब तखलीक पर आती हैं। इनमें सबसे कीमती रहमतें हैं के उसका अपनी इंसानी मख़्लूक पर रहमतें बरसाना के किस तरह वो अबदी रहमतें हासिल कर सकते हैं। उसने उन सबको ख़ूबसूरत भेस में और अक्स में तखलीक किया है और उन्हें अबदी और बेशुमार रहमतें और अच्छाइयाँ दी हैं, जिनमें से कोई भी हासिल करने का वो दाँव नहीं लगा सकते। ऐसे एहसान करने वाले और इन सब रहमतों के खालिक का शुक्रिया इबादत के ज़रिए देना सारी मख़्लूक पर पूरे तौर पर वाजिब है। इस सिलसिले में इंसाफ़ का मतलब है के अपने मालिक के हुकूक का ध्यान रखना। इसलिए, ये ज़रूरी है और एक कर्ज़ है, हर मख़्लूक पर खालिक की इबादत करना हर अच्छाई के लिए जो उन्होने उससे हासिल की।

इंसाफ़ का दूसरा दर्जा है इंसानी मख़्लूक के हुकूक का ध्यान रखना। इसको पूरा करने के लिए ज़रूरी है के ज़मीन के कानून की और उनकी जो सरबराह हैं फरमाबरदारी करना और आलिमों को इज़्ज़त देना और तिजारत के उसूलों की पासदारी करना और वादे पूरे करना और एक भरोसेमंद शख़्स बनना।

इंसाफ़ का तीसरा दर्जा है के उन ज़िंदा और फ़ौत हुए लोगों के हुकूक की पासदारी करना और जो कोई वसीयत आगे करने को छोड़ गए हैं या कोई तर्स्ट और बुनियादें छोड़ गए हैं देखभाल करने के लिए। ये सब इस

तरह से पूरा किया जा सकता है के जो भी वसीयत उन्होने करी उसे पूरा करना और जो इदारे और बुनियादें उन्होने कायम की उनकी देखभाल करके।

जब एक शख़्स दूसरे से हिमायत हासिल करता है, तो अगर साबिक वाले के पास माददी ज़रए हैं तो उसे बराबरी की हिमायत के साथ इज़हार करना चाहिए। अगर उसके पास माददी ज़रए नहीं है, तब उसे उसका शुक्रिया उसपर बरकतों की दुआएँ देकर कर सकते हैं, (यानी उसके लिए दुआ करके)। अगर एक शख़्स हिमायत का जवाब नहीं देता हाँलाकि उसके पास ज़राए हैं, तो उसे सबके ज़रिए बुरा सुलूक किया जाएगा क्योंकि ये इंसानी मख़्लूक का फर्ज़ है के महरबानी का बदला बराबरी की महरबानी से करे। जबकि मामला है, अल्लाह तआला की महरबानियों का इज़हार न करना, जिसने हमें ग़ैरमोजूद से तखलीक किया और हमें सबसे अच्छी साख़्त दी और ज़रूरी अज़ा दिए और ताकत दी उन्हें एक दूसरे के साथ ताल मेल से काम करवाया और इसलिए हमें सेहत अता की और हमें समझ और अकल अता की, और जो लगातार हमारी ज़रूरयात जैसे के साथी, बच्चे, घर, कपड़े, ग़िज़ा और सब तरह के खाने की तखलीक करता है, ये एक बड़ी गलती और कमी है। उसकी ताकतें लामहदूद हैं। उसने ये सब रहमतें तखलीक की बदले में बग़ैर हमसे कुछ मांगे हुए, क्योंकि उसे किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं है। कितना बदअखलाक बरताव है ये, कितना बुरा जुर्म है और कितनी रंजीदा नाइंसाफ़ी है कि अल्लाह तआला सबसे आला, का शुक्रिया अदा न करना, और खालिक होने के उसके इस हुकूक को नज़रअंदाज़ करना। ताहम इससे बुरा ये है के उसके वुजूद को पसंद न करके इंकार करना और इन सब बेशुमार रहमतों के लिए दूसरे ज़रिए से ज़िददी और बेइज़्ज़ती से खुशामद करना इस हकीकत से के अल्लाह तआला वाहिद मरहबान है इसे खत्म करने की कोशिश में। मान लो एक शख़्स की ज़रूरयात को मुंतज़िम किया जाए और उसे रोज़ाना कीमत दी जाए, मुफ़त दिया जाए, उसकी सारी महिने की आमदनी और ग़िज़ाई ज़रूरयात एक खास महरबान के ज़रिए पूरी की जाएँ, ग़ौर करिए के किस तरह वो शख़्स अपने महरबान की तारीफ़ करेगा हर मौके पर और हर तरह की सोहबत में। क्या वो उसका दिल जितने के लिए और उसकी हमदर्दी हासिल करने के लिए अपना सबसे अच्छा नहीं करेगा? क्या वो उसकी परेशानियों और फ़िकरों

के खिलाफ़ हिफ़ाज़त नहीं करेगा? क्या वो उसकी खिदमत करने के लिए अपने आपको खतरों में नहीं डालेगा? क्या दूसरे उसको इल्ज़म नहीं देंगे अगर वो जानबुझकर अपने महरबान को नज़रअंदाज़ करेगा बजाए कुदरती ख़्यालों के? दरअसल, क्या उसे इंसानी फर्ज़ को छोड़ने के लिए फतकारा नहीं जाता? इन सब ज़रूरी कुदरती हिस के लिए जो एक इंसानी मेहरबान के लिए है, ये ज़रूरी क्यों नहीं है अल्लाह तआला का शुक्रिया अदा किया जाए, जो असली मालिक है हर तरह की रहमतों और अच्छाइयों के लिए, और ख़ालिक और भेजना वाला है सबका, और वो चीज़ें करना जो उसने हुकूम की हैं और पसंद फरमाई हैं? अल्लाह तआला बेशक उन सबसे ऊपर है जिन्हे शुक्रिया, फर्माबरदारी और प्यारा होने के मुस्तहित हैं। दूसरे महरबानों के लिए, जब उसकी रहमतों से मुकावला किया जाता है, तो वो पानी की बूंदों बमुकालबला समुंद्र भी नहीं होतीं। असल में, हिमायतें/महरबानियां जो दूसरो की तरफ से आती हुई लगती हैं वो उसकी भेजी हुई होती हैं।

अल्लाह तआला की रहमतों को कौन मिला सकता है?
फिर भी कौन उसकी एक लाख रहमतों का शुक्रिया अदा कर सकता है?

ये सवाल के किस तरह आदमी अल्लाह तआला की महरबानियों का शुक्रिया अदा कर सकता है उसका जवाब मुखतलीफ़ आलिमों के ज़रिए कई तरीकों से दिया गया है।

कुछ के मुताबिक, सबसे अहम तरीका उसका शुक्रिया अदा करने का वो है उसके वुजूद के बारे में सोचना और ग़ौर करना।

मसनवी:

अल्लाह तआला को शुक्रिया, जिसने इतनी सारी रहमतें भेजी,
सबसे पहले, उसने मुझे वुजूद की रहमत दी!
इंसानी ताकत उसकी रहमतें मिलाने में नकाफी है,
ताकत और सारी किस्म की फौकियत हुकूक के ज़रिए उसकी है।

दूसरों के मुताबिक, आदमी उसका शुक्रिया अदा कर सकते हैं इस बात का ध्यान रखते हुए के सारी रहमतें उसके ज़रिए आती है और इस हकीकत को अपनी तकरीरों के ज़रिए मानते हैं।

कुछ दूसरों के मुताबिक के मुताबिक, उसका शुक्रिया उसके एहकाम मानकर और ममनुअ काम को नज़रअंदाज़ करते भी अदा किया जा सकता है।

कुछ के मुताबिक, आदमी को पहले अपने आपको साफ करना चाहिए और इसतरह वो अल्लाह तआला के करीब हो सकता है।

दूसरों के मुताबिक, आदमी को कोशिश करनी चाहिए के दूसरों की रहनुमाई (इर्शाद) करे जिन्हे ज़िन्दगी के सही रास्ते को ढूँढने की ज़रूरत है।उसे दूसरों लोगों की मदद करनी चाहिए ताकि वो सही (सालीह) लोग बन सके।

कुछ के मुताबिक, उसका शुक्रिया अदा करने का कोई ख़ास तरीका नहीं है।हर कोई उसका शुक्रिया अदा करने का मुखतलिफ़ तरीका अपनाता है।

बाद के आलिमों के मुताबिक, अल्लाह तआला की तरफ आदमी का फ़र्ज़ तीन ग्रुपों में खुलासा किया जा सकता है: सबसे पहली उसकी इबादत जो वो अपने बदन को इस्तेमाल करते हुए अदा करता है, यानि, “सलात” और रोज़ा; दूसरा उसका फर्ज़ जो वो अपनी रूह के ज़रिए अदा करता है, यानी, सही यकीन रखना [अहल अस सुन्नत के आलिमों के ज़रिए सिखाए गए हिदायत की रज़ामंदी के साथ यकीन रखना]; और तीसरा इंसानी मख़लूक के बीच इंसाफ़ करके अल्लाह तआला के करीब होने की कोशिश करना।ये सब एक भरोसेमंद शख़्स बनकर और दूसरों को सलाह देकर और दूसरों को इस्लाम की तालिमात पढ़ाकर पूरा किया जा सकता है।

हम इबादत के कामों को तीन ग्रुपों में खुलासा कर सकते हैं: सही यकीन, सही तकरीर और सही बरताव।एहकाम जो आखिर की ज़मरों में साफ बयान नहीं हैं वो बदल सकती हैं, वक्त और जगह पर मुनहसिर करते हुए।अल्लाह तआला वाहिद हाकिम है जो इसको बदल सकता है, और वो

ऐसा अपने पैग़म्बरों के ज़रिए करवाता है। इंसानी मख़लूक अपनी समझ के मुताबिक, अपने आप इबादत के कामों को नहीं बदल सकती। पैग़म्बर, और अहल अस सुन्नत के आलिम, जो पैग़म्बरों के वारिस हैं, उन्होने इबादत की किस्में वज़ाहत से बताई और किस तरह उन्हें अदा किया जाए। हर कोई इन्हें सही तरह से सीखे और उनकी अदाएगी करे।

मैं ऊपर बताए गए हकीकतों का ये कहते हुए खुलासा करता हूँ के एक नुक्ते में मुसलमान का फर्ज़ अल्लाह तआला की तरफ़ जो है वो है के सही यकीन रखना, एक भरोसेमंद शख़्स बनना और अच्छे काम (अमल-ए-सालिहा) करना।

इस्लामी आलिमों और तसव्वुफ के बड़े रहनुमाओं ने बयान किया के एक इंसानी मख़लूक के लिए ज़रूरी चीज़ **ईमान** (यकीन) रखना है। अच्छे काम **(अमल)** और उन्हे पूरी सदाकत **(इखलास)** के साथ करना। इस दुनिया में खुशियाँ सिर्फ उन तीन खंबों को गाड़कर हासिल हो सकती हैं। "अमल" जिसका मतलब है ऐसे काम जो रूहानी दिल, ज़ुबान, या बदन के ज़रिए पूरे किए जाएँ। काम जो रूहानी दिल के ज़रिए पूरे किए जाते हैं वो उसूले अख़लाक मुहज़्ज़ब के ज़रिए पूरे किए जाते हैं। सदाकत (इख़लाक) का मतलब है अल्लाह तआला की रज़ा और उसका प्यार और मंज़ूरी हासिल करने के मकसद से अच्छे काम और इबादतें करना।

तकलीद के काबिल सच्चा मुसलमान

सबसे पहली सलाह है के अपने ईमान को सही करना उनके मुताबिक जिसे (उसूली मसलक कहते हैं) अहल अस सुन्नत के आलिमों ने अपनी किताबों में पढ़ाया। इस लिए, सिर्फ ये मसलक है जो दोज़ख़ में जाने से बचाएगा। अल्लाह तआला उन आला लोगों के काम के लिए उन्हे बहुत सारा ई नाम दे! चारों मसलकों के आलिम (इबादत के काम और अमल के मामलों के बारे में) जो इजतिहाद का दर्जा हासिल कर चुके है, और आला आलिम जो उनके ज़रिए पढ़ाए गए उन्हे **अहल अस सुन्ना** के आलिम कहते हैं। यकीन (ई

मान) को सही करने के बाद, ये ज़रूरी है के इबादत के काम किए जाएँ जो **फ़िकह** (किताबें जो लिखी गई इस्लामी साइंस पर) में बताई गई, यानी शरीअत के एहकाम किए जाएँ और ममनुअ कामों से खुद को गैर हासिर रखा जाए। एक शख़्स को रोज़ाना की पाँच नमाज़ें अदा करनी चाहिए बगैर किसी देरी के और सुस्ती के और ज़रूरी मेहनत के साथ उसके उसूलों के मुताबिक और तादिले अरकान (अमली तकनीक जिसे कहते हैं) को ध्यान में रखते हुए। एक शख़्स पैसे या माल के साथ जोकि (अमीरी की ऊँचाई पर हो जिसे कहते हैं) निसाब है उसे ज़कात देनी चाहिए। इमाम-ए-आज़म अबू हनीफ़ा रहीमाहुल्लाहू तआला ने कहा, "ये भी ज़रूरी है जो सोना और चाँदी औरतें ज़ैवर की तरह इस्तेमाल करती हैं उसकी ज़कात देनी ज़रूरी है।" [**सआदत-ए-अबदिया** के पाँचवे हिस्से के पहले सबक में 'ज़कात के मज़मून को हिस्सा मिला।]

इन्सानी ज़िन्दगी इतना ज़्यादा कीमती है कम करने के लिए (दुनियावी मज़े और ज़ाएके जो इस्लाम सहन कर सकता है जिसे कहते हैं) मुहाब के मज़े लेने के लिए। तब पहले से इसे ज़ाया नहीं किया जा सकता ऐसे काम करके जो (वो काम जिन्हें इस्लाम ने ममनुअ फरमाया और कहा) हराम हों। हमें अपने आपको मौसिकी, गाकर, साज़ बजाकर या गानों के ज़रिए मसरूफ़ नहीं करना चाहिए। हमें उनके मज़ों से धोखा नहीं खाना चाहिए जो वो हमारे नफ़ज़ को देते हैं। ये ज़हर हैं शहद के साथ मिले हुए और चीनी से ढके हुए।

हमें ग़ीबत से बचना चाहिए। ग़ीबत हराम है। [ग़ीबत का मतलब है एक मुसलमान या ज़िम्मी की खुफिया गलती को उसके पीठ पीछे बताना। ये ज़रूरी है के मुसलमानो को हरबीस की गलतियों के बारे में बताया जाए, उनके गुनाहों के बारे में जिन्होने ये गुनाह अवाम में किए, जिन्होने मुसलमानों को परेशान किया और जिन्होने खरीद व फरोख़्त में मुसलमानों को धोखा दिए उनकी बुराइयों से, इसलिए मुसलमानों को उनके नुकसानों के बारे में ख़बरदार किया और उनके इल्ज़ामों को गलत साबित किया जो इस्लाम के बारे में गलत बोलते और लिखते हैं; ये सब ग़ीबत नहीं हैं। **रादद अल मोहतार: 5-263**)]।

हमें मुसलमानों के बीच अफ़वाह (लफ़ज़ों को ले जाना) नहीं फ़ैलानी चाहिए। ऐसा एलान किया गया है के जो इन दो तरह के नाइंसाफ़ी काम फ़ैलाएगा उसे मुख़तलिफ़ किस्म के अज़ावों से गुज़रना पड़ेगा। इसलिए भी ये हराम है के झूठ बोलना और तौहमत लगाना, और इसे नज़रअंदाज़ करना चाहिए। इन दो तरह की बुराइयों को पिछली तकसीम में रोका गया। ये रहमत है के मुसलमानों के नुक्स को छुपाना, उनके खुफ़िया गुनाहों को न फ़ैलाना और उन्हें उनकी गलतियों में माफ़ कर देना। हमें अपने से कमतर के साथ हमदर्दी रखनी चाहिए, जो हमारे हुकूम में हैं [जैसे के बीवियाँ, बच्चे, तालिबे इल्म, सिपाही] और गरीबों की तरफ़ रहम रखना चाहिए। एक शख़्स को उनको उनकी गलतियों के लिए मलामत नहीं करनी चाहिए। हमें उन गरीब लोगों को नाचीज़ सबब के लिए मारना, नुकसान पहुँचाना या बेइज़्ज़ती नहीं करनी चाहिए। हमें किसी के माल, ज़िन्दगी, इज़्ज़त, या पाकिज़गी को पामाल नहीं करना चाहिए। हर किसी का कर्ज़ और हुकूमत की तरफ अदा कर देना चाहिए। रिश्वत देना और लेना, हराम है। अगरचे, किसी ज़ालिम के ज़ुल्म से बचने के लिए देना रिश्वत नहीं है, या एक धोखे वाली हालत को नज़रअंदाज़ करने के लिए। लेकिन ऐसा करना हराम भी है। हर कोई अपने नुक्स खुद देखता है और हर घंटे ये सोचे अपनी गलती के बारे में जो उसने अल्लाह तआला की तरफ की। उन्हे अपने दिमाग़ में हमेशा ये रखना चाहिए के अल्लाह तआला उन्हे सज़ा देना में जल्दी नहीं करेगा और न ही उनके रोज़गार में कटोती करेगा। वो एहकाम के लफ़्ज़ हमारे वालदेन के ज़रिए या हुकूमत से, अगर वो शरीअत के मुनाफ़िक हैं, तो उन्हे माना जाए, लेकिन अगर वो शरीअत के मुताबिक नहीं हैं जो इसके ख़िलाफ़ रूक नहीं सकते तो वो फितने का सब्ब बन सकते हैं। [**मकतूबात-ए-मासूमिया** किताब की दूसरी जिल्द के **123**वें खत को देखिए।]

(अहल अस सुन्नत के आलिमों के ज़रिए लिखी गई किताबों में इस्लामी अकीदों के उसूलों को सीखने और) हमारे ईमान को उसके मुताबिक सही करने के बाद और (इस्लाम के एहकाम को सीखने के बाद, दोबारा उन किताबों में से जो उन मुबारक आलिमों के ज़रिए लिखी गई और जिन्हें फिकह की किताबें कहते हैं और) अपने आप को फिकह के कानून के मुताबिक

ढालना, हमें अपना सारा वक्त अल्लाह तआला को याद करते हुए गुज़ारना चाहिए। हमें लगातार याद करते रहना चाहिए अल्लाह तआला को उस तरीके जैसे के मज़हब के आला आदमियों ने बताया है। हमें उन सब चीज़ों की तरफ़ दुश्मनी महसूस करनी चाहिए जो हमारे दिल को अल्लाह तआला को याद करने से रोकें। जितना ज़्यादा तुम शरीयत की तरफ़ राग़िब होगे उतना ही मज़ा तुम्हे उसे याद करने में आएगा। जैसे ही लाइल्मी, सुस्ती बड़ेगी शरीयत की फरमावरदारी में, तो वो मज़ा आहिस्ता आहिस्ता कम हो जाएगा, और आख़िर में बिल्कुल चला जाएगा। मैं इससे ज़्यादा और क्या लिखूँ जितना के मैं लिख चुका हूँ? इतना उस साहिबे अक्ल के लिए काफ़ी है। हमे इस्लाम के दुश्मनों के जाल में नहीं फँसना चाहिए और हमे उनके झूठ और इलज़ामों पर यकीन नहीं करना चाहिए।